# MAEC-113(N):
## पर्यावरणीय अर्थशास्त्र


**परामर्श–समिति**

| | |
|---|---|
| **प्रोफेसर सत्यकाम** | **कुलपति–अध्यक्ष** |
| प्रो. सत्यपाल तिवारी | निदेशक, मानविकी विद्याशाखा–<br>कार्यक्रम संयोजक |
| श्री विनय कुमार | कुलसचिव–सचिव |

**विशेषज्ञ समिति**

| | | |
|---|---|---|
| प्रो. सत्यपाल तिवारी | **अध्यक्ष** | उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज |
| डॉ अनिल कुमार यादव | **संयोजक** | उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज |
| प्रो.किरन सिंह | | इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय, प्रयागराज |
| प्रो. एम.के. सिंह | | एम.जे.पी. रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली |
| डॉ. विश्वनाथ कुमार | | एस.बी. पी.जी. कालेज, बड़ागाँव, वाराणसी |
| डॉ. अनूप कुमार | | इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय, प्रयागराज |

**पाठ्यक्रम समन्वयक**

डॉ. अनिल कुमार यादव — सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त वि.वि., प्रयागराज

**सम्पादक**

प्रो0 शीलप्रिय त्रिपाठी — प्रो0 अर्थशास्त्र, पूर्व प्राचार्य, एच.एन.बी. पी.जी. कालेज, नैनी, प्रयागराज

**परिमापक**

डॉ. अनिल कुमार यादव — सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त वि.वि., प्रयागराज

**लेखक मण्डल**

**लेखक**

**डॉ. अनिल कुमार यादव,** सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त वि.वि., प्रयागराज
**खण्ड–2** इकाई–03,04 **खण्ड–4** इकाई–05,06 **खण्ड–5** इकाई–05,06

**डॉ. शैलेन्द्र कुमार सिंह,** सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त वि.वि., प्रयागराज
**खण्ड–2** इकाई–01,02 **खण्ड–4** इकाई–01,02 **खण्ड–5** इकाई–01,02

**डॉ. सतेन्द्र कुमार,** सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त वि.वि., प्रयागराज
**खण्ड–2** इकाई–05,06 **खण्ड–4** इकाई–03,04 **खण्ड–5** इकाई–03,04

**डॉ. भूपेन्द्र बहादुर तिवारी,** प्रो.एवं डायरेक्टर, स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स एण्ड कामर्स, सी.एम.आर. यूनिवर्सिटी बेंगलूरू
**खण्ड–1** इकाई–01,02,03,04.05.06 **खण्ड–3** इकाई–01,02,03,04.05.06



मुद्रित– (माह), (वर्ष)


**© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज – (वर्ष)**


**ISBN-**



सर्वाधिक सुरक्षित। इस पाठ्य सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।


उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से श्री विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, (माह) (वर्ष), (मुद्रक का नाम व पता)

# MAEC-113(N)
# पर्यावरणीय अर्थशास्त्र

## खण्ड 01 पर्यावरण के मुख्य विषय एवं अवधारणाएँ

इकाई 01 पर्यावरण के अर्थशास्त्र के मुख्य मुद्दे

02 आर्थिक विकास एवं पर्यावरण : सह सम्बन्ध कुजनेट्स वक्र, चक्रीय आर्थिक प्रवाह

03 ओजोन परत ह्रास, वैश्विक उष्मीकरण एवं मौसम परिवर्तन

04 वातावरण,इकोलोजी,वहन क्षमता आदि अवधारणाएँ

05 प्राकृतिक संसाधनों के उपलब्धिकर्ता, जीवन आधार प्रणाली उपलब्धकर्ता एवं प्रदूषण तथा अपशिष्ट के संवाहक के रूप में पर्यावरण

06 भौतिक सन्तुलन एवं एनट्रापी ला की अवधारणाएँ

## खण्ड 02 प्राकृतिक संसाधन

इकाई 01 नव्यकरणीय एवं अनव्यकरणीय संसाधन

02 संसाधनों का वर्गीकरण, वन सम्पदा

03 जल संसाधन एवं खनिज संसाधन : कोयला, पेट्रोलियम आदि

04 ऊर्जा संसाधन , पवन शक्ति, ज्वार भाटा , प्राकृतिक गैस, जैविक ईधन , सौर ऊर्जा, आणविक ईधन आदि

05 खाद्य संसाधन एवं खाद्य सुरक्षा

06 जैविक विविधता एवं क्षय

## खण्ड 03 पर्यावरण क्षरण (अवनयन)

इकाई 01 नव–क्लासिकी दृष्टिकोण : बाजार विफलता, Externalities and public goods, tragedy of the commons.

02 समाष्टिभावी दृष्टिकोण : अति औद्योगीकरण, संकृद्विआधिक्य एवं मीडोका सवृद्धि परिसीमन विचार

03 तीन प्रणालियाँ एवं उनका अन्त़र्सम्बन्ध : जैविक , आर्थिक एवं सामाजिक, प्रणालियाँ

04 अनव्यकरणीय संसाधनो का ह्रास एवं पृथ्वी एवं सम्पदा की सीमाएँ

05 आर्थिक विचारों के इतिहास में पर्यावरणीय चेतना : सम्पोषणीय विकास : पूर्तिपक्ष सीमाएँ रिकार्डो, माल्थस आदि, मांग पक्ष सीमाएँ–महान आर्थिक मंदी एवं कीन्स का पक्ष

06 नवीन पर्यावरण सचेतक आर्थिक विकास सम्बन्धी विचार : डेली , solow शुभाकर आदि

## खण्ड 04 प्रदूषण एजेन्ट एवं पर्यावरण प्रबन्धन

इकाई 01 प्रदूषण के प्रकार : मृदा प्रदुषण, जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, नाभिकीय प्रदूषण, रेडियो धर्मिता एवं आणविक प्रदूषण

02 ध्वनि प्रदूषण दुर्गन्ध, भीड़ बेतरतीव फैलाव, सौंदर्यबोध का ह्रास एवं सांस्कृतिक प्रदूषण

03 प्रदूषण स्रोत : उद्योग, परिवहन, उपभोग तापीय प्रदूषण आदि

04 प्रदूषण एवं उनके प्रभाव : बीमारियाँ : Diahorrea, Typhoid, Malaria , Cancer, etc.

05 जनसंख्या वृद्धि प्रदूषण, भार , वहन क्षमता

06 पर्यावरण प्रबन्धन

**खण्ड 05 पर्यावरणीय वैश्विक चेतना एवं प्रयास**

इकाई 01स्टाकहोम सम्मेलन 1972 विश्व संरक्षण रणनीति 1980, मान्ट्रियल प्रोटोकाल 1987, पृथ्वी सम्मेलन 1972, 2002 कोपेनहेगेन सम्मेलन 2010

02 पर्यावरण सम्बन्धी वाह्य लागतें, नुकसान अमितव्ययितायें

03 कोसेध्यारम, polluter pay principal, होटलिंग मॉडल आदि

04 भारत में पर्यावरण प्रबन्धन

05 भारत में पर्यावरण संरक्षण हेतु कानून, अध्यादेश एवं नियमावली

06 सम्पोषणीय विकास के गैर–आर्थिक पहलू : सम्पोषणीय विकास के आध्यात्मिक आयाम एवं Future Agenda

# MAEC – 113 (N)
# पर्यावरणीय अर्थशास्त्र
## खण्ड – 01
### पर्यावरण के मुख्य विषय एवं अवधारणाएँ

## इकाई -01
## पर्यावरण अर्थशास्त्र के मुख्य मुद्दे

## इकाई की रूपरेखा:


1.0 **उद्देश्य**
1.1 **प्रस्तावना**
1.2 **पर्यावरण अर्थशास्त्र के मुख्य मुद्दे**
  1.2.1 **प्राकृतिक संसाधनों का मूल्यांकन**
  1.2.2 **बाह्यताएं और बाजार विफलता**
  1.2.3 **प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास**
  1.2.4 **सार्वजनिक वस्तु और मुफ्त-यात्री समस्या**
  1.2.5 **संपत्ति अधिकार**
  1.2.6 **सतत विकास**
1.3 **जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय चुनौतियाँ**
1.4 **पर्यावरणीय नीतियाँ और नियम**
1.5 **पर्यावरणीय आर्थिक मॉडल**
1.6 **निष्कर्ष**
1.7 **संदर्भ ग्रंथ सूची**
1.8 **सामान्य बोध प्रश्न**
1.9 **अभ्यासार्थ प्रश्न**


**1.0 उद्देश्य:**

इकाई के अध्ययन के बाद आप निम्नलिखित बिन्दुओं को समझने में सक्षम होंगें।

1. **प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण** (Conservation of Natural Resources)
2. **पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान** (Solving Environmental Problems)
3. **आर्थिक विकास और पर्यावरण के बीच संतुलन** (Balancing Economic Growth and Environment)
4. वाह्यता**ओं का प्रबंधन** (Managing Externalities)
5. **पर्यावरणीय नीतियों का विकास** (Development of Environmental Policies)
6. **प्राकृतिक संसाधनों का मूल्यांकन** (Valuation of Natural Resources)
7. **सतत विकास** (Sustainable Development)
8. **जलवायु परिवर्तन से निपटने के उपाय** (Mitigating Climate Change)
9. **पर्यावरणीय जागरूकता और शिक्षा** (Environmental Awareness and Education)
10. **पर्यावरणीय संकटों के आर्थिक प्रभाव का विश्लेषण** (Analyzing the Economic Impact of Environmental Crises)

**1.1 प्रस्तावना:**

आर्थिक विकास समाज की प्रगति और जीवन स्तर में सुधार का मुख्य साधन रहा है । विकास के नाम पर पर्यावरणीय संसाधनों का अति-उपयोग और प्रदूषण ने वैश्विक संकट को जन्म दिया है, जिसे अब पर्यावरणीय समस्याओं के रूप में देखा जाने लगा है।

**पर्यावरण अर्थशास्त्र की परिभाषा**:

**"पर्यावरण अर्थशास्त्र एक ऐसी आर्थिक शाखा है जो पर्यावरणीय संसाधनों के प्रबंधन, उपयोग और संरक्षण का अध्ययन करती है। इसका उद्देश्य यह समझना है कि आर्थिक गतिविधियों का पर्यावरण पर किस तरह प्रभाव पड़ता है और इन प्रभावों को कैसे नियंत्रित किया जा सकता है ताकि आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संरक्षण के बीच संतुलन स्थापित हो सके।"**

पर्यावरण अर्थशास्त्र मुख्य रूप से इस बात का विश्लेषण करता है कि:

- प्राकृतिक संसाधनों का कैसे उपयोग किया जाए ताकि उनका संरक्षण सुनिश्चित हो।
- आर्थिक विकास और पर्यावरणीय गिरावट के बीच किस प्रकार का संबंध होता है।
- प्रदूषण, बाह्यताएं, और प्राकृतिक संसाधनों के अति-उपयोग जैसी समस्याओं को हल करने के लिए कौन-कौन सी नीतियाँ बनाई जा सकती हैं।

इस इकाई में, हम पर्यावरण अर्थशास्त्र के मुख्य मुद्दों जैसे– **बाह्यताएं (Externalities)**, **बाजार विफलता (Market Failure)**, **प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास (Resource Depletion)**, **पर्यावरणीय मूल्यांकन (Environmental Valuation)**, और **सतत विकास (Sustainable Development)** का विश्लेषण करेंगे।

## 1.2 पर्यावरण अर्थशास्त्र के मुख्य मुद्दे:

### 1.2.1. प्राकृतिक संसाधनों का मूल्यांकन (Valuation of Natural Resources)

पर्यावरण अर्थशास्त्र का एक प्रमुख पहलू है प्राकृतिक संसाधनों का आर्थिक मूल्यांकन। पारंपरिक अर्थशास्त्र में पर्यावरणीय संसाधनों जैसे स्वच्छ हवा, पानी, और जैव विविधता का सटीक मूल्यांकन नहीं होता। पर्यावरण अर्थशास्त्र इन संसाधनों का आकलन करने के लिए ऐसे उपाय विकसित करता है जिससे उनका सही आर्थिक मूल्य निर्धारित किया जा सके, जैसे कि:

- **प्रत्यक्ष उपभोग मूल्य**: यह उन सेवाओं का मूल्य है जो हम सीधे तौर पर संसाधनों से प्राप्त करते हैं, जैसे कृषि उत्पाद, वनोत्पाद, और जल संसाधन।
- **अप्रत्यक्ष उपभोग मूल्य**: इसमें उन सेवाओं का मूल्य आता है जो पर्यावरण प्रदान करता है, जैसे प्रदूषण को नियंत्रित करने की क्षमता, जलवायु को संतुलित रखना, आदि।
- **वैकल्पिक लागत मूल्य (Option Cost Value)**: यह उन संभावनाओं का मूल्यांकन करता है कि भविष्य में किसी संसाधन का उपयोग कैसे किया जा सकता है।
- **अस्तित्व मूल्य (Existence Value)**: इसमें उन संसाधनों का मूल्य शामिल होता है जो भले ही प्रत्यक्ष उपयोग में न आएं, लेकिन उनके अस्तित्व का महत्व होता है, जैसे जैव विविधता का संरक्षण।

### 1.2.2 बाह्यताएं और बाजार विफलता (Externalities and Market Failure)

बाह्यताएं (Externalities) पर्यावरणीय अर्थशास्त्र का एक प्रमुख मुद्दा हैं। यह उन आर्थिक गतिविधियों को प्रदर्शित करती हैं, जिनका सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव तीसरे पक्ष पर पड़ता है, लेकिन इस प्रभाव को बाजार मूल्य में शामिल नहीं किया जाता। इसका सीधा प्रभाव बाजार विफलता पर पड़ता है, और बाजार स्वतंत्र रूप से संसाधनों का कुशल आवंटन नहीं कर पाता। बाह्यताएं दो प्रकार की होती है :

- **नकारात्मक बाह्यताएं:** जैसे औद्योगिक प्रदूषण, वनों की कटाई, और कार्बन उत्सर्जन, जिनका समाज पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। प्रदूषण, नकारात्मक बाह्यताओं का प्रमुख उदाहरण है। जीवाश्म ईंधन का दहन करने वाली कंपनियाँ पर्यावरण को होने वाली हानि की पूरी लागत का वहन नहीं करती हैं। उदाहरण के लिए, वायु प्रदूषण स्वास्थ्य समस्याओं और समय से पहले होने वाली मौतों का कारण बनता है, जिससे समाज पर स्वास्थ्य देखभाल की लागत बढ़ती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार, वायु प्रदूषण के कारण प्रति वर्ष लगभग **70 लाख मौतें** होती हैं, जिनमें प्रमुख रूप से पार्टिकुलेट मैटर (PM2.5) शामिल है। वायु प्रदूषण की वैश्विक आर्थिक लागत लगभग **$2.9 ट्रिलियन प्रति वर्ष** आंकी गई है (World Bank, 2020)।
- **सकारात्मक बाह्यताएं**: जैसे वृक्षारोपण, जिससे प्रदूषण कम होता है और समाज को स्वच्छ हवा मिलती है। स्वच्छ ऊर्जा में निवेश या संरक्षण प्रयास समाज के लिए सकारात्मक लाभ प्रदान करते हैं, जिन्हें बाजार के माध्यम से मापा नहीं जा सकता। उदाहरण के लिए, पुनर्वनीकरण परियोजनाएँ या आर्द्रभूमि का संरक्षण जैसे कदम कार्बन संचित करने, बाढ़ नियंत्रण और जैव विविधता की रक्षा में सहायक होते हैं। 2023 में, वैश्विक नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्र में **$500 बिलियन** से अधिक का निवेश किया गया, लेकिन इंटरनेशनल एनर्जी एजेंसी (IEA) का अनुमान है कि 2030 तक शून्य-उत्सर्जन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रति वर्ष **$4 ट्रिलियन** की आवश्यकता है।

**बाजार विफलता (Market Failure)**

- बाह्यताओं के कारण बाजार विफलता होती है। जब पर्यावरणीय संसाधनों का अत्यधिक उपयोग या प्रदूषण किया जाता है और इसकी लागत को आर्थिक निर्णयों में शामिल नहीं किया जाता, तो संसाधनों का अत्यधिक दोहन और पर्यावरणीय क्षति होती है। बाजार अपनी प्राकृतिक संरचना के तहत बाह्यताओं का समाधान नहीं कर सकता, इसलिए सरकार को नीति-निर्माण के माध्यम से हस्तक्षेप करना पड़ता है।

### 1.2.3 प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास

प्राकृतिक संसाधनों, चाहे वे नवीकरणीय हों या अनवीकरणीय, का अत्यधिक दोहन एक गंभीर समस्या है। इन संसाधनों का ह्रास दीर्घकालिक आर्थिक और पर्यावरणीय प्रभाव डाल सकता है।

- **अनवीकरणीय संसाधन**: कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस जैसे अनवीकरणीय संसाधन सीमित हैं, और इनका निरंतर उपयोग पर्यावरणीय क्षति और आर्थिक असुरक्षा को जन्म देता है। बी.पी. (BP) की **2023 विश्व ऊर्जा सांख्यिकी रिपोर्ट** के अनुसार, वैश्विक तेल की खपत **99.4 मिलियन बैरल प्रति दिन** है, जबकि सिद्ध तेल भंडार लगभग **1.7 ट्रिलियन बैरल** हैं। मौजूदा खपत दरों पर, दुनिया के पास केवल **50 साल** के तेल भंडार बचे हैं। इसके बावजूद, 2022 में, जीवाश्म ईंधनों ने वैश्विक ऊर्जा खपत में **80% से अधिक** योगदान दिया।
- **नवीकरणीय संसाधन**: वे प्राकृतिक संसाधन हैं जो स्वाभाविक रूप से समय के साथ फिर से उत्पन्न हो जाते हैं और जिनका उपयोग स्थायी रूप से किया जा सकता है, बशर्ते उनका सही प्रबंधन और संरक्षण किया जाए। इन संसाधनों को लगातार पुनः प्राप्त किया जा सकता है, और यदि इनका अत्यधिक दोहन न हो, तो ये अनंत समय तक उपलब्ध रह सकते हैं।

उदाहरण:

1. **सौर ऊर्जा (Solar Energy)**: सूर्य से प्राप्त ऊर्जा, जो एक अनंत स्रोत है और इसका उपयोग सौर पैनलों के माध्यम से बिजली उत्पन्न करने के लिए किया जाता है।

2. **पवन ऊर्जा (Wind Energy)**: हवा के प्रवाह से उत्पन्न ऊर्जा, जिसका उपयोग पवन चक्कियों द्वारा बिजली उत्पन्न करने में किया जाता है।
3. **जल ऊर्जा (Hydropower)**: नदी, झरने या बांधों से बहने वाले पानी की गति का उपयोग कर बिजली उत्पन्न की जाती है।
4. **जैविक संसाधन (Biomass)**: पेड़-पौधे, कृषि अवशेष, और जैविक कचरे का उपयोग ईंधन के रूप में किया जाता है। पेड़-पौधे उगाकर और काटकर इसका पुनः उत्पादन संभव है।
5. **ज्वारीय ऊर्जा (Tidal Energy)**: समुद्र में आने वाले ज्वार-भाटा की गति से उत्पन्न ऊर्जा को ज्वारीय ऊर्जा कहते हैं। यह समुद्र की प्राकृतिक प्रक्रिया पर आधारित है।
6. **भूतापीय ऊर्जा (Geothermal Energy)**: पृथ्वी की आंतरिक गर्मी का उपयोग कर ऊर्जा उत्पन्न की जाती है। यह गर्मी पृथ्वी की सतह के नीचे मौजूद होती है और समय के साथ पुनः उत्पन्न होती रहती है।

## 1.2.4 सार्वजनिक वस्तु और मुफ्त-यात्री समस्या:

**सार्वजनिक वस्तु:** पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में अक्सर सार्वजनिक वस्तु (public goods) होते हैं, जो न केवल अविशिष्ट (non-excludable) होते हैं, बल्कि अनिवार्य रूप से (non-rivalrous) भी होते हैं। इसका अर्थ है कि इन वस्तुओं का उपभोग किसी भी व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है चाहे उसने इसके उत्पादन या संरक्षण में योगदान दिया हो या नहीं और एक व्यक्ति द्वारा इनका उपयोग करने से दूसरे के उपभोग पर प्रभाव नहीं पड़ता। उदाहरण के लिए, स्वच्छ वायु, जलवायु संतुलन, और जैव विविधता।

**मुफ्त-यात्री समस्या (Free-rider Problem) :** मुफ्त-यात्री समस्या तब उत्पन्न होती है, जब लोग किसी वस्तु का लाभ तो उठाते हैं, लेकिन इसके लिए कोई भुगतान नहीं करते। अर्थशास्त्र में मुफ्त-यात्री समस्या एक गंभीर मुद्दा है। उदाहरण के लिए, जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए अगर कुछ देश ग्रीनहाउस गैसों को कम करने की कोशिश करते हैं, तो इससे सभी को लाभ होता है, लेकिन अन्य देश बिना कोई कदम उठाए भी इसका लाभ उठा सकते हैं। यही कारण है कि कई बार देशों के बीच जलवायु परिवर्तन के मुद्दों पर सहमति बनाना कठिन होता है।

**1.2.5 संपत्ति अधिकार (Property Rights)**: जब पर्यावरणीय संसाधनों के स्पष्ट संपत्ति अधिकार नहीं होते (जैसे वायु या समुद्र), तो लोग उन्हें असीमित रूप से उपयोग करते हैं, जिससे उनका अति-उपयोग होता है। पर्यावरण अर्थशास्त्र में इस बात पर ध्यान दिया जाता है कि कैसे संपत्ति अधिकारों को स्पष्ट करके और उनका सही प्रबंधन करके पर्यावरणीय **ह्रा**स को कम किया जा सकता है। पर्यावरणीय संसाधनों का सही तरीके से उपयोग और प्रबंधन संपत्ति अधिकारों पर निर्भर करता है। पर्यावरण अर्थशास्त्र इस बात का अध्ययन करता है कि जब संपत्ति अधिकार स्पष्ट होते हैं, तो लोग संसाधनों का अधिक सतर्कता से उपयोग करते हैं। उदाहरण के लिए:

- अगर किसी नदी या वन का स्पष्ट मालिक है, तो वह उसका सही तरीके से प्रबंधन करेगा ताकि उसका दीर्घकालिक उपयोग सुनिश्चित हो सके।
- लेकिन अगर संपत्ति अधिकार अनिश्चित होते हैं, जैसे सार्वजनिक स्थानों पर, तो संसाधनों का अति-उपयोग हो सकता है, जिसे **ट्रैजेडी ऑफ कॉमन्स** (Tragedy of the Commons) कहा जाता है। **ट्रैजेडी ऑफ कॉमन्स (Tragedy of the Commons)** सिद्धांत यह बताता है कि जब किसी संसाधन का उपयोग सभी के लिए खुला होता है, तो लोग स्व-हित में उस संसाधन का अति-उपयोग करने लगते हैं, जिससे संसाधन की कमी या क्षरण हो जाता है। उदाहरण के लिए, मछलियों का अत्यधिक शिकार समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र को नुकसान पहुँचाता है।

**1.2.6 सतत विकास (Sustainable Development) :** पर्यावरण अर्थशास्त्र का मुख्य लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संरक्षण के बीच संतुलन बना रहे। **सतत विकास** का अर्थ है कि हम वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को इस तरह पूरा करें कि भविष्य की पीढ़ियाँ भी अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर सकें। इसमें निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया जाता है:

- प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और उनका विवेकपूर्ण उपयोग।
- स्वच्छ प्रौद्योगिकियों और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को अपनाना।
- आर्थिक विकास के साथ-साथ पर्यावरणीय **ह्रा**स को नियंत्रित करना।

## 1.3 जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय चुनौतियाँ (Climate Change and Environmental Challenges)

जलवायु परिवर्तन, पर्यावरणीय अर्थशास्त्र का एक महत्वपूर्ण विषय है। ग्लोबल वार्मिंग, ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन, और जलवायु परिवर्तन से जुड़ी समस्याओं का आर्थिक प्रभाव समझने के लिए पर्यावरण अर्थशास्त्र का अध्ययन आवश्यक है। इस विषय में प्रमुख अध्ययन क्षेत्र हैं:

- **कार्बन उत्सर्जन का मूल्यांकन**: यह देखा जाता है कि कैसे कार्बन उत्सर्जन से जुड़े बाह्यताओं का सही मूल्यांकन किया जाए और इसके लिए कार्बन टैक्स या कार्बन ट्रेडिंग सिस्टम का उपयोग किया जाए।
- **जलवायु परिवर्तन से निपटने के उपाय**: स्वच्छ ऊर्जा, ऊर्जा दक्षता, और पर्यावरणीय नीतियों का विकास कैसे किया जाए ताकि जलवायु परिवर्तन के नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सके।

## 1.4 पर्यावरणीय नीतियाँ और नियम (Environmental Policies and Regulations)

पर्यावरणीय गिरावट को रोकने के लिए विभिन्न नीतियों और नियमों की आवश्यकता होती है। पर्यावरण अर्थशास्त्र इस बात पर जोर देता है कि सरकारें और संस्थान किस प्रकार से नीतियाँ बना सकती हैं ताकि आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन बना रहे। इसमें कार्बन कर (carbon tax), प्रदूषण नियंत्रण, और नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावा देना शामिल होता है। पर्यावरण अर्थशास्त्र में यह अध्ययन किया जाता है कि कौन सी नीतियाँ प्रभावी हो सकती हैं:

- **प्रदूषण कर (Pollution Tax)**: सरकारें प्रदूषण को कम करने के लिए प्रदूषण पर कर लगाती हैं। इससे कंपनियाँ प्रदूषण कम करने वाली तकनीकों में निवेश करती हैं।
- **कैप एंड ट्रेड (Cap and Trade)**: इस प्रणाली में सरकारें प्रदूषण के लिए एक निश्चित सीमा (कैप) निर्धारित करती हैं, और कंपनियाँ अपनी आवश्यकता के अनुसार इस सीमा के भीतर प्रदूषण उत्सर्जन के अधिकार खरीद और बेच सकती हैं।
- **नवीकरणीय ऊर्जा प्रोत्साहन (Renewable Energy Incentives)**: सरकारें सौर, पवन, और अन्य स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों को प्रोत्साहन देकर पर्यावरणीय गिरावट को कम करने का प्रयास करती हैं।

## 1.5 पर्यावरणीय आर्थिक मॉडल (Environmental Economic Models)

पर्यावरण अर्थशास्त्र में विभिन्न आर्थिक मॉडल बनाए जाते हैं ताकि पर्यावरणीय समस्याओं का विश्लेषण और समाधान किया जा सके। इनमें:

- **Cost-Benefit Analysis (लागत लाभ का विश्लेषण)**: इस मॉडल का उपयोग यह पता लगाने के लिए किया जाता है कि किसी परियोजना या नीति के पर्यावरणीय और आर्थिक लाभ और हानि क्या हैं।
- **Input-Output Model (आगत और निर्गत मॉडल):** यह मॉडल यह बताता है कि किसी आर्थिक गतिविधि का पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ेगा, जैसे ऊर्जा उत्पादन का प्रदूषण पर क्या असर होगा।

**1.6 निष्कर्ष:** पर्यावरण अर्थशास्त्र की विषय वस्तु पर्यावरणीय संसाधनों और आर्थिक विकास के बीच जटिल संबंधों को समझने और प्रबंधित करने पर केंद्रित है। यह अध्ययन न केवल यह बताता है कि कैसे प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण और सतत उपयोग किया जा सकता है, बल्कि यह भी दिखाता है कि पर्यावरणीय गिरावट को रोकने और सतत विकास को प्राप्त करने के लिए कौन-कौन सी आर्थिक नीतियाँ और उपाय आवश्यक हैं। पर्यावरण अर्थशास्त्र की यह विषय वस्तु, समाज, नीति निर्माताओं और उद्योगों के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है ताकि आर्थिक प्रगति के साथ-साथ पर्यावरणीय संतुलन भी बना रहे।

## 1.7 संदर्भ ग्रंथ सूची:


1. **"Environmental and Natural Resource Economics"** लेखक: **Tom Tietenberg** और **Lynne Lewis** प्रकाशक: **Taylor & Francis, 13 March 2018, ISBN: 9781351803373**
   **"Economics of the Environment: Selected Readings"** संपादक: **Robert N. Stavins** प्रकाशक: **Edward Elgar Publishing, 2019, ISBN: 9781788972079**
2. **विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**

   लेखक: **Dr. Anupam Agarwal, Dr. Alok Gupta** प्रकाशक: **SBPD Publications, 6 July 2021, ISBN: 9789389585339**

3. **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**

   लेखक: डॉ. वी.सी. सिन्हा, डॉ. रितिका सिन्हा, प्रकाशक: **SBPD Publishing House, 8 July 2024, ISBN: 9788119142392**

4. **"The Economics of Climate Change: The Stern Review"**
   लेखक: Nicholas Stern, प्रकाशक: Cambridge University Press


## 1.8 सामान्य बोध प्रश्न:

1. पर्यावरण अर्थशास्त्र की परिभाषा क्या है?
2. पर्यावरणीय वाह्यताएँ (Externalities) क्या होती हैं, और यह पर्यावरण अर्थशास्त्र में क्यों महत्वपूर्ण हैं?
3. पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र (Environmental Kuznets Curve) क्या है? इसका पर्यावरण अर्थशास्त्र में क्या महत्व है?
4. सतत विकास (Sustainable Development) से आप क्या समझते हैं, और यह पर्यावरण अर्थशास्त्र से कैसे संबंधित है?
5. कार्बन टैक्स (Carbon Tax) क्या है, और इसका पर्यावरणीय संरक्षण में क्या योगदान है?
6. प्राकृतिक संसाधनों के अति-उपयोग (Overexploitation) से उत्पन्न होने वाली समस्याएँ क्या हैं?
7. नवीकरणीय और गैर-नवीकरणीय संसाधनों में क्या अंतर है? पर्यावरण अर्थशास्त्र में इनकी क्या भूमिका है?

8. पर्यावरणीय समस्या के समाधान में सरकार की भूमिका क्या होनी चाहिए?
9. कार्बन उत्सर्जन व्यापार प्रणाली (Carbon Emissions Trading System) क्या है, और यह कैसे कार्य करती है?
10. पर्यावरणीय नीतियाँ (Environmental Policies) कैसे बनाई जाती हैं, और इनका क्या महत्व है?

## 1.9 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. जलवायु परिवर्तन के आर्थिक प्रभावों का विश्लेषण करें। पर्यावरण अर्थशास्त्र इस मुद्दे को कैसे हल करने का प्रयास करता है?
2. क्या आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संरक्षण एक साथ संभव हैं? इस प्रश्न पर चर्चा करें।
3. बाहरीताओं के उदाहरण देकर यह बताएं कि किस प्रकार पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान संभव है।
4. पारंपरिक अर्थशास्त्र और पर्यावरण अर्थशास्त्र के बीच मुख्य अंतर क्या हैं?
5. 'प्रदूषक भुगतान सिद्धांत' (Polluter Pays Principle) को समझाएं और इसके लाभों पर चर्चा करें।

## व्यावहारिक बोध प्रश्न:

1. किसी भी देश में जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए अपनाए गए प्रमुख आर्थिक नीतियों का वर्णन करें।
2. किसी शहर में प्रदूषण नियंत्रण के लिए आप कौन-कौन सी नीतियाँ सुझाएँगे?
3. स्थानीय स्तर पर जैव विविधता को संरक्षित करने के लिए कौन-कौन से उपाय किए जा सकते हैं?
4. किसी भी नवीकरणीय संसाधन (जैसे सौर ऊर्जा) के आर्थिक लाभों का विश्लेषण करें।
5. पर्यावरणीय समस्याओं को हल करने में निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों की भूमिकाओं की तुलना करें।

## दीर्घ उत्तर वाले प्रश्न:

1. सतत विकास और पर्यावरणीय संरक्षण के बीच संबंधों पर विस्तृत चर्चा करें।
2. कार्बन टैक्स और कैप एंड ट्रेड प्रणाली के बीच तुलना करें। कौन सा तरीका अधिक प्रभावी है और क्यों?
3. पृथ्वी के पारिस्थितिकीय तंत्र के लिए प्राकृतिक संसाधनों का आर्थिक मूल्यांकन क्यों महत्वपूर्ण है? इसका नीति निर्माण में क्या योगदान है?
4. जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप वैश्विक अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले प्रभावों का विस्तृत विश्लेषण करें।

## वस्तुनिष्ठ प्रश्न (MCQs):

1. **कौन-सा सिद्धांत यह कहता है कि प्रदूषण फैलाने वाले को पर्यावरणीय क्षति के लिए भुगतान करना चाहिए?**

    a) मुक्त बाजार सिद्धांत

    b) बाहरीता सिद्धांत

    c) प्रदूषक भुगतान सिद्धांत

    d) लाभांश सिद्धांत

2. **निम्नलिखित में से कौन-सा नवीकरणीय संसाधन है?**

    a) कोयला

    b) तेल

c) प्राकृतिक गैस

d) पवन ऊर्जा

3. **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र किसके अध्ययन पर केंद्रित है?**

a) उत्पादन और उपभोग के सामान्य सिद्धांत

b) आर्थिक नीतियों का समाज पर प्रभाव

c) आर्थिक गतिविधियों का पर्यावरण पर प्रभाव

d) कराधान के सिद्धांत

4. **ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन मुख्य रूप से किससे संबंधित है?**

a) जैव विविधता का ह्रास

b) कार्बन डाइऑक्साइड और अन्य गैसों का बढ़ना

c) प्राकृतिक संसाधनों की कमी

d) नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग

## उत्तर:

Q1. C) प्रदूषक भुगतान सिद्धांत (Polluter Pays Principle)
Q2. d) पवन ऊर्जा (Wind Energy)
Q3. C) आर्थिक गतिविधियों का पर्यावरण पर प्रभाव (Impact of Economic Activities on Environment)
Q4. b) कार्बन डाइऑक्साइड और अन्य गैसों का बढ़ना (Increase in Carbon Dioxide and other gases)

## परिणाममूलक प्रश्न (Outcome-Based Questions):

- ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने के लिए क्या कदम उठाए जाने चाहिए, और इनमें आर्थिक उपायों की क्या भूमिका हो सकती है?
- स्थानीय स्तर पर नवीकरणीय ऊर्जा के उपयोग को बढ़ाने के लिए आप कौन-कौन सी नीतियाँ सुझाएँगे?

## इकाई–02

## आर्थिक विकास एवं पर्यावरणः सह सम्बन्ध कुजनेट्स वक्र, चक्रीय आर्थिक प्रवाह

**इकाई की रूपरेखा:**


**2.0 उद्देश्य**
**2.1 प्रस्तावना**
**2.2 आर्थिक विकास एवं पर्यावरण का सह-संबंध: कुजनेट्स वक्र अवधारणा**
- **2.2.1 कुजनेट्स वक्र की अवधारणा**
- **2.2.2 कुजनेट्स वक्र का चित्रण**
- **2.2.3 आर्थिक विकास और पर्यावरणीय गिरावट**
- **2.2.4 उच्च आर्थिक विकास और पर्यावरणीय सुधार**
- **2.2.5 उच्च आर्थिक विकास का प्रभाव**
- **2.2.6 कुजनेट्स वक्र का विस्तार**
- **2.2.7 कुजनेट्स वक्र की आलोचना**
- **2.2.8 कुजनेट्स वक्र का व्यावहारिक उपयोग**
- **2.2.9 निष्कर्ष**

**2.3 पर्यावरण और आय का चक्रीय प्रवाह**
- **2.3.1 चक्रीय प्रवाह मॉडल का विवरण**
- **2.3.2 मॉडल का चित्रण**
- 2.3.3 **चक्रीय प्रवाह मॉडल का निष्कर्ष**

**2.4 संदर्भ ग्रंथ सूची**
**2.5 सामान्य बोध प्रश्न**
**2.6 अभ्यासार्थ प्रश्न**


## 2.0 उद्देश्य:

कुजनेट्स वक्र (Kuznets Curve) की अवधारणा का मुख्य उद्देश्य यह समझाना है कि आर्थिक विकास और आय असमानता या पर्यावरणीय गिरावट के बीच संबंध कैसे बदलता है। इसे विशेष रूप से दो रूपों में देखा जा सकता है:

1. **आय असमानता के संदर्भ में कुजनेट्स वक्र**
   - **आय असमानता के प्रवाह को समझना**
   - **विकास के विभिन्न चरणों को समझना**
   - **आर्थिक नीतियों को दिशा देना**
2. **पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र** (EKC) **के संदर्भ में**
   - **पर्यावरण और आर्थिक विकास के** मध्य **संबंध को समझना**
   - **पर्यावरणीय नीति निर्माण को दिशा देना**
   - **सतत विकास की अवधारणा को मजबूती देना**

### 2,1 प्रस्तावना:

आर्थिक विकास और पर्यावरणीय ह्रास के बीच संबंध एक महत्वपूर्ण विषय रहा है। जैसे-जैसे देश आर्थिक रूप से विकसित होते हैं, वे अपने प्राकृतिक संसाधनों का अधिक दोहन करते हैं, जिससे पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। लेकिन क्या यह हमेशा सच है? क्या आर्थिक विकास और पर्यावरणीय गुणवत्ता के

बीच कोई सकारात्मक संबंध भी हो सकता है? इस सवाल का जवाब खोजने के लिए हम कुजनेट्स वक्र (Kuznets Curve) अवधारणा का विश्लेषण करते हैं। इस अवधारणा के अनुसार, आर्थिक विकास के प्रारंभिक चरण में पर्यावरणीय गिरावट बढ़ती है, लेकिन एक निश्चित बिंदु के बाद यह गिरावट कम होनी शुरू हो जाती है और पर्यावरणीय गुणवत्ता में सुधार होता है। इसे **पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र** (Environmental Kuznets Curve या EKC) के रूप में जाना जाता है।

इस अध्याय में, हम आर्थिक विकास और पर्यावरणीय गुणवत्ता के बीच इस सह-संबंध को गहराई से समझने का प्रयास करेंगे, साथ ही EKC की आलोचना और उसके विभिन्न पहलुओं पर भी विचार करेंगे।

### 2.2.1 कुजनेट्स वक्र की अवधारणा

कुजनेट्स वक्र की अवधारणा को सर्वप्रथम 1950 के दशक में सायमन कुजनेट्स (Simon Kuznets) द्वारा प्रतिपादित किया गया था। इस वक्र का उपयोग मूल रूप से आय असमानता और आर्थिक विकास के बीच संबंध को समझाने के लिए किया गया था। कुजनेट्स ने सुझाव दिया कि जब कोई देश विकास के शुरुआती चरण में होता है, तो उसकी आय असमानता बढ़ती है, लेकिन एक निश्चित स्तर के बाद, जैसे-जैसे देश समृद्ध होता जाता  है, आय असमानता कम हो जाती है।

इसी सिद्धांत का पर्यावरण पर भी विस्तार किया गया, जिसे हम **पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र** (Environmental Kuznets Curve - EKC) के रूप में जानते हैं। पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र में आर्थिक विकास के प्रारंभिक चरण में पर्यावरणीय ह्रास में वृद्धि होती है, लेकिन जब अर्थव्यवस्था एक उच्च विकास स्तर तक पहुँच जाती है, तो पर्यावरणीय गिरावट में कमी आने लगती है। इसका कारण यह माना जाता है कि विकसित देश पर्यावरणीय संरक्षण के लिए अधिक संसाधन आवंटित कर सकते हैं और अधिक कुशल और स्वच्छ प्रौद्योगिकियों का उपयोग कर सकते हैं।

पारंपरिक पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र सिद्धांत का मानना है कि आर्थिक विकास और पर्यावरण प्रदूषण के बीच एक विपरीत -यू आकार का संबंध है । दूसरे शब्दों में, जैसे-जैसे आर्थिक विकास एक निचले चरण से उच्च स्तर की ओर बढ़ता है, उत्पादन क्षेत्र भी कृषि उत्पादन से औद्योगिक उत्पादन और अंततः तृतीयक क्षेत्र में बदल जाता है। इसके अलावा पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र  सिद्धांत के तहत, उपरोक्त प्रत्येक प्रक्रिया में, पैमाने के प्रभाव, संरचना प्रभाव और तकनीकी प्रभाव क्रमिक रूप से प्रभावी होते हैं ।

### 2.2.2. कुजनेट्स वक्र का चित्रण (Graphical Representation)

पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र को आमतौर पर एक उल्टे U-आकार के वक्र के रूप में चित्रित किया जाता है, जिसमें वाई-अक्ष पर पर्यावरणीय ह्रास (जैसे प्रदूषण) और एक्स-अक्ष पर प्रति व्यक्ति आय को दर्शाया जाता है।

**नीचे दिया गया ग्राफ** पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र का एक सरल उदाहरण है:

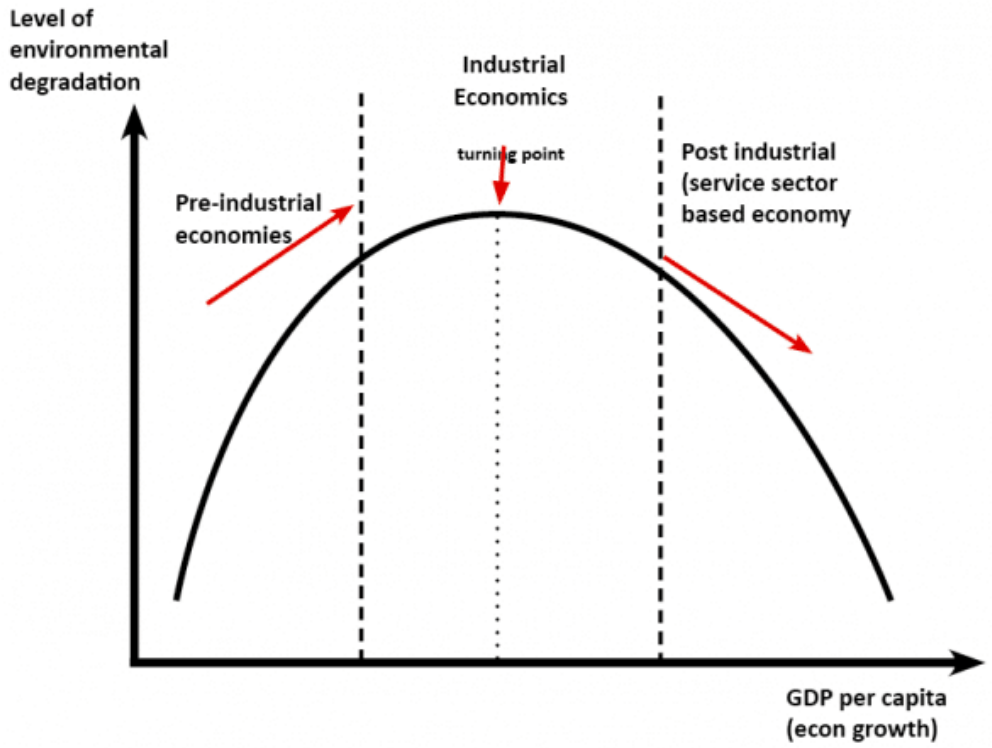


**इस ग्राफ के अनुसार:**

- आर्थिक विकास के प्रारंभिक चरण में (प्रति व्यक्ति आय कम होने पर), पर्यावरणीय ह्रास बढ़ती है।
- एक बिंदु के बाद, जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था और विकसित होती है, पर्यावरणीय ह्रास अपने चरम पर पहुँचती है (वक्र का शीर्ष)।
- इसके बाद, उच्च आर्थिक विकास के साथ पर्यावरणीय ह्रास कम होनी शुरू हो जाती है और पर्यावरणीय गुणवत्ता में सुधार आता है।

यू-आकार के पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र के पहले चरण में, यानी पूर्व-औद्योगिक चरण में, प्राथमिक, कम दक्षता वाले उद्योगों का विकास पैमाने के प्रभाव और प्रदूषण पैदा करेगा। पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र के दूसरे चरण के उद्भव का कारण उत्पादन प्रक्रिया में पुरानी तकनीकों के स्थान पर स्वच्छ तकनीकों का उपयोग करते है। इसलिए नवाचार द्वारा लाए गए तकनीकी प्रभाव पैमाने के प्रभावों से अधिक होते हैं और विकसित चरण की तरह पर्यावरणीय सुधार प्राप्त करते हैं।

### 2.2.3. आर्थिक विकास और पर्यावरणीय ह्रास

पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र का पहला चरण बताता है कि जैसे-जैसे कोई देश आर्थिक रूप से विकसित होता है, उसकी औद्योगिक गतिविधियाँ और प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग बढ़ता है। इससे वायु और जल प्रदूषण, वनों की कटाई, जैव विविधता की हानि, और अन्य पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। इस चरण में सरकारों और उद्योगों का ध्यान आर्थिक विकास पर अधिक केंद्रित होता है, और पर्यावरणीय मुद्दों को कम प्राथमिकता दी जाती है।

### प्रारंभिक आर्थिक विकास का प्रभाव

- **प्रदूषण**: आर्थिक विकास के प्रारंभिक चरण में औद्योगिकीकरण होता है, जिसमें ऊर्जा और कच्चे माल की अधिक खपत होती है। इससे कार्बन डाइऑक्साइड ($CO_2$) और अन्य हानिकारक गैसों का उत्सर्जन बढ़ता है।
- **वनों की कटाई**: आर्थिक विकास के प्रारंभिक चरण में भूमि की मांग बढ़ती है, जिससे जंगलों को काटकर कृषि या औद्योगिक उपयोग के लिए जमीन तैयार की जाती है। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, हर साल लगभग **10 मिलियन हेक्टेयर** वन भूमि नष्ट हो जाती है, जिसका प्रमुख कारण आर्थिक विकास के लिए भूमि उपयोग में वृद्धि है।
- **जैव विविधता की हानि**: विकासशील देशों में औद्योगिक विकास और कृषि विस्तार के कारण प्राकृतिक आवासों का नाश होता है, जिससे जैव विविधता की हानि होती है। विश्व वन्यजीव कोष (WWF) के अनुसार, मानव गतिविधियों के कारण **1 मिलियन से अधिक प्रजातियाँ** विलुप्त होने के कगार पर हैं।

### 2.2.4 उच्च आर्थिक विकास और पर्यावरणीय सुधार

कुजनेट्स वक्र का दूसरा चरण बताता है कि जब किसी देश की प्रति व्यक्ति आय एक निश्चित स्तर तक पहुँच जाती है, तो पर्यावरणीय गिरावट कम होनी शुरू हो जाती है। इस चरण में लोग पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति अधिक जागरूक होते हैं और पर्यावरणीय गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए सरकार और उद्योग दोनों में नीतियों और प्रौद्योगिकी में सुधार किया जाता है।

### 2.2.5 उच्च आर्थिक विकास का प्रभाव

- **स्वच्छ प्रौद्योगिकी**: जैसे-जैसे देश आर्थिक रूप से समृद्ध होते हैं, वे अधिक कुशल और पर्यावरण-अनुकूल प्रौद्योगिकियों में निवेश करते हैं। उदाहरण के लिए, विकसित देशों में स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों, जैसे सौर और पवन ऊर्जा, का उपयोग बढ़ा है। 2023 में, नवीकरणीय ऊर्जा का वैश्विक उत्पादन लगभग **13%** तक पहुँच चुका था, और यह हर साल बढ़ता जा रहा है।
- **पर्यावरणीय नीतियाँ**: विकसित देश पर्यावरणीय गिरावट को रोकने के लिए कठोर नीतियाँ लागू करते हैं। उदाहरण के लिए, यूरोपीय संघ और अमेरिका ने अपने देशों में कार्बन उत्सर्जन को नियंत्रित करने के लिए कार्बन कर और कैप-एंड-ट्रेड (cap-and-trade) जैसे उपाय लागू किए हैं। 2023 में, वैश्विक स्तर पर कार्बन उत्सर्जन को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न देशों ने **2050 तक शून्य-उत्सर्जन** का लक्ष्य रखा है।
- **जन जागरूकता और नागरिक सक्रियता**: उच्च आय स्तर पर, लोग अधिक जागरूक हो जाते हैं और पर्यावरण की रक्षा के लिए आवाज उठाते हैं। यह सरकारों पर दबाव डालता है कि वे पर्यावरण संरक्षण के लिए बेहतर नीतियाँ बनाएँ और उद्योगों को स्वच्छ और हरित प्रौद्योगिकियों को अपनाने के लिए प्रेरित करें।

### 2.2.6 कुजनेट्स वक्र का विस्तार:

हालांकि, एन-आकार के पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र का समर्थन करने वाले अर्थशास्त्रियों ने एक अलग सिद्धांत प्रस्तावित किया है। उनका मानना था कि आर्थिक विकास के उच्च चरण में भी यदि नवाचार आर्थिक विकास की गति के साथ नहीं रह सकता है और तकनीकी प्रभावों में वृद्धि पैमाने के प्रभाव से धीमी है, तो पर्यावरण प्रदूषण फिर से प्रकट हो सकता है । दूसरे शब्दों में, पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र का आकार एक उल्टे यू-आकार से एन-आकार तक विस्तारित हो सकता है। एन-आकार का यह मॉडल

मानता है कि आर्थिक विकास पर्यावरणीय ह्रास की ओर ले जाता है जो एक सकारात्मक शिखर पर पहुंचने के बाद आर्थिक प्रगति के साथ उलट जाता है और प्रदूषण का स्तर आगे की आर्थिक प्रगति के साथ फिर से बढ़ने से पहले एक नकारात्मक शिखर पर पहुंच जाता है। उल्टे यू-आकार के पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र की तुलना में, सबसे महत्वपूर्ण अंतर तीसरे चरण में पर्यावरण प्रदूषण के विस्थापन में है । विद्वान इस पैटर्न को तकनीकी अप्रचलन प्रभाव के रूप में प्रदर्शित करते हैं, जो पैमाने के प्रभावों के फिर से उभरने और दूसरे मोड़ से पहले के संरचनागत और तकनीकी प्रभावों पर काबू पाने का प्रदर्शित करता है [1] ऐसा माना जाता है कि इस घटना का उद्भव उपेक्षित पर्यावरणीय नियमों और धीमी तकनीकी नवाचार से संबंधित है।

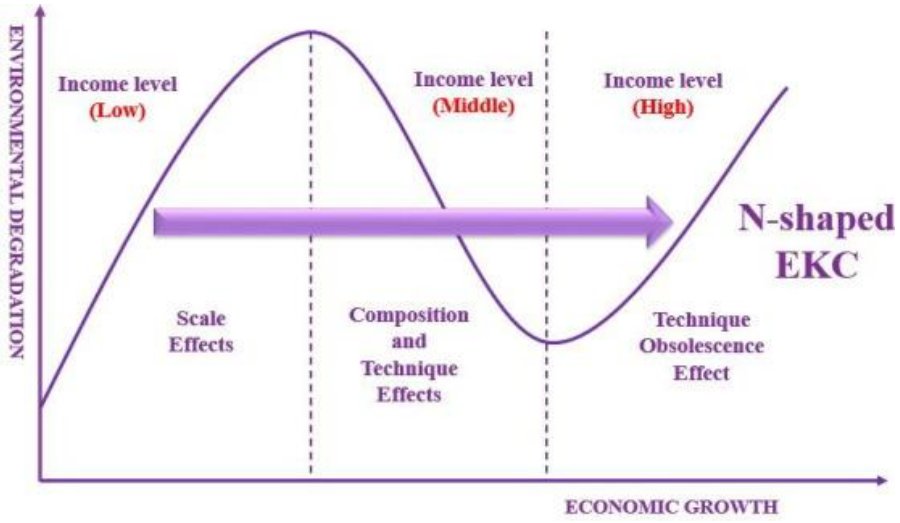


### 2.2.7 कुजनेट्स वक्र की आलोचना

हालाँकि पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र का मॉडल आर्थिक विकास और पर्यावरणीय गुणवत्ता के बीच एक सकारात्मक संबंध का सुझाव देता है, लेकिन इस अवधारणा की कई आलोचनाएँ भी हैं:

### विकासशील देशों में असमानता

कई आलोचक यह तर्क देते हैं कि पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र अवधारणा केवल विकसित देशों पर लागू होती है। विकासशील देशों में, जहाँ आर्थिक विकास अभी शुरुआती चरण में है, पर्यावरणीय समस्याएँ अधिक गंभीर हैं और संसाधनों की कमी के कारण उनके पास स्वच्छ प्रौद्योगिकी में निवेश करने की क्षमता नहीं होती। इससे विकासशील देशों में पर्यावरणीय ह्रास की संभावना रहती है, जबकि विकसित देश अपने प्रदूषणकारी उद्योगों को इन देशों में स्थानांतरित कर देते हैं।

### जलवायु परिवर्तन और वैश्विक प्रभाव

पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र अवधारणा स्थानीय या राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरणीय समस्याओं को देखती है, लेकिन वैश्विक समस्याओं, जैसे जलवायु परिवर्तन, पर इसका प्रभाव सीमित होता है। जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक समस्या है, और किसी एक देश के आर्थिक विकास के साथ इसके समाधान की उम्मीद नहीं की जा सकती। इसके लिए वैश्विक स्तर पर समन्वित प्रयासों की आवश्यकता है।

### दीर्घकालिक समाधान की अनिश्चितता

यह भी तर्क दिया जाता है कि पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र केवल कुछ प्रकार के प्रदूषण या पर्यावरणीय समस्याओं के लिए मान्य हो सकता है। उदाहरण के लिए, वायु और जल प्रदूषण में सुधार हो सकता है, लेकिन जैव विविधता की हानि और ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्याएँ दीर्घकालिक हो सकती हैं और आर्थिक विकास के उच्च स्तर पर भी जारी रह सकती हैं।

### 2.2.8 कुजनेट्स वक्र का व्यावहारिक उपयोग

कुजनेट्स वक्र का व्यावहारिक उपयोग नीति-निर्माण में होता है। पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र का मॉडल यह सुझाव देता है कि पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान के लिए आर्थिक विकास आवश्यक है, लेकिन इसे केवल विकास पर निर्भर नहीं किया जा सकता। सरकारों को प्रारंभिक चरण में ही पर्यावरणीय नीतियाँ लागू करनी चाहिए, ताकि विकास के साथ पर्यावरणीय गिरावट को नियंत्रित किया जा सके।

पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र मॉडल यह सुझाव देता है कि सतत विकास (Sustainable Development) के लिए आर्थिक और पर्यावरणीय नीतियों के बीच संतुलन स्थापित करना आवश्यक है। उदाहरण के लिए, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को बढ़ावा देना, ऊर्जा की दक्षता में सुधार, और प्रदूषणकारी उद्योगों पर नियंत्रण जैसे कदम उठाए जा सकते हैं।

### 2.2.9 निष्कर्ष

पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र (EKC) अवधारणा आर्थिक विकास और पर्यावरणीय ह्रास के बीच एक जटिल संबंध को स्पष्ट करती है। हालांकि आर्थिक विकास के प्रारंभिक चरण में पर्यावरणीय गिरावट बढ़ती है, लेकिन एक निश्चित बिंदु के बाद, विकास के साथ पर्यावरणीय गुणवत्ता में सुधार हो सकता है। लेकिन यह भी स्पष्ट है कि केवल आर्थिक विकास पर निर्भर होकर पर्यावरणीय समस्याओं को हल नहीं किया जा सकता। इसके लिए सरकारों, उद्योगों, और समाज के सभी हिस्सों को समन्वित रूप से काम करने की आवश्यकता है। इस प्रकार, कुजनेट्स वक्र सतत विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण अवधारणा है, लेकिन इसे सही तरीके से लागू करने के लिए दीर्घकालिक और वैश्विक दृष्टिकोण अपनाना होगा।

**2.3.0 पर्यावरण और आय का चक्रीय प्रवाह** (Circular Flow of Environment and Income) एक ऐसा मॉडल है जो यह प्रदर्शित करता  है कि किस प्रकार अर्थव्यवस्था और पर्यावरण के बीच अंतर्संबंध हैं। यह मॉडल आर्थिक गतिविधियों, आय, और संसाधनों के उपयोग को समझने में मदद करता है और बताता है कि कैसे पर्यावरणीय संसाधनों का उपभोग और उपयोग आर्थिक उत्पादन और आय के वितरण को प्रभावित करता है। साथ ही, यह भी बताता है कि आर्थिक गतिविधियाँ पर्यावरण पर कैसे प्रभाव डालती हैं।

यह मॉडल मुख्य रूप से चार घटकों के बीच प्रवाह को दिखाता है:

1. **प्राकृतिक संसाधन** (Natural Resources)
2. **उत्पादन क्षेत्र** (Production Sector)
3. **उपभोक्ता क्षेत्र** (Consumer Sector)
4. **अपशिष्ट और प्रदूषण** (Waste and Pollution)

2.3.1 चक्रीय प्रवाह मॉडल का विवरण:

**1.** प्राकृतिक संसाधन

- पर्यावरण से हम प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करते हैं, जैसे कि भूमि, जल, खनिज, और ऊर्जा स्रोत। ये संसाधन उत्पादन प्रक्रियाओं के लिए कच्चे माल के रूप में कार्य करते हैं।
- ये संसाधन सीधे कृषि, उद्योग, और ऊर्जा उत्पादन में उपयोग किए जाते हैं, जिससे उत्पादन संभव होता है और समाज में आय का सृजन होता है।

**2.** उत्पादन क्षेत्र

- प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कर, कंपनियाँ और उद्योग वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन करते हैं। उत्पादन की प्रक्रिया में कच्चे माल को तैयार उत्पाद में बदल दिया जाता है।
- इसके साथ ही, उत्पादन की प्रक्रिया में ऊर्जा का उपभोग होता है और पर्यावरणीय नुकसान भी होता है, जैसे कि प्रदूषण और अपशिष्ट का उत्पादन।
- यह प्रक्रिया समाज में आय और रोजगार उत्पन्न करती है।

**3.** उपभोक्ता क्षेत्र

- उपभोक्ता आय का उपयोग वस्तुओं और सेवाओं को खरीदने के लिए करते हैं। यह उपभोग चक्रीय प्रवाह को चालू रखता है क्योंकि उपभोक्ता वस्तुओं और सेवाओं की मांग उत्पादन की प्रक्रिया को फिर से शुरू करती है।
- उपभोक्ता भी अपशिष्ट और प्रदूषण उत्पन्न करते हैं, जैसे कि प्लास्टिक कचरा, जैविक कचरा, और ऊर्जा का अपव्यय।

**4.** अपशिष्ट और प्रदूषण

- उत्पादन और उपभोग की प्रक्रियाओं से उत्पन्न अपशिष्ट और प्रदूषण पर्यावरण को प्रभावित करते हैं। इसमें औद्योगिक प्रदूषण, जल और वायु प्रदूषण, और अन्य प्रकार के पर्यावरणीय हानि शामिल हैं।
- इस प्रवाह में सरकार और समाज की भूमिका महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि वे प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए नीतियाँ बनाते हैं और अपशिष्ट प्रबंधन के लिए योजनाएँ लागू करते हैं।

### 2.3.2 मॉडल का चित्रण:

1. **प्राकृतिक संसाधन**: यह चक्र पर्यावरण से शुरू होता है, जहाँ से प्राकृतिक संसाधन निकलकर उत्पादन क्षेत्र में जाते हैं।
2. **उत्पादन क्षेत्र**: उत्पादन प्रक्रिया में इन संसाधनों का उपयोग किया जाता है, जिससे वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन होता है। इसके साथ ही, प्रदूषण और अपशिष्ट उत्पन्न होते हैं, जो वापस पर्यावरण में चले जाते हैं।
3. **उपभोक्ता क्षेत्र**: उपभोक्ता आय का उपयोग करके वस्तुओं और सेवाओं का उपभोग करते हैं। उपभोग के बाद भी अपशिष्ट और प्रदूषण का उत्पादन होता है, जो पर्यावरण में वापस जाता है।
4. **प्रदूषण नियंत्रण और पुनर्चक्रण**: सरकार और अन्य संस्थाएँ अपशिष्ट प्रबंधन, प्रदूषण नियंत्रण, और पुनर्चक्रण की प्रक्रियाओं के माध्यम से पर्यावरणीय हानि को कम करने का प्रयास करती हैं।

### 2.3.3 चक्रीय प्रवाह मॉडल का निष्कर्ष:

यह मॉडल इस पर प्रकाश डालता है कि आर्थिक गतिविधियाँ (उत्पादन और उपभोग) और पर्यावरण एक-दूसरे पर निर्भर हैं। प्राकृतिक संसाधनों का दोहन आर्थिक आय का स्रोत है, लेकिन इसके साथ-साथ यह पर्यावरणीय गिरावट का कारण भी बनता है। अतः पर्यावरणीय क्षति को कम करने के लिए प्रदूषण नियंत्रण और सतत विकास नीतियों का कार्यान्वयन आवश्यक है ताकि आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संतुलन एक साथ बनाए रखा जा सके।

## 2.4संदर्भ ग्रंथ सूची:


1. **"Environmental and Natural Resource Economics"**
   लेखक: **Tom Tietenberg** और **Lynne Lewis**
   प्रकाशक: **Taylor & Francis, 13 March 2018, ISBN: 9781351803373**
2. **"Economics of the Environment: Selected Readings"**
   संपादक: **Robert N. Stavins**
   प्रकाशक: **Edward Elgar Publishing, 2019, ISBN: 9781788972079**
3. विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र

   लेखक: **Dr. Anupam Agarwal, Dr. Alok Gupta**

   प्रकाशक: **SBPD Publications, 6 July 2021, ISBN: 9789389585339**

4. पर्यावरणीय अर्थशास्त्र

   लेखक: डॉ. वी.सी. सिन्हा, डॉ. रितिका सिन्हा

   प्रकाशक: **SBPD Publishing House, 8 July 2024, ISBN: 9788119142392**

5. **"The Economics of Climate Change: The Stern Review"**
   लेखक: Nicholas Stern
   प्रकाशक: Cambridge University Press


## 2.5 सामान्य बोध प्रश्न:

- **कुजनेट्स वक्र (Kuznets Curve) किसके बीच संबंध को दर्शाता है?**

a) आय और जनसंख्या
b) आर्थिक विकास और आय असमानता
c) आय और बेरोजगारी
d) आर्थिक विकास और निर्यात

**उत्तर:** b) आर्थिक विकास और आय असमानता

- **पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र (Environmental Kuznets Curve) का मुख्य उद्देश्य क्या है?**

a) पर्यावरणीय क्षति को आर्थिक विकास से अलग करना
b) आर्थिक विकास के साथ पर्यावरणीय ह्रास को समझाना
c) गरीबी और पर्यावरणीय समस्याओं के बीच संबंध को समझना
d) जनसंख्या वृद्धि और पर्यावरण के बीच संबंध को समझाना

**उत्तर:** b) आर्थिक विकास के साथ पर्यावरणीय ह्रास को समझाना

· **कुजनेट्स वक्र के अनुसार, आर्थिक विकास के प्रारंभिक चरण में आय असमानता कैसे प्रभावित होती है?**

a) घटती है
b) स्थिर रहती है
c) बढ़ती है
d) समाप्त हो जाती है

**उत्तर:** c) बढ़ती है

· **कुजनेट्स वक्र के अनुसार, आर्थिक विकास के उच्च स्तर पर पहुँचने पर आय असमानता का क्या होता है?**

a) घटने लगती है
b) बढ़ने लगती है
c) स्थिर रहती है
d) समाप्त हो जाती है

**उत्तर:** a) घटने लगती है

· **पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र (EKC) के किस चरण में पर्यावरणीय क्षति घटने लगती है?**

a) प्रारंभिक आर्थिक विकास
b) मध्यम आर्थिक विकास
c) उच्च आर्थिक विकास
d) बिना विकास के

**उत्तर:** c) उच्च आर्थिक विकास

· **कुजनेट्स वक्र अवधारणा किस अर्थशास्त्री से जुड़ा है?**

a) जॉन मेनार्ड केन्स
b) एडम स्मिथ
c) साइमन कुजनेट्स
d) मिल्टन फ्रीडमैन

**उत्तर:** c) साइमन कुजनेट्स

· **पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र (EKC) को किस प्रकार का ग्राफ़ माना जाता है?**

a) U-आकार का
b) उल्टा U-आकार का
c) L-आकार का
d) S-आकार का

**उत्तर:** b) उल्टा U-आकार का

· **कुजनेट्स वक्र में निम्नलिखित में से किस पर ध्यान केंद्रित किया जाता है?**
a) केवल प्राकृतिक संसाधनों के दोहन पर
b) सतत विकास पर
c) असमानता और विकास के बदलते चरणों पर
d) केवल औद्योगिक विकास पर

**उत्तर:** c) असमानता और विकास के बदलते चरणों पर

· **पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र के अनुसार, जब आर्थिक विकास बहुत ऊँचे स्तर पर पहुँच जाता है, तो क्या होता है?**
a) पर्यावरणीय ह्रास बढ़ती है
b) पर्यावरणीय ह्रास कम होने लगती है
c) प्रदूषण स्थिर रहता है
d) पर्यावरण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता

**उत्तर:** b) पर्यावरणीय ह्रास कम होने लगती है

· **कुजनेट्स वक्र अवधारणा का मुख्य निष्कर्ष क्या है?**
a) विकास के साथ आय असमानता घटती है
b) विकास के साथ आय असमानता पहले बढ़ती है फिर घटती है
c) आय असमानता स्थिर रहती है
d) आय असमानता विकास के साथ बढ़ती जाती है

**उत्तर:** b) विकास के साथ आय असमानता पहले बढ़ती है फिर घटती है

**2.6 अभ्यासार्थ प्रश्न: कुजनेट्स वक्र अवधारणा पर प्रश्न** निम्नलिखित हैं:

1. **कुजनेट्स वक्र क्या है और इसका आर्थिक विकास के साथ क्या संबंध है**?
2. **कुजनेट्स वक्र किस अर्थशास्त्री द्वारा प्रस्तुत किया गया था**? **और इसका मुख्य उद्देश्य क्या था**?
3. **कुजनेट्स वक्र के अनुसार**, **आय असमानता आर्थिक विकास के प्रारंभिक और उच्च चरणों में कैसे बदलती है**?
4. **पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र** (EKC) **का क्या अर्थ है और यह आर्थिक विकास के साथ पर्यावरणीय** ह्रास **को कैसे दर्शाता है**?
5. **कुजनेट्स वक्र का उल्टा**-U **आकार का क्या महत्व है**, **और यह आर्थिक विकास के किन चरणों को दर्शाता है**?
6. **आय असमानता और पर्यावरणीय** ह्रास **के बीच कुजनेट्स वक्र क्या संबंध स्थापित करता है**?
7. **कुजनेट्स वक्र का कौन सा चरण आय असमानता के घटने की शुरुआत को दर्शाता है**? **इसके क्या कारण हो सकते हैं**?
8. **पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र के अनुसार**, **किन परिस्थितियों में पर्यावरणीय प्रदूषण कम होना शुरू हो जाता है**?
9. **कुजनेट्स वक्र किस प्रकार सतत विकास** (Sustainable Development) **की अवधारणा से संबंधित है**?
10. **कुजनेट्स वक्र और विकासशील देशों में आय असमानता का क्या संबंध है**? **क्या यह सभी देशों पर समान रूप से लागू होता है**?

**व्यावहारिक बोध प्रश्न:**

1. **कुजनेट्स वक्र के अनुसार, आर्थिक विकास के दौरान किन कारणों से प्रारंभिक चरण में आय असमानता बढ़ती है**?
2. **पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र** (EKC) **की आलोचनाओं पर चर्चा करें। क्या यह सभी पर्यावरणीय समस्याओं के लिए उपयुक्त है**?
3. **कुजनेट्स वक्र का औद्योगिक विकास और शहरीकरण पर क्या प्रभाव पड़ता है**?
4. **क्या कुजनेट्स वक्र सभी प्रकार की आय असमानताओं को पूरी तरह से समझा सकता है**? **इस पर अपने विचार प्रस्तुत करें।**
5. **पर्यावरणीय कुजनेट्स वक्र की अवधारणा क्या यह दर्शाती है कि आर्थिक विकास के बिना पर्यावरणीय सुधार संभव नहीं है**?

इकाई–03

# ओजोन परत ह्रास, वैश्विक उष्मीकरण एवं मौसम परिवर्तन

## इकाई की रूपरेखा:


**3.0उद्देश्य**

**3.1प्रस्तावना**

**3.2 ओज़ोन परत का ह्रास: अवधारणा**

**3.2.1 ओज़ोन परत का ह्रास और नकारात्मक बाह्यताएं अवधारणा**

**3.2.2 सार्वजनिक वस्तु के रूप में ओज़ोन परत**

**3.2.3 ओज़ोन परत ह्रास के आर्थिक प्रभाव**

**3.2.4 ओज़ोन परत संरक्षण की आर्थिक नीतियाँ**

**3.2.5 सतत विकास और ओज़ोन परत संरक्षण**

**3.3 वैश्विक ऊष्मीकरण**

**3.3.1 वैश्विक ऊष्मीकरण के कारण**

**3.3.2 वैश्विक ऊष्मीकरण के प्रभाव**

**3.3.3 वैश्विक ऊष्मीकरण के समाधान**

**3.3.4 अंतर्राष्ट्रीय समझौते और वैश्विक पहल**

**3.4 मौसम परिवर्तन**

**3.4.1 मौसम परिवर्तन क्या है?**

**3.4.2 मौसम परिवर्तन के प्रभाव**

**3.4.3 वैश्विक ऊष्मीकरण और मौसम परिवर्तन की आर्थिक विश्लेषण**

**3.4.4 जलवायु परिवर्तन से निपटने की आर्थिक नीतियाँ**

**3.5 संदर्भ ग्रंथ सूची**

**3.6 सामान्य बोध प्रश्न**

**3.7 अभ्यासार्थ प्रश्न**


**3.0 उद्देश्य:**

**पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में ओज़ोन परत का ह्रास, वैश्विक ऊष्मीकरण एवं मौसम परिवर्तन की अवधारणा के** निम्न उद्देश्यों को समझने में हम समर्थ होंगे।

1. **पर्यावरणीय संतुलन की रक्षा**
2. **आर्थिक प्रभावों का मूल्यांकन**
3. **नीतियों का विकास**
4. **अंतर्राष्ट्रीय सहयोग का समर्थन**
5. **जागरूकता और शिक्षा का संवर्धन**
6. **स्थायी विकास को बढ़ावा**
7. **वैज्ञानिक अनुसंधान को प्रोत्साहित करना**
8. **सार्वजनिक नीति में सुधार**

9. **दीर्घकालिक रणनीतियों का विकास**
10. **पर्यावरणीय न्याय का संवर्धन**

**3.1 प्रस्तावना: ओज़ोन परत का ह्रास, वैश्विक ऊष्मीकरण एवं मौसम परिवर्तन** (Ozone Layer Depletion, Global Warming, and Climate Change) पर्यावरणीय समस्याओं के महत्वपूर्ण पहलू हैं, जो आपस में गहराई से जुड़े हुए हैं। इन तीनों समस्याओं का पृथ्वी और मानव जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। आइए इनका विस्तार से अध्ययन करें:

**3.2 ओज़ोन परत ह्रास का अवधारणा:**

**ओज़ोन परत** पृथ्वी के वायुमंडल के समतापमंडल (Stratosphere) में पाई जाती है, जो सूर्य से आने वाली हानिकारक **अल्ट्रावायलेट (UV) किरणों** को अवशोषित करती है और पृथ्वी पर जीवन की सुरक्षा करती है। ओज़ोन परत का क्षरण मुख्य रूप से मानव निर्मित रसायनों के कारण होता है, जिनमें **क्लोरोफ्लोरोकार्बन (CFCs)**, **हैलोन्स**, और अन्य ओज़ोन-हानिकारक पदार्थ शामिल हैं।

**पर्यावरणीय अर्थशास्त्र** में **ओज़ोन परत का ह्रास (Ozone Layer Depletion)** एक महत्वपूर्ण विषय है, क्योंकि यह न केवल पर्यावरणीय संतुलन बल्कि आर्थिक गतिविधियों और मानव कल्याण पर भी गहरा प्रभाव डालता है। पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में, हम ओज़ोन परत के ह्रास को प्राकृतिक संसाधनों की गिरावट के रूप में देखते हैं, जिससे संसाधनों का प्रबंधन और संरक्षण करना आवश्यक हो जाता है। आइए इस समस्या को पर्यावरणीय अर्थशास्त्र के दृष्टिकोण से समझते हैं:

**3.2.1 ओज़ोन परत का ह्रास और नकारात्मक बाह्यताएं (Negative Externalities)**

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में बाह्यताएं (Externalities) उन प्रभावों को संदर्भित करती हैं, जो किसी आर्थिक गतिविधि का किसी तीसरे पक्ष पर पड़ता है, लेकिन इसका कोई प्रत्यक्ष वित्तीय लेन-देन नहीं होता। ओज़ोन परत का ह्रास एक प्रमुख नकारात्मक बाह्यता है, जिसमें कुछ आर्थिक गतिविधियाँ (जैसे CFCs का उपयोग) समाज और पर्यावरण पर व्यापक नुकसान करती हैं, लेकिन उन गतिविधियों में शामिल पक्षों को इन नुकसानों की भरपाई नहीं करनी पड़ती।

**नकारात्मक बाह्यताओं के उदाहरण:**

- **औद्योगिक उत्पादन**: औद्योगिक उत्पादन में इस्तेमाल होने वाले रसायन, जैसे CFCs, ओज़ोन परत को नुकसान पहुँचाते हैं, लेकिन इस नुकसान की भरपाई उद्योग को नहीं करनी पड़ती।
- **उपभोक्ता गतिविधियाँ**: एयर कंडीशनिंग, रेफ्रिजरेशन, और एरोसोल स्प्रे में उपयोग किए जाने वाले रसायन पर्यावरण को नुकसान पहुँचाते हैं, लेकिन इसके लिए उपभोक्ताओं को प्रत्यक्ष रूप से जिम्मेदार नहीं ठहराया जाता।

इस तरह की बाह्यताओं के परिणामस्वरूप, सरकारें और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ **पर्यावरणीय विनियमन** के रूप में नीतिगत हस्तक्षेप करती हैं।

**3.2.2 सार्वजनिक वस्तु के रूप में ओज़ोन परत (Ozone Layer as a Public Good)**

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र के दृष्टिकोण से, ओज़ोन परत एक **सार्वजनिक वस्तु** (Public Good) है, क्योंकि:

- यह **गैर-प्रतिस्पर्धी** (Non-rival) है: ओज़ोन परत का उपयोग किसी एक व्यक्ति द्वारा करने से दूसरों के लिए इसका उपयोग सीमित नहीं होता।
- यह **गैर-अनन्य** (Non-excludable) है: किसी भी देश या व्यक्ति को ओज़ोन परत के लाभ से वंचित नहीं किया जा सकता है।

सार्वजनिक वस्तुएँ अक्सर **फ्री-राइडर समस्या** (Free-Rider Problem) उत्पन्न करती हैं, जिसमें लोग इसका लाभ उठाते हैं लेकिन इसके संरक्षण में योगदान नहीं करते। ओज़ोन परत की सुरक्षा के लिए सामूहिक अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों की आवश्यकता है, जैसे कि **मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल**।

**3.2.3 ओज़ोन परत ह्रास के आर्थिक प्रभाव (Economic Impacts of Ozone Layer Depletion)**

ओज़ोन परत के ह्रास के कारण कई नकारात्मक आर्थिक प्रभाव उत्पन्न होते हैं। इन प्रभावों को विभिन्न क्षेत्रों में देखा जा सकता है:

**स्वास्थ्य पर प्रभाव:**

- **स्वास्थ्य देखभाल लागत में वृद्धि**: ओज़ोन परत के ह्रास के कारण UV किरणों की वृद्धि से त्वचा कैंसर, मोतियाबिंद, और अन्य स्वास्थ्य समस्याएँ बढ़ती हैं, जिससे स्वास्थ्य सेवाओं पर आर्थिक बोझ बढ़ता है।
- **उत्पादकता में कमी**: स्वास्थ्य समस्याओं के कारण श्रमिकों की उत्पादकता में कमी आ सकती है, जो देश की आर्थिक वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

**कृषि पर प्रभाव:**

- **कृषि उत्पादन में गिरावट**: UV किरणों के बढ़ने से फसलों की पैदावार कम हो सकती है, जिससे खाद्य सुरक्षा संकट पैदा हो सकता है। इसके अलावा, कृषि उत्पादन में कमी से किसानों की आय घट सकती है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी बढ़ने की संभावना होती है।

**जलीय पारिस्थितिकी तंत्र पर प्रभाव:**

- **समुद्री जीवन पर प्रभाव**: ओज़ोन परत के ह्रास से समुद्री फाइटोप्लांकटन की उत्पादकता घट सकती है, जिससे समुद्री खाद्य श्रृंखला प्रभावित होती है। इसका प्रभाव मत्स्य पालन उद्योग पर भी पड़ता है, जो कई देशों की अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।

### 3.2.4 ओज़ोन परत संरक्षण की आर्थिक नीतियाँ (Economic Policies for Ozone Layer Protection)

ओज़ोन परत की सुरक्षा के लिए पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में कई नीतियाँ और उपाय सुझाए गए हैं, जिनका उद्देश्य आर्थिक गतिविधियों को ओज़ोन-हानिकारक रसायनों के उपयोग से हटाकर वैकल्पिक और पर्यावरण-अनुकूल तरीकों की ओर मोड़ना है:

**1. अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और समझौते:**

- **मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल**: 1987 में लागू किया गया यह समझौता ओज़ोन परत को नुकसान पहुँचाने वाले रसायनों के उत्पादन और उपयोग को चरणबद्ध रूप से समाप्त करने के लिए स्थापित किया गया। यह पर्यावरणीय अर्थशास्त्र का एक उत्कृष्ट उदाहरण है, जहाँ अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से सार्वजनिक वस्तु की सुरक्षा सुनिश्चित की जाती है।

**2. बाजार-आधारित साधन:**

- **कार्बन क्रेडिट और ट्रेडिंग**: ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को नियंत्रित करने के लिए कार्बन क्रेडिट्स और बाजार-आधारित तंत्रों का उपयोग किया जा सकता है। इसी प्रकार ओज़ोन-हानिकारक रसायनों के उत्पादन को नियंत्रित करने के लिए भी बाजार-आधारित नीतियाँ लागू की जा सकती हैं।

**3. कराधान और सब्सिडी:**

- **ग्रीन टेक्नोलॉजी पर सब्सिडी**: सरकारें उन प्रौद्योगिकियों पर सब्सिडी प्रदान कर सकती हैं जो ओज़ोन परत को नुकसान नहीं पहुँचातीं, जैसे कि HFCs के बजाय वैकल्पिक शीतलक।
- **ओज़ोन-हानिकारक रसायनों पर कर**: CFCs और अन्य हानिकारक रसायनों पर कर लगाकर उनके उपयोग को हतोत्साहित किया जा सकता है।

**4. जागरूकता और शिक्षा:**

- **सार्वजनिक जागरूकता अभियान**: ओज़ोन परत के ह्रास के खतरों और इसके निवारण के तरीकों के बारे में जागरूकता फैलाने के लिए शिक्षा और प्रचार अभियान चलाए जा सकते हैं। यह नागरिकों और उपभोक्ताओं को पर्यावरणीय दृष्टि से जिम्मेदार विकल्प चुनने के लिए प्रेरित करेगा।

### 3.2.5 सतत विकास और ओज़ोन परत संरक्षण (Sustainable Development and Ozone Layer Protection)

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में **सतत विकास** (Sustainable Development) का उद्देश्य आर्थिक वृद्धि को पर्यावरणीय नुकसान के बिना प्राप्त करना है। ओज़ोन परत के संरक्षण के लिए सतत विकास की नीतियों का महत्व है, जिनमें निम्नलिखित शामिल हैं:

- **क्लीन टेक्नोलॉजी का विकास**: प्रदूषण रहित और ओज़ोन-अनुकूल प्रौद्योगिकियों के विकास से न केवल पर्यावरण की सुरक्षा होगी, बल्कि रोजगार सृजन और आर्थिक वृद्धि को भी प्रोत्साहन मिलेगा।
- **संसाधन दक्षता**: प्राकृतिक संसाधनों का कुशलतापूर्वक उपयोग करके पर्यावरणीय नुकसान को कम किया जा सकता है और आर्थिक विकास को बनाए रखा जा सकता है।

### 3.3 वैश्विक ऊष्मीकरण (Global Warming)

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में **वैश्विक ऊष्मीकरण** (Global Warming) एक प्रमुख विषय है, जो न केवल पर्यावरणीय असंतुलन बल्कि वैश्विक अर्थव्यवस्था पर भी गहरा प्रभाव डालता है। यह अवधारणा जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में मानवजनित गतिविधियों के परिणामस्वरूप पृथ्वी के औसत तापमान में वृद्धि को इंगित करती है। इस तापमान वृद्धि के मुख्य कारण ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन है, जो औद्योगिक गतिविधियों, ऊर्जा उत्पादन, परिवहन, और कृषि के माध्यम से होता है। **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र** में **वैश्विक ऊष्मीकरण** (Global Warming) और **मौसम परिवर्तन** (Climate Change) अत्यंत महत्वपूर्ण विषय हैं, क्योंकि ये समस्याएँ आर्थिक गतिविधियों, समाज और पर्यावरण पर दीर्घकालिक प्रभाव डालती हैं। इनका अध्ययन न केवल आर्थिक वृद्धि और विकास के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, बल्कि सतत विकास और भविष्य की पीढ़ियों के संसाधनों की सुरक्षा के लिए भी आवश्यक है।

### 3.3.1 वैश्विक ऊष्मीकरण के कारण (Causes of Global Warming)

#### 1.1 ग्रीनहाउस गैसें (Greenhouse Gases)

वैश्विक ऊष्मीकरण का प्रमुख कारण ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन है। ये गैसें, जैसे **कार्बन डाइऑक्साइड ($CO_2$)**, **मीथेन ($CH_4$)**, **नाइट्रस ऑक्साइड ($N_2O$)**, और **फ्लोरोकार्बन**, पृथ्वी के वायुमंडल में एक आवरण बनाती हैं, जिससे सूर्य की ऊष्मा वापस अंतरिक्ष में नहीं जा पाती और पृथ्वी का तापमान बढ़ता है।

#### 1.2 औद्योगिक क्रांति और जीवाश्म ईंधन का उपयोग

औद्योगिक क्रांति के बाद से, मानव समाज ने बड़े पैमाने पर **कोयला, पेट्रोलियम, और प्राकृतिक गैस** जैसे जीवाश्म ईंधनों का उपयोग किया है। इन ईंधनों के जलने से बड़ी मात्रा में $CO_2$ और अन्य ग्रीनहाउस गैसें उत्सर्जित होती हैं, जो वायुमंडल में जमा होकर तापमान में वृद्धि करती हैं।

#### 1.3 कृषि और पशुपालन

कृषि गतिविधियों में, विशेष रूप से धान की खेती और मवेशी पालन से **मीथेन** और **नाइट्रस ऑक्साइड** का उत्सर्जन होता है। ये गैसें भी ग्रीनहाउस प्रभाव में योगदान करती हैं और वैश्विक तापमान को बढ़ाती हैं।

#### 1.4 वनों की कटाई (Deforestation)

वन पृथ्वी के सबसे बड़े कार्बन सिंक (Carbon Sink) हैं, जो वायुमंडल से $CO_2$ को अवशोषित करते हैं। जब वनों की कटाई की जाती है, तो यह क्षमता कम हो जाती है, और कटे हुए वृक्षों से $CO_2$ उत्सर्जित होता है, जिससे वैश्विक ऊष्मीकरण की समस्या और बढ़ जाती है।

**1.5 शहरीकरण**: भारी मात्रा में  शहरीकरण भी वैश्विक ऊष्मीकरण के कारक हैं, जो ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को बढ़ाते हैं।

### 3.3.2 वैश्विक ऊष्मीकरण के प्रभाव (Impacts of Global Warming)

#### 2.1 मौसम परिवर्तन (Climate Change)

वैश्विक ऊष्मीकरण के कारण जलवायु में तीव्र परिवर्तन हो रहे हैं। इससे मौसम के पैटर्न में अनियमितता बढ़ रही है, जैसे:

- **अत्यधिक गर्मी की लहरें (Heatwaves)**: अत्यधिक गर्मी की लहरें अधिक बार और लंबे समय तक चलने लगी हैं।
- **अनियमित वर्षा**: कहीं अत्यधिक बारिश हो रही है तो कहीं सूखे की समस्या बढ़ रही है।

- **बाढ़ और सूखा**: बाढ़ और सूखा जैसी प्राकृतिक आपदाएँ बढ़ रही हैं, जिससे कृषि उत्पादन और जनजीवन प्रभावित हो रहे हैं।

**2.2 समुद्र स्तर में वृद्धि (Rising Sea Levels)**

वैश्विक तापमान में वृद्धि के कारण ध्रुवों की बर्फ और ग्लेशियर तेजी से पिघल रहे हैं, जिससे समुद्र का जल स्तर बढ़ रहा है। यह तटीय क्षेत्रों में रहने वाले लाखों लोगों के जीवन और आजीविका के लिए खतरा उत्पन्न कर रहा है।

**2.3 जैव विविधता पर प्रभाव (Impact on Biodiversity)**

तापमान में वृद्धि के कारण कई प्रजातियों के प्राकृतिक आवास नष्ट हो रहे हैं, जिससे जैव विविधता को गंभीर खतरा उत्पन्न हो रहा है। कई प्रजातियाँ विलुप्त हो रही हैं या नए आवास की तलाश में पलायन कर रही हैं, जिससे पारिस्थितिक तंत्र असंतुलित हो रहे हैं।

**2.4 आर्थिक प्रभाव (Economic Impacts)**

वैश्विक ऊष्मीकरण से अर्थव्यवस्था पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से कई नकारात्मक प्रभाव पड़ते हैं:

- **कृषि उत्पादन में कमी**: मौसम परिवर्तन के कारण फसलों की पैदावार प्रभावित हो रही है, जिससे खाद्य असुरक्षा और महँगाई बढ़ रही है।
- **स्वास्थ्य पर प्रभाव**: अत्यधिक गर्मी, जलवायु-संवेदनशील बीमारियों (जैसे मलेरिया और डेंगू) के फैलने से स्वास्थ्य सेवाओं पर आर्थिक बोझ बढ़ता है।
- **बुनियादी ढांचे का नुकसान**: बाढ़, तूफान, और समुद्र स्तर में वृद्धि के कारण तटीय क्षेत्रों और बुनियादी ढांचे को नुकसान पहुँचता है, जिससे भारी आर्थिक नुकसान होता है।

**3.3.3 वैश्विक ऊष्मीकरण के समाधान (Solutions to Global Warming)**

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में वैश्विक ऊष्मीकरण के समाधान के लिए कई नीतिगत और तकनीकी उपायों का सुझाव दिया गया है, जिनमें प्रमुख हैं:

**3.1 कार्बन कर (Carbon Tax)**

**कार्बन कर** एक ऐसी नीति है जिसमें उत्सर्जन करने वाली कंपनियों और व्यक्तियों पर ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन के आधार पर कर लगाया जाता है। इससे कार्बन उत्सर्जन को हतोत्साहित किया जाता है और स्वच्छ ऊर्जा के उपयोग को प्रोत्साहन मिलता है।

**3.2 उत्सर्जन व्यापार प्रणाली (Emission Trading System)**

उत्सर्जन व्यापार प्रणाली (ETS) एक **बाजार-आधारित तंत्र** है, जिसमें सरकारें कार्बन उत्सर्जन की एक सीमा निर्धारित करती हैं और कंपनियों को उत्सर्जन क्रेडिट देती हैं। कंपनियाँ अपनी आवश्यकताओं के अनुसार इन क्रेडिट्स का व्यापार कर सकती हैं, जिससे उत्सर्जन को नियंत्रित किया जा सकता है।

**3.3 नवीकरणीय ऊर्जा (Renewable Energy)**

**सौर ऊर्जा**, **पवन ऊर्जा**, और **जल विद्युत** जैसे नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग जीवाश्म ईंधनों के स्थान पर किया जा सकता है। ये ऊर्जा स्रोत स्वच्छ हैं और इनसे ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन नहीं होता, जिससे दीर्घकालिक रूप से वैश्विक ऊष्मीकरण को नियंत्रित किया जा सकता है।

**3.4 वनीकरण (Afforestation) और वृक्षारोपण (Reforestation)**

वन वायुमंडल से $CO_2$ को अवशोषित करने का एक प्रभावी साधन हैं। वनीकरण और वृक्षारोपण को बढ़ावा देकर कार्बन सिंक को बढ़ाया जा सकता है, जिससे वायुमंडल में ग्रीनहाउस गैसों की मात्रा कम होती है।

**3.5 ग्रीन प्रौद्योगिकी में निवेश (Investment in Green Technology)**

पर्यावरण-अनुकूल प्रौद्योगिकियों में निवेश करके जीवाश्म ईंधनों के उपयोग को कम किया जा सकता है। इससे न केवल पर्यावरणीय संरक्षण होता है, बल्कि अर्थव्यवस्था में नई नौकरियों का सृजन भी होता है।

**3.3.4 अंतर्राष्ट्रीय समझौते और वैश्विक पहल (International Agreements and Global Initiatives)**

### 4.1 पेरिस समझौता (Paris Agreement)

पेरिस समझौता 2015 में जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए एक ऐतिहासिक अंतर्राष्ट्रीय समझौता है। इसका उद्देश्य वैश्विक तापमान वृद्धि को **2 डिग्री सेल्सियस** से कम रखना है, और इसे 1.5 डिग्री तक सीमित करने के प्रयास करना है। इस समझौते में देशों को ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को नियंत्रित करने के लिए नीतियाँ लागू करने और नवीकरणीय ऊर्जा में निवेश करने की आवश्यकता है।

### 4.2 मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल (Montreal Protocol)

मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल 1987 में लागू किया गया एक अंतर्राष्ट्रीय समझौता है, जिसका उद्देश्य ओज़ोन परत को नुकसान पहुँचाने वाले रसायनों के उपयोग को कम करना था। इस प्रोटोकॉल की सफलता यह साबित करती है कि वैश्विक सहयोग से पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान संभव है। यह प्रोटोकॉल वैश्विक ऊष्मीकरण को भी अप्रत्यक्ष रूप से नियंत्रित करने में सहायक है, क्योंकि ओज़ोन-हानिकारक रसायन भी ग्रीनहाउस गैसों के रूप में कार्य करते हैं।

### 4.3 संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्य (United Nations Sustainable Development Goals - SDGs)

**संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्य** (SDGs) में जलवायु कार्रवाई (Climate Action) को एक प्रमुख लक्ष्य के रूप में शामिल किया गया है। इसका उद्देश्य जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करना, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को नियंत्रित करना, और सतत विकास को बढ़ावा देना है।

### 3.4 मौसम परिवर्तन (Climate Change)

#### 3.4.1 मौसम परिवर्तन क्या है?

मौसम परिवर्तन का तात्पर्य लंबे समय तक वैश्विक और क्षेत्रीय मौसम पैटर्न में हो रहे उन बदलावों से है जो मुख्य रूप से मानवजनित (man-made) गतिविधियों के कारण उत्पन्न हो रहे हैं। यह परिवर्तन मुख्यतः ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन और भूमि के उपयोग में हो रहे परिवर्तनों के कारण होता है, जिससे पृथ्वी के जलवायु तंत्र में असंतुलन पैदा हो रहा है।

#### 3.4.2 मौसम परिवर्तन के प्रभाव:

1. **कृषि और खाद्य सुरक्षा पर प्रभाव**:
    - अत्यधिक सूखा, अनियमित बारिश, और जलवायु अस्थिरता फसल उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव डालती है, जिससे वैश्विक खाद्य सुरक्षा संकट उत्पन्न हो सकता है।
    - कुछ क्षेत्रों में कृषि उत्पादन में गिरावट होती है, जबकि अन्य क्षेत्रों में इसका अप्रत्याशित रूप से सकारात्मक प्रभाव हो सकता है।
2. **प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव**:
    - जलवायु परिवर्तन से जल संसाधनों की उपलब्धता और गुणवत्ता पर भी प्रभाव पड़ता है। कई क्षेत्रों में जल संकट उत्पन्न हो सकता है, जबकि बाढ़ से अन्य क्षेत्रों में पानी की गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है।
    - वन संसाधन, मत्स्यपालन, और जैव विविधता भी जलवायु परिवर्तन के कारण खतरे में हैं।
3. **मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव**:
    - बढ़ते तापमान और बदलते मौसम पैटर्न से नई बीमारियाँ फैलने का खतरा रहता है, जैसे कि मलेरिया और डेंगू जैसी जलवायु-संवेदनशील बीमारियाँ।
    - हीटवेव और अत्यधिक तापमान से मृत्यु दर में वृद्धि हो सकती है, विशेष रूप से बुजुर्ग और कमजोर समुदायों में।
4. **आर्थिक असमानता में वृद्धि**:
    - मौसम परिवर्तन से सबसे अधिक प्रभावित वे गरीब और विकासशील देश होते हैं, जो पहले से ही आर्थिक रूप से कमजोर हैं। इससे आर्थिक असमानता और बढ़ जाती है, क्योंकि इन देशों में जलवायु परिवर्तन से निपटने की संसाधनों की कमी होती है।

### 3.4.3 वैश्विक ऊष्मीकरण और मौसम परिवर्तन की आर्थिक विश्लेषण (Economic Analysis)

***बाह्यताओं (Externalities) का अध्ययन:***

मौसम परिवर्तन के संदर्भ में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को एक नकारात्मक बाह्यता के रूप में देखा जाता है। इसका अर्थ है कि एक व्यक्ति या उद्योग अपनी गतिविधियों से दूसरों पर नकारात्मक प्रभाव डालता है, जैसे कि वायुमंडलीय प्रदूषण, जिसका नुकसान समाज के अन्य लोगों को उठाना पड़ता है। इस बाह्यता को दूर करने के लिए नीति निर्माताओं को उचित उपाय करने की आवश्यकता होती है।

***2. लागत-लाभ विश्लेषण (Cost-Benefit Analysis)***

मौसम परिवर्तन को नियंत्रित करने के लिए नीतिगत हस्तक्षेप के लाभ और लागत का विश्लेषण करना पर्यावरणीय अर्थशास्त्र का एक महत्वपूर्ण भाग है। इस विश्लेषण के द्वारा यह समझने की कोशिश की जाती है कि जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए कौन से उपाय सबसे प्रभावी और आर्थिक दृष्टि से उचित हैं।

***3. बाजार आधारित तंत्र (Market-Based Mechanisms)***

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में बाजार आधारित तंत्र, जैसे कि **कार्बन कर (Carbon Tax)** और **उत्सर्जन व्यापार प्रणाली (Emission Trading System - ETS)**, मौसम परिवर्तन से निपटने के लिए उपयोग किए जाते हैं। कार्बन कर से कार्बन उत्सर्जन पर वित्तीय भार डालकर उद्योगों और उपभोक्ताओं को कम उत्सर्जन की दिशा में प्रेरित किया जाता है। उत्सर्जन व्यापार प्रणाली में कंपनियों को उत्सर्जन क्रेडिट दिए जाते हैं, जिनका वे व्यापार कर सकते हैं।

***4. जलवायु वित्तपोषण (Climate Finance)***

जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए वित्तीय संसाधनों का प्रबंधन एक महत्वपूर्ण चुनौती है। जलवायु वित्तपोषण के अंतर्गत, विकसित देशों से विकासशील देशों को धन मुहैया कराया जाता है, ताकि वे जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का सामना कर सकें और स्थायी विकास कर सकें।

**5. सतत विकास और हरित अर्थव्यवस्था (Sustainable Development and Green Economy):**

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में **सतत विकास** का मतलब है कि आर्थिक विकास इस प्रकार से किया जाए कि प्राकृतिक संसाधनों का दोहन कम से कम हो और अगली पीढ़ी के लिए पर्याप्त संसाधन उपलब्ध हों। **हरित अर्थव्यवस्था** (Green Economy) एक ऐसा आर्थिक मॉडल है जो पारिस्थितिकीय स्थिरता और कम कार्बन उत्सर्जन पर आधारित है, जहाँ प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित उपयोग किया जाता है।

### 3.4.4 जलवायु परिवर्तन से निपटने की आर्थिक नीतियाँ (Economic Policies to Mitigate Climate Change)

**1. कार्बन कर (Carbon Tax):**

**कार्बन कर** एक ऐसी नीति है, जिसमें ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन पर कर लगाया जाता है। यह कर उत्सर्जकों को आर्थिक रूप से हतोत्साहित करता है कि वे अधिक उत्सर्जन न करें और पर्यावरण-अनुकूल विकल्प अपनाएँ।

**2. उत्सर्जन व्यापार प्रणाली (Emission Trading System):**

**उत्सर्जन व्यापार प्रणाली** (Emission Trading System) या **कैप-एंड-ट्रेड** प्रणाली में सरकारें कार्बन उत्सर्जन की एक निश्चित सीमा (कैप) तय करती हैं। कंपनियों को एक निश्चित मात्रा में उत्सर्जन करने की अनुमति दी जाती है, और यदि वे इस सीमा से नीचे उत्सर्जन करती हैं, तो वे उत्सर्जन क्रेडिट्स को अन्य कंपनियों को बेच सकती हैं।

**3. नवीकरणीय ऊर्जा में निवेश (Investment in Renewable Energy):**

सरकारें और निजी क्षेत्र **सौर ऊर्जा**, **पवन ऊर्जा**, और **जल विद्युत** जैसी नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों में निवेश कर सकते हैं, जो जीवाश्म ईंधनों का उपयोग किए बिना ऊर्जा उत्पादन का एक स्थायी और पर्यावरण-अनुकूल तरीका प्रदान करते हैं।

**4. अनुसंधान एवं विकास (Research and Development):**

**ग्रीन टेक्नोलॉजी** के क्षेत्र में अनुसंधान और विकास को बढ़ावा देने के लिए सरकारें अनुदान और सब्सिडी प्रदान कर सकती हैं। यह लंबी अवधि में कार्बन उत्सर्जन को कम करने में मदद करेगा।

**निष्कर्ष:**

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में **वैश्विक ऊष्मीकरण** और **मौसम परिवर्तन** को गंभीर रूप से देखा जाता है क्योंकि ये पर्यावरणीय और आर्थिक स्थिरता के लिए खतरा उत्पन्न करते हैं। नीतियों का उद्देश्य उत्सर्जन को नियंत्रित करना, सतत विकास को बढ़ावा देना, और प्राकृतिक संसाधनों का कुशल प्रबंधन करना है। इन समस्याओं के समाधान के लिए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर समन्वित प्रयासों की आवश्यकता है, ताकि भावी पीढ़ियों को एक सुरक्षित और समृद्ध पर्यावरण प्रदान किया जा सके।

## 3.8 संदर्भ ग्रंथ सूची


1. **"Environmental and Natural Resource Economics"**
   लेखक: **Tom Tietenberg** और **Lynne Lewis**
   प्रकाशक: **Taylor & Francis, 13 March 2018, ISBN: 9781351803373**
2. **"Economics of the Environment: Selected Readings"**
   संपादक: **Robert N. Stavins**
   प्रकाशक: **Edward Elgar Publishing, 2019, ISBN: 9781788972079**
3. **विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: **Dr. Anupam Agarwal, Dr. Alok Gupta**
   प्रकाशक: **SBPD Publications, 6 July 2021, ISBN: 9789389585339**
4. **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: डॉ. वी.सी. सिन्हा, डॉ. रितिका सिन्हा
   प्रकाशक: **SBPD Publishing House, 8 July 2024, ISBN: 9788119142392**
5. **"The Economics of Climate Change: The Stern Review"**
   लेखक: Nicholas Stern
   प्रकाशक: Cambridge University Press


## 3.6 सामान्य बोध प्रश्न

**पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में ओज़ोन परत का ह्रास, वैश्विक ऊष्मीकरण एवं मौसम परिवर्तन अवधारणा पर सामान्य बोध प्रश्न:**

**वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Multiple Choice Questions - MCQs):**

1. **वैश्विक ऊष्मीकरण का मुख्य कारण क्या है?**
   (a) सूर्य की विकिरण में वृद्धि
   (b) ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन
   (c) ओज़ोन परत की मोटाई
   (d) ज्वालामुखी विस्फोट
   **उत्तर**: (b) ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन
2. **ग्रीनहाउस प्रभाव (Greenhouse Effect) से संबंधित कौन सी गैस प्रमुख है?**
   (a) ऑक्सीजन
   (b) नाइट्रोजन
   (c) कार्बन डाइऑक्साइड
   (d) हाइड्रोजन
   **उत्तर**: (c) कार्बन डाइऑक्साइड
3. **मौसम परिवर्तन से समुद्र स्तर में वृद्धि का मुख्य कारण क्या है?**
   (a) ग्लेशियरों का पिघलना

(b) ज्वालामुखी विस्फोट
(c) पराबैंगनी किरणों का प्रभाव
(d) वायुमंडलीय दबाव में वृद्धि
**उत्तर**: (a) ग्लेशियरों का पिघलना

4. **पेरिस समझौते का मुख्य उद्देश्य क्या है?**
(a) आर्थिक विकास को बढ़ावा देना
(b) वैश्विक तापमान में वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस से नीचे रखना
(c) ओज़ोन परत की मरम्मत
(d) जल संसाधनों का प्रबंधन
**उत्तर**: (b) वैश्विक तापमान में वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस से नीचे रखना
5. **ओज़ोन परत की सुरक्षा के लिए कौन सा अंतर्राष्ट्रीय समझौता हुआ है?**
(a) क्योटो प्रोटोकॉल
(b) मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल
(c) पेरिस समझौता
(d) जलवायु परिवर्तन संधि
**उत्तर**: (b) मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल
6. **वैश्विक ऊष्मीकरण का पर्यावरण पर क्या प्रभाव है?**
(a) वनों का विस्तार
(b) तापमान में वृद्धि और मौसम पैटर्न में अस्थिरता
(c) ऑक्सीजन की मात्रा में वृद्धि
(d) नाइट्रोजन गैस की कमी
**उत्तर**: (b) तापमान में वृद्धि और मौसम पैटर्न में अस्थिरता

### 3.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

**वर्णनात्मक प्रश्न (Descriptive Questions):**

1. **ओज़ोन परत का ह्रास कैसे होता है और इसके क्या परिणाम होते हैं**?
2. **वैश्विक ऊष्मीकरण और मौसम परिवर्तन के बीच क्या संबंध है**? **उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।**
3. **ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने के लिए कौन-कौन सी नीतियाँ अपनाई जा सकती हैं**?
4. **मौसम परिवर्तन के आर्थिक प्रभावों पर चर्चा कीजिए और पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में इसका महत्त्व बताइए।**
5. **मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल और पेरिस समझौते के उद्देश्यों और योगदानों की तुलना कीजिए।**

# इकाई–04
# वातावरण, इकोलॉजी, वहन क्षमता आदि अवधारणाएँ

**इकाई की रूपरेखा:**


**4.0उद्देश्य**

**4.1 प्रस्तावना**

**4.2.0 वातावरण की परिभाषा**

**4.2.1 पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में वातावरण का महत्त्व**

**4.2.2 वातावरण और आर्थिक विकास के बीच संघर्ष**

**4.2.3 वातावरण के संरक्षण के लिए नीतियाँ**

**4.2.4 वातावरण और पारिस्थितिकी तंत्र के बीच संबंध**

**4.2.5 वातावरण के आर्थिक मूल्य का आकलन**

**4.2.6 अंतर्राष्ट्रीय समझौतों में वातावरण की भूमिका**

**4.3.0 पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में पारिस्थितिकी (Ecology) की अवधारणा**

**4.3.1 पारिस्थितिकी की परिभाषा**

**4.3.2 पारिस्थितिकी तंत्र की अवधारणा**

**4.3.3 पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में पारिस्थितिकी का महत्त्व**

**4.3.4 पारिस्थितिकी और आर्थिक गतिविधियों के बीच संबंध**

**4.3.5 पारिस्थितिकीय समस्याएँ और पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**

**4.3.6 पारिस्थितिकीय नीतियाँ और उनके आर्थिक पहलू**

**4.4.0 वहन क्षमता की अवधारणा**

**4.4.1 वहन क्षमता की परिभाषा**

**4.4.2 पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में वहन क्षमता का महत्त्व**

**4.4.3 वहन क्षमता के घटक**

**4.4.4 वहन क्षमता के प्रकार नीतियाँ**

**4.4.5 वहन क्षमता और आर्थिक विकास**

**4.4.6 वहन क्षमता की सीमाएँ और चुनौतियाँ**

**4.4.7 वहन क्षमता और नीतियाँ**

**4.5.0 वहन क्षमता, पारिस्थितिकी और वातावरण के बीच संबंध**

**4.6.0 पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान में इन अवधारणाओं की भूमिका**

4.6.1 नीतिगत सुझाव

4.7.0 निष्कर्ष

**4.0 उद्देश्य:**

वातावरण, परिस्थिरीक एवं वहन क्षमता की अवधारणा से सम्बन्धित विभिन्न बिन्दुओं का अध्ययन कर आप उसके उद्देश्यों को जानने में सक्षम हो जायेगें। इनसे सम्बन्धित विभिन्न बिन्दु निम्नवत् हैं–

वातावरण की अवधारणा के उद्देश्य:

- प्रदूषण नियंत्रण
- संसाधनों का संरक्षण
- जलवायु परिवर्तन की समझ
- जन जागरूकता

2. **पारिस्थितिकी की अवधारणा के उद्देश्य**:

- पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखना
- जैव विविधता की सुरक्षा
- संसाधनों की पुनर्स्थापना
- विज्ञान और नीतियों का एकीकरण

3. **वहन क्षमता की अवधारणा के उद्देश्य**:

- सतत विकास को बढ़ावा देना
- सीमाओं की पहचान
- नीतियों का विकास
- अनुकूलन और लचीलापन

**4**. **समग्र उद्देश्य**:

- एकीकृत दृष्टिकोण
- संवेदनशीलता और जिम्मेदारी
- अर्थशास्त्र और पारिस्थितिकी के बीच सामंजस्य

**पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में वातावरण की अवधारणा:**

**4.1 प्रस्तावना:**

वातावरण का तात्पर्य उन सभी भौतिक, रासायनिक और जैविक कारकों से है जो किसी भी जीव या मानव समाज को प्रभावित करते हैं। यह हमें एक संरचना और आधार प्रदान करता है जिसमें हम जीवित रहते हैं और हमारे आर्थिक कार्यकलापों का संचालन करते हैं। पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में वातावरण का अध्ययन इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह आर्थिक गतिविधियों, जैसे उत्पादन, खपत, और संसाधनों के उपयोग का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डालता है।

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र (Environmental Economics) में वातावरण (Environment) की अवधारणा का अध्ययन यह समझने के लिए किया जाता है कि आर्थिक विकास, उत्पादन और उपभोग जैसी आर्थिक गतिविधियाँ किस प्रकार से पर्यावरणीय संसाधनों और पारिस्थितिकी तंत्र को प्रभावित करती हैं। पर्यावरणीय अर्थशास्त्र इस बात पर ध्यान केंद्रित करता है कि कैसे आर्थिक निर्णय और नीतियाँ वातावरण पर सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव डालती हैं, और यह सुनिश्चित करने का प्रयास करता है कि विकास के साथ-साथ पर्यावरणीय संरक्षण भी सुनिश्चित हो सके।

**4.2.0 वातावरण की परिभाषा:**

वातावरण को उन सभी बाहरी तत्वों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो किसी जीव या समूह को प्रभावित करते हैं। इसमें भौतिक, रासायनिक, जैविक और सामाजिक कारक शामिल होते हैं। यह हमें रहने और आर्थिक गतिविधियों को संचालित करने का ढाँचा प्रदान करता है।

वातावरण के तीन मुख्य घटक होते हैं:

- **जैविक घटक (Biotic Components):** इसमें सभी जीवित प्राणी जैसे मानव, जानवर, पौधे आदि आते हैं।

- **अजैविक घटक (Abiotic Components):** इसमें वे तत्व शामिल होते हैं जो जीवित नहीं होते, जैसे वायु, जल, मिट्टी और खनिज।
- **सांस्कृतिक घटक (Cultural Components):** इसमें मानव निर्मित संरचनाएँ, सामाजिक मान्यताएँ, परंपराएँ और नीतियाँ आती हैं।

### 4.2.1 पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में वातावरण का महत्त्व:

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में वातावरण की अवधारणा का महत्त्व इसलिए है क्योंकि यह आर्थिक विकास और पर्यावरण के बीच परस्पर संबंध को समझने में मदद करती है। इसका मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि आर्थिक गतिविधियाँ वातावरण को हानि पहुँचाए बिना संचालित हों और प्राकृतिक संसाधनों का सतत् उपयोग किया जा सके।

- **प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग:** आर्थिक विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों की आवश्यकता होती है, लेकिन इनके अनियंत्रित उपयोग से वातावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है, जैसे वनों की कटाई, मृदा क्षरण, जल और वायु प्रदूषण।
- **प्रदूषण और अपशिष्ट:** औद्योगिक गतिविधियों और उत्पादन प्रक्रियाओं के दौरान होने वाला प्रदूषण और अपशिष्ट वातावरण को प्रभावित करता है, जिससे जलवायु परिवर्तन, पारिस्थितिकी तंत्र में असंतुलन और स्वास्थ्य समस्याएँ पैदा होती हैं।
- **पर्यावरणीय सेवाएँ:** वातावरण विभिन्न प्रकार की पर्यावरणीय सेवाएँ प्रदान करता है, जैसे जलवायु को नियंत्रित करना, जैव विविधता को बनाए रखना और प्राकृतिक संसाधनों की पुनःपूर्ति करना। इन सेवाओं का आर्थिक मूल्यांकन और उनका संरक्षण पर्यावरणीय अर्थशास्त्र का एक प्रमुख लक्ष्य है।

### 4.2.2 वातावरण और आर्थिक विकास के बीच संघर्ष:

आर्थिक विकास और वातावरण के बीच हमेशा एक संघर्ष रहा है। औद्योगिकीकरण, शहरीकरण और वैश्विक आर्थिक गतिविधियों में वृद्धि के कारण पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं। वातावरण की अवधारणा में यह स्पष्ट किया जाता है कि:

- **अत्यधिक संसाधन उपयोग:** तेजी से हो रहे औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के कारण प्राकृतिक संसाधनों का अति उपयोग हो रहा है, जिससे जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण और पारिस्थितिकीय असंतुलन जैसी समस्याएँ पैदा हो रही हैं।
- **वायु और जल प्रदूषण:** उत्पादन प्रक्रियाओं के दौरान निकलने वाले रासायनिक पदार्थों और उत्सर्जनों से वायु और जल प्रदूषण हो रहा है, जो पर्यावरणीय और स्वास्थ्य समस्याओं को जन्म दे रहा है।
- **जलवायु परिवर्तन:** वनों की कटाई, जीवाश्म ईंधनों का अत्यधिक उपयोग और कार्बन उत्सर्जन के कारण जलवायु परिवर्तन हो रहा है, जिससे तापमान में वृद्धि, बाढ़, सूखा और समुद्र स्तर में वृद्धि जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं।

### 4.2.3 वातावरण के संरक्षण के लिए नीतियाँ:

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र वातावरण के संरक्षण और उसके संतुलन को बनाए रखने के लिए कई नीतिगत उपायों का सुझाव देता है। इसमें निम्नलिखित पहलें शामिल हैं:

- **नवीकरणीय संसाधनों का उपयोग:** नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, और जल ऊर्जा के उपयोग को बढ़ावा देना, ताकि जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता कम हो और पर्यावरणीय क्षति को रोका जा सके।
- **ग्रीन टेक्नोलॉजी का विकास:** प्रदूषण और अपशिष्ट को कम करने के लिए हरित प्रौद्योगिकियों (Green Technologies) का विकास करना, जैसे प्रदूषण नियंत्रण उपकरण, अपशिष्ट प्रबंधन प्रणाली आदि।

- **पर्यावरणीय कराधान (Environmental Taxation):** प्रदूषणकारी उद्योगों और व्यवसायों पर पर्यावरणीय करों का आरोपण करना, ताकि वे अपने कार्यों में सुधार करें और वातावरण को कम से कम नुकसान पहुँचाएँ।
- **सतत विकास (Sustainable Development):** सतत विकास की नीतियों का पालन करना, जिसमें आर्थिक विकास, सामाजिक समानता और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन बनाए रखा जाए।

### 4.2.4 वातावरण और पारिस्थितिकी तंत्र के बीच संबंध:

वातावरण और पारिस्थितिकी तंत्र एक-दूसरे से गहरे जुड़े हुए हैं। पारिस्थितिकी तंत्र (Ecosystem) वह प्रणाली है जिसमें जैविक और अजैविक घटक एक साथ मिलकर कार्य करते हैं। यह पारस्परिक निर्भरता और जटिलता का अध्ययन करता है, जहाँ वातावरण जीवों के लिए आवश्यक संसाधन प्रदान करता है और जीव वातावरण पर प्रभाव डालते हैं।

उदाहरण के लिए:

- **वन पारिस्थितिकी तंत्र:** वन, जैव विविधता और जलवायु के बीच संतुलन बनाए रखते हैं। वे कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण करते हैं और ऑक्सीजन उत्पन्न करते हैं, जो वातावरण के लिए आवश्यक है।
- **जल पारिस्थितिकी तंत्र:** नदी, झील, समुद्र और अन्य जल स्रोतों में रहने वाले जीव और उनका वातावरण के साथ परस्पर संबंध, जैसे जलवायु पर प्रभाव और पारिस्थितिकीय संतुलन।

### 4.2.5 वातावरण के आर्थिक मूल्य का आकलन:

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में वातावरण का आर्थिक मूल्यांकन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसमें वातावरण द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं का आर्थिक मूल्य निर्धारित किया जाता है, ताकि उनके संरक्षण के लिए उपयुक्त नीतियाँ बनाई जा सकें। उदाहरण के लिए:

- **प्राकृतिक संसाधनों का मूल्यांकन:** जंगल, नदियाँ, वायु, और जल जैसे संसाधनों का मूल्यांकन, ताकि इनके संरक्षण के लिए नीतियाँ बनाई जा सकें।
- **प्रदूषण के आर्थिक प्रभाव:** प्रदूषण से होने वाली स्वास्थ्य समस्याओं और पर्यावरणीय क्षति का आर्थिक मूल्यांकन, ताकि प्रदूषण नियंत्रण के लिए उपाय किए जा सकें।

### 4.2.6 अंतर्राष्ट्रीय समझौतों में वातावरण की भूमिका:

वातावरण के संरक्षण के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी कई समझौते और प्रयास किए गए हैं, जिनका उद्देश्य वैश्विक स्तर पर पर्यावरणीय समस्याओं को हल करना है। इनमें से कुछ प्रमुख हैं:

- **क्योटो प्रोटोकॉल (Kyoto Protocol):** यह समझौता ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हुआ था।
- **पेरिस समझौता (Paris Agreement):** इसका उद्देश्य वैश्विक तापमान में वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस से नीचे रखना है।
- **मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल (Montreal Protocol):** ओज़ोन परत के ह्रास को रोकने के लिए यह समझौता किया गया था।

### 4.3.0 पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में पारिस्थितिकी (Ecology) की अवधारणा:

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र का अध्ययन आर्थिक गतिविधियों और पर्यावरण के बीच परस्पर संबंधों को समझने का प्रयास करता है। इस संदर्भ में, पारिस्थितिकी (Ecology) एक महत्वपूर्ण अवधारणा है जो यह समझने में सहायक होती है कि जीव और उनका पर्यावरण किस प्रकार से एक-दूसरे पर निर्भर करते हैं और कैसे मानव के आर्थिक कार्यकलाप पारिस्थितिकी तंत्र को प्रभावित करते हैं। पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में पारिस्थितिकी का अध्ययन संसाधनों के सतत उपयोग और पारिस्थितिकीय संतुलन को बनाए रखने के लिए आवश्यक है।

### 4.3.1 पारिस्थितिकी की परिभाषा:

पारिस्थितिकी (Ecology) वह विज्ञान है जिसमें जीवों और उनके भौतिक पर्यावरण के बीच पारस्परिक संबंधों का अध्ययन किया जाता है। यह अध्ययन करता है कि कैसे जीव अपने पर्यावरण से संसाधन लेते हैं और अपने जीवन चक्र में कैसे उन संसाधनों का उपयोग करते हैं। पारिस्थितिकी तंत्र (Ecosystem) जीवों और अजैविक घटकों के बीच अंतःक्रिया का एक जटिल तंत्र है, जिसमें ऊर्जा का प्रवाह और पोषक तत्वों का चक्रण होता है।

### 4.3.2 पारिस्थितिकी तंत्र की अवधारणा:

पारिस्थितिकी तंत्र एक जटिल संरचना है जिसमें जैविक (Biotic) और अजैविक (Abiotic) घटक शामिल होते हैं। जैविक घटक जैसे पौधे, जानवर, सूक्ष्मजीव और मानव, और अजैविक घटक जैसे जल, मृदा, वायु और तापमान, पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण करते हैं।

पारिस्थितिकी तंत्र में ऊर्जा का प्रवाह और पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण मुख्य प्रक्रियाएँ हैं। जैविक घटक ऊर्जा प्राप्त करते हैं, उसका उपयोग करते हैं, और पुनः चक्रित कर देते हैं। इन घटकों के बीच संबंधों से पारिस्थितिकीय संतुलन (Ecological Balance) बना रहता है।

**प्रमुख पारिस्थितिकी तंत्र:**

- **स्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र (Terrestrial Ecosystem):** इसमें भूमि आधारित पारिस्थितिकी तंत्र आते हैं, जैसे जंगल, घास के मैदान, मरुस्थल।
- **जल पारिस्थितिकी तंत्र (Aquatic Ecosystem):** इसमें जल आधारित पारिस्थितिकी तंत्र आते हैं, जैसे समुद्र, नदियाँ, झीलें।
- **मानव निर्मित पारिस्थितिकी तंत्र (Man-made Ecosystem):** इसमें कृषि भूमि, शहरी क्षेत्र आदि आते हैं, जहाँ मानव गतिविधियाँ मुख्य भूमिका निभाती हैं।

### 4.3.3 पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में पारिस्थितिकी का महत्त्व:

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में पारिस्थितिकी की अवधारणा का महत्त्व इसलिए है क्योंकि यह यह समझने में मदद करती है कि कैसे आर्थिक गतिविधियाँ पारिस्थितिकीय तंत्र को प्रभावित करती हैं और इसके दीर्घकालिक प्रभाव क्या हो सकते हैं।

**(क) संसाधनों का सतत उपयोग:**

परिस्थितिकी हमें यह सिखाती है कि प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग संतुलित रूप में किया जाना चाहिए, ताकि उनका पुनः निर्माण हो सके और पर्यावरणीय संतुलन बना रहे। यदि संसाधनों का अत्यधिक उपयोग किया जाता है, तो पारिस्थितिकी तंत्र पर दबाव पड़ता है और वह क्षति की स्थिति में पहुँच सकता है।

**(ख) पारिस्थितिकीय सेवाओं का मूल्यांकन:**

पारिस्थितिकी तंत्र हमें विभिन्न प्रकार की सेवाएँ प्रदान करता है, जिन्हें पारिस्थितिकीय सेवाएँ (Ecosystem Services) कहा जाता है। इनमें शामिल हैं:

- **विनियामक सेवाएँ (Regulatory Services):** जैसे वायु और जल को शुद्ध करना, जलवायु का नियंत्रण।
- **आपूर्ति सेवाएँ (Provisioning Services):** जैसे भोजन, पानी, ऊर्जा स्रोत।
- **सांस्कृतिक सेवाएँ (Cultural Services):** जैसे पर्यटन, मनोरंजन।
- **समर्थन सेवाएँ (Supporting Services):** जैसे पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण, मिट्टी निर्माण।

**(ग) पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण की आवश्यकता:**

पारिस्थितिकी तंत्र में असंतुलन होने से पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न होती हैं, जैसे प्रदूषण, जैव विविधता का नुकसान, और जलवायु परिवर्तन। अतः पर्यावरणीय अर्थशास्त्र का एक प्रमुख उद्देश्य पारिस्थितिकी तंत्र का संरक्षण करना है। इसका मतलब है कि आर्थिक गतिविधियाँ इस प्रकार से संचालित हों कि वे पारिस्थितिकीय संतुलन को बनाए रखें और पारिस्थितिकीय सेवाओं को हानि न पहुँचाएँ।

### 4.3.4 पारिस्थितिकी और आर्थिक गतिविधियों के बीच संबंध:

पारिस्थितिकी और आर्थिक गतिविधियों के बीच घनिष्ठ संबंध है। प्राकृतिक संसाधनों का दोहन और उत्पादन प्रक्रिया के दौरान उत्सर्जित अपशिष्ट और प्रदूषण पारिस्थितिकी तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं।

**(क) उत्पादन और खपत का प्रभाव:**

उत्पादन और खपत के दौरान संसाधनों का उपयोग होता है, जैसे वनस्पति, खनिज, जल, और ऊर्जा। इन प्रक्रियाओं से उत्पन्न अपशिष्ट और प्रदूषण वायु, जल और भूमि को प्रभावित करते हैं, जिससे पारिस्थितिकी तंत्र में असंतुलन उत्पन्न होता है।

**(ख) औद्योगिकीकरण और शहरीकरण:**

औद्योगिकीकरण और शहरीकरण से वनों की कटाई, भूमि का अधिक उपयोग, और जल स्रोतों का अत्यधिक दोहन होता है, जिससे पारिस्थितिकी तंत्र पर दबाव बढ़ता है। इसके परिणामस्वरूप जैव विविधता में कमी, पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं का नुकसान और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

**(ग) पारिस्थितिकीय संतुलन का बिगड़ना:**

जब पारिस्थितिकी तंत्र के घटकों के बीच संतुलन बिगड़ता है, तो उसकी वहन क्षमता (Carrying Capacity) पर भी प्रभाव पड़ता है। इससे पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता और उसकी सेवाओं का दीर्घकालिक लाभ प्रभावित होता है।

### 4.3.5 पारिस्थितिकीय समस्याएँ और पर्यावरणीय अर्थशास्त्र:

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र पारिस्थितिकीय समस्याओं को हल करने के लिए नीतियाँ और उपाय सुझाता है। इसमें प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित हैं:

**(क) जलवायु परिवर्तन:**

पारिस्थितिकी तंत्र पर सबसे बड़ा खतरा जलवायु परिवर्तन है। बढ़ते ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन और तापमान में वृद्धि के कारण पारिस्थितिकीय संतुलन बिगड़ रहा है। इसके परिणामस्वरूप ग्लेशियर पिघल रहे हैं, समुद्र स्तर बढ़ रहा है, और बाढ़ और सूखा जैसी घटनाएँ हो रही हैं।

**(ख) जैव विविधता का ह्रास:**

वनों की कटाई, कृषि भूमि का विस्तार, और शहरीकरण के कारण जैव विविधता में कमी आ रही है। जैव विविधता पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता और उसके दीर्घकालिक कार्य करने के लिए आवश्यक है।

**(ग) प्रदूषण:**

वायु, जल, और भूमि प्रदूषण से पारिस्थितिकी तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। रासायनिक प्रदूषण और औद्योगिक अपशिष्टों से जल स्रोत दूषित हो रहे हैं, जिससे जीवों की जीवनशैली पर भी असर पड़ता है।

### 4.3.6 पारिस्थितिकीय नीतियाँ और उनके आर्थिक पहलू:

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र का एक प्रमुख लक्ष्य ऐसी नीतियों का निर्माण करना है जो पारिस्थितिकीय समस्याओं का समाधान प्रदान करें। इसमें कुछ प्रमुख नीतियाँ शामिल हैं:

- **प्रदूषण नियंत्रण नीतियाँ:** प्रदूषणकारी उद्योगों पर कराधान (Taxation) और सीमा निर्धारण (Cap and Trade) जैसे उपायों के माध्यम से प्रदूषण को नियंत्रित करने का प्रयास किया जाता है।
- **संरक्षण नीतियाँ:** पारिस्थितिकी तंत्र के महत्वपूर्ण घटकों जैसे वन, जल संसाधन और जैव विविधता के संरक्षण के लिए नीतियाँ बनाई जाती हैं।
- **सतत कृषि और हरित प्रौद्योगिकी:** सतत कृषि प्रणालियाँ और हरित प्रौद्योगिकी का उपयोग करके पारिस्थितिकी तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव को कम करने के उपाय किए जाते हैं।

### 4.4.0 वहन क्षमता की अवधारणा:

यह अवधारणा प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग और पर्यावरणीय सीमाओं का निर्धारण करने के लिए उपयोग की जाती है। वहन क्षमता हमें यह समझने में मदद करती है कि किसी विशेष पारिस्थितिकी

तंत्र या क्षेत्र में कितने संसाधन उपलब्ध हैं और इन संसाधनों का किस हद तक उपयोग किया जा सकता है, ताकि पर्यावरणीय संतुलन न बिगड़े और आने वाली पीढ़ियों के लिए भी संसाधनों का संरक्षण किया जा सके।

### 4.4.1 वहन क्षमता की परिभाषा:

वहन क्षमता (Carrying Capacity) को किसी विशेष क्षेत्र या पारिस्थितिकी तंत्र द्वारा दीर्घकालिक आधार पर बनाए जा सकने वाले जीवन या गतिविधियों की अधिकतम सीमा के रूप में परिभाषित किया जाता है, बिना उस क्षेत्र की पारिस्थितिकीय संरचना और उसके संसाधनों पर नकारात्मक प्रभाव डाले।

उदाहरण के लिए, एक जंगल में जितने जीव एक संतुलन बनाए रखते हुए रहते हैं, वह जंगल की वहन क्षमता को दर्शाता है। यदि उस जंगल में अधिक जीवों का आगमन होता है, तो वह संसाधनों की कमी, आवास के नुकसान और अंततः उस पारिस्थितिकी तंत्र के असंतुलन का कारण बन सकता है।

### 4.4.2 पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में वहन क्षमता का महत्त्व:

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में वहन क्षमता की अवधारणा यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि आर्थिक विकास और प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग इस प्रकार से हो कि पर्यावरणीय संसाधन समाप्त न हों और उनका पुनः निर्माण हो सके। यह अवधारणा प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग और पारिस्थितिकीय संतुलन को बनाए रखने के लिए दिशा-निर्देश प्रदान करती है।

**(क) संसाधनों का सतत उपयोग:**

वहन क्षमता का अध्ययन यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग उनकी पुनः उत्पन्न होने की क्षमता के अनुरूप हो। इससे यह सुनिश्चित होता है कि संसाधनों का अत्यधिक उपयोग न हो और आने वाली पीढ़ियों के लिए भी संसाधन उपलब्ध रहें।

**(ख) पर्यावरणीय सीमाओं का निर्धारण:**

वहन क्षमता हमें यह बताती है कि एक पारिस्थितिकी तंत्र या पर्यावरणीय क्षेत्र में कितने जीव या गतिविधियाँ हो सकती हैं, जिससे वह प्रभावित हुए बिना अपने कार्य कर सके। यह सीमाएँ प्राकृतिक संसाधनों, जैसे जल, भूमि, वन, और वायु की उपलब्धता पर आधारित होती हैं।

### 4.4.3 वहन क्षमता के घटक:

वहन क्षमता कई कारकों पर निर्भर करती है जो पर्यावरण और आर्थिक गतिविधियों के बीच संबंधों को निर्धारित करते हैं। इनमें शामिल हैं:

**(क) प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता:**

किसी क्षेत्र में उपलब्ध जल, भूमि, ऊर्जा, और भोजन की मात्रा वहन क्षमता का प्रमुख निर्धारक है। यह देखना आवश्यक होता है कि इन संसाधनों का उपयोग किस हद तक हो सकता है, ताकि पारिस्थितिकी तंत्र की संरचना प्रभावित न हो।

**(ख) प्रदूषण और अपशिष्ट प्रबंधन:**

वहन क्षमता में यह भी देखा जाता है कि किसी क्षेत्र में उत्सर्जित अपशिष्ट और प्रदूषण का किस प्रकार से निपटारा किया जा सकता है। यदि प्रदूषण का स्तर पारिस्थितिकी तंत्र के द्वारा अवशोषित किए जाने से अधिक होता है, तो वहन क्षमता घट जाती है।

**(ग) सामाजिक-आर्थिक कारक:**

संसाधनों का उपयोग किस प्रकार से हो रहा है, इसका निर्धारण सामाजिक और आर्थिक कारकों पर भी निर्भर करता है, जैसे जनसंख्या वृद्धि, आर्थिक विकास की दर, और संसाधनों के वितरण की नीतियाँ।

### 4.4.4 वहन क्षमता के प्रकार:

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में वहन क्षमता को विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है, जिनमें प्रमुख रूप से शामिल हैं:

**(क) पारिस्थितिकीय वहन क्षमता (Ecological Carrying Capacity):**

यह वह अधिकतम जनसंख्या या गतिविधियों की सीमा है जिसे एक पारिस्थितिकी तंत्र बिना दीर्घकालिक नुकसान के समर्थन कर सकता है। यह प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता, प्रदूषण अवशोषण की क्षमता, और जैव विविधता के संरक्षण पर निर्भर करता है।

**(ख) आर्थिक वहन क्षमता (Economic Carrying Capacity):**

यह वहन क्षमता इस बात को दर्शाती है कि किसी क्षेत्र या देश की अर्थव्यवस्था कितने संसाधनों का उपयोग कर सकती है, जिससे आर्थिक विकास भी हो और पर्यावरणीय संतुलन भी बना रहे। इसमें सतत विकास के सिद्धांतों का पालन किया जाता है।

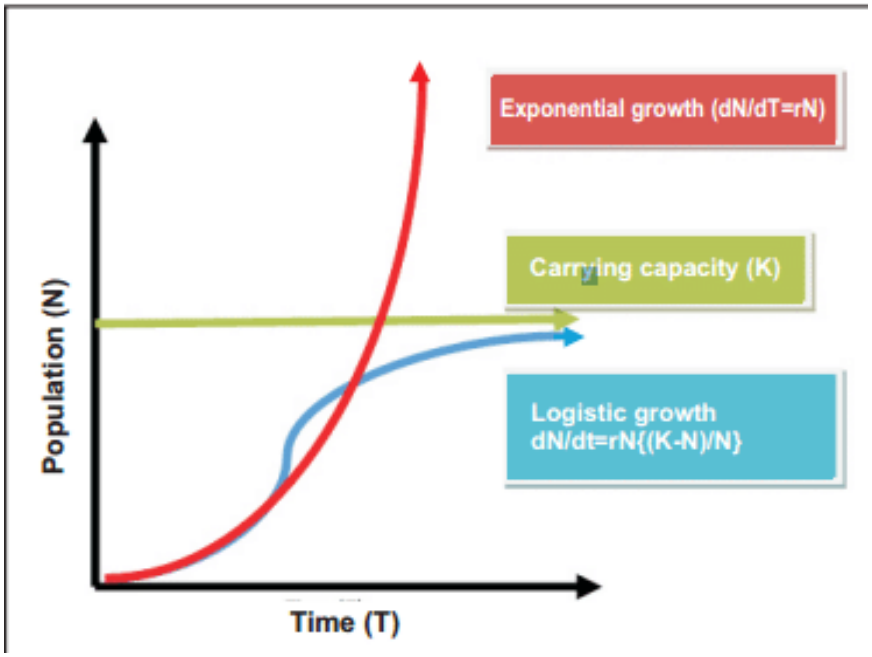


**(ग) सामाजिक वहन क्षमता (Social Carrying Capacity):**

यह उस जनसंख्या या गतिविधियों की सीमा को दर्शाता है जिसे एक समाज बिना सामाजिक संघर्ष या संसाधनों के लिए संघर्ष किए हुए समर्थन कर सकता है। इसमें जल, खाद्य, शिक्षा, और स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता शामिल होती है।

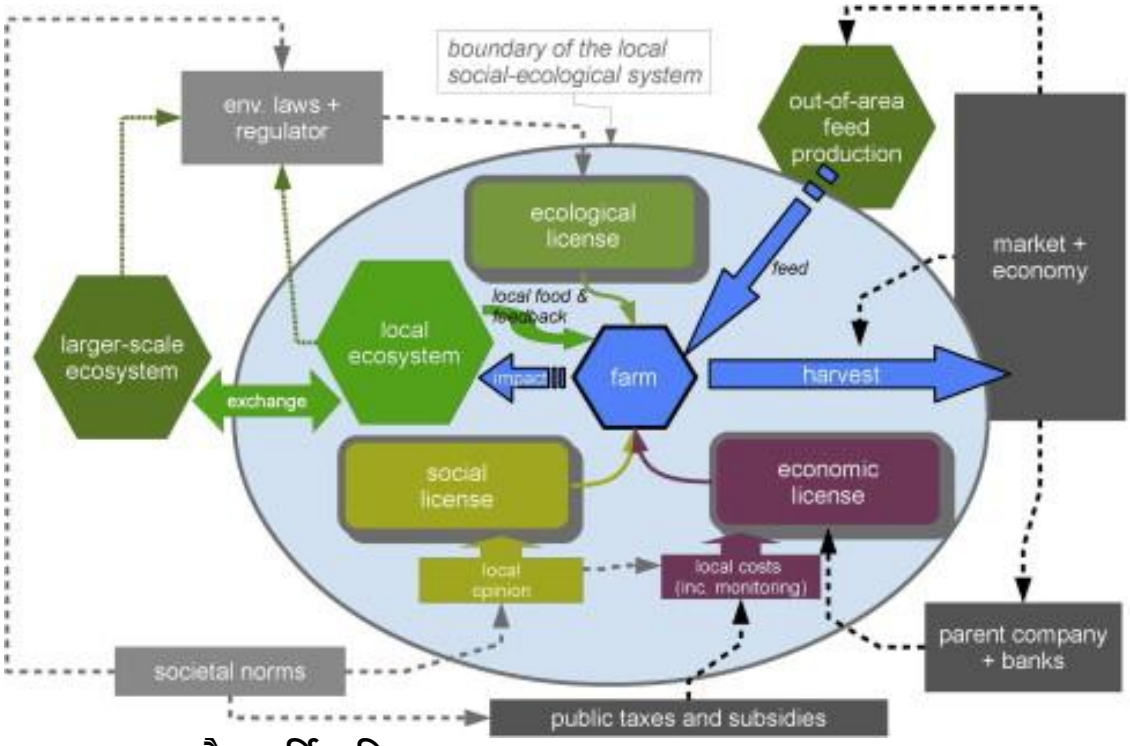


### 4.4.5 वहन क्षमता और आर्थिक विकास:

वहन क्षमता की अवधारणा का सीधा संबंध आर्थिक विकास से है। एक सीमित संसाधनों वाले पारिस्थितिकी तंत्र में अनियंत्रित आर्थिक विकास से वहन क्षमता पर दबाव पड़ता है और अंततः पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। उदाहरण के लिए, अधिक औद्योगिकीकरण और शहरीकरण से संसाधनों की अत्यधिक मांग बढ़ती है, जो पर्यावरणीय असंतुलन का कारण बनती है।

**(क) विकास और संसाधन उपभोग:**

आर्थिक विकास के साथ संसाधनों की मांग भी बढ़ती है। यदि संसाधनों का उपभोग उनकी पुनः उत्पादन की दर से अधिक होता है, तो वहन क्षमता घट जाती है और पर्यावरणीय समस्याएँ जैसे वनों की कटाई, जल संकट, और प्रदूषण उत्पन्न होते हैं।

**(ख) सतत विकास का महत्त्व:**

सतत विकास (Sustainable Development) की अवधारणा वहन क्षमता को बनाए रखने पर आधारित है। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करते हुए भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं को खतरे में न डाला जाए। इसके लिए संसाधनों का सतत उपयोग और प्रदूषण नियंत्रण आवश्यक है।

### 4.4.6 वहन क्षमता की सीमाएँ और चुनौतियाँ:

वहन क्षमता की अवधारणा में कई चुनौतियाँ और सीमाएँ भी हैं, जिनका समाधान आवश्यक है।

**(क) संसाधनों का असमान वितरण:**

संसाधनों का असमान वितरण वहन क्षमता पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। विकसित देशों में अत्यधिक संसाधनों का उपयोग होता है, जबकि विकासशील देशों में संसाधनों की कमी होती है। इससे वैश्विक स्तर पर वहन क्षमता में असंतुलन उत्पन्न होता है।

**(ख) जनसंख्या वृद्धि:**

दुनिया की जनसंख्या में तीव्र वृद्धि वहन क्षमता के लिए एक बड़ी चुनौती है। जनसंख्या वृद्धि से संसाधनों की मांग बढ़ती है, जो पारिस्थितिकी तंत्र पर दबाव डालती है और संसाधनों के अति-उपयोग का कारण बनती है।

**(ग) जलवायु परिवर्तन:**
जलवायु परिवर्तन से वहन क्षमता पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। तापमान में वृद्धि, जल स्रोतों की कमी, और प्राकृतिक आपदाओं से पारिस्थितिकी तंत्र की वहन क्षमता में कमी आती है। उदाहरण के लिए, कृषि योग्य भूमि की गुणवत्ता में गिरावट और जलवायु परिवर्तन से जल स्रोतों पर दबाव बढ़ता है, जिससे खाद्य सुरक्षा को खतरा हो सकता है।

**4.4.7 वहन क्षमता और नीतियाँ:**
वहन क्षमता को बनाए रखने के लिए कई नीतियाँ और उपाय आवश्यक हैं, जो पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन नीतियों का उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग को सुनिश्चित करना और पर्यावरणीय सीमाओं का सम्मान करना है।

**(क) संसाधनों का कुशल प्रबंधन:**
प्राकृतिक संसाधनों का कुशल प्रबंधन वहन क्षमता को बनाए रखने में मदद करता है। इसके लिए जल, ऊर्जा, और भूमि के सतत उपयोग को प्राथमिकता दी जाती है।

**(ख) पुनर्नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग:**
वहन क्षमता को बढ़ाने के लिए गैर-नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों पर निर्भरता कम करना और पुनर्नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों, जैसे सौर, पवन और जल ऊर्जा का अधिक से अधिक उपयोग आवश्यक है। इससे पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखने में मदद मिलती है।

**(ग) जनसंख्या नियंत्रण:**
जनसंख्या नियंत्रण नीतियाँ वहन क्षमता के संरक्षण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। परिवार नियोजन और शिक्षा के माध्यम से जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करना संसाधनों की मांग को सीमित कर सकता है।

**4.5.0 वहन क्षमता, पारिस्थितिकी और वातावरण के बीच संबंध :**
वातावरण, पारिस्थितिकी और वहन क्षमता एक-दूसरे से गहरे जुड़े हुए हैं। पारिस्थितिकी तंत्र का संतुलन बनाए रखने के लिए वातावरण की स्थिति और संसाधनों की वहन क्षमता का सही मूल्यांकन करना आवश्यक है। यदि वहन क्षमता से अधिक संसाधनों का उपयोग किया जाता है, तो पारिस्थितिकी तंत्र में असंतुलन पैदा हो सकता है, जिससे वातावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसलिए, यह महत्वपूर्ण है कि आर्थिक गतिविधियों को इस प्रकार संचालित किया जाए कि वे वहन क्षमता के भीतर रहें और पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता को नुकसान न पहुँचाएँ।

**4.6.0 पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान में इन अवधारणाओं की भूमिका**
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र इन तीन अवधारणाओं के माध्यम से विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान खोजने का प्रयास करता है। ओज़ोन परत का ह्रास, जलवायु परिवर्तन, जल प्रदूषण, वनों की कटाई जैसी समस्याएँ पारिस्थितिकी तंत्र और वहन क्षमता के संदर्भ में हल की जा सकती हैं। उदाहरण के लिए:

- **नवीकरणीय संसाधनों** का उपयोग कर पारिस्थितिकी तंत्र की वहन क्षमता को बनाए रखना।
- **सतत कृषि** और **ग्रीन तकनीक** का उपयोग करके पर्यावरणीय समस्याओं को कम करना।
- **अंतर्राष्ट्रीय समझौतों** और **पर्यावरणीय नीतियों** के माध्यम से संसाधनों का उचित प्रबंधन।

**4.6.1 नीतिगत सुझाव**
इन अवधारणाओं के आधार पर कुछ नीतिगत सुझाव निम्नलिखित हैं:

- **संसाधनों का सतत प्रबंधन**: प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग को वहन क्षमता के भीतर सीमित रखना।
- **नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग**: ऊर्जा उत्पादन के लिए नवीकरणीय स्रोतों जैसे सौर, पवन और जल ऊर्जा का अधिकाधिक उपयोग।
- **शहरीकरण का प्रबंधन**: तेजी से बढ़ते शहरीकरण के कारण उत्पन्न पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान, जैसे हरित शहरी योजना।
- **पारिस्थितिकीय संतुलन का संरक्षण**: विकास परियोजनाओं में पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन को ध्यान में रखते हुए नीतियाँ बनाना।

### 4.7.0 निष्कर्ष

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में वातावरण, पारिस्थितिकी, और वहन क्षमता की अवधारणाएँ हमें यह समझने में मदद करती हैं कि आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन कैसे स्थापित किया जा सकता है। इन अवधारणाओं का सही ढंग से उपयोग करके हम पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान निकाल सकते हैं और स्थायी विकास के लक्ष्यों को प्राप्त कर सकते हैं। भविष्य में, इन सिद्धांतों को ध्यान में रखकर नीतियाँ बनाई जानी चाहिए, ताकि आर्थिक विकास पर्यावरणीय संतुलन के साथ हो।

### 4.8 संदर्भ ग्रंथ सूची:


- **"Environmental and Natural Resource Economics"**
  लेखक: **Tom Tietenberg** और **Lynne Lewis**
  प्रकाशक: **Taylor & Francis, 13 March 2018, ISBN: 9781351803373**
- **"Economics of the Environment: Selected Readings"**
  संपादक: **Robert N. Stavins**
  प्रकाशक: **Edward Elgar Publishing, 2019, ISBN: 9781788972079**
- **विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
  लेखक: **Dr. Anupam Agarwal, Dr. Alok Gupta**
  प्रकाशक: **SBPD Publications, 6 July 2021, ISBN: 9789389585339**
- **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
  लेखक: डॉ. वी.सी. सिन्हा, डॉ. रितिका सिन्हा
  प्रकाशक: **SBPD Publishing House, 8 July 2024, ISBN: 9788119142392**
- **"The Economics of Climate Change: The Stern Review"**
  लेखक: Nicholas Stern
  प्रकाशक: Cambridge University Press


### 4.9 सामान्य बोध प्रश्न

**1. वातावरण की अवधारणा पर प्रश्न:**

1.1 वातावरण क्या है और यह पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में किस प्रकार से महत्त्वपूर्ण है?
1.2 पर्यावरणीय प्रदूषण और वातावरण के बीच क्या संबंध है?
1.3 वातावरणीय घटकों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
1.4 मानव गतिविधियाँ वातावरण पर किस प्रकार से प्रभाव डालती हैं?
1.5 वैश्विक ऊष्मीकरण का वातावरण पर क्या प्रभाव है?

**2. पारिस्थितिकी की अवधारणा पर प्रश्न:**

2.1 पारिस्थितिकी (Ecology) की परिभाषा क्या है?
2.2 पारिस्थितिकी और पर्यावरणीय अर्थशास्त्र के बीच संबंध को स्पष्ट कीजिए।
2.3 पारिस्थितिकीय तंत्र (Ecosystem) क्या है? इसके घटकों का वर्णन करें।
2.4 पारिस्थितिकी तंत्र में ऊर्जा प्रवाह और पोषण चक्र (Nutrient Cycles) का क्या महत्त्व है?
2.5 जैव विविधता (Biodiversity) और पारिस्थितिकी के बीच संबंध क्या है?
2.6 पारिस्थितिकीय असंतुलन (Ecological Imbalance) के कारण और प्रभाव क्या हैं?

**3. वहन क्षमता की अवधारणा पर प्रश्न:**

3.1 वहन क्षमता (Carrying Capacity) क्या है?
3.2 वहन क्षमता के प्रकारों का वर्णन कीजिए।
3.3 आर्थिक वहन क्षमता (Economic Carrying Capacity) और पारिस्थितिकीय वहन क्षमता (Ecological Carrying Capacity) में अंतर स्पष्ट कीजिए।
3.4 बढ़ती जनसंख्या का वहन क्षमता पर क्या प्रभाव होता है?

3.5 वहन क्षमता के महत्त्व और उसकी सीमाओं पर चर्चा करें।
3.6 सतत विकास (Sustainable Development) और वहन क्षमता के बीच क्या संबंध है?
3.7 जलवायु परिवर्तन का वहन क्षमता पर क्या प्रभाव पड़ता है?

## 4.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

- पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में वातावरण, पारिस्थितिकी और वहन क्षमता की अवधारणा को एक साथ किस प्रकार से समझा जा सकता है?
- पारिस्थितिकीय तंत्र को संरक्षित करने के लिए कौन-कौन से आर्थिक नीतियाँ लागू की जानी चाहिए?
- वहन क्षमता की अवधारणा के आधार पर सतत विकास के लक्ष्यों को कैसे प्राप्त किया जा सकता है?
- पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखने के लिए सरकार की भूमिका क्या होनी चाहिए?
- आर्थिक विकास के संदर्भ में वहन क्षमता का महत्त्व क्यों बढ़ रहा है?

इकाई–05

# प्राकृतिक संसाधनों के उपलब्धकर्ता, जीवन आधार प्रणाली के उपलब्धकर्ता एवं प्रदूषण तथा अपशिष्ट (Waste) के संवाहक के रूप में पर्यावरण

**इकाई की रूपरेखा:**

**5.0उद्देश्य**
**5.1प्रस्तावना**
**5.2 पर्यावरण: जीवन आधार प्रणाली एवं प्राकृतिक संसाधनों का स्रोत**
5.2.1 जीवन के लिए आवश्यक संसाधन
**5.2.2 जल स्रोत, जल प्रणाली और पर्यावरण**
5.2.3 पर्यावरणीय प्रक्रियाएँ
**5.2.4 पर्यावरण का संवाहक के रूप में महत्व**
**5.2.5 प्राकृतिक संसाधनों का अतिदोहन और पर्यावरणीय संकट**
**5.2.6 सतत विकास और संसाधनों का संरक्षण**
**5.3.0 प्रदूषण एवं अपशिष्ट (Waste) के संवाहक के रूप में पर्यावरण**
5.3.1 प्रदूषण के विभिन्न प्रकार
5.3.2 अपशिष्ट (Waste) के विभिन्न प्रकार, चुनौती और संभावनाएं
5.3.3 प्रदूषण एवं अपशिष्ट के संवाहक के रूप में पर्यावरण की भूमिका
5.3.4 पर्यावरणीय प्रदूषण और अपशिष्ट प्रबंधन के उपाय
5.4.0 **निष्कर्ष**
**5.5.0 संदर्भ ग्रंथ सूची**
**5.6.0 सामान्य बोध प्रश्न**
**5.7.0 अभ्यासार्थ प्रश्न**

## 5.0 उद्देश्य:

प्रस्तुत इकाई प्राकृतिक संसाधनों के उपलब्धकर्ता जीवन आधार प्रणाली के उपलब्धकर्ता जल प्रदुषण तथा अपशिष्ट के संवहक के रुप में पर्यावरण का अध्ययन के उपरान्त हम विभिन्न बिन्दुओं को जानने में सक्षम होंगे जो निम्नवत् हैं–

### 1.प्राकृतिक संसाधन

प्राकृतिक संसाधन वे तत्व हैं जो प्रकृति में उपलब्ध होते हैं और मानव जीवन के लिए आवश्यक होते हैं। इन संसाधनों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है:

1. **नवीकरणीय संसाधन**: ये संसाधन जैसे जल, वन, और सौर ऊर्जा हैं, जो स्वाभाविक रूप से पुनर्जीवित होते हैं।
2. **अविनाशी संसाधन**: ये संसाधन जैसे कोयला, तेल, और प्राकृतिक गैस हैं, जो सीमित मात्रा में होते हैं और इनके उपयोग के बाद पुनः प्राप्त नहीं किए जा सकते।

प्राकृतिक संसाधनों का प्रभावी प्रबंधन आवश्यक है, ताकि हम इनका संतुलित और सतत उपयोग कर सकें।

### 2.जीवन आधार प्रणाली

जीवन आधार प्रणाली वह तंत्र है जो विभिन्न जीवों के जीवन चक्र को बनाए रखता है। इसमें पौधों, जानवरों, और सूक्ष्मजीवों के बीच जटिल संबंध शामिल होते हैं। इस प्रणाली की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

- **जैव विविधता**: विभिन्न प्रजातियों का अस्तित्व और उनकी आपसी निर्भरता जीवन आधार प्रणाली को मजबूत बनाती है।
- **पारिस्थितिकी तंत्र**: पारिस्थितिकी तंत्र में ऊर्जा प्रवाह और पोषण चक्र का अध्ययन किया जाता है, जो जीवन आधार प्रणाली को संचालित करता है।

जीवन आधार प्रणाली का संरक्षण आवश्यक है, क्योंकि यह मानव स्वास्थ्य, खाद्य सुरक्षा, और पर्यावरणीय संतुलन के लिए महत्वपूर्ण है।

**3. प्रदूषण और अपशिष्ट**

प्रदूषण और अपशिष्ट प्रबंधन पर्यावरणीय अर्थशास्त्र के दो महत्वपूर्ण पहलू हैं:

1. **प्रदूषण**: यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें हानिकारक पदार्थ वातावरण में छोड़ दिए जाते हैं, जैसे वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, और भूमि प्रदूषण। यह मानव स्वास्थ्य और पारिस्थितिकी तंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।
2. **अपशिष्ट प्रबंधन**: यह प्रक्रिया अपशिष्ट पदार्थों को इकट्ठा करने, पुनः उपयोग करने, और निपटाने से संबंधित है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, दुनिया भर में हर साल 2 अरब टन ठोस अपशिष्ट उत्पन्न होता है, जो प्रदूषण का एक प्रमुख स्रोत है। प्रभावी अपशिष्ट प्रबंधन न केवल प्रदूषण को कम करता है, बल्कि प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में भी मदद करता है।

***5.1 प्रस्तावना:***

पर्यावरण एक ऐसा तंत्र है जिसमें प्राकृतिक संसाधन, जीवन आधार प्रणाली, प्रदूषण, और अपशिष्ट प्रबंधन सभी एक साथ जुड़े होते हैं। यह तंत्र न केवल मानव जीवन के लिए आवश्यक है, बल्कि यह पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन को भी बनाए रखता है। यह एक जटिल और गतिशील संरचना है, जो जल, वायु, मिट्टी, वनस्पति, और जीवों के माध्यम से संतुलन बनाए रखती है। पर्यावरण न केवल जीवन का आधार है, बल्कि यह प्राकृतिक संसाधनों का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत और संवाहक भी है। प्राकृतिक संसाधन पृथ्वी पर जीवन और आर्थिक गतिविधियों के लिए सबसे महत्वपूर्ण तत्व हैं। पर्यावरण इन संसाधनों का मुख्य स्रोत और संवाहक होता है, जो पृथ्वी पर जीवन की निरंतरता और विकास को सुनिश्चित करता है। इस अध्याय में हम इन सभी तत्वों के परस्पर संबंध और पर्यावरण के संवाहक के रूप में उनकी भूमिका का विश्लेषण करेंगे।

## 5.2 पर्यावरण: जीवन आधार प्रणाली एवं प्राकृतिक संसाधनों का स्रोत

पर्यावरण जीवन आधार प्रणालियों का संवाहक है, जो पृथ्वी पर जीवन की निरंतरता सुनिश्चित करता है। यह एक जटिल और संतुलित प्रणाली है जो पृथ्वी पर सभी जीवित प्राणियों के लिए आवश्यक संसाधनों को उपलब्ध कराती है और जीवन के लिए आवश्यक संतुलन बनाए रखती है। जल, वायु, भूमि, और पोषक तत्वों का संतुलन बनाए रखने में पर्यावरण की महत्वपूर्ण भूमिका है। प्राकृतिक संसाधन, जैसे जल, वायु, भूमि, खनिज, वनस्पति, और जीव जंतु, सभी पर्यावरण के विभिन्न घटकों से उत्पन्न होते हैं। ये संसाधन मानव जीवन के लिए अनिवार्य हैं और आर्थिक गतिविधियों के लिए आवश्यक कच्चे माल प्रदान करते हैं। यह जल, वायु, मिट्टी, वनस्पतियों और ऊर्जा के रूप में प्राकृतिक संसाधनों की निरंतरता और पुनः प्राप्ति को सुनिश्चित करता है, जिससे जीवन का चक्र चलायमान रहता है। इन संसाधनों की सीमितता और उनकी संतुलित उपभोग की आवश्यकता हमें पर्यावरण के महत्त्व को समझने में मदद करती है।

### 5.2.1 जीवन के लिए आवश्यक संसाधन

पर्यावरण, जल, वायु और मिट्टी जैसे महत्वपूर्ण संसाधनों की उपलब्धता का प्रमुख स्रोत है। जल, जो सभी जीवन के लिए अपरिहार्य है, का संरक्षण और पुनर्चक्रण पर्यावरण के द्वारा होता है। नदियाँ, झीलें, महासागर और भूमिगत जल स्रोत पर्यावरण के हिस्से हैं, जो जल की उपलब्धता सुनिश्चित करते हैं। इसी तरह, वायु की गुणवत्ता भी पर्यावरण द्वारा संरक्षित होती है, जिसमें पेड़ और पौधे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे वायुमंडल में ऑक्सीजन का उत्सर्जन करते हैं और कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करते हैं, जिससे जीवों के लिए शुद्ध वायु का प्रवाह बना रहता है।

मिट्टी और भूमि भी पर्यावरण की संरचना का एक अहम हिस्सा हैं, जो पौधों और कृषि उत्पादों की उर्वरकता बनाए रखते हैं। पर्यावरण मिट्टी को पोषक तत्वों से भरपूर बनाता है और उसकी संरचना को

प्राकृतिक प्रक्रियाओं के माध्यम से संतुलित रखता है, ताकि कृषि उत्पादन और जैव विविधता सुरक्षित रह सके।

### 5.2.2 जल स्रोत, जल प्रणाली और पर्यावरण

जल संसाधन जैसे नदियाँ, झीलें, भूमिगत जल स्रोत और वर्षा, सभी पर्यावरण के अभिन्न अंग हैं। जल जीवन के लिए अनिवार्य है और कृषि, उद्योग, बिजली उत्पादन, और पेयजल जैसी महत्वपूर्ण आवश्यकताओं के लिए आवश्यक है। जल जीवन के लिए सबसे महत्वपूर्ण संसाधनों में से एक है। पर्यावरण में जल का चक्र (Water Cycle) पृथ्वी के वातावरण और जीवों के बीच जल के निरंतर प्रवाह को सुनिश्चित करता है। वायुमंडल, महासागर, नदियाँ, झीलें, और भूमिगत जल स्रोत जीवन के सभी रूपों को जल प्रदान करते हैं। पर्यावरण इस प्रणाली को संरक्षित करता है, जिससे जल का पुनःचक्रण और उसका सतत उपयोग संभव हो पाता है।

### 5.2.3 पर्यावरणीय प्रक्रियाएँ

पर्यावरण में कई जटिल प्रक्रियाएँ होती हैं, जैसे जल चक्र, कार्बन चक्र और पोषक तत्व चक्र, जो जीवन की निरंतरता सुनिश्चित करती हैं। जल चक्र के माध्यम से जल का पुनर्चक्रण होता है, जिससे जलवायु और मौसम की स्थिरता बनी रहती है। वर्षा, वाष्पीकरण, और जल के भूमिगत संग्रहण जैसी प्रक्रियाएँ जल संसाधनों को पुनःप्राप्त करने में सहायक होती हैं।

कार्बन चक्र पर्यावरण में कार्बन के प्रवाह को नियंत्रित करता है, जिससे पेड़-पौधे और महासागर कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण करते हैं और पृथ्वी के तापमान को संतुलित रखने में मदद करते हैं। यह प्रक्रिया जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग को नियंत्रित करने में भी सहायक है।

***वायुमंडलीय प्रणाली और पर्यावरण***

वायुमंडल जीवन की रक्षा और संवाहन में मुख्य भूमिका निभाता है। ऑक्सीजन और अन्य गैसें जीवन के लिए आवश्यक हैं, और पर्यावरण वायुमंडलीय संतुलन को बनाए रखता है। वनों और महासागरों के माध्यम से कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण और ऑक्सीजन का उत्पादन, पृथ्वी के तापमान को नियंत्रित करने और वायु को शुद्ध रखने में मदद करता है।

***पोषण और ऊर्जा का संवाहन और पर्यावरण***

पर्यावरण पृथ्वी पर पोषक तत्वों का पुनर्स्थापन करता है, जो पौधों, जानवरों और मानव जीवन के लिए आवश्यक हैं। मिट्टी, जल, और सौर ऊर्जा पोषण चक्र का आधार होते हैं। पौधों के माध्यम से सौर ऊर्जा का अवशोषण और उसे भोजन में परिवर्तित करना पर्यावरणीय संतुलन का हिस्सा है, जो जीवन आधार प्रणालियों का निर्माण करता है।

### खनिज और ऊर्जा संसाधन और पर्यावरण

पर्यावरण धरती के भीतर खनिज संसाधनों और जीवाश्म ईंधनों का संवाहक है। पेट्रोलियम, कोयला, प्राकृतिक गैस, और अन्य खनिज तत्व धरती की गहराइयों में संचित हैं और ये औद्योगिक विकास के लिए महत्वपूर्ण स्रोत हैं। हालांकि, इन संसाधनों का अत्यधिक उपयोग पर्यावरण को हानि पहुँचाता है, जैसे खनिज दोहन और जीवाश्म ईंधनों के जलने से प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन होता है।

### वन और वनस्पति और पर्यावरण

वन और वनस्पति पारिस्थितिकी तंत्र के मुख्य अंग हैं, जो पृथ्वी पर जीवन के लिए अनिवार्य हैं। वे वायु शुद्धिकरण, जल संरक्षण, मिट्टी के क्षरण को रोकने और जलवायु संतुलन बनाए रखने में मदद करते हैं। साथ ही, वन लकड़ी, औषधीय पौधे, और अन्य प्राकृतिक उत्पादों का स्रोत होते हैं, जो आर्थिक गतिविधियों के लिए आवश्यक हैं।

### भूमि, कृषि और पर्यावरण

पर्यावरण भूमि का आधार प्रदान करता है, जो कृषि और खाद्य उत्पादन के लिए अनिवार्य है। भूमि संसाधनों का उचित प्रबंधन और संरक्षण पर्यावरण की स्थिरता के लिए आवश्यक है। कृषि उत्पादन के लिए जल, मिट्टी, और पोषक तत्वों का संतुलित उपयोग आवश्यक है, जो पर्यावरण के साथ सीधे जुड़े होते हैं।

### 5.2.4 पर्यावरण का संवाहक के रूप में महत्व

पर्यावरण न केवल प्राकृतिक संसाधनों को उपलब्ध कराता है, बल्कि उन्हें संरक्षित और पुनर्स्थापित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह एक संवाहक की तरह काम करता है, जो इन संसाधनों को निरंतर चक्रित करने और उनका सतत उपयोग सुनिश्चित करने में मदद करता है।

**पारिस्थितिकीय सेवाएँ**

पर्यावरण कई प्रकार की पारिस्थितिकीय सेवाएँ प्रदान करता है, जो जीवन को बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं जैसे प्रदूषण नियंत्रण, जलवायु विनियमन, पोषण चक्र, और जैव विविधता का संरक्षण । ये सेवाएँ प्राकृतिक संसाधनों के संवाहन के रूप में कार्य करती हैं, जिससे संसाधनों का निरंतर पुनर्भरण और उपयोग संभव हो पाता है। इनके माध्यम से पर्यावरण प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित रखता है और मानव और अन्य जीवों के लिए जीवन की निरंतरता सुनिश्चित करता है।

**प्राकृतिक संसाधनों की वहन क्षमता**

पर्यावरण की वहन क्षमता एक महत्वपूर्ण अवधारणा है, जो यह दर्शाती है कि बिना पर्यावरणीय संतुलन को बिगाड़े किसी भी क्षेत्र में कितने प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग किया जा सकता है। जब प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन किया जाता है, तो यह वहन क्षमता को पार कर जाता है, जिससे पर्यावरणीय संकट उत्पन्न होता है। अगर संसाधनों का अत्यधिक उपयोग होता है, तो पर्यावरणीय असंतुलन पैदा हो सकता है, जिससे जीवन आधार प्रणाली पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। पर्यावरण के द्वारा वहन क्षमता के भीतर संसाधनों का पुनर्प्रयोग और पुनर्प्राप्ति किया जाता है, जिससे जीवन के लिए आवश्यक संतुलन बना रहता है।

**5.2.5 प्राकृतिक संसाधनों का अतिदोहन और पर्यावरणीय संकट**

आज के समय में प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक उपयोग और असंतुलित दोहन पर्यावरणीय संकट को बढ़ा रहा है। उद्योग, कृषि, और मानवजनित गतिविधियों ने पर्यावरण पर भारी दबाव डाला है, जिससे कई प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं, जैसे जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, जैव विविधता की कमी, और प्राकृतिक आपदाएँ।

**जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय असंतुलन**

औद्योगिक क्रांति के बाद से, ग्रीनहाउस गैसों का अत्यधिक उत्सर्जन और जीवाश्म ईंधनों का अत्यधिक उपयोग वैश्विक तापमान में वृद्धि का मुख्य कारण बन गया है। इससे मौसम के पैटर्न बदल रहे हैं, समुद्र का स्तर बढ़ रहा है, और प्राकृतिक आपदाओं की आवृत्ति बढ़ रही है। इन समस्याओं से पर्यावरणीय संसाधनों की उपलब्धता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

**जैव विविधता का ह्रास**

पर्यावरण का संतुलन जैव विविधता पर निर्भर करता है, जो पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता और संसाधनों की पुनः पूर्ति सुनिश्चित करती है। लेकिन, मानव गतिविधियों के कारण जैव विविधता में तेजी से गिरावट आ रही है, जिससे पारिस्थितिकी तंत्र के संवाहन की क्षमता कमजोर हो रही है।

**5.2.6 सतत विकास और संसाधनों का संरक्षण**

पर्यावरणीय स्थिरता और प्राकृतिक संसाधनों का सतत उपयोग सुनिश्चित करने के लिए सतत विकास की अवधारणा महत्वपूर्ण है। सतत विकास वह विकास है, जिसमें संसाधनों का उपयोग इस प्रकार से किया जाता है कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी उनकी उपलब्धता सुनिश्चित हो सके। सतत विकास के तीन प्रमुख स्तंभ होते हैं: आर्थिक, सामाजिक, और पर्यावरणीय स्थिरता। इन तीनों के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है, ताकि प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग किया जा सके, लेकिन पर्यावरणीय संकट उत्पन्न न हो। पर्यावरणीय नीतियाँ और संरक्षण उपाय संसाधनों के सतत उपयोग के लिए आवश्यक हैं। इन नीतियों के माध्यम से प्रदूषण नियंत्रण, जलवायु परिवर्तन की रोकथाम, और जैव विविधता संरक्षण के उपाय किए जा सकते हैं। साथ ही, संसाधनों का विवेकपूर्ण प्रबंधन और उनका पुनरुत्पादन सुनिश्चित किया जा सकता है।

**5.3.0 प्रदूषण एवं अपशिष्ट (Waste) के संवाहक के रूप में पर्यावरण**

पर्यावरण वह प्राकृतिक संरचना है जो जीवन के लिए जरूरी तत्वों जैसे जल, वायु, मिट्टी और ऊर्जा की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित करता है । यह मानव गतिविधियों से उत्पन्न प्रदूषण और अपशिष्ट को आत्मसात

कर नियंत्रित करने की क्षमता भी रखता है लेकिन औद्योगिकीकरण, शहरीकरण और बढ़ती जनसंख्या के कारण मानव गतिविधियों से उत्पन्न प्रदूषण और अपशिष्ट (waste) की मात्रा में भारी वृद्धि से न केवल प्राकृतिक संसाधनों की गुणवत्ता में गिरावट आती है, बल्कि पूरे पारिस्थितिक तंत्र के संतुलन को भी खतरा होता है। पर्यावरण एक संवाहक के रूप में प्रदूषण और अपशिष्ट को स्वयं में समाहित कर संतुलन बनाए रखने का प्रयास करता है, लेकिन मानव-निर्मित कचरे और प्रदूषण की मात्रा इतनी अधिक हो चुकी है कि इसे सहन कर पाना मुश्किल हो रहा है।

**5.3.1** प्रदूषण के विभिन्न प्रकार

प्रदूषण का अर्थ उन अवांछित तत्वों से है जो पर्यावरण में मिलकर उसकी प्राकृतिक संरचना और संतुलन को नुकसान पहुंचाते हैं। यह कई रूपों में हो सकता है, जिनमें प्रमुख रूप से वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, मृदा (मिट्टी) प्रदूषण और ध्वनि प्रदूषण शामिल हैं।

***1.वायु प्रदूषण***

वायु प्रदूषण तब होता है जब वायुमंडल में हानिकारक गैसों, धूल, धुएं और अन्य विषैले पदार्थों की अधिकता हो जाती है। इसका मुख्य कारण उद्योगों से निकलने वाला धुआं, वाहन उत्सर्जन, और कोयले और अन्य जीवाश्म ईंधनों का दहन है। वायु प्रदूषण से मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, जैसे कि श्वसन तंत्र के रोग, हृदय रोग और कैंसर। इसके अलावा, वायु प्रदूषण का पर्यावरण पर भी गहरा असर होता है, जिससे ओजोन परत का क्षरण, अम्लीय वर्षा और जलवायु परिवर्तन जैसी गंभीर समस्याएं उत्पन्न होती हैं। वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गनाइजेशन (WHO) के अनुसार, 2024 में 90% से अधिक वैश्विक जनसंख्या प्रदूषित हवा में सांस ले रही है, जिससे हर साल लगभग 7 मिलियन लोगों की अकाल मृत्यु हो रही है।

वायु प्रदूषण वैश्विक अर्थव्यवस्था को हर साल लगभग $5 ट्रिलियन का नुकसान पहुंचाता है, जिसमें स्वास्थ्य देखभाल लागत, उत्पादकता में कमी, और कृषि उत्पादन में गिरावट शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, वायु प्रदूषण से कृषि उत्पादकता में 10-15% तक की कमी आ सकती है, जिससे खाद्य सुरक्षा प्रभावित होती है। उद्योगों में, वायु प्रदूषण से श्रमिकों की कार्यक्षमता में 15% की गिरावट देखी जाती है, जिससे कुल आर्थिक उत्पादन प्रभावित होता है।

***2.*** *जल प्रदूषण*

जल प्रदूषण तब उत्पन्न होता है जब नदियों, झीलों, महासागरों और अन्य जल स्रोतों में हानिकारक रसायन, कचरा, और विषाक्त पदार्थ मिल जाते हैं। उद्योगों और घरेलू सीवेज से निकलने वाले अपशिष्ट, कृषि में इस्तेमाल किए जाने वाले रसायन (जैसे कि उर्वरक और कीटनाशक) और प्लास्टिक प्रदूषण जल की गुणवत्ता को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं। जल प्रदूषण के कारण न केवल जल स्रोत दूषित होते हैं, बल्कि जल जीवन और पारिस्थितिकी तंत्र भी खतरे में पड़ जाते हैं।

2024 के आंकड़ों के अनुसार, संयुक्त राष्ट्र के अध्ययन में यह पाया गया है कि दुनिया भर में लगभग 2.2 बिलियन लोग सुरक्षित पेयजल की कमी से जूझ रहे हैं। भारत में, गंगा और यमुना जैसी प्रमुख नदियां औद्योगिक कचरे और घरेलू गंदगी के कारण गंभीर रूप से प्रदूषित हो चुकी हैं। न केवल जल के उपभोग की क्षमता में गिरावट आई है, बल्कि जलीय जीवन और जैव विविधता पर भी इसका गंभीर प्रभाव पड़ा है।

जल प्रदूषण वैश्विक स्तर पर प्रति वर्ष लगभग $260 बिलियन का आर्थिक नुकसान करता है, जिसमें स्वास्थ्य देखभाल लागत, कृषि उत्पादन में कमी और जल संसाधनों के अव्यवस्थित उपयोग शामिल हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, दूषित जल से होने वाली बीमारियों के कारण हर साल 1.5 मिलियन बच्चों की मौत होती है, जिससे चिकित्सा खर्च में भारी वृद्धि होती है। कृषि में, जल प्रदूषण से फसलों की गुणवत्ता में गिरावट और उत्पादकता में 20-30% तक की कमी आती है। इसके अतिरिक्त, जल प्रदूषण से पर्यटन उद्योग को भी क्षति होती है, जिससे स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

*3.* ***मृदा प्रदूषण***

**मृदा** प्रदूषण का मुख्य कारण कृषि में अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग, औद्योगिक कचरे का अनुचित निपटान, और प्लास्टिक और धातु जैसी अपशिष्ट सामग्री का गैर-जैविक क्षरण है। यह मृदा की उर्वरता को घटा देता है, जिससे फसल उत्पादन में गिरावट आती है। **मृदा** प्रदूषण से

जमीन की गुणवत्ता प्रभावित होती है और भूजल भी दूषित हो सकता है, जिससे पूरे खाद्य शृंखला पर असर पड़ता है। 2023 में, भारत में कृषि भूमि के लगभग 30% हिस्से को गंभीर मृदा प्रदूषण की समस्या का सामना करना पड़ रहा है। इसके कारण कृषि उत्पादन में गिरावट आई है, जिससे किसानों की आय और ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

*4.* ***ध्वनि प्रदूषण***

ध्वनि प्रदूषण अत्यधिक और अनियंत्रित शोर के कारण होता है, जो औद्योगिक गतिविधियों, यातायात, निर्माण कार्यों और अन्य स्रोतों से उत्पन्न होता है। ध्वनि प्रदूषण से मानव स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, जैसे कि मानसिक तनाव, सुनने की क्षमता में कमी, और उच्च रक्तचाप। ध्वनि प्रदूषण का पर्यावरणीय प्रभाव भी है, जो वन्य जीवों की प्रजातियों को प्रभावित करता है, विशेषकर उन जीवों को जो ध्वनि संचार पर निर्भर होते हैं।

ध्वनि प्रदूषण से वैश्विक अर्थव्यवस्था को प्रति वर्ष अनुमानित $750 बिलियन का नुकसान होता है, जिसमें स्वास्थ्य देखभाल, कार्यक्षमता में कमी, और संपत्ति के मूल्य में गिरावट शामिल है। वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गनाइजेशन के अनुसार, शहरी क्षेत्रों में ध्वनि प्रदूषण से उत्पादकता में 10% तक कमी देखी गई है। साथ ही, यूरोपीय संघ में हर साल 48,000 नए दिल के दौरे के मामले शोर प्रदूषण के कारण होते हैं, जिससे चिकित्सा खर्च में वृद्धि होती है। इससे व्यापारिक प्रतिष्ठानों पर भी प्रतिकूल आर्थिक प्रभाव पड़ता है, क्योंकि श्रमिकों की कार्यक्षमता और ध्यान केंद्रित करने की क्षमता कम हो जाती है।

***5. प्लास्टिक प्रदूषण***

प्लास्टिक प्रदूषण पर्यावरण के लिए सबसे गंभीर समस्याओं में से एक है, क्योंकि प्लास्टिक सामग्री का विघटन सैकड़ों सालों तक नहीं होता है। प्लास्टिक कचरा, विशेषकर महासागरों में, जलीय जीवन और पारिस्थितिकी तंत्र के लिए गंभीर खतरा है। वर्तमान में, प्रत्येक वर्ष लगभग 8 मिलियन टन प्लास्टिक महासागरों में जाता है, जिससे समुद्री जीवन को नुकसान होता है।

2024 की रिपोर्ट के अनुसार, भारत दुनिया के सबसे बड़े प्लास्टिक उत्पादकों और उपभोक्ताओं में से एक है। सरकार ने "सिंगल यूज प्लास्टिक" को प्रतिबंधित करने की दिशा में कदम उठाए हैं, लेकिन अभी भी अपशिष्ट प्रबंधन की उचित व्यवस्था न होने के कारण प्लास्टिक प्रदूषण एक गंभीर समस्या बनी हुई है।

### 5.3.2 **अपशिष्ट (Waste) के विभिन्न प्रकार**, **चुनौती और संभावनाएं**

अपशिष्ट, या कचरा, वह अवशिष्ट पदार्थ है जो मानव गतिविधियों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होता है। इसमें घरेलू कचरा, औद्योगिक कचरा, कृषि अपशिष्ट, और ई-कचरा (इलेक्ट्रॉनिक कचरा) शामिल हैं। अपशिष्ट का सही ढंग से प्रबंधन न होने पर यह पर्यावरण के लिए हानिकारक साबित हो सकता है। अपशिष्ट के विभिन्न प्रकार निम्नलिखित हैं:

*1.* ***ठोस अपशिष्ट***

ठोस अपशिष्ट वह कचरा है जो ठोस रूप में होता है, जैसे प्लास्टिक, कागज, धातु, और जैविक कचरा। ठोस अपशिष्ट का निपटान अक्सर लैंडफिल (भूमिगत कचरा निष्पादन) के माध्यम से किया जाता है, लेकिन इसका बड़ा हिस्सा समुद्र और अन्य जल स्रोतों में पहुंच जाता है, जिससे प्रदूषण और पारिस्थितिक असंतुलन उत्पन्न होता है। प्लास्टिक कचरा, विशेष रूप से, एक बड़ी समस्या है क्योंकि इसका विघटन बहुत धीरे-धीरे होता है और यह लंबे समय तक पर्यावरण को प्रभावित करता है। 2023 के आंकड़ों के अनुसार, भारत में प्रतिदिन 1,50,000 टन ठोस कचरा उत्पन्न होता है, जिसमें से केवल 25% कचरे का पुनर्चक्रण किया जाता है। इसके कारण लैंडफिल (कचरे के ढेर) बढ़ते जा रहे हैं और इनसे उत्पन्न होने वाली मिथेन गैस वायु प्रदूषण का प्रमुख कारण बन रही है।

*2.* ***तरल अपशिष्ट***

तरल अपशिष्ट में औद्योगिक और घरेलू सीवेज, रासायनिक अपशिष्ट, और पेट्रोलियम उत्पाद शामिल हैं। यह कचरा जल स्रोतों में मिलकर जल प्रदूषण का कारण बनता है। औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाले रसायन, तेल रिसाव, और कृषि अपशिष्ट तरल कचरे के प्रमुख स्रोत हैं, जो जल जीवन और मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं। तरल अपशिष्ट का प्रमुख स्रोत उद्योगों से निकला हुआ रसायनयुक्त जल और

घरेलू सीवेज होता है। जल प्रदूषण के मुख्य कारकों में से एक यह है कि यह सीधे जल स्रोतों में मिल जाता है। केंद्रीय जल आयोग (CWC) की 2023 की रिपोर्ट के अनुसार, भारत में 70% जल स्रोत प्रदूषित हो चुके हैं, जिसका सीधा प्रभाव मानव और जलीय जीवन पर पड़ा है।

*3.* ***गैसीय अपशिष्ट***

गैसीय अपशिष्ट में उद्योगों और वाहनों से निकलने वाले विषैले धुएं, कार्बन डाइऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड, और नाइट्रोजन ऑक्साइड जैसी गैसें शामिल हैं। ये गैसें वायुमंडल में मिलकर वायु प्रदूषण को बढ़ाती हैं, जिससे ओजोन परत को नुकसान पहुंचता है और ग्लोबल वार्मिंग जैसी गंभीर पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न होती हैं।

*4.* ***ई-कचरा (E-Waste)***

ई-कचरा या इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट वह कचरा होता है जो पुरानी और बेकार इलेक्ट्रॉनिक वस्तुओं से उत्पन्न होता है, जैसे मोबाइल फोन, कंप्यूटर, और टेलीविजन। यह कचरा अत्यधिक हानिकारक होता है क्योंकि इसमें कई विषैले तत्व होते हैं, जैसे कि लेड, कैडमियम, और पारा, जो मिट्टी और जल स्रोतों को दूषित कर सकते हैं। 2024 तक, भारत दुनिया में तीसरे स्थान पर है जहाँ ई-कचरे की सबसे ज्यादा मात्रा उत्पन्न होती है। इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट में भारी धातुएं और विषाक्त तत्व होते हैं, जो मिट्टी और जल स्रोतों को दूषित कर सकते हैं। ई-कचरे का निपटान एक बड़ी चुनौती बनी हुई है।

### 5.3.3 प्रदूषण एवं अपशिष्ट के संवाहक के रूप में पर्यावरण की भूमिका

पर्यावरण एक संवाहक के रूप में प्रदूषण और अपशिष्ट को समाहित करने का प्रयास करता है। प्राकृतिक प्रक्रियाएं जैसे जल चक्र, वायु शुद्धिकरण, और जैविक क्षरण पर्यावरण को स्वयं शुद्ध करने की क्षमता देती हैं। लेकिन जब प्रदूषण और अपशिष्ट की मात्रा अधिक हो जाती है, तो यह क्षमता कम हो जाती है और पर्यावरणीय असंतुलन उत्पन्न होता है।

*1.* ***जल शोधन:***

प्राकृतिक जल स्रोतों में आत्मशुद्धिकरण की क्षमता होती है, जो जल को शुद्ध और साफ रखने में मदद करती है। यह प्रक्रिया नदियों, झीलों और महासागरों के भीतर होने वाली रासायनिक और जैविक प्रक्रियाओं के माध्यम से होती है। लेकिन जब जल स्रोतों में भारी मात्रा में कचरा और रसायन मिलते हैं, तो यह प्रक्रिया धीमी हो जाती है, और जल प्रदूषण का स्तर बढ़ जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, हर साल लगभग 2.2 मिलियन लोग दूषित जल के कारण होने वाली बीमारियों से मरते हैं, जिससे वैश्विक अर्थव्यवस्था को करीब $260 बिलियन का नुकसान होता है। जल शोधन तकनीकों, जैसे कि रिवर्स ऑस्मोसिस और UV कीटाणुशोधन, का उपयोग करके स्वच्छ जल की उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है। इसके अलावा, जल शोधन में निवेश, जैसे कि $10-$15 प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष, दीर्घकालिक स्वास्थ्य लाभ और उत्पादकता में सुधार को बढ़ावा देता है।

*2.* ***वायु शुद्धिकरण***

वनस्पतियाँ और पेड़ वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण करते हैं और ऑक्सीजन छोड़ते हैं, जिससे वायु की गुणवत्ता बनी रहती है। लेकिन अत्यधिक वायु प्रदूषण, विशेषकर कार्बन उत्सर्जन और हानिकारक गैसों के कारण, पर्यावरण की शुद्धिकरण क्षमता पर भारी दबाव डालता है। परिणामस्वरूप, ओजोन परत क्षरण और ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, वायु प्रदूषण हर साल 7 मिलियन लोगों की जान ले लेता है, जिससे वैश्विक स्वास्थ्य देखभाल खर्च में लगभग $5 ट्रिलियन का अतिरिक्त बोझ पड़ता है। वायु शुद्धिकरण तकनीकों, जैसे कि HEPA फ़िल्टर और औद्योगिक धुंध शोधन, का उपयोग करके हवा की गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है। अध्ययन दर्शाते हैं कि शुद्ध हवा में निवेश से उत्पादकता में 10-20% की वृद्धि होती है, जिससे आर्थिक विकास को बढ़ावा मिलता है।

*3.* ***मृदा शुद्धिकरण***

पर्यावरण में जैविक प्रक्रियाएं मिट्टी में मौजूद अपशिष्ट को प्राकृतिक रूप से विघटित करती हैं। लेकिन जब मिट्टी में रासायनिक कचरा और भारी धातुएं प्रवेश करती हैं, तो यह शुद्धिकरण प्रक्रिया धीमी हो जाती है,

और मिट्टी की उर्वरता प्रभावित होती है। इससे कृषि उत्पादन में कमी आती है और खाद्य सुरक्षा पर खतरा उत्पन्न होता है।

### 5.3.4 **पर्यावरणीय प्रदूषण और अपशिष्ट प्रबंधन के उपाय**

पर्यावरणीय प्रदूषण और अपशिष्ट प्रबंधन एक चुनौतीपूर्ण कार्य है, लेकिन इसके लिए कई उपाय और रणनीतियां अपनाई जा सकती हैं, जो पर्यावरण को प्रदूषण और अपशिष्ट से बचा सकती हैं।

***अपशिष्ट प्रबंधन प्रणाली***

अपशिष्ट प्रबंधन के लिए एक प्रभावी प्रणाली का विकास किया जाना चाहिए, जिसमें ठोस कचरे के पुनर्चक्रण, तरल कचरे के उपचार और विषाक्त अपशिष्ट के सुरक्षित निष्पादन की व्यवस्था हो। ठोस कचरे को पुन: उपयोग और पुन: चक्रण द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है, जबकि तरल कचरे का शोधन आवश्यक है ताकि जल स्रोत सुरक्षित बने रहें। अपशिष्ट के पुन:चक्रण से न केवल कचरे की मात्रा कम की जा सकती है, बल्कि प्राकृतिक संसाधनों की खपत को भी नियंत्रित किया जा सकता है। 2023 की रिपोर्ट के अनुसार, भारत में केवल 25% ठोस कचरे का पुनर्चक्रण हो रहा है, जिसे बढ़ाकर 50% करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

***प्राकृतिक संसाधनों का सतत उपयोग***

संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और अपशिष्ट को कम से कम करना हमें पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में मदद कर सकता है। प्राकृतिक संसाधनों का सतत उपयोग पर्यावरण को प्रदूषण और अपशिष्ट से बचाने में महत्वपूर्ण है। उद्योगों और कृषि में रासायनिक उत्पादों के स्थान पर जैविक और प्राकृतिक विकल्पों को अपनाना आवश्यक है। उद्योगों में ग्रीन तकनीकों को अपनाना, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग और कृषि में जैविक तरीकों को बढ़ावा देना पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में सहायक हो सकता है।

**नवीन प्रौद्योगिकी का उपयोग**: ऊर्जा उत्पादन और संसाधन प्रबंधन में **नवीन** प्रौद्योगिकियों का उपयोग करना, जिससे प्रदूषण कम हो सके और संसाधनों का बेहतर उपयोग हो सके। इस दिशा में उठाए गए कदम न केवल वर्तमान पीढ़ी के लिए, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी महत्वपूर्ण होंगे। प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और संरक्षण हमें एक स्थायी और स्वस्थ भविष्य की ओर ले जाएगा।

***शिक्षा और जागरूकता***

पर्यावरणीय प्रदूषण और अपशिष्ट प्रबंधन के प्रति लोगों में जागरूकता बढ़ाना बहुत जरूरी है। लोगों को यह समझाना होगा कि पर्यावरण की सुरक्षा के लिए उनकी भागीदारी कितनी महत्वपूर्ण है। स्कूलों, कॉलेजों और सामाजिक संस्थाओं में पर्यावरण शिक्षा को बढ़ावा देकर इसे सुनिश्चित किया जा सकता है।

### **5.4.0** निष्कर्ष

पर्यावरण प्रदूषण और अपशिष्ट का संवाहक होते हुए भी, एक सीमा के बाद यह इसे सहन नहीं कर सकता। मानव गतिविधियों से उत्पन्न प्रदूषण और अपशिष्ट के बढ़ते दबाव के कारण पर्यावरणीय असंतुलन बढ़ रहा है। इसका न केवल पारिस्थितिकी तंत्र पर गहरा प्रभाव पड़ रहा है, बल्कि मानव स्वास्थ्य और जीवन की गुणवत्ता भी प्रभावित हो रही है।

इसीलिए, यह जरूरी है कि हम अपशिष्ट और प्रदूषण को नियंत्रित करने के उपायों को अपनाएं, ताकि पर्यावरण को संरक्षित रखा जा सके। पर्यावरणीय प्रदूषण और अपशिष्ट प्रबंधन के प्रति जागरूकता और उचित रणनीतियों के साथ हम इस समस्या से निपट सकते हैं, और पृथ्वी को एक स्वच्छ और सुरक्षित स्थान बना सकते हैं। प्राकृतिक संसाधनों, जीवन आधार प्रणाली, प्रदूषण और अपशिष्ट प्रबंधन के संदर्भ में पर्यावरण एक महत्वपूर्ण संवाहक के रूप में कार्य करता है। इन सभी तत्वों के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है ताकि हम एक स्वस्थ और सतत भविष्य की दिशा में अग्रसर हो सकें। इसके लिए नीतिगत बदलाव, जन जागरूकता, और तकनीकी नवाचार की आवश्यकता है, जिससे पर्यावरण की सुरक्षा और प्राकृतिक संसाधनों का कुशल प्रबंधन किया जा सके।

## 5.5.0 संदर्भ ग्रंथ सूची:


- **"Environmental and Natural Resource Economics"**
  लेखक: **Tom Tietenberg** और **Lynne Lewis**
  प्रकाशक: **Taylor & Francis, 13 March 2018, ISBN: 9781351803373**
- **"Economics of the Environment: Selected Readings"**
  संपादक: **Robert N. Stavins**
  प्रकाशक: **Edward Elgar Publishing, 2019, ISBN: 9781788972079**
- **विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
  लेखक: **Dr. Anupam Agarwal, Dr. Alok Gupta**
  प्रकाशक: **SBPD Publications, 6 July 2021, ISBN: 9789389585339**
- **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
  लेखक: डॉ. वी.सी. सिन्हा, डॉ. रितिका सिन्हा
  प्रकाशक: **SBPD Publishing House, 8 July 2024, ISBN: 9788119142392**
- **"The Economics of Climate Change: The Stern Review"**
  लेखक: Nicholas Stern
  प्रकाशक: Cambridge University Press


## 5.7.0 अभ्यासार्थ प्रश्न:

- प्राकृतिक संसाधनों को उनकी विशेषताओं के आधार पर वर्गीकृत करें। नवीकरणीय और अविनाशी संसाधनों के उदाहरण दें।
- जीवन आधार प्रणाली का क्या अर्थ है? इसके प्रमुख घटक क्या हैं और वे कैसे एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं?
- अपशिष्ट प्रबंधन के विभिन्न तरीकों का वर्णन करें। अपशिष्ट के निपटान में किन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है?
- सतत विकास के लिए किन नीतियों और रणनीतियों को अपनाया जा सकता है? इसके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए क्या आवश्यक है?
- प्रदूषण और अपशिष्ट प्रबंधन के संदर्भ में भारत में लागू प्रमुख कानूनों और नीतियों का विश्लेषण करें।
- जैव विविधता के संरक्षण का पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ता है? इसके लिए क्या उपाय किए जा सकते हैं?
- प्रदूषण नियंत्रण में नवीनतम तकनीकों और नवाचारों का क्या योगदान है?
- प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण के संबंध में भविष्य में आने वाली प्रमुख चुनौतियों का क्या अनुमान है?

# इकाई–06
# भौतिक संतुलन एवं एंट्रॉपी लॉ की अवधारणाएं

**इकाई की रूपरेखा:**

**6.0उद्देश्य**

**6.1प्रस्तावना**

**6.2.0 भौतिक संतुलन की अवधारणा (Material Balance Concept)**

**6.2.1 भौतिक संतुलन सिद्धांत का आधार**

**6.2.3 भौतिक संतुलन के उदाहरण**

**6.2.4 भौतिक संतुलन का ग्राफ**

**6.2.5 प्रभाव**

**6.3.0 एंट्रॉपी लॉ की अवधारणा (Entropy Law)**

**6.3.1 एंट्रॉपी लॉ का सिद्धांत**

6.3.2 एंट्रॉपी लॉ के उदाहरण

6.3.3 एंट्रॉपी लॉ के पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में प्रभाव

**6.3.4 एंट्रॉपी लॉ का ग्राफ**

6.3.5 एंट्रॉपी लॉ और सतत विकास

**6.3.6 पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में भौतिक संतुलन और एंट्रॉपी लॉ का महत्व**

**6.4.0 निष्कर्ष**

6.5.0 संदर्भ ग्रंथ सूची

**6.6.0 सामान्य बोध प्रश्न**

**6.7.0 अभ्यासार्थ प्रश्न**

## 6.0 उद्देश्य:

**पर्यावरण अर्थशास्त्र में "भौतिक संतुलन एवं एंट्रॉपी लॉ" के उद्देश्य**

- **संसाधनों का संरक्षण**
- **पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखना**
- **ऊर्जा का कुशल उपयोग**
- **प्रदूषण और अपशिष्ट प्रबंधन**
- **सतत विकास के लिए मार्गदर्शन**
- **उपभोक्ता व्यवहार का विश्लेषण**
- **नीति निर्माण में सहयोग**
- **अनुसंधान और नवाचार के लिए प्रेरणा**
- **भविष्य की पीढ़ियों के लिए सुरक्षा**

## 6.1 प्रस्तावना:

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र का अध्ययन इस बात पर केंद्रित है कि किस प्रकार आर्थिक गतिविधियाँ पर्यावरण पर प्रभाव डालती हैं और इन प्रभावों को कैसे प्रबंधित किया जा सकता है। इसमें प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग, अपशिष्ट प्रबंधन, और प्रदूषण को कम करने के उपाय शामिल होते हैं। पर्यावरणीय समस्याओं का अध्ययन करने के लिए भौतिक संतुलन और एंट्रॉपी लॉ की अवधारणाएं प्रमुख सिद्धांत हैं, जो संसाधनों के उपयोग और पर्यावरणीय अपशिष्ट के उत्पादन की प्रक्रिया को समझने में मदद करती हैं। ये अवधारणाएं सतत विकास और संसाधनों के कुशल उपयोग को बढ़ावा देती हैं।

## 6.2.0 भौतिक संतुलन की अवधारणा (Material Balance Concept)

भौतिक संतुलन का सिद्धांत पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में एक प्रमुख अवधारणा है, जो यह बताता है कि किसी भी आर्थिक प्रक्रिया के दौरान, जितने प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग किया जाता है, वह अंततः एक अन्य रूप में अपशिष्ट या उत्पाद के रूप में निकलता है। इसका मूल अवधारणा इस सिद्धांत पर आधारित है कि सभी आर्थिक गतिविधियाँ पर्यावरण से संसाधन लेती हैं और इसे अपशिष्ट के रूप में वापस करती हैं।

### 6.2.1 भौतिक संतुलन सिद्धांत का आधार

- आर्थिक गतिविधियाँ पर्यावरण से प्राकृतिक संसाधनों को निकालती हैं, उन्हें उपयोग करती हैं, और उनके कुछ अंश को उत्पाद के रूप में तथा बाकी को अपशिष्ट के रूप में वापस पर्यावरण में डाल देती हैं। उदाहरण के तौर पर, एक औद्योगिक इकाई में यदि 1000 टन कच्चे माल का उपयोग किया जाता है, तो अंत में उत्पादन के बाद जितना माल बचता है, वही अपशिष्ट बनकर पर्यावरण में चला जाता है।

भौतिक संतुलन की अवधारणा निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित है:

- **पदार्थ के संरक्षण का नियम**: किसी भी आर्थिक प्रक्रिया में पदार्थ का पूर्ण विनाश नहीं होता है, बल्कि इसका रूपांतरण होता है। उदाहरण के लिए, एक संयंत्र में उपयोग किए गए कच्चे माल को उत्पाद और अपशिष्ट दोनों में परिवर्तित किया जाता है।
- **संसाधनों का कुशल उपयोग**: यह सिद्धांत हमें संसाधनों के कुशल उपयोग और अपशिष्ट प्रबंधन की आवश्यकता को इंगित करता है। यदि संसाधनों का कुशलता से उपयोग नहीं किया जाता, तो अधिक मात्रा में अपशिष्ट उत्पन्न होगा, जो पर्यावरणीय समस्याओं को बढ़ाएगा।

### 6.2.3 भौतिक संतुलन के उदाहरण

1. **औद्योगिक उत्पादन**: एक स्टील निर्माण संयंत्र में कच्चे लोहे, कोयला और अन्य तत्वों का उपयोग किया जाता है। उत्पादन प्रक्रिया के बाद उत्पाद के रूप में स्टील प्राप्त होता है, जबकि अपशिष्ट के रूप में स्लैग, धातु अवशेष, और कार्बन उत्सर्जन होते हैं।
2. **कृषि**: कृषि में उर्वरक और पानी का उपयोग फसल उत्पादन में होता है। फसल उत्पादन के बाद कुछ भाग उत्पाद के रूप में बाजार में जाता है, जबकि शेष भाग मिट्टी में अवशेष, अपशिष्ट जल, और प्रदूषक तत्वों के रूप में वापस पर्यावरण में चला जाता है।

### 6.2.4 भौतिक संतुलन का ग्राफ

पर्यावरण और अर्थव्यवस्था के बीच संबंध को "भौतिक संतुलन मॉडल" के माध्यम से दर्शाया जा सकता है। चित्र में, आर्थिक प्रणाली की उत्पादन गतिविधियों को 'उत्पादन क्षेत्र' नामक वृत्त द्वारा दर्शाया गया है। यह चक्र आर्थिक प्रणाली में सभी उत्पादक गतिविधियों का प्रतिनिधित्व करता है, जैसे कि कृषि, कारखाने, गोदाम, खदानें, परिवहन और अन्य सार्वजनिक उपयोगिताएँ जो पर्यावरण से सामग्री के निष्कर्षण में लगी हुई हैं, विपणन योग्य वस्तुओं और सेवाओं में उनका प्रसंस्करण, शोधन और पुनर्व्यवस्था और अंतिम उपयोग के बिंदु तक अर्थव्यवस्था में उनका वितरण।

नीचे दिए गए ग्राफ़ में दर्शाया गया है कि कैसे किसी उत्पादन प्रक्रिया में संसाधनों का उपयोग और अपशिष्ट का उत्पादन होता है:

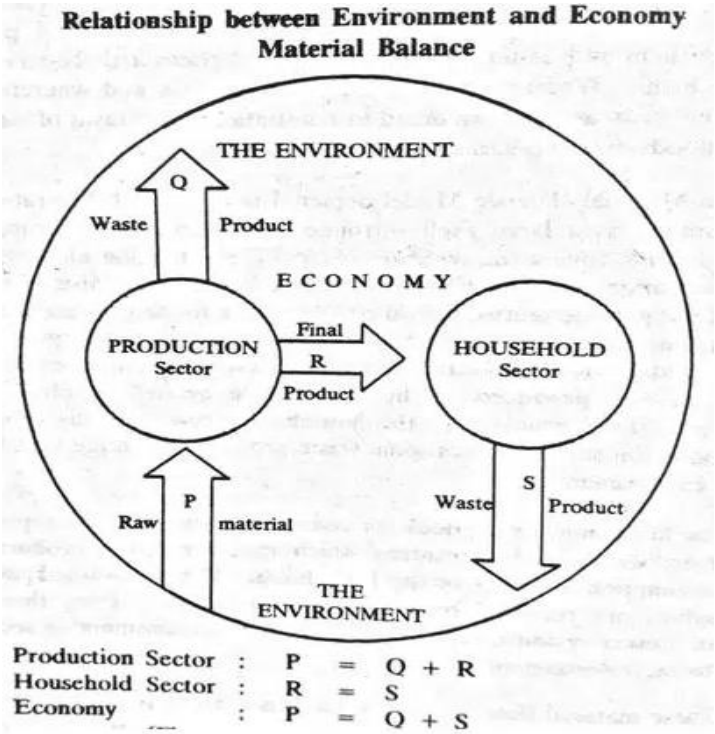


भौतिक संतुलन मॉडल में एक और सर्कल को 'घरेलू क्षेत्र' के रूप में व्यक्तिगत जो अर्थव्यवस्था में) (उपभोक्ताओं को दर्शाता हैतथा पर्यावरण" को आर्थिक प्रणाली के चारों ओर एक बड़े आवरण के रूप में दर्शाया गया है । इस मॉडल के अनुसार उत्पादन के क्षेत्र में जो कुछ भी उत्पादित होता है वह उपभोक्ताओं के रूप में कार्य करने वाले व्यक्तियों के पास जाता है। यह पर्यावरण और अर्थव्यवस्था के बीच संबंध दिखाने के लिए आर्थिक प्रणाली का एक सरलीकृत दोक्षेत्रीय मॉडल है-

पर्यावरण से आने वाले कच्चे माल के इनपुट को में संसाधित और उत्पादित किया जाता है "उत्पादन क्षेत्र" र्ति की जाती है। इस प्रक्रिया मेंऔर घरेलू क्षेत्र में उपभोज्य अंतिम उत्पादों की आपू, उत्पादन क्षेत्र कुछ अपशिष्ट उत्पाद बनाता है जिन्हें पर्यावरण में वापस भेज दिया जाता है।

घरेलू क्षेत्र आपूर्ति किए गए सभी उत्पादों का उपभोग नहीं करता है। उनके पास 'अवशेष' नामक 'अपशिष्ट' होते हैं जो घरों की उपभोग गतिविधियों के अवांछित उपउत्पाद होते हैं। ये अवांछित अपशिष्ट - या अवशेष पर्यावरण में वापस लौट आते हैं। इस प्रकार, उत्पादन और उपभोग दोनों क्षेत्रों से पर्यावरण में अवशेषों का निरंतर प्रवाह होता रहता है।

इन भौतिक प्रवाहों को 'पदार्थ के संरक्षण' को नियंत्रित करने वाले भौतिकी के मूल नियम का पालन करना आवश्यक है। यह मानते हुए कि यह एक बहुत ही सरलीकृत अर्थव्यवस्था है जहाँ कोई निर्यात और आयात नहीं है; जहां पौधों, उपकरणों, इन्वेंट्री, उपभोक्ता टिकाऊ वस्तु आदि के स्टॉक का कोई शुद्ध संचय नहीं है, प्राकृतिक पर्यावरण में लौटाए गए अवशेषों का द्रव्यमान प्रसंस्करण और उत्पादन प्रणाली में प्रवेश करने वाले बुनियादी ईंधन, भोजन, खनिज और वायुमंडल से ली गई गैसों सहित अन्य कच्चे माल के द्रव्यमान के बराबर होना चाहिए । इस प्रकार, इन्वेंट्री संचय की अनुपस्थिति में, उत्पादन क्षेत्र से घरेलू क्षेत्र तक उपभोक्ता वस्तुओं का प्रवाह पर्यावरण में बड़े पैमाने पर प्रवाह के बराबर होना चाहिए। भौतिक संतुलन के पीछे यही सिद्धांत है। यह आर्थिक प्रणाली के प्रत्येक क्षेत्र के लिए अलग से और समग्र रूप से आर्थिक प्रणाली के लिए भी अच्छा है।

**6.2.5 प्रभाव**:

- भौतिक संतुलन का सिद्धांत हमें यह समझने में मदद करता है कि क्यों स्थिरता (sustainability) और अपशिष्ट प्रबंधन (waste management) को ध्यान में रखना आवश्यक है। यदि हम संसाधनों का अत्यधिक दोहन करेंगे, तो उनकी आपूर्ति कम होगी और अपशिष्ट में वृद्धि होगी, जिससे पर्यावरणीय क्षति होगी।

### 6.3.0 एंट्रॉपी लॉ की अवधारणा (Entropy Law)

पर्यावरण अर्थशास्त्र में प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग, ऊर्जा के प्रवाह, और अपशिष्ट प्रबंधन का अध्ययन करने के लिए कई वैज्ञानिक अवधारणाओं का उपयोग किया जाता है। इनमें से एक महत्वपूर्ण अवधारणा है **एंट्रॉपी लॉ**। एंट्रॉपी लॉ थर्मोडायनामिक्स के दूसरे नियम पर आधारित है और इसका मुख्य सिद्धांत यह है कि किसी भी बंद प्रणाली में अव्यवस्था या एंट्रॉपी हमेशा बढ़ती है। यह सिद्धांत यह भी इंगित करता है कि किसी भी प्रक्रिया में ऊर्जा का एक अंश हमेशा अव्यवस्थित या अप्रयुक्त रूप में परिवर्तित हो जाता है, जिसे पुनः उपयोग करना संभव नहीं होता। पर्यावरण अर्थशास्त्र में एंट्रॉपी लॉ का सिद्धांत संसाधनों के सीमित उपयोग, अपशिष्ट प्रबंधन, और प्रदूषण के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाले पर्यावरणीय असंतुलन को समझने में मदद करता है।

एंट्रॉपी लॉ थर्मोडायनामिक्स के दूसरे नियम पर आधारित है, जो यह बताता है कि किसी भी बंद प्रणाली में अव्यवस्था (disorder) या एंट्रॉपी समय के साथ बढ़ती रहती है। थर्मोडायनामिक्स के पहले नियम के अनुसार, ऊर्जा का निर्माण या विनाश संभव नहीं है, यह केवल एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित होती है। हालांकि, दूसरे नियम के अनुसार, जब ऊर्जा का उपयोग किया जाता है, तो उसकी गुणवत्ता घटती है और कुछ अंश हमेशा अव्यवस्थित रूप में बदल जाता है।

इस अवधारणा को पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में लागू करते समय, हम पाते हैं कि मानव गतिविधियाँ जैसे कि उत्पादन और खपत, संसाधनों और ऊर्जा का उपयोग करती हैं। हालांकि, इस प्रक्रिया में अपशिष्ट और प्रदूषण भी उत्पन्न होते हैं, जो अव्यवस्था या एंट्रॉपी को बढ़ाते हैं। एंट्रॉपी लॉ यह बताता है कि हर आर्थिक गतिविधि में कुछ हानि होती है और यह हानि अव्यवस्था या प्रदूषण के रूप में होती है, जिसे दोबारा उपयोग नहीं किया जा सकता।

### 6.3.1 एंट्रॉपी लॉ का सिद्धांत:

1. **ऊर्जा का अपक्षय**: जब ऊर्जा का उपयोग किया जाता है, तो उसकी गुणवत्ता घटती है। इसका मतलब है कि जितनी ऊर्जा का उपयोग होता है, उतनी ऊर्जा को पुनः उच्च गुणवत्ता में परिवर्तित नहीं किया जा सकता। अर्थात किसी भी प्रक्रिया में ऊर्जा का पूर्ण रूप से उपयोग नहीं किया जा सकता। हर बार ऊर्जा का उपयोग करने पर कुछ अंश अव्यवस्थित रूप में परिवर्तित हो जाता है और इसका पुनः उपयोग संभव नहीं होता।
2. **अव्यवस्था में वृद्धि**: एंट्रॉपी यह दर्शाती है कि किसी भी बंद प्रणाली में अव्यवस्था या अव्यवस्थित रूप की ऊर्जा (जैसे अपशिष्ट या प्रदूषण) बढ़ती रहती है।
3. **पुनर्नवीनीकरण की सीमाएं**: संसाधनों और ऊर्जा को पूरी तरह से पुनः उपयोग में नहीं लाया जा सकता, क्योंकि हर प्रक्रिया में कुछ हिस्सा बेकार हो जाता है।

### 6.3.2 एंट्रॉपी लॉ के उदाहरण

***1.*** *उद्योग और ऊर्जा उत्पादन*

उद्योगों में उपयोग किए जाने वाले संसाधनों को यदि ध्यान से देखा जाए, तो यह स्पष्ट होता है कि हर उत्पादन प्रक्रिया में अपशिष्ट उत्पन्न होता है। उदाहरण के लिए, यदि एक स्टील संयंत्र में 1000 टन कच्चे लोहे का उपयोग किया जाता है, तो अंत में 800 टन स्टील प्राप्त हो सकता है, जबकि शेष 200 टन अपशिष्ट के रूप में होता है। इसी प्रकार, ऊर्जा उत्पादन के दौरान भी काफी मात्रा में ऊर्जा गर्मी के रूप में नष्ट हो जाती है, जिसे पुनः उपयोग में नहीं लाया जा सकता।

***2.*** *कृषि और जल संसाधन*

कृषि में उर्वरक, पानी, और अन्य संसाधनों का उपयोग किया जाता है। फसल उत्पादन के बाद कुछ हिस्सा बाजार में जाता है, जबकि कुछ हिस्सा अपशिष्ट के रूप में उत्पन्न होता है। इसी प्रकार, जल संसाधनों का उपयोग करने के बाद भी पानी की गुणवत्ता में गिरावट आती है, और वह दूषित हो जाता है। यह एंट्रॉपी लॉ के तहत होने वाली अव्यवस्था का उदाहरण है।

***3.*** *ग्लोबल वार्मिंग*

ग्लोबल वार्मिंग भी एंट्रॉपी लॉ का परिणाम है। मानव गतिविधियों से उत्पन्न होने वाला कार्बन डाइऑक्साइड और अन्य ग्रीनहाउस गैसें वायुमंडल में अव्यवस्था पैदा करती हैं, जिससे जलवायु परिवर्तन, समुद्र के स्तर में वृद्धि, और मौसम की विषमता जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

### 6.3.3 एंट्रॉपी लॉ के पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में प्रभाव

***1.*** *संसाधनों की सीमित उपलब्धता*

एंट्रॉपी लॉ का पहला बड़ा प्रभाव यह है कि प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता सीमित है। जब हम संसाधनों का उपयोग करते हैं, तो उनका कुछ हिस्सा अपशिष्ट या निम्न-गुणवत्ता वाली ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है। उदाहरण के लिए, जब कोयले या तेल का उपयोग ऊर्जा उत्पादन के लिए किया जाता है, तो उस ऊर्जा का कुछ हिस्सा उपयोगी कार्य में बदलता है, लेकिन कुछ हिस्सा गर्मी और प्रदूषण के रूप में वातावरण में चला जाता है, जिसका पुनः उपयोग संभव नहीं है। इस सिद्धांत से यह स्पष्ट होता है कि प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग अनिश्चित काल तक संभव नहीं है। यदि इनका अत्यधिक दोहन किया जाता है, तो वे समाप्त हो सकते हैं, और इनकी जगह लेने वाले संसाधन आसानी से उपलब्ध नहीं हो सकते।

***2.*** *अपशिष्ट और प्रदूषण का उत्पादन*

एंट्रॉपी लॉ के अनुसार, हर उत्पादन प्रक्रिया में अपशिष्ट और प्रदूषण उत्पन्न होते हैं। अपशिष्ट और प्रदूषण आर्थिक गतिविधियों का अपरिहार्य परिणाम होते हैं। उदाहरण के लिए, औद्योगिक उत्पादन के दौरान, संसाधनों का उपयोग किया जाता है, और इसका एक हिस्सा उत्पाद के रूप में प्राप्त होता है, जबकि अन्य हिस्सा अपशिष्ट के रूप में उत्पन्न होता है।

अपशिष्ट प्रबंधन की कठिनाइयों को भी एंट्रॉपी लॉ द्वारा समझा जा सकता है। जब कोई प्रक्रिया होती है, तो अपशिष्ट को पूरी तरह से पुनः उपयोग या पुनर्चक्रण नहीं किया जा सकता, क्योंकि ऊर्जा का कुछ हिस्सा निम्न-गुणवत्ता में परिवर्तित हो जाता है, जिसे फिर से उपयोग में नहीं लाया जा सकता।

***3.*** *प्राकृतिक पर्यावरण पर प्रभाव*

एंट्रॉपी लॉ यह बताता है कि जितना अधिक ऊर्जा और संसाधनों का उपयोग किया जाएगा, उतनी ही अधिक मात्रा में अव्यवस्था (disorder) उत्पन्न होगी। यह अव्यवस्था अपशिष्ट और प्रदूषण के रूप में प्रकट होती है, जो पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव डालती है। उदाहरण के लिए, ऊर्जा उत्पादन और औद्योगिक गतिविधियों से उत्पन्न होने वाला कार्बन डाइऑक्साइड और अन्य प्रदूषक तत्व वायुमंडल में फैलते हैं, जिससे ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

एंट्रॉपी लॉ का यह प्रभाव दिखाता है कि अगर मानव गतिविधियों को नियंत्रित नहीं किया गया, तो पर्यावरणीय असंतुलन और अधिक बढ़ सकता है, जो भविष्य में बड़ी समस्याएँ उत्पन्न कर सकता है।

### 6.3.4 एंट्रॉपी लॉ का ग्राफ:

नीचे दिए गए ग्राफ में दर्शाया गया है कि कैसे ऊर्जा का उपयोग और अपशिष्ट का उत्पादन होता है:

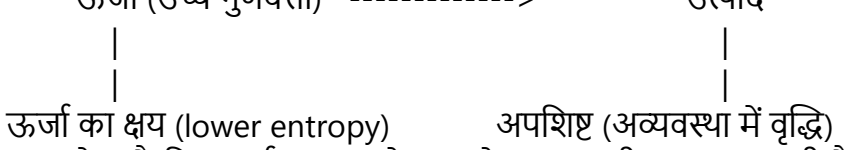


इस ग्राफ से यह स्पष्ट होता है कि ऊर्जा का उपयोग करने पर उसकी गुणवत्ता घटती है और अव्यवस्था (एंट्रॉपी) बढ़ती है। यह अव्यवस्था प्रदूषण और अपशिष्ट के रूप में पर्यावरण में जाती है, जो भविष्य के लिए समस्याएँ उत्पन्न कर सकती हैं।

### 6.3.5 एंट्रॉपी लॉ और सतत विकास

सतत विकास का लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि प्राकृतिक संसाधनों का इस प्रकार से उपयोग किया जाए कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी उनकी उपलब्धता बनी रहे। एंट्रॉपी लॉ हमें यह समझने में मदद करता है कि संसाधनों का अत्यधिक दोहन और ऊर्जा का अनियंत्रित उपयोग अंततः पर्यावरणीय असंतुलन को

जन्म देता है। इसलिए, सतत विकास की दिशा में हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि हम ऊर्जा और संसाधनों का कुशलता से उपयोग करें और अपशिष्ट प्रबंधन के प्रभावी उपाय अपनाएँ।

***1.*** *संसाधनों का पुनर्चक्रण (Recycling)*

एंट्रॉपी लॉ के अनुसार, अपशिष्ट और प्रदूषण की मात्रा को पूरी तरह से समाप्त नहीं किया जा सकता, लेकिन इसे कम किया जा सकता है। इसके लिए पुनर्चक्रण एक महत्वपूर्ण उपाय है। पुनर्चक्रण की प्रक्रिया में अपशिष्ट का पुनः उपयोग किया जाता है, जिससे नए संसाधनों की मांग कम होती है और पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव कम होता है।

*2. स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों का उपयोग*

एंट्रॉपी लॉ के तहत, हमें यह भी समझना चाहिए कि पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों जैसे कोयला और तेल का उपयोग अपशिष्ट और प्रदूषण में वृद्धि करता है। इसलिए, स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, और जलविद्युत का उपयोग करना एक बेहतर विकल्प है, जो पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखने में मदद कर सकता है।

***3.*** *प्रदूषण नियंत्रण नीतियाँ*

एंट्रॉपी लॉ के आधार पर सरकारों को प्रदूषण नियंत्रण नीतियों को सख्त बनाना चाहिए। प्रदूषण नियंत्रण के उपाय जैसे कार्बन टैक्स, प्रदूषण की सीमाएँ, और अपशिष्ट प्रबंधन के मानक सतत विकास के लिए आवश्यक हैं।

### 6.3.6 पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में भौतिक संतुलन और एंट्रॉपी लॉ का महत्व

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में इन दोनों अवधारणाओं का अत्यधिक महत्व है, क्योंकि ये संसाधनों के उपयोग और प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं को समझने में मदद करती हैं। इनका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग किया जाए और अपशिष्ट को नियंत्रित किया जाए ताकि पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव कम किया जा सके।

### 1 सतत विकास के लिए मार्गदर्शन

सतत विकास (sustainable development) का अर्थ है कि प्राकृतिक संसाधनों का इस प्रकार से उपयोग किया जाए कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए उनकी उपलब्धता प्रभावित न हो। भौतिक संतुलन और एंट्रॉपी लॉ इस बात की ओर संकेत करते हैं कि संसाधनों का अधिक दोहन न किया जाए और अपशिष्ट का कुशल प्रबंधन हो।

### 2 अपशिष्ट प्रबंधन और प्रदूषण नियंत्रण

एंट्रॉपी लॉ के अनुसार, अपशिष्ट और प्रदूषण किसी भी आर्थिक गतिविधि का अनिवार्य परिणाम होते हैं। इसलिए, प्रदूषण और अपशिष्ट को कम करने के लिए प्रभावी नीतियाँ और प्रबंधन रणनीतियाँ आवश्यक हैं। इसके लिए पुनर्चक्रण (recycling), अपशिष्ट को कम करने के उपाय, और नवीनतम तकनीकों का उपयोग किया जा सकता है।

### 3 नीति निर्धारण के लिए महत्वपूर्ण सिद्धांत

इन अवधारणाओं के आधार पर सरकारें और अंतरराष्ट्रीय संगठन पर्यावरणीय नीतियाँ और नियम बनाते हैं। इन नीतियों का उद्देश्य संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग सुनिश्चित करना, अपशिष्ट उत्पादन को कम करना, और प्रदूषण नियंत्रण करना होता है। उदाहरण के लिए, कई देशों ने अपशिष्ट प्रबंधन और ऊर्जा दक्षता को बढ़ावा देने के लिए नीतियाँ बनाई हैं, जो एंट्रॉपी लॉ और भौतिक संतुलन के सिद्धांतों पर आधारित हैं।

### 6.4.0 निष्कर्ष

**भौतिक संतुलन** और **एंट्रॉपी लॉ** पर्यावरणीय अर्थशास्त्र की प्रमुख अवधारणाएं हैं, जो यह दर्शाती हैं कि कैसे प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग और अपशिष्ट उत्पादन आर्थिक गतिविधियों का अनिवार्य परिणाम होते हैं। ये अवधारणाएं इस बात को समझने में मदद करती हैं कि कैसे संसाधनों का कुशल प्रबंधन किया जाए और प्रदूषण तथा अपशिष्ट को नियंत्रित किया जाए। इसके लिए सतत विकास, प्रदूषण नियंत्रण, और अपशिष्ट प्रबंधन की दिशा में ठोस नीतियाँ और योजनाएँ बनाने की आवश्यकता है। इस प्रकार, यह स्पष्ट

होता है कि पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने के लिए भौतिक संतुलन और एंट्रॉपी लॉ के सिद्धांतों का पालन करना आवश्यक है।

**6.5.0 संदर्भ ग्रंथ सूची:**


- **"Environmental and Natural Resource Economics"**
  लेखक: **Tom Tietenberg** और **Lynne Lewis**
  प्रकाशक: **Taylor & Francis, 13 March 2018, ISBN: 9781351803373**
- **"Economics of the Environment: Selected Readings"**
  संपादक: **Robert N. Stavins**
  प्रकाशक: **Edward Elgar Publishing, 2019, ISBN: 9781788972079**
- **विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
  लेखक: **Dr. Anupam Agarwal, Dr. Alok Gupta**
  प्रकाशक: **SBPD Publications, 6 July 2021, ISBN: 9789389585339**
- **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
  लेखक: डॉ. वी.सी. सिन्हा, डॉ. रितिका सिन्हा
  प्रकाशक: **SBPD Publishing House, 8 July 2024, ISBN: 9788119142392**
- **"The Economics of Climate Change: The Stern Review"**
  लेखक: Nicholas Stern
  प्रकाशक: Cambridge University Press


**6.6.0 अभ्यासार्थ प्रश्न:**

1. **भौतिक संतुलन की अवधारणा क्या है? पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में इसका क्या महत्व है?**
2. **एंट्रॉपी लॉ क्या है? इसे थर्मोडायनामिक्स के किस नियम पर आधारित माना जाता है?**
3. **भौतिक संतुलन और एंट्रॉपी लॉ के सिद्धांतों में क्या अंतर है?**
4. **पर्यावरणीय समस्याओं (जैसे प्रदूषण और अपशिष्ट) को समझने में एंट्रॉपी लॉ किस प्रकार सहायक है? उदाहरण देकर समझाइए।**
5. **"संसाधनों के उपयोग में वृद्धि से एंट्रॉपी बढ़ती है" – इस कथन का अर्थ क्या है? पर्यावरणीय संदर्भ में इसे स्पष्ट करें।**
6. **उद्योगों में उत्पादन प्रक्रियाओं के दौरान ऊर्जा और संसाधनों के नुकसान को समझाने के लिए एंट्रॉपी लॉ का उपयोग कैसे किया जा सकता है?**
7. **भौतिक संतुलन की अवधारणा कैसे दर्शाती है कि पर्यावरणीय प्रणालियाँ सीमित संसाधनों पर आधारित होती हैं?**
8. **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में एंट्रॉपी लॉ का अनुपालन क्यों आवश्यक है? यह सिद्धांत किस प्रकार से प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन और सतत विकास को प्रभावित करता है?**
9. **एंट्रॉपी लॉ और अपशिष्ट प्रबंधन के बीच क्या संबंध है? इसका पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में क्या योगदान है?**
10. **एंट्रॉपी लॉ और ऊर्जा कुशलता** (Energy Efficiency) **के सिद्धांतों के बीच संबंध को समझाइए।**
11. **सतत विकास** (Sustainable Development) **की दिशा में भौतिक संतुलन और एंट्रॉपी लॉ की भूमिका क्या है?**
12. **एंट्रॉपी लॉ के अनुसार, पुनर्चक्रण** (Recycling) **की सीमाएँ क्या हैं? इसे पर्यावरणीय दृष्टिकोण से कैसे समझा जा सकता है?**
13. **एंट्रॉपी लॉ के सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों के महत्व पर चर्चा करें।**

14. **भौतिक संतुलन और एंट्रॉपी लॉ को ध्यान में रखते हुए, आप प्रदूषण नियंत्रण के लिए कौन-कौन से उपाय सुझाएंगे**?
15. **भौतिक संतुलन की अवधारणा को ध्यान में रखते हुए, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए किन नीतियों की आवश्यकता है**?

**6.7.0 सामान्य बोध प्रश्न (Objective Questions):**

1. **भौतिक संतुलन (Material Balance) का सिद्धांत किस पर आधारित है?**
   (A) ऊर्जा संरक्षण
   (B) संसाधनों के सीमित उपयोग
   (C) पदार्थ का संरक्षण (Conservation of Matter)
   (D) उत्पादन और उपभोग का संतुलन
   **उत्तर:** (C) पदार्थ का संरक्षण (Conservation of Matter)
2. **एंट्रॉपी लॉ किस सिद्धांत पर आधारित है?**
   (A) ऊर्जा के संरक्षण का सिद्धांत
   (B) ऊर्जा की असंतुलन का सिद्धांत
   (C) थर्मोडायनामिक्स का दूसरा नियम
   (D) अपशिष्ट प्रबंधन का सिद्धांत
   **उत्तर:** (C) थर्मोडायनामिक्स का दूसरा नियम
3. **एंट्रॉपी का अर्थ क्या होता है?**
   (A) ऊर्जा का निर्माण
   (B) ऊर्जा की हानि
   (C) अव्यवस्था का मापन
   (D) ऊर्जा का पुनरुत्पादन
   **उत्तर:** (C) अव्यवस्था का मापन
4. **एंट्रॉपी के बढ़ने का मुख्य कारण क्या होता है?**
   (A) ऊर्जा का उपयोग
   (B) ऊर्जा का संरक्षण
   (C) प्रदूषण का नियंत्रण
   (D) प्राकृतिक संसाधनों का संचयन
   **उत्तर:** (A) ऊर्जा का उपयोग
5. **एंट्रॉपी लॉ के अनुसार ऊर्जा का कौन-सा हिस्सा दोबारा उपयोग में नहीं लाया जा सकता है?**
   (A) उपयोगी ऊर्जा
   (B) निम्न-गुणवत्ता वाली ऊर्जा
   (C) उच्च-गुणवत्ता वाली ऊर्जा
   (D) कोई भी ऊर्जा
   **उत्तर:** (B) निम्न-गुणवत्ता वाली ऊर्जा
6. **भौतिक संतुलन की अवधारणा किस नियम पर आधारित है?**
   (A) पदार्थ के संरक्षण का नियम
   (B) ऊर्जा संरक्षण का नियम
   (C) अपशिष्ट प्रबंधन का नियम
   (D) प्रदूषण नियंत्रण का नियम
   **उत्तर:** (A) पदार्थ के संरक्षण का नियम
7. **एंट्रॉपी लॉ का पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में क्या उपयोग है?**

(A) ऊर्जा उत्पादन के लिए
(B) प्रदूषण और अपशिष्ट की व्याख्या के लिए
(C) संसाधनों का प्रबंधन करने के लिए
(D) उपरोक्त सभी
**उत्तर:** (D) उपरोक्त सभी (ऊर्जा उत्पादन के लिए, प्रदूषण और अपशिष्ट की व्याख्या के लिए, संसाधनों का प्रबंधन करने के लिए)

8. **किस प्रक्रिया में एंट्रॉपी का स्तर सबसे अधिक बढ़ता है?**
(A) पुनर्चक्रण
(B) प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग
(C) ऊर्जा का उपयोग
(D) जल संसाधनों का संरक्षण
**उत्तर:** (B) प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग

9. **भौतिक संतुलन सिद्धांत के अनुसार, प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक उपयोग किस चीज़ को जन्म देता है?**
(A) पुनर्चक्रण
(B) प्रदूषण और अपशिष्ट
(C) ऊर्जा बचत
(D) संसाधनों का संरक्षण
**उत्तर:** (B) प्रदूषण और अपशिष्ट

10. **एंट्रॉपी लॉ किस प्रकार की व्यवस्था में लागू होता है?**
(A) खुली व्यवस्था
(B) बंद व्यवस्था
(C) पृथ्वी पर
(D) केवल प्राकृतिक संसाधनों में
**उत्तर:** (B) बंद व्यवस्था

11. **भौतिक संतुलन की अवधारणा पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में किस समस्या पर प्रकाश डालती है?**
(A) ऊर्जा की अधिक खपत
(B) संसाधनों की कमी और प्रदूषण का उत्पादन
(C) कृषि उत्पादन की वृद्धि
(D) पारिस्थितिकीय विविधता
**उत्तर:** (B) संसाधनों की कमी और प्रदूषण का उत्पादन

12. **थर्मोडायनामिक्स के दूसरे नियम के अनुसार, किसी भी बंद प्रणाली में एंट्रॉपी हमेशा:**
(A) घटती है
(B) स्थिर रहती है
(C) बढ़ती है
(D) समाप्त हो जाती है
**उत्तर:** (C) बढ़ती है

13. **भौतिक संतुलन और एंट्रॉपी लॉ दोनों का पर्यावरणीय नीति निर्माण में क्या महत्व है?**
(A) सतत विकास की योजना बनाने में
(B) प्राकृतिक संसाधनों की बर्बादी रोकने में
(C) ऊर्जा कुशलता सुनिश्चित करने में
(D) उपरोक्त सभी

**उत्तर:** (D) उपरोक्त सभी (सतत विकास की योजना बनाने में, प्राकृतिक संसाधनों की बर्बादी रोकने में, ऊर्जा कुशलता सुनिश्चित करने में)

14. **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में एंट्रॉपी लॉ किस प्रकार की प्रणालियों में लागू होता है?**

(A) औद्योगिक प्रणालियों में
(B) आर्थिक प्रणालियों में
(C) पारिस्थितिकी तंत्रों में
(D) उपरोक्त सभी

**उत्तर:** (D) उपरोक्त सभी (औद्योगिक प्रणालियों में, आर्थिक प्रणालियों में, पारिस्थितिकी तंत्रों में)

15. **भौतिक संतुलन सिद्धांत का मुख्य उद्देश्य क्या है?**

(A) ऊर्जा उत्पादन बढ़ाना
(B) संसाधनों और अपशिष्ट के बीच संतुलन बनाए रखना
(C) आर्थिक उत्पादन को बढ़ाना
(D) प्राकृतिक आपदाओं को रोकना

**उत्तर:** (B) संसाधनों और अपशिष्ट के बीच संतुलन बनाए रखना

# खण्ड–2
# प्राकृतिक संसाधन

## इकाई–01
## नवीकरणीय एवं अनवीकरणीय

**उद्देश्य**

- नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों को परिभाषित कर सकेंगे;
- नवीकरणीय एवं अनवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों के बीच अंतर स्पष्ट कर पायेंगे;
- सौर ऊर्जा की महत्ता का वर्णन कर सकेंगे;
- जल ऊर्जा एवं पवन ऊर्जा का उपयोग किस प्रकार किया जाता है, उसके तरीके बता पायेंगे।

**नवीकरणीय ऊर्जा के स्रोत–1**

बढ़ती आबादी और हमारी जीवन शैली में आए बदलाव के कारण ऊर्जा स्त्रोतों की मांग काफी बढ़ गई है। इस बढ़ती मांग के कारण अनवीकरणीय परंपरागत ऊर्जा स्त्रोतों पर बहुत दबाव बढ़ा है और इससे हमारे लिए यह आवश्यक हो गया है कि हम वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रेतों को खोजने की कोशिश करें। सूर्य और पवन जैसे स्त्रोत तो कभी खत्म ना होने वाले स्त्रोत हैं अतः इन्हें नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत कहा जाता है; ये किसी भी प्रकार की विषैली गैसों का उत्सर्जन नहीं करते हैं तथा ये स्थानीय स्तर पर उपलब्ध होते हैं। इस प्रकार के ऊर्जा स्त्रोत स्त्रोत प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं और ये साफ सुथरी ऊर्जा का रूझपक स्त्रोत होते हैं। इस पाठ में आप इसी प्रकार के नीवकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों के बारे में पढ़ेंगे।

**प्राकृतिक संसाधनों की परिभाषा**

मनुष्य ऊर्जा के कुछ स्त्रोतों का उपयोग विभिन्न उद्देश्यों के लिए जैसे– खाना पकाना, गर्म करने, खेत जोतने, यातायात, प्रकाश करने के लिए हमेशा से करता आया है। आरम्भ में वे लकड़ी जलाते थे तथा बाद में केरोसीन, कोयला या उसके बाद के दिनों में बिजली का प्रयोग करने लगे हैं। मनुष्य ने पशुशक्ति (घोड़ा, बैल,ऊंट, याक आदि) को यातायात एवं छोटी–छोटी यांत्रिक उपकरणों जैसे पर्शियन व्हील को सिंचाई के लिए या फिर तेलीय बीजों से तेल निकालने वाले 'कोल्लू' चलाने के लिए करते हैं। बीती शताब्दी के दौरान, तापीय संयंत्रों (कोयले का प्रयोग करने वाले) या हाइडोइलेक्ट्रिक संयंत्र को उनकी उपलब्धता के आधार पर इस तरह विभाजित कर सकते हैं:

(क) **परम्परागत ऊर्जा स्त्रोत,** ये आसानी से उपलब्ध से उपलब्ध होते हैं एवं एक लंबे समय से प्रयोग में लाये जाते रहे हैं।

(ख) **गैर परम्परागत ऊर्जा स्त्रोत,** ये सामान्य रूप से व्यवहार में लाये जाने वाले ऊर्जा स्त्रोतों के अतिरिक्त स्त्रोत हैं। अधिकांश नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सूर्य या सौर ऊर्जा से जुड़े होते हैं। नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत या गैर परंपरागत ऊर्जा स्त्रोंतों में सूर्य का प्रकाश, पवन, जल एवं बायोमास (जलावन की लकड़ी, पशु अपशिष्ट, फसलों के अवशेष, कृषि अपशिष्ट, शहरों एवं नगरों का जैविक कचरा शामिल है)। सूर्य से मिलने वाली ऊर्जा सौर ऊर्जा कहलाती है, पानी से पैदा की गई ऊर्जा को जल ऊर्जा कहते हैं एवं भूमिगत ऊर्जा

कहा जाता है। ज्वारीय ऊर्जा समुद्र एवं महासागरों की लहरों एवं ज्वार भाटा से प्राप्त की जाती है।

**नवीकरणीय अथवा समाप्त न होने वाले ऊर्जा स्त्रोत**

तेजी से घटते हुए जीवाश्मीय ईंधनों तथा ऊर्जा की बढ़ती मांग ने यह आवश्यकता पैदा की कि हम वैकल्पिक स्त्रोतों की तरफ ध्यान दें जिन्हें नवीकरणीय या समाप्त न होने वाले स्त्रोत कहा जाता है। इन्हें हम अक्षय ऊर्जा स्त्रोत भी कह सकते हैं। हम अक्षय ऊर्जा स्त्रोतों को इस प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं कि ''ऐसे ऊर्जा स्त्रोत जो बिना समाप्त हुए इस्तेमाल किए जा सकते हो''। इनमें से अधिकांश स्त्रोत प्रदूषण मुक्त होते हैं एवं कुछ का प्रयोग सभी जगहों पर किया जा सकता है। ये नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत गैर परंपरागत या अक्षय या वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोत कहलाते हैं।

इस प्रकार की ऊर्जा के स्त्रोत हैंः सौर, बहता पानी, पवन, हाइड्रोजन तथा भूतापीय। हम नवीकरणीय सौर ऊर्जा सीधे सूर्य से प्राप्त करते हैं और परोक्ष रूप से बहते हुए पानी, पवन एवं बायोमास से भी प्राप्त कर सकते हैं। जीवाश्म ईंधन तथा परमाणु ऊर्जा की तरह, वैकल्पक नवीकरणीय ऊर्जा के प्रत्येक स्त्रोत के अपने–अपने लाभ एवं हानियाँ होती हैं। हम इनमें से कुछ के बारे में विस्तार से बताने जा रहे हैं।

**सौर ऊर्जा**

सूर्य से प्राप्त और शक्ति अपार है एवं यह अक्षय है। व्यापक रूप से कहा जाए तो सौर ऊर्जा पृथ्वी की सम्पूर्ण जीवन प्रक्रियाओं को संभालती है और यही हर उस ऊर्जा रूप का आधार होती है जिसका हम प्रयोग करते हैं। सूर्य से ही पेड़–पौधों का विकास होता है, जो ईंधन के रूप में जलाए जाते हैं या दलदल में सड़कर एवं धरती के नीचे कई लाखों वर्षों तक दवे रह कर कोयला एवं तेल में परिवर्तित होते हैं। सूर्य से आने वाला ताप अलग–अलग क्षेत्रों के बीच तापमान का अंतर उत्पन्न करता है जिससे हवा बहने लगती है। पानी भी सूर्य के कारण ही वाष्प बनकर उड़ जाता हैं, ये जलवाष्पकाफी ऊंचाई तक पहुंचकर जब ठंडे होते हैं तो बारिश के रूप में पुनः धरती पर गिरने लगता है। पानी नदियों से होता हुआ समुद्र में जाता है। इस बहते पानी का प्रयोग यदि टर्बाइन घुमाने के लिए किया जाए तो यह बिजली भी पैदा करता है। अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि पन बिजली सौर ऊर्जा का ही अप्रत्यक्ष रूप है किंतु प्रत्यक्ष सौर ऊर्जा का प्रयोग सोलर सेल के द्वारा ताप, प्रकाश एवं विद्युत के रूप में हो सकता है।

सूर्य को अक्सर, हमारी ऊर्जा समस्याओं का अंतिम उत्तर माना जाता है। सूर्य हमें अनवरत ऊर्जा प्रदान करता है जो हमारी वर्तमान ऊर्जा मांगों से कहीं अधिक होती हैं। यह हमें बिना किसी कीमत के मिलती है, प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, हर जगह पाई जाती है एवं इसमें कोई राजनैतिक अवरोध नहीं आते हैं। वास्तव में जीवाश्म ईंधन भी एक तरह से कई लाखों वर्ष पहले जमा की गई सौर ऊर्जा का ही रूप है। किंतु हम इस प्रचुर मात्रा में उपलब्ध ऊर्जा स्त्रोत  का एक छोटा हिस्सा ही जमा कर पाते हैं और उसका उपयोग कर पाते हैं और उसका उपयोग कर पाते हैं। सौर ऊर्जा के उपयोग को इस तरह से वर्गीकृत किया गया हैः प्रत्यक्ष सौर ऊर्जा का उपयोग; इसमें सौर ऊर्जा का प्रत्यक्ष संग्रह करके इसे गर्म करने, विद्युत उत्पन्न करने तथा ठंडा करने आदि के लिए उपयोग किया जाता है। सौर ऊर्जा का उपयोग होता है। जैसे पनव, बायोमास, तरंगों, पनबिजली शक्ति आदि।

## प्रत्यक्ष सौर ऊर्जा

सौर ऊर्जा प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, अक्षय है एवं बिना किसी दाम के मिलती है। सौर ऊर्जा का प्रत्यक्ष उपयोग विभिन्न प्रकार के उपकरणों द्वारा किया जा सकता है। इन उपकरणों को तीन प्रकार के संयंत्रों में बांटा गया है 1. निष्क्रिय 2. सक्रिय 3. फोटोवोल्टॉइक।

### 1. निष्क्रिय सौर ऊर्जा

जैसा कि आप सभी जानते हैं, सौर ऊर्जा के कुछ उपयोग जो बहुत पहले से होते आ रहे हैं, निष्क्रिय तरह के हैं जैसे नमक बनाने के लिए समुद्री जल का वाष्पीकरण तथा कपड़ों एवं खाद्य पदार्थों को धूप में सुखाना। वास्तव में सौर ऊर्जा का प्रयोग इन कार्यों के लिए अभी भी होता है। सौर ऊर्जा का सबसे आधुनिक निष्क्रिय उपयोग खाना बनाने के लिए, गर्म करने के लिए, ठंडा करने के लिए एवं घरों तथा इमारतों को प्रकाशित करने के लिए है। निष्क्रिय सौर ऊर्जा की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि इमारत की डिजाइन कितनी अच्दी है। सौर ऊर्जा के निष्क्रिय उपयोग में कोई भी यांत्रिक साधन प्रयोग नहीं किए जाते हैं।

### 2. सौर ऊर्जा का सक्रिय उपयोग

सक्रिय सौर तापन तथा शीतलन व्यवस्था मुख्य रूप से छतों पर लगे सौर संग्राहकों पर निर्भर करती है। इस तरह के सिस्टम में पंप और/या/मोटर की भी आवश्यकता पड़ती है जिससे द्रव को चलाया जा सके या पंखे द्वारा हवा की जा सके ताकि संग्रह किए गए ताप को छोड़ जा सके। विभिन्न प्रकार के सक्रिय सौर तापन सिस्टम उपलब्ध हैं। इन सिस्टमों का मुख्य अनुप्रयोग है गर्म पानी प्रदान करना, मुख्य रूप से घरेलू इस्तेमाल के लिए। सक्रिया सौर तापन का इस्तेमाल व्यापक रूप से भारत, जापान, इजराइल, ऑस्ट्रेलिया तथा दक्षिण अमेरिका में हो रहा है जहाँ की जलवायु उष्ण है।

### 3. विद्युत उत्पादन में सौर ऊर्जा

सौर ऊर्जा का उपयोग उच्च तापमान एवं विद्युत उत्पादन के लिए होता है। गर्म रेगिस्तानों में लगे सौर संग्राहक इतना अधिक तापमान उत्पन्न कर सकते हैं जिससे एक टर्बाइन को घुमाया जा सके और विद्युत पैदा की जा सके, लेकिन इस तरह के उपकरणों की लागत भी अधिक होती है। कई सारे सौर तापीय सिस्टम, सूर्य द्वारा प्राप्त विकिरण ऊर्जा को संग्रह करके इसे उच्च तापमान वाली तापीय ऊष्मा ऊर्जा में परिवर्तित कर देते हैं। जिसे प्रत्यक्ष तौर पर इस्तेमाल किया जाता है या विद्युत में परिवर्तित कर दिया जाता है।

## सौर सेल या फोटो वोल्टाइक तकनीकी

सौर ऊर्जा को प्रत्यक्ष तौर पर विद्युत ऊर्जा में फोटोवाल्टाइक सेल जिन्हें आम तौर पर सोलर सेल कहा जाता है, द्वारा परिवर्तित किया जाता है। फोटोबोल्टोइक सेल सिलिकॉन एवं अन्य पदार्थों का बना होता है। जब सूर्य की किरणें सिलिकॉन परमाणु पर पड़ती है तो उनमें से इलैक्ट्रॉन बाहर निकलते हैं। एक प्रारूपिक सौर सेल पारदर्शी पत्रे की तरह होता है जिसमें एक बहुत ही पतली सेमीकंडक्टर होता है। सौर सेलों को फोटोबोल्टाइक सेल भी कहा जाता है। सूर्य की रोशनी सेमीकंडक्टर के इलेक्ट्रॉन को

ऊर्जा प्रदान करके उन्हें प्रवाहित करती है, जिससे एक विद्युत धारा बनती है। सौर सेल दूरवर्ती गांवों को विद्युत प्रदान करते हैं। भारत वर्ष सौर सेलों का सबसे बड़ा बाजार है।

**अप्रत्यक्ष सौर ऊर्जा**

बहुत से ऊर्जा स्त्रोत जैसे पवन, ज्वार–भाटा एवं पन–बिजली, अंततः सौर ऊर्जा पर ही आश्रित हैं। इस पाठ में बहुत से अप्रत्यक्ष सौर ऊर्जा स्त्रोतों में से हम केवल 'क' पवन ऊर्जा ख– ज्वार–भाटा ऊर्जा ब– पनबिजली ऊर्जा तथा घ– बायोमास ऊर्जा के बारे में ही चर्चा करेंगे।

**पवन ऊर्जा**

पृथ्वी से टकराने वाली सूर्य की रोशनी का लगभग 2 प्रतिशत भाग, बहती हवा जिसे पवन कहा जाता है, की गतिज ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है। पृथ्वी की सतह द्वारा सौर विकिरण को असमान तरीके से सोख्ना, तापमान में अंतर, घनव्त दबाव का कारण बनता है जिससे हवा का बहना प्रारंभ होता है। यह बहाव स्थानीय, प्रांतीय तथा वैश्विक स्तर पर अलग–अलग होता है जो पवन ऊर्जा द्वारा संचालित होता है। पवन की गतिज ऊर्जा को संग्रहित करके इसे विशेष उपकरणों द्वारा यांत्रिक अथवा विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है।

लगभग 4000–3500 ई. पू. पवन ऊर्जा का संग्रहण करके प्रथम पाल जहाज एवं पवन चक्कियां विकसित की गई। पवन ऊर्जा का उपयोग जहाजों को चलाने में, अनाज पीसने में, सिंचाई के लिए पानी खींचने में एवं अन्य प्रकार के कार्य करने में किया जाता है।

वर्तमान युग में पवन ऊर्जा के इस्तेमाल का सबसे बड़ा क्षेत्र है विद्युत उत्पादन। पवन चक्कियों की तरह बनी पवन टर्बाइनों को एक ऊंचे टॉवर पर लगाया जाता है जिससे ज्यादा से ज्यादा पवन ऊर्जा इकट्ठी की जा सके। पवन चक्कियों का उपयोग जनरेटरों को चलाने के लिए होता है जो विद्युत उत्पादन करते हैं।

विद्युत उत्पादन के लिए पवन का प्रयोग टर्बाइन के शाफ्ट को घुमाने के लिए होता है, जो एक जनरेटर से जुड़ी होती है, जो विद्युत उत्पन्न्न करता ह। अतः पवन टर्बाइन पवन ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा में परिवर्तित करती है जिनका प्रयोग विद्युत उत्पादन के लिए होता है। पवन टर्बाइनों का उपयोग अकेले या समूह में होता है। जब पवन टर्बाइन समूह में होती हैं तो उन्हें ''विंडफार्म'' कहा जाता है। छोटी पवन टर्बाइनों को ऐरो जनरेटर कहा जाता है एवं इन्हें बड़ी बैटरियों को चार्ज के लिए इस्तेमाल किया जाता है। विश्व की कुल पवन ऊर्जा क्षमता का 80 प्रति इन पांच देशों यू.एस.ए. जर्मनी डेनमार्क, स्पेन एवं भारत द्वारा ही प्रदान किया जाता है। भारत में पवन ऊर्जा के क्षेत्र में मिलनाडु एवं गुजरात अग्रणी राज्य है। मार्च 2000 के अंत तक भारत के पास 1080 मेगावाट के विंउ फार्म थे जिसमें से मिलनाडु का हिस्सा 770 मेगावाट, गुजरात 167 मेगावाट एवं आंध्र प्रदेश का सहयोग 88 मेगावाट क्षेमता का था। आज विभिन्न डिजाइनों के करीब एक दर्जन पवन पंप मौजूद हैं जो वृक्षरोपण के लिए सिंचाई का पानी, घरेलू उपयोग के लिए पानी एवं देश के अन्य कार्यों के लिए पानी प्रदान करते हैं।

हाल ही में, पवन को ऊर्जा के स्त्रोत के रूप में काफी महत्वपूर्ण माना जा रहा है और लोगों की फिर से इस तरह रुचि बढ़ी है। भारत, विश्व में पवन ऊर्जा का पांचवां सबसे बड़ा उत्पादक देश है। अन्य देश जो पवन ऊर्जा के विकास में लगे हैं वे हैं ग्रेट ब्रिटेन, नीदरलैंड, ग्रीस, स्पेन, डेनमार्क, यूएसए (कैलीफोर्निया) एवं भारत। आंध्र प्रदेश में भी पवन से अधिकांश ऊर्जा उत्पादित की जाती है। पवन से ऊर्जा उत्पादत करने वाले अन्य राज्य हैं– तमिलनाडु,

गुजरात, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र। इन राज्यों में कुल 26 संयत्रों की साइट विकसित की गई है जो 57 मेगावाट क्षमता की पवन ऊर्जा प्रदान करेंगे।

**ज्वारीय ऊर्जा**

ज्वारीय ऊर्जा परियोजनाऐं, ज्वार–भाटा के उठने और गिरने से निकलने वाली ऊर्जा को संग्रह करती है। ज्वार भाटा ऊर्जा उत्पादन साइट का मुख्य विशेषता यह होनी चाहिए कि मुख्य ज्वार भाटा की लहर की ऊंचाई 5 मीटर से अधिक होनी चाहिए।

ज्वारीय ऊर्जा को संग्रह करने के लिए खाड़ी या मुहाने के प्रवेश द्वार पर एक बांध बनाया जाता है, जिससे एक जलाशय तैयार होता है। जैसे–जैसे ज्वार भाटा की लहरें उठती हैं, शुरू में पानी को खाड़ी में घुसने से रोका जाता है लेकिन जैसे ही लहरें ऊंची होती जाती है और इनका वेग टर्बाइन चलाने के लिए काफी होता हतो बांध को खोल दिया जाता है और पानी इससे होकर जलाशय में गिरता है, जिससे टर्बाइन के पंख घूमते हैं और विद्युत पैदा होती है।

पुनः जैसे ही लहाशय भरता है, बांध बंद कर दिया जाता है, पानी का प्रवाह रुक जाता है, पानी जलाशय में ही बंध जाता है, जब ज्वार–भाटा गिरता है तब जलाशय के पानी का स्तर महासागर से अधिक होता है। इस समय बांध को खोला जाता है जिससे टर्बाइन (जो उत्क्रमित होती है) को विपरीत दिशा में घुमाया जाता है, विद्युत पैदा होती है और पानी जलाशय से बाहर आता है।

ज्वार–भाटा ऊर्जा को संग्रह करने के लिए बना बांध खेती एवं वन्य जीवन को हानि पहुंचाता है। खाड़ी या मुहाने पर बना बांध अपनी ओर जाने वाली पानी को छोटे छोटे छेदों द्वारा जिनके साथ प्रोपेलर जुड़ा होता है, बहने देता है जो विद्युत टर्बाइन को चलाते हैं। आज की तरीक में ज्वार–भाटा विद्युत संयंत्र 40 की संख्या तक ही सीमित हैं। ला–रैंस जो फ्रांस में है, विश्व का एक मात्र व्यावसायिक पॉवर स्टेशन है जो ज्वारीय ऊर्जा से संचालित होता है। भारत में एक बड़ा पॉवर प्रोजेक्ट जिसकी लागत 5000 करोड़ रुपए है, कच्छ की खाड़ी, गुजरात के ''हंथल क्रीक'' में लगाने का प्रस्ताव है।

**पन बिजली ऊर्जा**

बहते पानी में संचित ऊर्जा, अधिकांशतः इस्तेमाल होने वाली नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों मे से एक अहम स्त्रोत है। रोमन शासन काल के समय से ही मानव ने जल शक्ति का संग्रह प्रारंभ कर दिया था। पहले जमाने में बहती नदियां और जल धाराओं की गतिज ऊर्जा को जलचक्रों द्वारा रोककर उनका प्रयोग अनाज पीसने, लकड़ी छीलने एवं कपड़ा बनाने के लिए किया जाता था। सन 1800 में आकर ही जल ऊर्जा को विद्युत में परिवर्तित किया जा सका। पन बिजली ऊर्जा, बहते पानी की गतिज ऊर्जा का उपयोग विद्युत उत्पादन के लिए करती है।

ऊंचाई से गिरते हुए पानी के बल को उपयोग करके विद्युत उत्पादन की प्रक्रिया ही पन बिजली शक्ति या जल विद्युत कहलाती है। यह तापीय या नाभिकीय ऊर्जा की अपेक्षा सस्ती होती है। पानी संचय करने के लिए ऊंचे स्तर पर बांधों का निर्माण किया जाता है, जो ऊंचाई से गिराया जाता है जिससे टर्बाइन घूमती है और विद्युत पैदा होती है। विश्व भर में जल विद्युत या पन बिजली शक्ति, व्यावसायिक ऊर्जा उत्पादन एवं उपभोग का चौथा बड़ा स्त्रोत है।

जल विद्युत ऊर्जा के पीछे मूल सिद्धान्त यह है कि नपदियों पर बांध बनाकर कृत्रिम झरनों का निर्माण किया जाए। कभी कभी प्राकृतिक झरनों का उपयोग भी किया जाता है। गिरता हुआ पानी टर्बाइन को घुमाता है जो विद्युत जनरेटरों को चलाता है। पन बिजली का

सबसे बड़ा लाभ ये है कि एक बार जब बांध बन जाए एवं टर्बाइन चलने लगे तो इसे तुलनात्मक रूप से सस्ती एवं विशुद्ध ऊर्जा स्त्रोत माना जा सकता है।

पन बिजली से कई हानियां भी हैं, जैसे बांध बनाने से प्राकृतिक पर्यावास नष्ट हो जाते हैं एवं छिन्न–भिन्न हो जाते हैं अथवा हमेशा के लिए समाप्त हो जाते हैं। मानव बस्तियां भी अव्यवस्थित होने से लोग बेघर हो जाते हैं।

# इकाई–2
# संसाधनों का वर्गीकरण–वन सम्पदा

**इकाई की रुपरेखा–**


2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 संसाधन
2.3 संसाधनों का वर्गीकरण– संसाधनों को मुख्यत. दो भागों में बाँटा जा सकता है–
2.3.1 प्राकृतिक संसाधन– ये वे संसाधन हैं जो प्रकृति से प्राप्त होते हैं। जैसे कि– जल, वायु, मिट्टी, खनिज, वन, पशु।
2.3.2 मानव निर्मित संसाधन
2.3.3 संसाधनों को उनको पुन. प्राप्ति के आधार पर वर्गीकरण
- नव्यीकरणीय संसाधन
- अनव्यीकरण संसाधन

2.4 प्राकृतिक संसाधन संरक्षण में व्यक्तिगत भूमिका
2.4.1 वन संसाधन एवं दायित्व
2.4.2 मृदा संसाधन एवं दायित्व
2.4.3 जल संसाधन
2.4.4 उर्जा संसाधन
2.5 संयोषणीय विकास के लिये संसाधनों का समान प्रयोग
2.6 वन संसाधन
2.6 वन संसाधन
2.7 वनों का उपयोग
2.7.1 भवन–निर्माण के लिये लकड़ी की उपलब्धता
2.7.2 जनजातिय लोगों की वनों पर निर्भरता
2.7.3 वन एवं खनिज
2.7.4 बौध एवं वन
2.8 सारांश
2.9 शब्दावली
2.10 बोध–प्रश्न
2.11 संदर्भ ग्रन्थ


**उद्देश्य**

- संसाधनों के अर्थ को समझ सकेगें।
- संसाधनों के सरंक्षण में सम्बन्ध में व्यक्ति की भूमिका का विश्लेषण कर सकेंगे।
- संसाधनों के वर्गीकरण को जान सकेगें।
- वनों के विकास के कारकों को समझ सकेंगे।
- वनों के उपयोग को समझा सकेंगे।

**प्रस्तावना**

प्रकृति में संसाधनों का भण्डार भरा हुआ है जिससे मानव के आवश्यकता की पूर्ति होती है। मौलिक रूप से संसाधन पर्यावरण की वे प्रकियायें हैं। जो मानव के उपयोग में आती है। प्राकृतिक संसाधन वे संसाधन हैं जो प्रकृति द्वारा प्रदान किये जाते है। ये मानव के लिये बहुत उपयोगी है। प्राकृतिक संसाधनों को दो रूपों में देख सकते हैं। नवीकरण संसाधन एवं अनवीकरण संसाधन नवीकरण संसाधन प्राकृतिक रूप से समय के साथ पुनः उत्पन्न हो जाते हैं। जैसे, सौर उर्जा, पवन उर्जा, जल उर्जा, अनवीकरण संसाधन वे होते हैं। जो सीमित मात्रा में उपलब्ध होते हैं। जैसे कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, प्राकृतिक पर्यावरण। संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग तथा संसाधनों को संरक्षित करने, सुधारने तथा उसकी उपयोगिता अथवा गुणवत्ता की नवीनीकरण करने में मानव की भलाई है। यदि इसका दुरूपयोग होगा तो मानव जाति का समूल विनाश निश्चित है। वन प्रकृति का उद्यान है। मानव के अतिरिक्त यह दूसरा महत्वपूर्ण जीविय संसाधन है जो जीव–जन्तुओं का पोषक है। जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है। औद्योगीकरण, नगरीकरण, एवं नगरीय क्षेत्र, कृषि क्षेत्र आदि का विस्तार हो रहा है। जिसके परिणाम स्परूप वनों का क्षेत्रफल सिकुड़ता जा रहा है। पर्यावरण की भौलिकता में ह्रास हो रहा है। प्रस्तुत अध्याय में हम संसाधन एवं मुख्य रूप से वन संसाधन का अध्ययन करेंगे।

**संसाधन : वन, जल, खाद्य शक्ति एवं खनिज संसाधन**

संसाधन मानव की आवश्यकता की पूर्ति करता है। वास्तव में संसाधन वह तत्व है जो मानव की आवश्यकतों की पूर्ति करता है। कोई वस्तु अथवा तत्व वह मानव के सम्पर्क में आती है तब संसाधन होती है। आँग्ल भाषा का शब्द दो शब्दों re और resource से मिलकर बना है जिनमें re का तात्पर्य दीर्घ अवधि तथा source का तात्पर्य साधन है। इस प्रकार संसाधन का तात्पर्य है – 'संसाधन' वह तत्व अथवा स्रोत है जिन पर मानव समाज दीर्घकाल तक निर्भर रहता है। जिम्परमैन के अनुसार संसाधन पर्यावरण की वे विशेषतायें हैं जो मानव की आवश्यकता की पूर्ति में सक्षम होती हैं तथा मनुष्य की आवश्यकताओं और क्षमताओं द्वारा उपयोगिता प्रदान की जाती है। इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल सांइन्सेज़ में स्पष्ट किया गया है कि संसाधन मानवीय पर्यावरण के वे पक्ष हैं जिनके मानव–आवश्यकताओं की पूर्ति में सुविधा एवं सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति होती है।

प्रकृति में संसाधनों का भण्डारा है जिससे मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। मनुष्य के लिए यह आवश्यक है िकवह इनका विवेकपूर्ण प्रयोग करें। मैक्नाल ने स्पष्ट किया कि प्राकृतिक संसाधन वे संसाधन हैं जो प्रकृति द्वारा किये जाते हैं। ये मानव के लिए उपयोगी हैं। वास्तव में मानव के सापेक्ष में ही संसाधन हैं। जब कोई वस्तु मानव की आवश्यकतों की पूर्ति करती है त बवह संसाधन की श्रेणी में आ जाती है। फिशर के अनुसार संसाधन वह कोई भी वस्तु है जो मानव की आवश्यकताओं एवं इच्छाओं की पूर्ति करती है। स्मिथ तथा फिलिप्स ने संसाधन को प्र्यावरण की प्रक्रिया स्वीकार किया है। इनके अनुसार मौलिक रूप से संसाधन पर्यावरण की वे प्रक्रियायें हैं जो मानव के उपयोग में आती हैं।

वास्तव में संसाधन पर्यावरण वह वस्तु अथवा पदार्थ है जो मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति करता हैं अथवा पूर्ति करने की क्षमता रखता है। जिन वस्तुओं को अथवा उपायों को मनुष्य अपने कार्य में करता है वे संसाधन हैं। संसाधन वे तत्व है जिनसे मानव की आवश्यकता की पूर्ति होती है। पर्यावरण में ज्ञात और आज्ञात असंख्य संसाधन हैं जिनका

मानव पत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से उपयोग करता है। प्रकृति से सभी तत्व स्वयं में संसाधन नहीं हैं। कोई भी तत्व तभी संसाधन बनता है जब वह मानव की आवश्यकता की पूर्ति करता है। मानव तथा संसाधन में अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। मानव की समस्त क्रियायें अथवा मूर्त संस्कृति का आधार संसाधन है। इसके अभाव में मानव जीवन के अस्तित्व की कल्पना सम्भव नहीं है।

वास्तव में संसाधन मात्र वस्तु नहीं है बल्कि यह व्यापक अर्थों वाला है। इसमें वे सभी कारक एवं योजनायें भी सम्मिलित हैं जिने द्वारा संसाधनों का उत्पादन एवं उपयोग सम्भव होता है। जिम्परमैन ने संसाधन के तीन पक्षों को स्पष्ट किया है– 1. वह वस्तु अथवा पदार्थ जिस पर मनुष्य निर्भर रहता है, 2. वह वस्तु अथवा पदार्थ जिसमें मानव–आवश्यकता की पूर्ति होती है तथा 3. मानव की अवसर या लाभ उठाने की क्षमता।

प्रकृति में तत्वों की तीन कोटियाँ हैं। प्रथम कोटि में वे तत्व आते हैं जो मानव की आवश्यकता की पूर्ति करने वाले गुणों से युक्त होते हैं, द्वितीय कोटि में वे तत्व आते हैं जो मानव की क्रियाओं एवं इच्छाओं की पूर्ति में प्रतिरोध उत्पन्न करते हैं तथा तृतीय कोटि में वे तत्व आते हैं जो तटस्थ अथवा उदासीन होते हैं। संसाधन के दो पक्ष – लाभकारी तथा विनाशकारी हैं। आधुनिक मानव द्वारा परमाणु ऊर्जा की खोज की गयी है। यह संसाधन जहॉ एक ओर मानव–संस्कृति के उत्थान में सहायक है वहीं सम्पूर्ण मानव–जाति के विनाश का कारण भी बन सकता है। प्रकृति के पदार्थ अथवा तत्व जो मानव के लिए न लाभकारी हैं और न हानिकारक है वे उदासीन हैं। प्रागैतिहासिक काल में मानव अनेक तत्वों के गुणों की खोज नहीं कर पाया था। वे तत्व न तो उपयोगी थे और न वे गतिरोधक थे। मानव में परितर्वन करने की क्षमता है। वह बुद्धिविकल्प से युक्त क्रियाशील प्राणी हैं जिस कारण प्रकृति में अन्य से श्रेष्ठ हैं। मिचेल ने स्पष्ट किया कि मानव का ज्ञान ही सबसे महत्वपूर्ण संसाधन है। यह इसके विकास का मूल कारण है। आदिमानव ज्ञान के अाव में असभ्य था।

## 23.1 प्राकृतिक संसाधन संरक्षण में व्यक्तिगत भूमिका

आधुनिक मानव वैज्ञानिक मानव है। उसने अनेक अत्याधुनिक विधियॉ एवं प्रविधियॉ खोज निकाली हैं। उसकी आवश्यकताओं तथा तदनुपरूप क्रियायें निरन्तर बढ़ रही हैं। अतीत में जैव–विविधता में हास तथा संसाधनों के विनाश में कोई विशेष योगदान नहीं था परन्तु वर्तमान समय में दोनों के विनाश का कारण स्वयं मानव है। फलस्वरू यह धारणा व्यक्त की जा रही कि भूमण्डल में जहॉ हैं वहीं से कार्य प्रारम्भ करें। मानव समाज के प्रत्येक संसाधनों के विनाश का उतरदायी है। प्रत्येक व्यक्ति की संसाधन संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। प्रकृतिक संसाधन सीमित है जबकि मानव की आवश्यकतायें अनन्त हैं। प्रत्येक व्यक्ति को बुद्धिमानी से संसाधनों का उपयोग करना होगा। संसाधन समाप्ति पर संस्कृति की गति रुक जायेगी और मानव आदिमानव बन जायेगा। मालथस ने संसाधन के प्रयोग के लिए सावधान रहने का संकेत किया था। इन्होंने स्पष्ट किया था कि जनसंख्या में ज्यामितीय तथा पोषणीय संसाधनों में गणितीय रूप में वृद्धि होती है। इनका यह सिद्धान्त संसाधनों की न्यूवता का सिद्धान्त कहलाता है।

संसाधन संरक्षण करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है। हैमण्ड के अनुसार संरक्षण का तात्पर्य व्यय से अधिक बचत को अथवा सावधानीपूर्वक विकास को सूचित करता है। इनका आशय कम मात्रा में सावधानी से संसाधन का प्रयोग है। वास्तव में संसाधन मानव–संस्कृति विकास के लिए नितान्त आवश्यक है। इसी के आधार पर भावी पीढ़ी की विकास की दिशा निर्धारित हो सकती है। हेज ने स्पष्ट किया कि सम्भावित क्रम में संसाधन प्रायः अधिक मात्रा में रहने चाहिये जिससे यह प्राकृतिक पैतृक सम्पदा पूरी मात्रा में भावी पीढ़ियों के लिए

उपलब्ध हो सके। 20वीं शताब्दी में जनसंख्या की तीव्र वृद्धि तथा औद्योगिक विकास के कारण संसाधनों का अंधाधुंध प्रयोग किया गया। फलस्वरूप संसाधन संरक्षण की समस्या उत्पन्न हो गयी। ह्विटेकर ने स्पष्ट किया कि जनसंख्या विस्फोट प्राविधिक एवं औद्योगिक क्रांति, भौतिकवादी जीवन दर्शन आदि के कारण संसाधनों का अत्याधिक दोहन किया गया जिससे विगत दो शताब्दियों से संसाधन की समस्या निरन्तर गम्भीर होती चली जा रही हैं।

पार्सन ने स्पष्ट किया कि प्राविधिक विकास संसाधनों के दोहन का मुख्य कारण है। प्राविधिकी मानव के विवेक से आगे बढ़ जाती है जिससे संसाधनों का विनाशकारी शोषण बढ़ता जाता है। फलस्वरूप संसाधन सरंक्षण के प्रति मानव की चिन्ता बढ़ गई है। मैकनाल के अनुसार संरक्षण का तात्पर्य संसाधनों के दुरूपयोग को रोकना है। इसके लिए संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग नितान्त आवश्यक है। बीजले ने स्पष्ट किया कि संरक्षण का तात्पर्य किसी समाज अथवा व्यक्ति द्वारा प्राकृतिक संसाधनों` उपयोग में आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक रूप से मान्य प्रतिमानों, प्रतिरूपों एवं व्यवहार के मॉडलों की स्थापना करना है।

राष्ट्रपति कैनेडी ने स्पष्ट किया कि प्राकृतिक पर्यावरण के विवेकपूर्ण उपयोग तथा संसाधनों को संरक्षित करने, सुधारने तथा उसकी उपयोगिता अथवा गुणवत्ता का नवीनीकरण करने में मानव की भलाई है। यदि इसका दुरूपयोग होता रहा तो मानव–संस्कृति का विनाश निश्चित है। ऐली के अनुसार वर्तमान पीढ़ी का भावी पीढ़ी के लिए कुछ भी शेष नहीं रहेगा। फलस्वरूप प्रत्येक व्यक्ति को संसाधन संरक्षण पर ध्यान देना होगा।

संसाधनों के संरक्षण तथा विवेकपूर्ण उपयोग हेतु प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन पेरिस में सन् 1968 ई० में आयोजित किया गया जिसका उद्देश्य विश्वव्यापी प्रदूषण था। वास्तव में संसाधनों प्रयोग से भू–तल पर अपशिष्ट पदार्थो की मात्रा बढ़ती जा रही है जिसका प्रभाव मानव तथा वनस्पतियों पर द्रष्टव्य है। जल, वायु आदि प्रदूषण पर नियंत्रण आवश्यक है। मानव की आर्थिक क्रियायें पर्यावरण को प्रदूषित करती है। मानव की उन क्रियाओं पर प्रतिबन्ध लगाना आवश्यक है जिससे पर्यावरण को भारी हानि हो रही है। इसके लिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने दायित्व की पहचान करनी होगी।

संसाधन संरक्षण की समस्या नितान्त जटिल है। इससे सम्पूर्ण विश्व चिन्तित है। प्रत्येक व्यक्ति संसाधन के प्रति यदि जागरूक होगा तो संरक्षण की व्यावहारिकता स्वतः स्पष्ट होगी। निम्नांकित तथ्य है जिनसे प्रत्येक मनुष्य संसाधन संरक्षण में अपना योगदान दे सकता है–

1. प्रत्येक व्यक्ति संसाधनों का आवश्यक तथा उचित प्रयोग करे।
2. अवशिष्ट संसाधनों का पुनर्प्रयोग किया जाय।
3. जल एवं ऊर्जा संसाधनों का प्रयोग सावधानीपूर्वक किया जाय। अनावश्यक जल तथा गैस का प्रयोग न करें।
4. मनुष्य अज्ञानता में संसाधनों का दुरूपयोग करता है। इनको इसका ज्ञान कराकर संसाधन संरक्षण किया जा सकता है।
5. प्रत्येक व्यक्ति पर्यावरण तथा संसाधन उपयोग के विषय में सावधानी के प्रति समाज में जनचेतना का संरचरण करें।
6. ऊर्जा के परम्परागत संसाधनों के स्थान पर गैरपम्परागत संसाधनों के उपयोग को प्रोत्साहन दिया जाय।

**वन संसाधन एवं व्यक्तिगत दायित्व–** वन पर्यावरण की अमूल्य निधि है। जनसंख्या वृद्धि एवं औद्योगीकरण का विकास वन के विनाश का कारण है। फलस्वरूप व्यक्तिगत रूप से वनों को संरक्षण प्रदान किया जा सकता है–

1. वन पर्यावरण तथा मानव–संस्कृति का अभिन्न अंग है। इसकी सुरक्षा मनुष्य का प्रथम दायित्व है। फलस्वरूप समाज को वनों के प्रति संवेदनशील बनाया जा सकता है।
2. वनों की लकड़ी का ईंधन के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसके स्थान पर गोबर गैस, गैस, मिट्टी का तेल, सौर्य चूल्हो का उपयोग करना नितान्त आवश्यक है।
3. घास प्राप्ति अथवा अन्य लालच से व्यक्ति जंगलों में आग लगा देता है जिससे वनस्पतियाँ एवं जीव–जन्तु लष्ट हो जाते हैं। समाज को जागरूक करके वनों की अग्नि से सुरक्षा की जा सकती है।
4. वनों से जितने पेड़ों का कटान यिा जाय उससे दूने पेड़ों का रोपण किया जाय। इससे वन क्षेत्र यथावत् बना रहेगा।
5. वनों का दोहन उचित सीमा (पोषीय सीमा) तक किया जाय।

**मृदा संसाधन एवं व्यक्तिगत दायित्व–** मृदा प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से वनस्पति, जीव–जन्तु एवं मनुष्य से सम्बन्धित है। इसके अपरदन का प्रभाव सभी पर पड़ता है। फलस्वरूप मृदा संरक्षण करना नितान्त आवश्यक है।

इसके लिए निम्नांकित सावधानी आवश्यक है–

1. कीटनाशी, रोगनाशी तथा शाकनाशी रासायनों का न्यूनतम सीमा तक प्रयोग मृदा के गुणों के संरक्षण के लिए आवश्यक है।
2. रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर जैव–रसायनों का प्रयोग किया जाय।
3. अपरन, उत्पादकता–हास, घासों की अधिकता, जलभराव आदि मृदा को हानि पहुँचाते हैं। फलस्वरूप इनसे प्रत्येक व्यक्ति को सावधान रहना चाहिए।
4. नगरीय उपान्त क्षेत्र मृदा अवनयन का प्रमुख क्षेत्र होता है। सभ्य समाज की अज्ञानता के कारण मृदा के गुणों में हास हो रहा है। व्यक्ति को जागरूक बना कर इस समस्या का समाधान किया जा सकता है।

**जल संसाधन तथा व्यक्तिगत दायित्व–** जल ही जीवन है, जल नही ंतो कुछ नहीं। फलस्वरूप जल का संरक्षण नितान्त आवश्यक है। जल संरक्षण के लिए निम्नांकित सावधानियों की आवश्यकता है–

1. जल का अनावश्यक प्रयोग किया जाता है। जल की एक बूंद का उतना ही महत्व है जितना जल की विशाल राशि का। फलस्वरूप जल की एक–एक बूंद का संरक्षण आवश्यक है। जल के दैनिक उपयोग में नष्ट होने वाले जल को कम कर जल को संरक्षण प्रदान किया जा सकता है।
2. वर्षा काल में जल की विशाल राशि प्रवाहित हो जाती है जिसका कोई उपयेाग नहीं हो पाता है। तालाबों, झीलों तथा अन्य उपयुक्त स्थानों पर इसका संचयन किया जाय तथा आवश्यकतानुसार सिंचाई, पशु के पीने तथा अन्य कार्यों में इसका प्रयोग किया जाय।
3. विभिन्न स्थानों विशेषतः नगरों से अनेक प्रकार के प्रदूषक जल में मिल कर इसकों प्रदूषित करते हैं जिसका प्रभाव फसलों, जीव–जन्तुओं एवं मनुष्यों पर पड़ रहा है। प्रत्येक मनुष्य का नैतिक दायित्व है िकवह जल को स्वच्छ रखने के लिए प्रदूषकों के निपटान की व्यवस्था करे।

**ऊर्जा संसाधन तथा व्यक्तिगत दायत्वि–** वर्तमान भौतिकवादी युग में प्रत्येक व्यक्ति सुखपूर्वक जीवन–यापन करना चाहता है जिस कारण ऊर्जा संसाधनों की खपत बढ़ती जा रही है। निम्नांकित सावधानी से ऊर्जा संसाधनों को संरक्षण प्रदान किया जा सकता है–

1. अपने गृह के चतुर्दिक पेड़–पौधों एवं झाड़ियों को लगाकर ग्रीष्मकाल में गृह को प्राकृतिक वातानुकूलित बनाया जा सकता है। लैंडस्कैपिंग से गृह का वातावरण ग्रीष्म काल में ठंडा तथा शीत काल में गर्म होता है। इससे 15 से 20 प्रतिशत विद्युत का उपयोग प्रतिव्यक्ति कम हो सकता है।
2. अनावश्यक रूप से विद्युत का उपयोग न करें। घर के बाहर जाते समय सभी स्विच बन्द कर दिया जाय। इसी प्रकार कार्य–समाप्ति पर गैस रेगुलेटर को सावधानीपूर्वक बन्द कर दिया जाय।
3. खनिज तेल की संचित राशि सीमित है। वाहनों तथा अन्य मशीनों में इसका प्रयोग कम एवं सावधानीपूर्वक करना भावी पीढ़ी का मार्ग प्रशस्त करना है।
4. घोबर गैस प्लान्ट तथा सौर्यिक ऊर्जा के प्रयोग से अन्य ऊर्जा के संसाधनों को संरक्षण प्रदान किया जा सकता है।

## 23.2. सतत् जीवन शैली के लिए संसाधनों का समान प्रयोग

औद्योगीकरण, नगरीकरण, कृषि का विज्ञानीकरण आदि का विकास तीव्र गति से हो रहा है। मनुष्य को काफी गर्व का अनुीाव हो रहा है कि वह बहुत कुछ कर रहा है। आदिमानव से सुसंस्कृत मानव एक औद्योगिक मानव बन गया है। वास्तव में उसकी पर्यावरण से अन्धाधुंध क्रियायें उसके लिए तथा आने वाली पीढ़ी के लिए विनाशक हैं। पर्यावरण की मौलिकता समाप्त हो रही है जिसका प्रभाव जीव–जन्तु एवं मनुष्य पर पड़ रहा है। मानव की क्रियायें इतनी तीव्र एवं विनाशक हैं कि पर्यावरण की स्वतः नियामक क्रियाविधि पर्यावरण में सन्तुलन स्थापित करने में समर्थ नहीं हैं। फलस्वरूप पर्यावरण अवनयन बढ़ता जा रहा है। इसी लिए सम्पोषित विकास की अवधारणा प्रस्तुत की गयी है। इस विकास के लिए संसाधनों का न्यायसंगत अथवा समान प्रयोग नितान्त आवश्यक है। स्वपोषित विकास अथवा जीवन धारणीय विकास पर्यावरण सन्तुलन के वांछनीय है। सिंह तथा सिंह 986 ने स्पष्ट किया।

मानव जीवन की उत्तमता के साथ पर्यावरण की मौलिकता पर ध्यान देना आवश्यक है। इसकी अपनी एक व्यवस्था है। यह अपनी सार्वभौमिक व्यवस्था से समस्त क्रियाओं का संचालन करती हैं। मानव की विकास–क्रियायें इस व्यवस्था को भंग कर रही हैं। जिससे उसकी क्रियाओं में अनियमितता उत्पन्न हो रही है। मानव जब भू–तल पर अवतरित हुआ तब से उसकी नियमित क्रियाओं से समायोजन करता रहा। वर्तमानव तक सभी प्रकृति सापेक्ष होता रहा। परन्तु जब प्रकृति की क्रियायें बदल रही हैं तब उसका प्रभाव समस्त जैविक–अजैविक तत्वों पर पड़ रहा है। वास्तव में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकीय विकास ने मनुष्य की जीवन शैली को बदल दिया है जिस कारण सामाजिक धारणा में परिवर्तन हो रहा है। संस्कृति के विकास के मूल में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका को महत्वपूर्ण माना जा रहा है। यह सत्य है कि संस्कृति का विकास बिना विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के सम्भव नहीं है परन्तु यह भी सत्य है कि संस्कृति में ह्रास भी इसी के कारण हो रहा है। साद्यान्न उत्पादन, परिवतन, संचार, ऊर्जा, रक्षा, अन्तरिक्ष आदि के क्षेत्र में नूतन प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर तीव्रगति से विकास कर रहे हैं। विकास की इस दौड़ में पर्यावरण को भुला दिया गया है। जनसंख्या के विकास का दबाव वनों पर बढ़ता जा रहा है। उद्योगों का विकास हो रहा है। मिलों एवं कारखानों की चिमनियॉ विषैला धुऑ उगल रही हैं। कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए रसायनों का प्रयोग अधिक किया जा रहा है। फलस्वरूप जल, वायु एवं ध्वनि प्रदूषण बढ़ रहा है।

विज्ञान के विकास की गति से अधिक गति से पर्यावरण की रक्षा करना आवश्यक है। विज्ञान का विवेकपूर्ण प्रयोग आवश्यक है। बिना किसी हानि के इसका प्रयोग सामाजिक–सांस्कृतिक विकास में किया जाय तब पर्यावरण एवं उसके संसाधनों का संरक्षण हो

सकता है। वैज्ञानिक समुदाय एवं विज्ञान संस्थानों को अपनी भूमिका का निर्वहन करना नितान्त आवश्यक है। विधियॉ एवं प्राविधियॉ तथा उनके उपयोग का मूल्यॉकन मानव–कल्याण के परिप्रेक्ष्य में करना पर्यावरण के संरक्षण की दिशा में एक कदम बढ़ाना है। परन्तु स्थिति इसके विपरीत है क्योंकि नगरीकरण, औद्योगीकरण, कृषि का विज्ञानीकरण आदि को विकास का मापदण्ड माना जाता है। फलस्वरूप प्रगति की होड़ में विकसित, विकासशील एवं अविकसित देशों में तीव्रगति से पर्यावरण का विनाश किया जा रहा है। किसी भी विधि अथवा प्रविधि के दो पहलू होते हैं। एक पहलू जहॉ मानव–कल्याण है वहीं दूसरा पहलू मानव–विनाश है। नाभिकीय ऊर्जा का प्रयोग मानव विनाश तथा मानव–कल्याण दोनों में किया जा सकता है। हमारी चिन्तन धारा विपरीतगामी है। मानव–कल्याण को एक किनारे कर विकास करते जा रहे हैं।

संसाधनों के व्यावहारिक प्रयोग से मानव जीवन–शैली में परिवर्तन हो सकता है। विश्व–कल्याण की संकल्पना साकार हो सकती है। निम्नांकित उपाय द्वारा संसाधन संरक्षण अथवा संसाधन का व्यावहारिक उपयोग किया जा सकता है–

1. विश्व–स्तर सभी संसाधनों का यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर उसकी एक ऐसी सारणी तैयार की जाय जिसमें प्रभूत मात्रा, अल्प मात्रा तथा अत्यल्प मात्रा वाले संसाधनों का यथार्थ ज्ञान हो सके।
2. संसाधनों का प्रयोग आवश्यकतानुसार किया जाय। वास्तव में संसाधनों का वितरण तथा मानव की आवश्यकता समान नहीं है। फलस्वरूप आवश्यकता के अनुसार संसाधनों को उपलब्ध कराया जाय।
3. संसाधनों के उपयोग के समय इस तत्य को ध्यान में रखना चाहिए कि उसका प्रयोग अन्तिम सीमा तक किया जाय। प्रयोग के समय संसाधनों का अल्पांश भी नष्ट न किया जाय।
4. संसाधनों के विकल्प की खोज करना नितान्त आवश्यक है। कुछ संसाधन समाप्ति के कगार पर हैं तथा अनेक भविष्य में समाप्त हो जायेंगे।
5. संसाधनों के दोहन के समय पर्यावरण की क्षति पर ध्यान देना चाहिए। संसाधनों के उपयोग से लाभ तथा पर्यावरण की हानि का तुलनात्मक अध्ययन नितान्त आवश्यक है।
6. भौतिकतावादी मानव बिना पर्यावरण की चिन्ता किये संसाधनों का अंधाधुंध प्रयोग कर रहा है जो उसे विनास का कारण बनेगा।
7. सम्पोषित विकास की धारणा को पोषित कर पर्यावरण को संरक्षण प्रदान किया जा सकता है। रियो डी जेनिरो पृथ्वी सम्मेलन 1922 में इस धारणा पर विशेष बल दिया गया था। लिण्डसे (1970) ने स्पष्ट किया कि प्रविधि ने वर्तमान में जो खतरा उत्पन्न किया है वही उसका समाधान करेगी। वास्तव में यह सत्य है कि तकनीक के कारण पर्यावरण एवंज ैव–विविधता में ह्रास, परिस्थितिक तन्त्र की व्यवस्था में असन्तुलन आदि उत्पन्न हो रहा है। विश्व–स्तर पर मानव को अपनी चिन्तन दिशा में परिवर्तन कर पर्यावरण की सुरक्षा करना चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता है तो निकट भविष्य में अनेक ऐसी समस्यायें उत्पन्न हो जायेंगी जिनका कोई समाधान नहीं होगा।

### 23.3. वन संसाधन

वन प्रकृति का साकार रूप है। मानव के अतिरिक्त यह दूसरा जीवीय संसाधन है जो अन्याय जीव–जन्तुओं का पोषक है। मानव, जीव–जन्तु एवं वनों में सहसम्बन्ध है जिस कारण इनका अस्तित्व भू–तल पर है। वन मानव–संस्कृति का जन्म दाता एवं पोषक है। मुख्य रूप से भारतीय संस्कृति वनों में उद्‌भूत, पल्लवित एवं विकसित हुई। मानव ने वनों से बहुत कुछ

प्राप्त किया। इसी पर निर्भर रह कर ज्ञान–विज्ञान का विकास किया। परन्तु इसके विनाश में भी यह पीछे नहीं है। वास्तव में वन 'प्रकृति का उद्यान' है जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है। औद्योगीकरण, नगरीकरण, कृषि का विज्ञानीकरण आदि का विकास हो रहा है। सभी का दबाव निरन्तर वनों पर बढ़ता जा रह है। नगरीय क्षेत्र, कृषि क्षेत्र आदि का विस्तार हो रहा है। फलस्वरूप वनों का क्षेत्र सिकुड़ता जा रहा है। पर्यावरण की मौलिकता में ह्रास हो रहा है। पर्यावरण सन्तुलन के लिए सम्पूर्ण भौगोलिक भूमि के 33 प्रतिशत भाग पर वनों का विस्तार आवश्यक है।

1. **वनों के विकास के कारक–** वनों के विकास को निम्नांकित कारक प्रभावित करते हैं–

1. **जलवायु–** वनों के विकास में सबसे महत्वपूर्ण कारक जलवायु है। तापमान, वर्षा, आर्द्रता आदि की आदर्श संरचना वनों को विकसित करती है। जलवायु के इन तत्वों में क्षेत्र विशेष में विषमता है जिस कारण वनों के विकास एवं वितरण में भिन्नचा है।
2. **भौतिक बनावट–** धरातल की बनावट, उच्चवच आदि का प्रभाव जल–प्रवाह, मृदा एवं तापमान को प्रभावित करता है जिसका प्रभाव वनों के विकास तथा स्वरूप पर पड़ता है।
3. **मृदा–** मृदा तथा गहराई से वृक्षों की जड़ें अपना भोजन ग्रहण करती हैं। मृदा का रासायनिक संगठन, आर्द्रता, गठन, सरन्ध्रता, परिच्छेदिका आदि का प्रभाव वनों के विकास पर पड़ता है।
4. **जैविक कारक–** मनुष्य, पशु एवंज ीव आदि की क्रियायें वनों के विकास को प्रभावित करती हैं। मनुष्य की क्रियायें निर्वनीकरण कर रही हैं। पशु इनकी पत्तियों एवं टहनियों को प्रभावित करते हैं जिससे वृक्षों का विकास नहीं होता है।
5. **कच्चे संसाधन के रूप में प्रयोग–** वनों का उपयोग अनेक उद्योगों में कच्चे संसाधन के रूप में किया जाता है। वनों का निरन्तर ह्रास हो रहा है।

2. **वनस्पति के प्रकार–** जलवायु, उच्चावच, मृदा तथा अन्य कारकों के कारण वनों के स्वरूप, वितरण एवं विकास में भिन्नता है। जलवायु की भिन्नता एक प्रमुख कारक है। एक विशेष प्रकार की जलवायु में एक विशेष प्रकार के वन पाये जाते हैं। फलस्वरूप इसी के आधार पर वनों का वर्गीकरण किया जाता है–

**सारणी 23.1 वनों के प्रकार**

| मुख्य विभाग | गौण विभाग |
|---|---|
| उष्ण कटिबन्धीय वन | 1. उष्ण कटिबन्धीय सदाबहार वन |
| | 2. उष्ण कटिबन्धीय पर्णपाती वन |
| | 3. भूमध्य सागरीय एवं सदाबहार झाड़ियाँ |
| शीतोष्ण कटिबन्धीय | 4. शीतोष्ण कटिबन्धीय पर्णपाती वन |
| | 5. शीतोष्ण कटिबन्धीय मिश्रित वन |
| | 6. शीतोष्ण कटिबन्धीय शंकुधारी वन |

5. **वनों का उपयोग**

वनों का सामाजिक, आर्थिक तथा जलवायविक दृष्टि से अत्यन्त महत्व है। अतीत से वर्तमान तक मानव किसी न किसी रूप से वनों से अपनी आवश्यकता की पूर्ति करता

रहा है। आदिमानव तो पूर्णतः एवं एवं उनके उत्पादों से अपनी भोजन, वस्त्र एवं आवास की आवश्यकता की पूर्ति करता था। समय के साथ मानव के ज्ञान–विज्ञान में वृद्धि वह इसके उत्पाद का रूप परिवर्तित कर उपयोग करने लगा। वनों का निम्नांकित महत्व एवं उपयोग हैं–

1. वनों के अनेक उत्पाद– शहर, गोंद, लाख, जड़ी बूटियाँ, मसाले आदि तथा इमारती वृक्ष–देवदार, चीड़, बांझ, बांस, बबूल, साल, सागवन, शीशम, चन्दन, सेमल आदि का मानव जीवन में अत्यन्त उपयोग है। प्राचीनकाल में मानव ने इसकी उपयोगिता को परिचान लिया तथा वनों से छांट कर इनका उपयोग करने लगा।
2. वन जीव–जन्तुओं के प्राकृतिक बास होते हैं। इसमें अनेक प्रकार के जीव–जन्तु पक्षियाँ, कीड़े–मकोड़े वास कर अपनी आवश्यकता की पूर्ति करते हैं जिससे जैव–विविधता तो संरक्षण प्राप्त होता है।
3. वन प्रकृति का साकार रूप है। इसमें मानव–संस्कृति का पोषण हुआ। यही मानव की क्रीड़ास्थली थी। परन्तु मानव इसी का विनाश कर रहा है।
4. वन तथा जलवायु का घनिष्ठ सम्बन्ध ळै। जलवायु वन के विकास को प्रभावित करता है परन्तु यह भी सत्य है कि एक आदर्श जलवायु की व्यवस्था के लिए वानास्पतिक आवरण नितान्त आवश्यक है।

भारत के धर्म ग्रंथों में वनों महत्व को स्पष्ट किया गया है। एक वृक्ष का उतना ही महत्व है जितना एक वन का है। मत्स्य पुराण में स्पष्ट किया गया है कि 10 कुएँ तक तालाब के बराबर हैं, 10 तालाब एक झील के बराबर तथा 10 पुत्र एक वृक्ष के बराबर हैं। परन्तु वर्तमान समय में वन का विनाश तीव्र गति से किया जा रहा है। इमारती लकड़ी प्राप्ति के लिए अनेक महत्वपूर्ण वन नष्ट किये जा रहे हैं।

**इमारती लगड़ी का निष्कासन**

मानव का उद्‌भव प्रकृति की विलक्षण घटना थी। वह उद्‌भूत होकर वनों से अपनी भोज्य आवश्यकता की पूर्ति करता था। धीरे–धीरे उसमें स्थायित्व आने लगा। अनेक बस्तियाँ बसने लगीं जिसमें इमारती लगड़ी का प्रयोग किया गया। वर्तमान समय तक इसका प्रयोग किया जा रहा है। इससे वनों का ह्रास तीव्रगति से हुआ। देवदार, चीड़, श्वेत सनोवर, नीलापाइन, स्प्रूस, खैर, बबूल, कीकर, चन्दन, आम, नीमा, महुआ, साल सागवन, शीशम, लार्च आदि प्रमुख इमारती वृक्ष हैं। इनके वनों का शोषण वृहत स्तर पर किया गया। इन लकड़ियों का प्रयोग केवल भवन निर्माण में नहीं किया जाता है बल्कि इसका प्रयोग पुल, रेल के स्लीपर, लट्ठों आदि में भी किया जाता है।

पूर्वी भारत, म्यांमार, थाईलैण्ड, वियतनाम, ब्राजील, आस्ट्रेलिया, अफ्रीकी देश आदि की लकड़ियाँ अत्यन्त कठोर तथा उपयोग की दृष्टि से अत्यन्त महत्पूर्ण होती हैं। फलस्वरूप यहाँ इनका सर्वाधिक उपयोग किया गया। कैलिफोर्निया, मध्य चिली, दक्षिणी अफ्रीका, दक्षिणी–आस्ट्रेलिया तथा भूमध्य सागरीय देशों में सनोवर, बलूत, कार्क–ओ, ओक, जैतून आदि के वृक्ष पाये जातें हैं जिनका उपयोग अधिक किया गया।

वर्तमान समय में इमारती लकड़ी वाले वनों का ह्रास हो चुका है। भवन निर्माण में लोहा, स्टी, प्लास्टिक, एल्युमिनियम, कांच, फाइबर आदि का प्रयोग वृहत–स्तर पर किया जा रहा है जिस कारण वनों को संरक्षण प्राप्त हो रहा है।

**वन तथा जनजातीय लोग**

विश्व–स्तर पर जनजातियाँ सघन जंगलों एवं दुर्गम स्थलों पर आवसित हैं। इनकी संस्कृति सभ्य समाज की संस्कृति से पृथक हैं। अनेक जनजातियाँ वर्तमान समय में भी

पाषणकालीन संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती हैं। सघन जंगलों में रहने वाली जनजातियाँ वनों से ही अपनी समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं। बाह्मय संसार से पृथक सीमित आवश्यकता वाले ये लोग वन–संसार में रहकर एक पृथक प्रकार की संस्कृति का सृजन किये हैं। वन जहाँ इनकी समस्त आवश्यकता की पूर्ति करते हैं वहीं वे विनाश की ओर बढ़ रहे हैं। पारिस्थितिकी सन्तुलन असन्तुलन की ओर बढ़ रहा है। निम्नांकित तथ्यों द्वारा जंगलों से इनके सम्बन्ध को स्पष्ट किया जा सकता है–

1. **वन वस्तु संग्रह–** जनजातीय लोग वन्य वस्तु संग्रह अपनी आवश्यकता की पूर्ति तथा अल्पांश सभ्य समाज में विक्रय के लिए करती हैं। किसी जनजातीय समूह के सभी लोग तथा किसी के कुछ लोग इस कार्य में संगलग्न हैं। कार्य में संगलग्न हैं। कन्दमूल, फल, फूल, सफेद मूसली, वंशलोचन, चिरौंची, गोंद, शहर, सतावर, हर्र–बहेरा, महुआ आदि का संग्रह करते हैं। इनकी संग्रह प्रक्रिया अनियमित तथा अवैज्ञानिक है जिस कारण वनों को भारी क्षति पहुंच रही है। अनेक औषधीय पौधे लुप्त हो गये तथा अनेक लुप्त होने के कगार पर हैं। अनेक पौध जातियों के अस्तित्व पर संकट उत्पन्न हो गया है।
2. **आखेट–** मानव पुरायावाण काल में आखेट पर जीवन निर्वाह करता था। पशु–पालतूकरण, पौध–घरेलूकरण तथा स्थायी आवास के निर्माण के पश्चात् कृषि एवं दुग्ध उत्पादन पर जीवन–निर्वाह करने लगा। वर्तमान समय अधिकांश जन–जातियाँ सघन जंगलों में आवासित हैं जिनके जीवन–निर्वाह का मुख्य आधार आखेट है। इससे जंगली जन्तुओं का निरन्तर ह्रास हो रहा है। साथ ही सभ्य समाज के लोग भी जानवरों को शिकार दाँत तथा खाल के लिए कर रहे हैं। अनेक जन्तु जातियाँ आखेट से लुप्त हो गयी हैं। गिद्ध इसका प्रमुख दृष्टांत है। दक्षिणी भारत की जनजातियाँ इनको भोज्य रूप में ग्रहण करती हैं। फलस्वरूप इनका बृहत–स्तर पर शिकार किया जाता है।
3. **कुटीर उद्योग–** जनजातीय लोग वन वस्तुओं पर आधारित अनेक कुटीर उद्योगों का विकास किये हैं जिनमें चटाई, पाटला, बेलन–चकला, झाडु, बीड़ी, औषधि, रस्सी आदि प्रमुख हैं। इससे वन्य वस्तुओं का अनियमित उपयोग किया जा रहा हैं। जंगलों को भारी क्षति हो रही है।
4. **कृषि–** विश्व–स्तर पर अनेक जनजातियों के जीवन–निर्वाह का मुख्य आधार कृषि हो गया है। ये खेत बनाने के लिए वृक्षों को काट देते हैं तथा झाड़ियों को आग जला कर साफ कर देते है। इनकी कृषि पूर्णतः अवैज्ञानिक है जिस कारण वनों को भारी क्षति हो रही है।
5. **पशुपालन–** जनजातियों की अर्थव्यवस्था में पशुपालन का योगदान होता है। ये भारी संख्या में जंगली पशुओं को पालतू बनाते हैं। पशुचारण अनियमित होता है। वनस्पतियाँ नष्ट हो जाती है जिनकी क्षतिपूर्ति सम्भव नहीं है।
6. **औषधि निष्कासन–** जनजातीय लोगों को औषधियों का अच्छा ज्ञान है परन्तु इनका दोहन अवैज्ञानिक ढंग से करते हैं। जिससे अनेक औषधीय पौधे जनवरत लुप्त हो रहे हैं।

**उत्खनन तथा वन**

अनेक संसाधन – कोयला, लोहा, ताँबा, मैंगनीज आदि पृथ्वी की गहराई में स्थित हैं। इसका निष्कासन एक निश्चित वैज्ञानिक विधि से किया जाता है। उत्खनन प्रक्रिया में श्रमिकों

का भारी संख्या में उपयोग किया जाता है। विशाल क्षेत्र के वनों को साफ कर खनन कार्य सम्पन्न किया जाता है।

पठारी क्षेत्र जो सघन जंगलों से युक्त होते हैं वहीं पर अनेक महत्वपूर्ण खनिज संसाधन विद्यमान होते हैं। भारत के झारखण्ड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़ में खनिज संसाधन की विशाल राशि है जिसका निष्कर्षण अतीत से किया जा रहा है। इससे वन नष्ट हो गये तथा वहाँ अनेक औद्योगिक नगर स्थापित हो गये हैं। यहाँ के जंगलों के विषय में अपने साहित्यों में वर्णन मिलता है परन्तु वर्तमान समय में वहाँ एक भी वृक्ष द्रष्टव्य नहीं है। अनेक जनजातियाँ इन्हीं जंगलों में वाह्य संस्कृति से पृथक एक पृथक एक पृथक प्रकार की संस्कृति का पोषण किये थीं। वनों के कट जाने से इनको स्थानान्तरित होना पड़ा। सभ्य समाज के साथ इनके समायोजन की सबसे बड़ी समस्या थी। समय के परिप्रेक्ष्य में जनजातीय संस्कृति धीरे–धीरे वाह्य संस्कृति में विलीन होने लगी। अनेक जनजातीय संस्कृति पूर्णतः परिवर्तित हो चुकी है।

**बाँध तथा वन**

संसार विकास की दौड़ में तीव्र गति से आगे बढ़ रहा है। नगरीकरण एवं औद्योगीकरण चरमसीमा पर है। विद्युत तथा अन्य संसाधनों का उपयोग बढ़ता जा रहा है। अनेक विशाल बाँधों के निर्माण के लिए विस्तृत क्षेत्र की भूमि की आवश्यकता होती है। वनों के बहुत बड़े क्षेत्र को साफ कर दिया जाता है। पारिस्थितिक असंतुलन बढ़ता जा रहा है। वन विनाश से अनेक पौधे समाप्त हो जाते हैं। जीव–जन्तु या तो स्थानान्तरित हो जाते हैं अथवा नष्ट हो जाते हैं। भारत में नर्मदा घाटी परियोजना में हरे–भरे वृक्षों को काट–काट कर बाँध बनाया गया। टिहरी बाँध बनाया गया। टिहरी बाँध के निर्माण में अनेक वनस्पति प्रजातियाँ नष्ट हो गयी।

जनजातियाँ बाँध निर्माण के पूर्व यदि उस क्षेत्र में आवासित हैं तो उनको स्थानान्तरित होना पड़ता है। इनके समक्ष पुनर्समायोजन की समस्या उत्पन्न हो जाती है। वास्तव में इनका एक पृथक संसार होता है जिसमें अपनी एक निश्चित सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था के साथ आवासित होती हैं। स्थानान्तरण होने पर इनको पुनः व्यवस्थित होना पड़ता है।

**शब्दावली**

**संसाधन–** का अभिप्राय 'साधन' या उपकरण होता है। जो किसी विशेष उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक होते है।

**सतत विकास–** ऐसा विकास जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करते हुये, भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं को भी सुरक्षित रखता है।

**अवनयन–** नीचे की ओर गिरना या पतन होना।

**संरक्षण–** का अर्थ किसी वस्तु, व्यक्ति, प्राणी पौधे, पर्यावरण की सुरक्षा और रखरखाव करना, एवं नुकसान, पतन, विनाश से बचाया जाना।

**जनसंख्या–विस्फोट–** एक देश या क्षेत्र में जनसंख्या का अत्याधिक क्षेत्र जिसके परिणामस्वरूप आर्थिक, सामाजिक एवं पर्यावरणीय समस्यायें उत्पन्न होती हैं।

**अवशिष्ट–** बचा हुआ या शेष होता है।

**सारांश–**

1. मानव की समस्त क्रियायें प्रत्यक्ष अपवा परोक्ष रूप से संसाधनों पर ही निर्भर होती हैं। इसके अभाव में मानव जीवन के आस्तित्व की कल्पना सम्भव नहीं है। प्रकृति में संसाधनों का पर्याप्त भंडार है। जिससे मानव के अवश्यकता की पूर्ति होती है। मनुष्य के लिये यह आवश्यक है िकवह इनका विवेकपूर्ण प्रयोग करें।

2. आधुनिक मानव वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित हाहेकर तार्किक हो गया है। उसने अनेक नयी–नयी विधियों की खोज कर लिया है। उसकी आवश्यकताऐं निरंतर बढ़ रही हैं। अतीत की तुलना में वर्तमान समय में जैव–विविधता एवं संसाधनों के विनाश का कारण मानव ही है। मानव समाज के प्रत्येक संसाधनों के विनाश का उत्तरदायी है। प्रत्येक व्यक्ति की संसाधन संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका होनी चाहिए प्राकृतिक संसाधन सीमित है जबकि मानव की आवश्यकताऐं अनन्त हैं।

वन प्रत्यक्ष रूप से प्रकृति का वरदान है मुख्य रूप से भारतीय संस्कृति वनों के विकास से पुस्पित एवं पल्लवित हुयी। मानव ने वनों से बहुत कुछ प्राप्त किया। वनों का सामाजिक आर्थिक तथा जलवायु के दृष्टिकोण से अत्याधिक महत्व है। अतीत से वर्तमान समय तक मानव किसी न किसी रूप में वनों पर निर्भर रहते हुये अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। विश्व–स्तर पर अनेक जनजातियां जंगलों में विकास कर रही है। जंगलों में रहने वाली जनजातियां वनों से ही अपनी समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं। अनेक संसाधन– कोयला, लोहा, ताबॉ, मैगनीज, आदि पृथ्वी के गर्भ में स्थित है। इसका निष्कासन एवं निश्चित वैज्ञानिक विधि से किया जाना है।

3. संसाधनों का न्यायसंगत अथवा समान प्रयोग नितांत आवश्यक है। सम्पोषित विकास संसाधनों के अतिदोहन एवं पर्यावरण संतुलन के लिये अति आवश्यक है। संसाधनों` संरक्षण काके लेकर पूरा विश्व चिन्तित है। प्रत्येक व्यक्ति संसाधन के प्रति यदि जागरूक होगा तो संसाधन संरक्षण में अपना योगदान दे सकता है।

**2.1** खनन कार्य वनों को साफ करके किया जाता है। भारत के झारखण्ड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़ में खनिज संसाधनों का विशाल भण्डार या धीरे–धीरें वनों को नष्ट करके इन खनिजों को निकाल लिया गया तथा वहां नये–नये औद्योगिक नगर स्थापित हो गये हैं। देश विकास की दौड़ में तीव्र गति से आगे बढ़ रहा है। यह विकास इन वनों को समाप्त करके किया जा रहा है। जिससे पारिस्थितक असंतुलन बढ़ता जा रहा है। मानव जीवन के समग्र विकास के साथ–साथ पर्यावरण की सुरक्षा तथा संरक्षण पर ध्यान देना आवश्यक हो गया है। मानव की विकास क्रियायें इस व्यवस्था को भंग कर रही है। जिससे उसकी क्रियाओं में अनियमितता उत्पन्न हो रही है। परिणाम स्वरूप पर्यावरण अवनयन बढ़ता जा रहा है। इस पर नियंत्रण के लिये आवश्यक है।

**बोध–प्रश्न**

- संसाधनों से आप क्या समझते हैं? उदाहरण सहित समझाइये?
- संसाधनों के संरक्षण में व्यक्ति की क्या भूमिका हो सकती है?
- वन संसाधन को बताइये?
- मानव जीवन में वनों के उपयोग पर अपना दृष्टिकोण समझाइये?

**संदर्भ ग्रन्थ**


- पर्यावरण अध्ययन– राजेश नौरियाल
- पर्यावरण एवम् परिस्थिकी– वरनवाल एमी के०

# इकाई–03
# जल संसाधन एवं खनिज संसाधन– कोयला, पेट्रोलियम आदि

## इकाई की रूपरेखा


3.1 उदेश्य
3.2 प्रस्तावना
  3.2.1 जल संसाधन
  3.2.2 जल संसाधन के प्रकार
  3.2.3 सतही जल संसाधन
  3.2.4 अंतर्देशीय जल संसाधन
  3.2.5 महासागरीय जल संसाधन
  3.2.6 भूजल संसाधन
  3.2.7 जल संचयन
3.3 खनिज संसाधन
3.4 कोयला एवं पेट्रोलियम संरक्षण
3.5 सारांश
3.6 बोध प्रश्न
3.7 उपयोगी पुस्तके


### 3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई जल संसाधन एवं खनिज संसाधन–कोयला, पेट्रोलियम आदि का अध्ययन कर निम्न बिन्दुओं को समझने में सक्षम होंगे।

- जल संसाधन के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- जल संसाधन के प्रकार से भी अवगत होंगे।
- सतही जल संसाधन की भूमिका से अवगत होंगे।
- अंतर्देशीय जल संसाधन की भूमिका से अवगत होंगे।
- महासागरीय जल संसाधन की भूमिका से अवगत होंगे।
- भूजल संसाधन की भूमिका से अवगत होंगे।
- जल संचयन की भूमिका से अवगत होंगे।
- खनिज संसाधन की भूमिका से अवगत होंगे।
- कोयला एवं पेट्रोलियम संरक्षण के बारे में जानेंगे।

### 3.1 प्रस्तावना

यह इकाई जल संसाधनों और खनिज संसाधनों की अन्योन्याश्रयता का अन्वेषण करता है, विशेष रूप से कोयला और पेट्रोलियम पर ध्यान केंद्रित करता है। इन खनिजों के निष्कर्षण और प्रसंस्करण के लिए पानी आवश्यक है, जो उनकी उपलब्धता और स्थिरता को प्रभावित करता है। कोयला और पेट्रोलियम के खनन और उत्पादन का अक्सर महत्वपूर्ण पर्यावरणीय

प्रभाव होता है, जिसमें जल प्रदूषण और कमी शामिल है। यह जल पुनर्चक्रण और उपचार, नीतिगत ढांचे और सामुदायिक सहभागिता के लिए नवीन तकनीकों सहित संधारणीय प्रबंधन के लिए संभावित रणनीतियों पर भी चर्चा करता है। जल और खनिज संसाधन, विशेष रूप से कोयला और पेट्रोलियम, आधुनिक समाज के लिए आधारभूत हैं, जो आर्थिक विकास और ऊर्जा उत्पादन को गति देते हैं। इन संसाधनों के बीच परस्पर क्रिया महत्वपूर्ण होते हुए भी जटिल है, क्योंकि पानी न केवल खनिजों के निष्कर्षण के लिए बल्कि उनके प्रसंस्करण और परिवहन के लिए भी आवश्यक है। कोयला और पेट्रोलियम निष्कर्षण प्रक्रियाओं का पर्यावरण पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है, जिससे पानी की खपत अधिक होती है। सतही खनन और गहरे खनन से भूजल प्रवाह प्रभावित होता है, जबकि हाइड्रो–फ्रैक्चरिंग (फ्रैकिंग) में तेल निकालने के लिए उच्च दबाव पर चट्टानों में पानी, रेत और रसायनों को इंजेक्ट करना शामिल है। दूसरी ओर, पंपिंग में खदानों से तेल निकालने के लिए पानी का उपयोग किया जाता है, जिससे पर्यावरणीय समस्याएं होती हैं। जल संसाधनों और स्थानीय पारिस्थितिकी पर इन प्रतिकूल प्रभावों को कम करने के लिए उचित जल प्रबंधन और प्रदूषण नियंत्रण उपाय महत्वपूर्ण हैं। खनिज संसाधनों से जुड़े पर्यावरणीय प्रभाव–जैसे प्रदूषण, आवास विनाश और पानी के लिए प्रतिस्पर्धा इन उद्योगों की स्थिरता को और जटिल बनाते हैं। पानी और खनिज संसाधनों पर यह दोहरी निर्भरता उनके परस्पर संबंध की व्यापक समझ को आवश्यक बनाती है।

खनिज प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले अकार्बनिक ठोस पदार्थ होते हैं, जिनकी रासायनिक संरचना और क्रिस्टल संरचना निर्धारित होती है। वे चट्टान के अवयव हैं, जो ग्रह पृथ्वी का एक ठोस सुसंगत टुकड़ा है। चट्टान के तीन वर्ग हैं: आग्नेय, अवसादी और रूपांतरित। आग्नेय चट्टानें लावा या मैग्मा नामक गर्म पिघली हुई चट्टान को ठंडा करके और ठोस बनाकर बनती हैं, जबकि अवसादी चट्टानें पृथ्वी की सतह पर जमा तलछट की परतों के सख्त होने या खनिज वर्षा द्वारा बनती हैं। रूपांतरित चट्टानें तब बनती हैं जब पृथ्वी के भीतर तीव्र गर्मी और दबाव के कारण पहले से मौजूद चट्टान में खनिजों का आकार या प्रकार बदल जाता है। अयस्क खनिजों के संवर्धन वाली चट्टान है जिसका खनन लाभ के लिए किया जा सकता है। अयस्क जमा सुंदर हो सकते हैं, जैसे कि मेक्सिको में क्रिस्टल की गुफा में विशाल जिप्सम क्रिस्टल। संवर्धन कारक, जो कि पृथ्वी की पपड़ी में उस धातु की औसत प्रचुरता पर एक आर्थिक अयस्क जमा के लिए आवश्यक धातु सांद्रता का अनुपात है। कुछ धातुओं, जैसे एल्युमिनियम और लोहे का खनन अपेक्षाकृत कम सांद्रता कारकों पर लाभदायक होता है, जबकि अन्य, जैसे सीसा और पारा, केवल बहुत अधिक सांद्रता कारकों पर ही लाभदायक होते हैं। वैश्वीकृत स्तर पर ऊर्जा और कच्चे माल की बढ़ती वैश्विक मांग मीठे पानी की प्रणालियों पर दबाव डाल रही है, जिससे पानी की गुणवत्ता और उपलब्धता को खतरा है। खनिज निष्कर्षण में असंवहनीय अभ्यास पारिस्थितिकी तंत्र और इन संसाधनों पर निर्भर समुदायों के लिए खतरा हैं। प्रस्तुत अध्ययन जल पुनर्चक्रण और उन्नत उपचार प्रौद्योगिकियों जैसे संधारणीय निष्कर्षण विधियों को बढ़ावा देने वाली नवीन रणनीतियों की आवश्यकता पर जोर देता है। संसाधन प्रतिस्पर्धा और पर्यावरणीय गिरावट को संबोधित करने के लिए प्रभावी नीतिगत ढाँचे और सामुदायिक सहभागिता भी महत्वपूर्ण हैं। स्थानीय समुदायों और पारिस्थितिकी तंत्रों में लचीलापन बढ़ाने के लिए खनिज निष्कर्षण की माँगों को जल संसाधन संरक्षण के साथ संतुलित करना आवश्यक है। संसाधन प्रबंधन प्रथाओं को एकीकृत करने से जल और खनिज संसाधनों का कुशल और जिम्मेदार उपयोग सुनिश्चित होता है, जिससे पर्यावरणीय प्रभावों को कम करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के लिए उनकी उपलब्धता सुनिश्चित

होती है। संधारणीय प्रबंधन एक अधिक न्यायसंगत और पर्यावरण की दृष्टि से स्वस्थ भविष्य की ओर एक मार्ग है।

## 3.2 जल संसाधन

जल संसाधन मानव अस्तित्व, कृषि, उद्योग और पारिस्थितिकी तंत्र के लिए महत्वपूर्ण हैं। जल संसाधन प्रबंधन में चुनौतियों में कमी, प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन और वितरण शामिल हैं। सतत प्रबंधन प्रथाओं में जल संरक्षण, वर्षा जल संचयन और एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन (IWRM) शामिल हैं। इन चुनौतियों और रणनीतियों को समझकर, हम भविष्य की पीढ़ियों के लिए जल संसाधनों को संरक्षित करने की दिशा में काम कर सकते हैं। जल संसाधनों का प्रभावी प्रबंधन एक स्थायी भविष्य के लिए महत्वपूर्ण है, और उनके महत्व, चुनौतियों और प्रबंधन रणनीतियों को समझने से भविष्य की पीढ़ियों के लिए इस महत्वपूर्ण संसाधन को संरक्षित करने में मदद मिल सकती है।

### 3.2.1 जल संसाधन के प्रकार

जल संसाधन कई प्रकार के होते हैं, जो मानव जीवन, कृषि, उद्योग और पारिस्थितिकी के लिए आवश्यक हैं। यहाँ जल संसाधनों के प्रमुख प्रकारों का वर्णन किया गया है:

### 3.2.2 सतही जल संसाधन

भारत में जल संसाधन बारिश या बर्फ से आते हैं, सतही जल के चार मुख्य स्रोत हैं: नदियाँ, झीलें, तालाब और झीलें। नदियाँ सतही जल का मुख्य स्रोत हैं, जिनका प्रवाह जलग्रहण क्षेत्र के आकार और वर्षा से प्रभावित होता है। भारत के पहाड़ों से बर्फ पिघलकर गर्मियों के दौरान नदियों में बह जाती है। पानी छह नदी घाटियों सिंधु, गंगा, ब्रह्मपुत्र, पूर्वी तट की नदियाँ, पश्चिमी तट की नदियाँ, अंतर्देशीय बेसिन और भूजल संसाधन में वितरित किया जाता है। सतही जल पूरी तरह से वर्षा पर निर्भर है, सभी नदी घाटियों में अनुमानित वार्षिक प्रवाह 1,869 बीसीएम है।

### 3.2.3 अंतर्देशीय जल संसाधन

अंतर्देशीय जल संसाधन किसी देश के भूभाग के भीतर मीठे पानी के निकाय हैं, जो पारिस्थितिकी तंत्र को बनाए रखने, कृषि का समर्थन करने, पीने का पानी उपलब्ध कराने और आर्थिक गतिविधियों को सुविधाजनक बनाने के लिए आवश्यक हैं। इन संसाधनों में नदियाँ, झीलें, फली, आर्द्रभूमि और जलाशय शामिल हैं। नदियाँ सिंचाई, परिवहन और जलविद्युत के लिए महत्वपूर्ण हैं, जबकि झीलें पीने के पानी, मनोरंजन और वन्यजीवों के आवास के लिए जलाशय के रूप में काम करती हैं। तालाब छोटे जल निकाय हैं, जो अक्सर कृषि या वन्यजीव संरक्षण के लिए मानव निर्मित होते हैं, और स्थानीय जैव विविधता के लिए आवश्यक होते हैं। आर्द्रभूमि, जहाँ पानी मिट्टी को ढँकता है या सतह के पास होता है, प्राकृतिक फिल्टर के रूप में कार्य करते हैं और जैव विविधता के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। नदियों पर बाँध बनाकर बनाए गए मानव निर्मित झीलों, रिजर्व का उपयोग जल आपूर्ति, बाढ़ नियंत्रण और जलविद्युत उत्पादन के लिए किया जाता है। अंतर्देशीय जल संसाधन कृषि, पीने के पानी की आपूर्ति, जैव विविधता, मनोरंजन और आर्थिक गतिविधियों के लिए महत्वपूर्ण हैं। चुनौतियों में प्रदूषण, अत्यधिक निष्कर्षण और जलवायु परिवर्तन शामिल हैं। पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने, आजीविका का समर्थन करने और भावी पीढ़ियों के लिए एक विश्वसनीय जल आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए इन संसाधनों का सतत प्रबंधन आवश्यक है।

### 3.2.4 महासागरीय जल संसाधन

पृथ्वी की सतह के %71 हिस्से को कवर करने वाले महासागरीय जल संसाधन वैश्विक पारिस्थितिकी तंत्र, जलवायु विनियमन और अर्थव्यवस्था के लिए आवश्यक हैं। वे समुद्री जीवन, मछली पकड़ने, शिपिंग और पर्यटन का समर्थन करते हैं। महासागर मछली और समुद्री भोजन का एक समृद्ध स्रोत प्रदान करते हैं, जो दुनिया भर में लाखों लोगों के लिए आजीविका और खाद्य सुरक्षा का समर्थन करते हैं। उनमें नमक, मैग्नीशियम और धातु जैसे मूल्यवान खनिज होते हैं, जिन्हें खनन कार्यों के माध्यम से काटा जा सकता है। महासागर ज्वार, लहर और अपतटीय पवन ऊर्जा के माध्यम से नवीकरणीय ऊर्जा भी प्रदान करते हैं। वे शिपिंग मार्गों के माध्यम से वैश्विक व्यापार की सुविधा प्रदान करते हैं, दुनिया भर की अर्थव्यवस्थाओं को जोड़ते हैं। तटीय और समुद्री वातावरण स्नॉर्कलिंग, डाइविंग और समुद्र तट की छुट्टियों जैसी गतिविधियों के लिए लाखों पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। महासागर मछली पकड़ने, पर्यटन, शिपिंग और ऊर्जा उत्पादन के माध्यम से वैश्विक जैव विविधता, जलवायु विनियमन और आर्थिक मूल्य में योगदान करते हैं। चुनौतियों में अत्यधिक मछली पकड़ना, प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन शामिल हैं। समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा, अर्थव्यवस्थाओं का समर्थन करने और हमारे ग्रह के स्वास्थ्य को सुनिश्चित करने के लिए महासागरीय जल संसाधनों का सतत प्रबंधन महत्वपूर्ण है। इन चुनौतियों का समाधान करना भविष्य की पीढ़ियों के लिए आवश्यक है।

### 3.2.5 भूजल संसाधन

भूजल, एक प्रकार का पानी जो चट्टानों और मिट्टी से रिसता है, मुख्य रूप से भारत में उपयोग किया जाता है, जो दुनिया का सबसे बड़ा उपयोगकर्ता है। हालाँकि, भूजल का वितरण एक समान नहीं है, जो चट्टान की संरचना, सतह की स्थिति और जल आपूर्ति जैसे कारकों से प्रभावित होता है। भारत में तीन क्षेत्रों ने भूमिगत जल की उपलब्धता की पहचान की हैरू उत्तरी मैदान, प्रायद्वीपीय पठार और तटीय मैदान। केंद्रीय भूजल बोर्ड की रिपोर्ट है कि 4/3 भूमिगत जल का उपयोग सिंचाई के लिए किया जाता है, जबकि 4/1 का उपयोग औद्योगिक उद्देश्यों के लिए किया जाता है। भूजल का उपयोग विशेष रूप से पंजाब, हरियाणा, राजस्थान और दक्षिणी भारत जैसे उत्तर–पश्चिमी क्षेत्रों में अधिक है। देश का कुल वार्षिक भूजल पुनर्भरण 436.15 बीसीएम है, जिसमें 397.62 बीसीएम का निष्कर्षण योग्य भूजल संसाधन है। 2020 तक, वार्षिक भूजल दोहन 244.92 बीसीएम है।

### 3.2.6 जल संचयन

जल एक महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है, जो सभी जीवित प्राणियों और पारिस्थितिकी तंत्रों के लिए आवश्यक है। जलवायु परिवर्तन–आधारित जल दृष्टि असमानता के कारण वैश्विक जल संकट और भी गंभीर हो गया है। जलग्रहण क्षेत्रों में वर्षा जल संचयन इस समस्या का एक स्थायी समाधान है। भारत में केवल %50 कृषि भूमि में उचित सिंचाई सुविधाएँ हैं, और शेष %50 वर्षा जल पर निर्भर है। कृषि समुदाय को आत्मनिर्भर बनाने के लिए, वर्षा पर निर्भरता कम करनी होगी। वर्षा जल संचयन भारत में कृषि को काफी लाभ पहुँचा सकता है, जो देश के %80 पानी का उपयोग करता है। कृषि में अच्छा जल प्रबंधन भविष्य की फसल की पैदावार और समग्र फसल की गुणवत्ता के लिए महत्वपूर्ण है। वर्षा जल संचयन वर्षा जल पर निर्भरता को कम करने और कृषि की समग्र उपज में सुधार करने में मदद कर सकता है।

### शहरी भारत में बढ़ती जल संबंधी चिंताएँ

भारत दुनिया में भूजल का सबसे बड़ा उपयोगकर्ता है, जहाँ कई शहर दैनिक जरूरतों के लिए इस पर बहुत ज्यादा निर्भर हैं। हालाँकि, तेजी से हो रहे शहरीकरण, जनसंख्या वृद्धि और

अपर्याप्त जल संसाधन प्रबंधन के कारण भूजल स्तर में तेजी से गिरावट आई है, खास तौर पर हैदराबाद, दिल्ली, जालंधर, जैसलमेर, अमृतसर, गुरुग्राम, जयपुर, जोधपुर, नागपुर, चेन्नई और बेंगलुरु जैसे शहरों में। इस अत्यधिक उपयोग के कारण जलभृत में कमी आई है, खारे पानी का रिसाव हुआ है और यहाँ तक कि कुछ क्षेत्रों में भूमि धंस गई है।

**शहरी क्षेत्रों में भूजल संसाधनों का अत्यधिक दोहन**

| शहर | GW का% उपयोग /GW रिचार्ज | शहर | GW का % उपयोग /GW रिचार्ज |
|---|---|---|---|
| हैदराबाद | 294.48 | जयपुर | 219.83 |
| दिल्ली | 360 | जोधपुर | 218.6 |
| जालंधर | 472.16 | अमृतसर | 363 |
| जैसलमेर | 292.85 | चेन्नई | 171.88 |
| गुरुग्राम | 299.8 | बैंगलुरु | 143.81 |

Source: CGWB, 2022

जनसंख्या वृद्धि, आर्थिक विकास और बदलते उपभोग पैटर्न के कारण भारत में भूजल निष्कर्षण बढ़ने की उम्मीद है। स्थायी जल प्रबंधन सुनिश्चित करते हुए इस मांग का प्रबंधन करना एक महत्वपूर्ण चुनौती है। विभिन्न क्षेत्रों में भविष्य की जल मांगों को पूरा करने के लिए जल संरक्षण, कुशल उपयोग, पुनर्चक्रण और एकीकृत संसाधन प्रबंधन जैसी रणनीतियाँ आवश्यक हैं।

**प्रमुख शहरों में भूजल दोहन का चरण**

भूजल संसाधनों के राष्ट्रीय संकलन– 2022के अनुसार, भारत के दो बड़े महानगर–बेंगलुरु और चेन्नई अति–दोहन अवस्था में हैं, जबकि तीन अन्य– दिल्ली, हैदराबाद और कोलकाता गंभीर अवस्था में हैं, जो %100के करीब है। पुणे और अहमदाबाद अर्ध–गंभीर अवस्था में हैं। रिपोर्ट में मुंबई के बारे में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं थी।

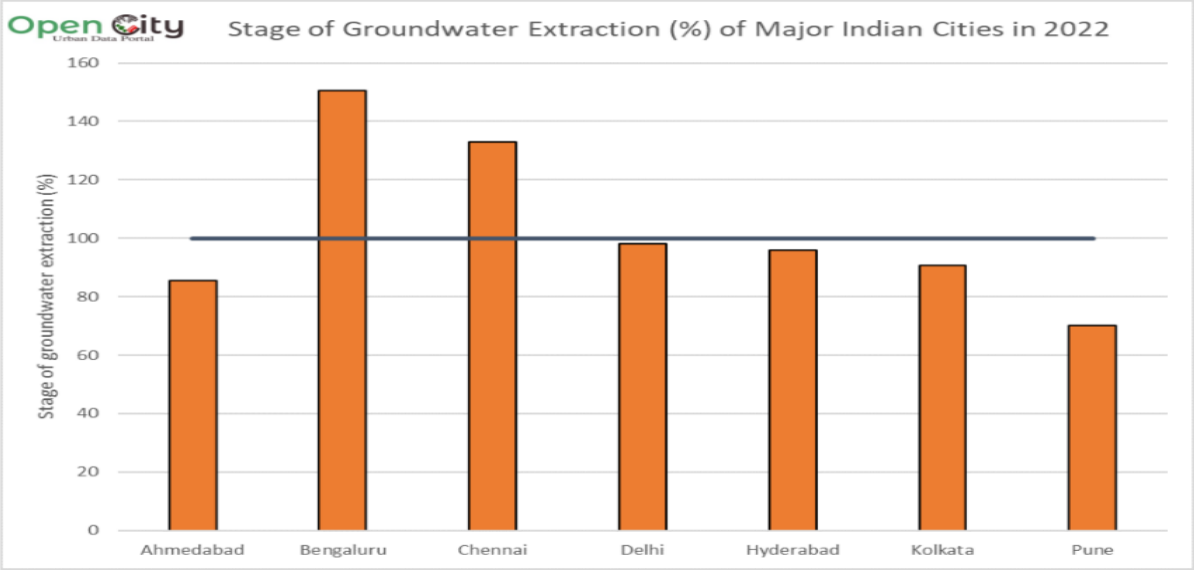


Stage of groundwater extraction in Indian cities. Source: Groundwater compilation, 2022.

उपयोग के संदर्भ में, अलग–अलग शहर अलग–अलग उद्देश्यों के लिए भूजल का उपयोग करते हैं। चेन्नई, दिल्ली और हैदराबाद में निकाले जाने वाले अधिकांश भूजल का उपयोग घरेलू उद्देश्यों के लिए किया जाता है, जबकि पुणे, अहमदाबाद और बेंगलुरु में सिंचाई (कृषि)

के लिए इसका उपयोग सबसे ज़्यादा होता है। पुणे में कृषि के लिए उपयोग इतना ज़्यादा है कि इसके बिना एक अलग चार्ट बनाया जा सकता है!

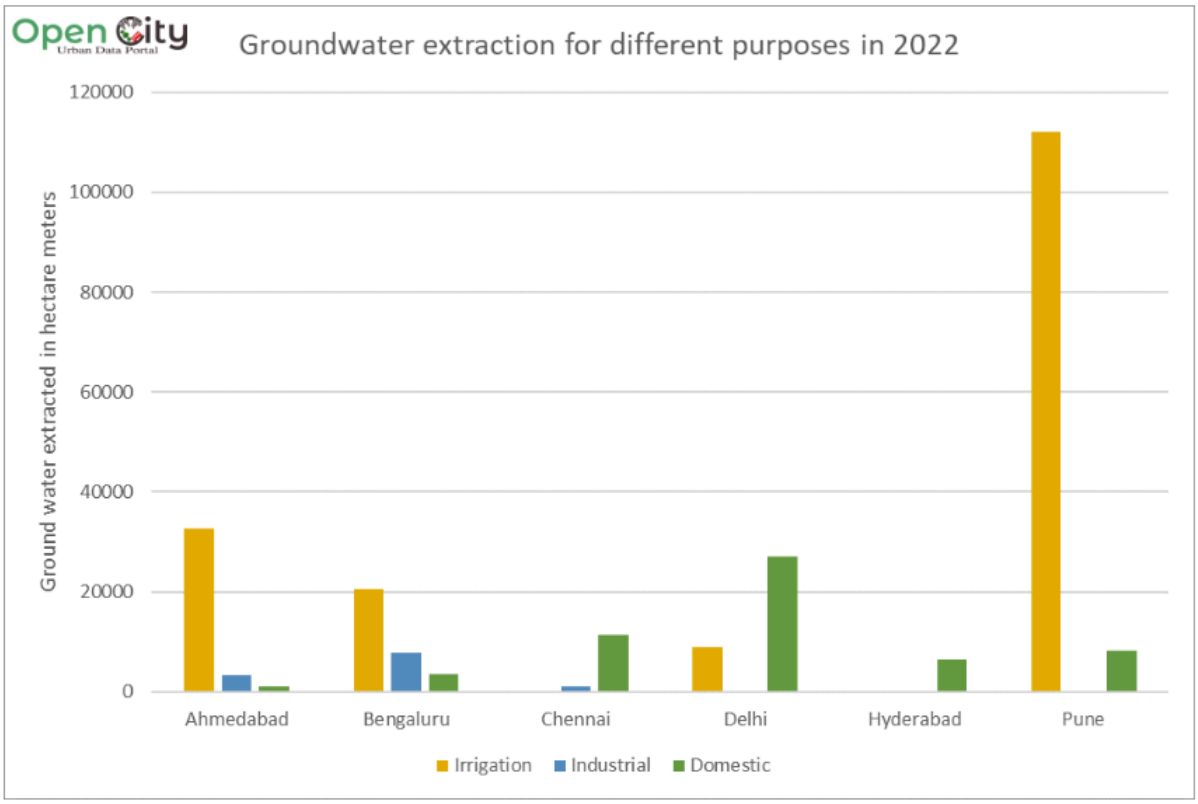


Usage of groundwater in 2022. Src: Groundwater compilation, 2022.

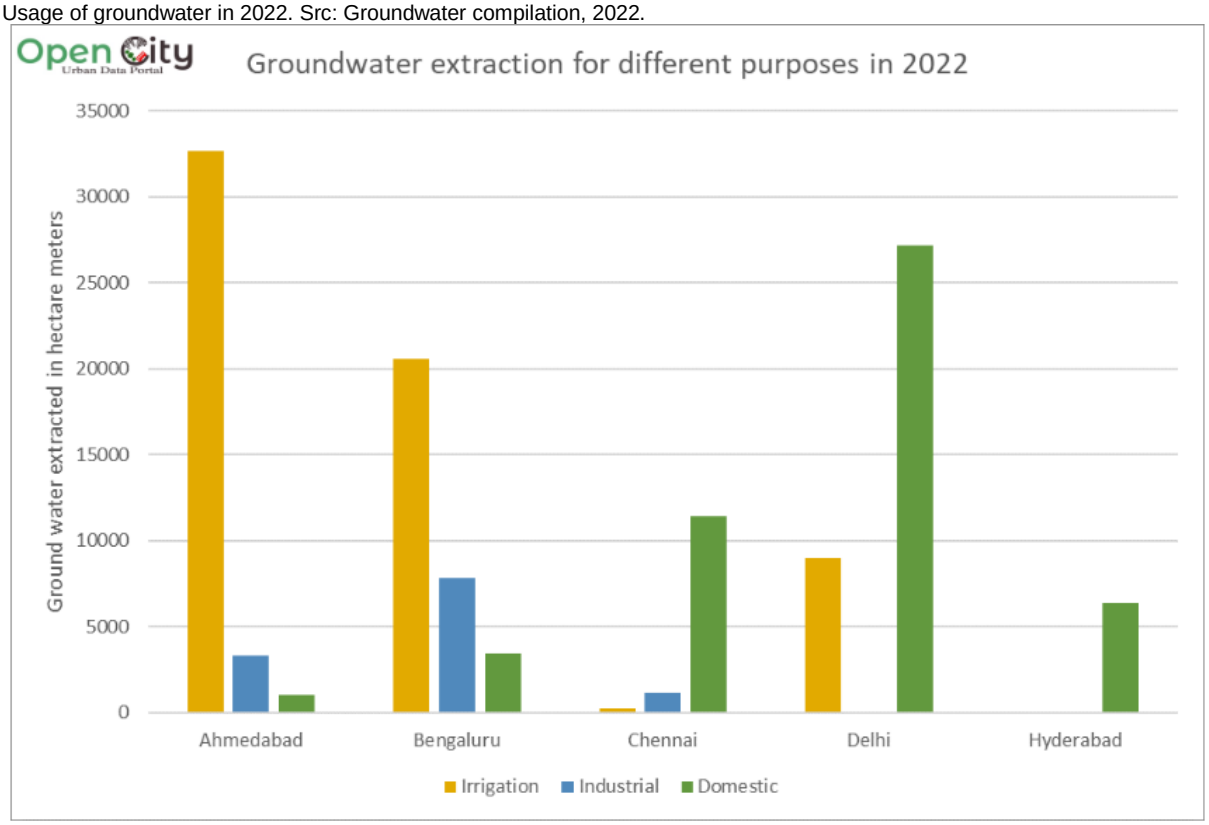


सिंचाई के लिए उच्च उपयोग एक जिले के भीतर गांवों की उपस्थिति का एक कारक है। चेन्नई, दिल्ली और हैदराबाद के मामले में, नगर निगम क्षेत्र लगभग पूरे जिले को कवर करता

है, जबकि बेंगलुरु शहरी, अहमदाबाद और पुणे जिलों के मामले में, जिला नगर परिषद की सीमाओं से बहुत बड़ा क्षेत्र कवर करता है जहाँ अभी भी ऐसे गाँव हैं जो अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर हैं। अधिकांश शहरों में उद्योगों की मौजूदगी के बावजूद, केवल बेंगलुरु और अहमदाबाद में घरेलू उपयोग से अधिक उपयोग है।

केवल घरेलू उपयोग को देखें तो दिल्ली सबसे ऊपर है, उसके बाद चेन्नई, पुणे और हैदराबाद हैं। लोकप्रिय धारणा के बावजूद घरेलू उपयोग के मामले में बेंगलुरु अन्य महानगरों से काफी पीछे है। इसका मुख्य कारण बेंगलुरु के अधिकांश क्षेत्रों में कावेरी जल की आपूर्ति है।

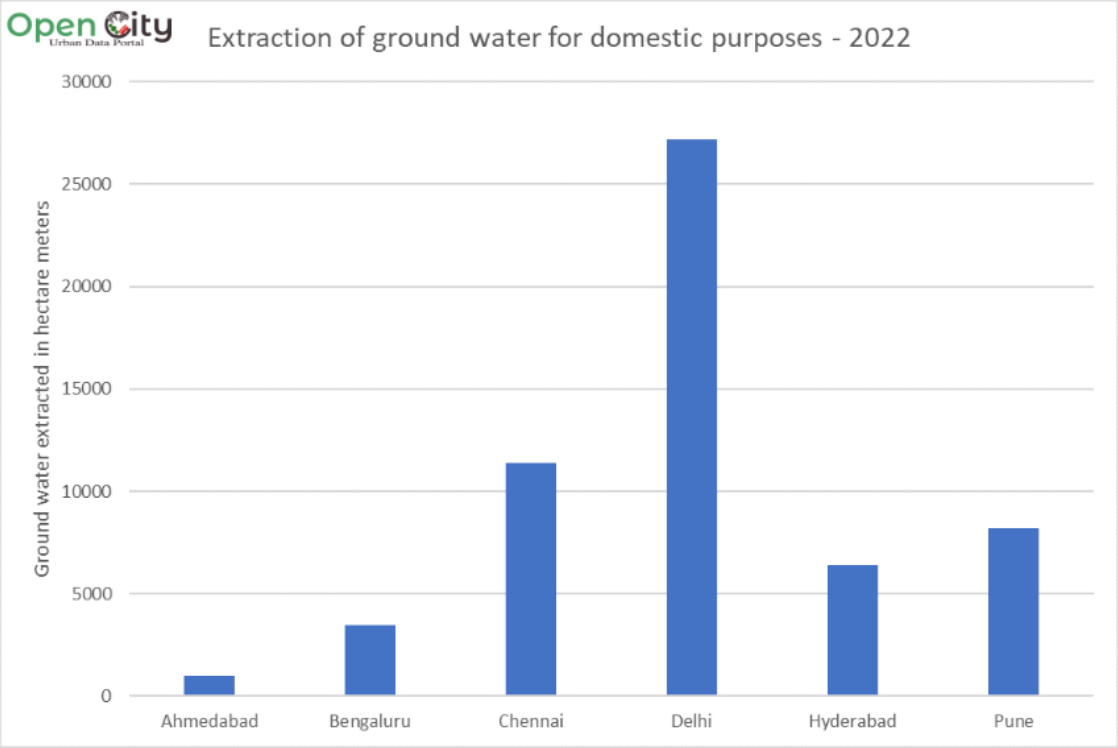


Groundwater extracted for domestic purposes. Src: Groundwater compilation, 2022.

## 3.3 खनिज संसाधन

खनिज संसाधन पृथ्वी की सतह के नीचे प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले पदार्थ हैं, जो विभिन्न उद्योगों और तकनीकी उद्देश्यों के लिए निकाले जाते हैं। ये संसाधन आधुनिक समाज के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जिन्हें विभिन्न औद्योगिक, आर्थिक और तकनीकी उद्देश्यों के लिए निकाला और उपयोग किया जाता है। वे आर्थिक विकास, रोजगार सृजन और तकनीकी उन्नति के लिए आवश्यक हैं। लोहा, तांबा, एल्युमिनियम, सोना और चांदी जैसे धात्विक खनिजों का उपयोग निर्माण, इलेक्ट्रॉनिक्स और आभूषणों में किया जाता है। चूना पत्थर, जिप्सम और मिट्टी जैसे गैर–धात्विक खनिजों का उपयोग निर्माण, कृषि और रासायनिक उद्योगों में किया जाता है। कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस जैसे जीवाश्म ईंधन सहित ऊर्जा खनिज ऊर्जा उत्पादन और बिजली उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण हैं। रेत, बजरी और तालक जैसे औद्योगिक खनिजों के निर्माण और सौंदर्य प्रसाधनों में विविध अनुप्रयोग हैं। हालाँकि, खनिज संसाधन प्रबंधन में चुनौतियों में पर्यावरणीय प्रभाव, स्थिरता, विनियमन और नीति शामिल हैं। संधारणीय प्रबंधन प्रथाओं में जिम्मेदार खनन, पुनर्चक्रण और अनुसंधान और नवाचार शामिल हैं। इन संसाधनों के प्रकार, महत्व और प्रबंधन चुनौतियों को समझना वर्तमान

और भविष्य की पीढ़ियों को लाभ पहुँचाने वाली संधारणीय प्रथाओं को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण है।

### 3.4 कोयला एवं पेट्रोलियम संरक्षण

औद्योगिक क्रांति के बाद से कोयला और पेट्रोलियम ऊर्जा उत्पादन के प्राथमिक स्रोत रहे हैं। कोयला मुख्य रूप से खनिज उद्योग में उपयोग किया जाता है और यह तलछटी चट्टानों से प्राप्त होता है, जबकि पेट्रोलियम इन चट्टानों से प्राप्त तेल है। जलवायु में उतार–चढ़ाव के कारण अलास्का और साइबेरिया में कोयला प्रचुर मात्रा में है, जबकि उत्तरी कनाडा और ग्रीनलैंड में जलवायु–पूर्व चट्टानों के कारण कोयले की कमी है। दूसरी ओर, पेट्रोलियम तलछटी घाटियों और समुद्रों में पाया जाता है और इसका मूल जैविक है। भारत के अधिकांश तेल भंडार 3 मिलियन वर्ष पुराने तृतीयक तलछटी चट्टान संरचनाओं में एंटीक्लाइन और फॉल्ट ट्रैप से जुड़े हैं। प्राकृतिक गैस और तेल समुद्री तलछट में वनस्पति और पशु मलबे से प्राप्त होते हैं, जो प्रचुर भूमि और जलीय जीवन की अवधि के दौरान बनते हैं। तेल निर्माण की स्थितियाँ निचले और मध्य तृतीयक काल के दौरान अनुकूल थीं, जब घने जंगल और समुद्री जीव खाड़ी, मुहाना, डेल्टा और आसपास की भूमि में पनपते थे। तेल का निर्माण तलछटी चट्टानों में कार्बनिक पदार्थों के टूटने के कारण होता है।

भारत के वाणिज्यिक कोयला खनन को इसकी शुरुआत से ही घरेलू खपत आवश्यकताओं द्वारा विनियमित किया गया है। देश में दुनिया का पाँचवाँ सबसे बड़ा कोयला भंडार है, जिसमें भंडार में 1.%23 की वृद्धि हुई है। पूर्वी और दक्षिण–मध्य भारत में सबसे अधिक कोयला भंडार है, जिसमें से 98.%26 झारखंड, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, तेलंगाना, महाराष्ट्र, ओडिशा और पश्चिम बंगाल में पाए जाते हैं। भारत में कोयले से प्राप्त ऊर्जा तेल से प्राप्त ऊर्जा से दोगुनी महंगी है और दुनिया भर में %30 सस्ती है। भारत की तलछटी चट्टानों में तेल का एक महत्वपूर्ण भंडार है, जिसका अनुमान 1982 में 468 मिलियन टन था। हालाँकि, 2002 तक केवल 7.2 बिलियन टन हाइड्रोकार्बन भंडार की पहचान की गई थी। तेल ज्ञात हाइड्रोकार्बन भंडार का लगभग %70 बनाता है, जबकि गैस शेष बनाती है। 2.6 बिलियन टन प्राप्त करने योग्य हाइड्रोकार्बन भंडार हैं। कोयले का उपयोग कोक निर्माण, रासायनिक उत्पादन और भाप उत्पादन के लिए किया जाता है। चीन के आर्थिक विस्तार द्वारा संचालित, 2012 में वैश्विक कोयले का उपयोग चरम पर था। तब से, कोयले का उपयोग कम हो गया है, देश के अन्य हिस्सों में कोयले की जगह प्राकृतिक गैस ने ले ली है। तेल, तेल और गैसोलीन जैसे पेट्रोलियम उत्पादों का आमतौर पर ऊर्जा वाहक के रूप में उपयोग किया जाता है, जिसमें गैसोलीन, जेट ईंधन, हीटिंग ऑयल और डीजल ईंधन सबसे आम हैं। दुनिया में प्रतिदिन 90 मिलियन बैरल तेल की खपत होती है।

कोयला और पेट्रोलियम जैसे जीवाश्म ईंधनों का संरक्षण बहुत जरूरी है क्योंकि इनके अत्यधिक उपयोग से पर्यावरण संबंधी समस्याएँ पैदा होती हैं। इन संसाधनों को संरक्षित करने के लिए हम ऊर्जा दक्षता, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत, पुनर्चक्रण और प्रदूषण नियंत्रण तकनीक जैसे उपायों को लागू कर सकते हैं। पेट्रोलियम संरक्षण के लिए हम इलेक्ट्रिक वाहनों और हाइड्रोजन आधारित तकनीकों का उपयोग करके पेट्रोलियम आधारित ईंधनों के उपयोग को कम कर सकते हैं। सार्वजनिक परिवहन को बढ़ावा देना और उच्च ईंधन दक्षता वाले वाहनों का चयन करना भी मदद कर सकता है। वाहनों के नियमित रखरखाव से भी उनकी दक्षता बढ़ सकती है। कोयला और पेट्रोलियम के संरक्षण के महत्व के बारे में लोगों में जागरूकता बढ़ाई जा सकती है और सरकारें ऊर्जा संरक्षण के लिए नीतियाँ और नियम बना सकती हैं।

अनुसंधान और विकास में निवेश करने से हमें एक स्थायी भविष्य की ओर बढ़ने में मदद मिल सकती है।

कोयला और पेट्रोलियम जैसे जीवाश्म ईंधन विभिन्न उद्योगों के लिए आवश्यक हैं। कोयला, तलछटी परतों में पाया जाने वाला एक कार्बन–समृद्ध यौगिक, एक प्राथमिक जीवाश्म ईंधन है, जिसमें %50 से अधिक कार्बनयुक्त पदार्थ होते हैं। पेट्रोलियम, भारत का दूसरा सबसे बड़ा ऊर्जा स्रोत, एक खनिज तेल है। यह विनिर्माण व्यवसायों के लिए गर्मी, प्रकाश, कच्चा माल और स्नेहक प्रदान करता है। भारत में अधिकांश तृतीयक युग की चट्टानें पेट्रोलियम खोजों के लिए उपयुक्त स्थान बनती हैं। इसके अलावा, भारत के विभिन्न क्षेत्र जैसे असम, मुंबई उच्च समुद्र क्षेत्र और कर्नाटक में ये संरचनाएँ महत्वपूर्ण तेल भंडार प्रदान करती हैं। इन क्षेत्रों में भूविज्ञान का अध्ययन और खोजबीन करते समय इन संरचनाओं की पहचान करना आवश्यक है।

**भारत में खनिज उत्पादन में स्थिर वृद्धि की उम्मीद**

भारतीय खान ब्यूरो (आईबीएम) के अनुसार, जनवरी 2024में भारत के खनन और उत्खनन क्षेत्र में 5. %9की वृद्धि हुई, जो 144. 1तक पहुंच गई। अप्रैल 2023से जनवरी 2024तक संचयी वृद्धि दर भी 8. %3पर उत्साहजनक है, जो खनिज निष्कर्षण में सकारात्मक प्रवृत्ति को दर्शाता है। कोयला, चूना पत्थर, बॉक्साइट, मैंगनीज अयस्क और प्राकृतिक गैस जैसे प्रमुख खनिजों ने क्रमशः 9.%8,7 . %8और 5. %5की वृद्धि दर दिखाई। मैग्नेटाइट और कॉपर कंसंट्रेट में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई, जिसमें मैग्नेटाइट में 90. %1की वृद्धि और कॉपर कंसंट्रेट में 34. %2 की वृद्धि हुई। हालांकि, सोने के उत्पादन में 23. %4की कमी आई, जबकि क्रोमाइट और फॉस्फोराइट उत्पादन में क्रमशः 35. %2और 44. %4की गिरावट आई। इन असफलताओं के बावजूद, खनन और उत्खनन क्षेत्र का समग्र प्रदर्शन सकारात्मक बना हुआ है, तथा कोयला और प्राकृतिक गैस उत्पादन में वृद्धि भारत की ऊर्जा सुरक्षा और आर्थिक विकास के लिए शुभ संकेत है।

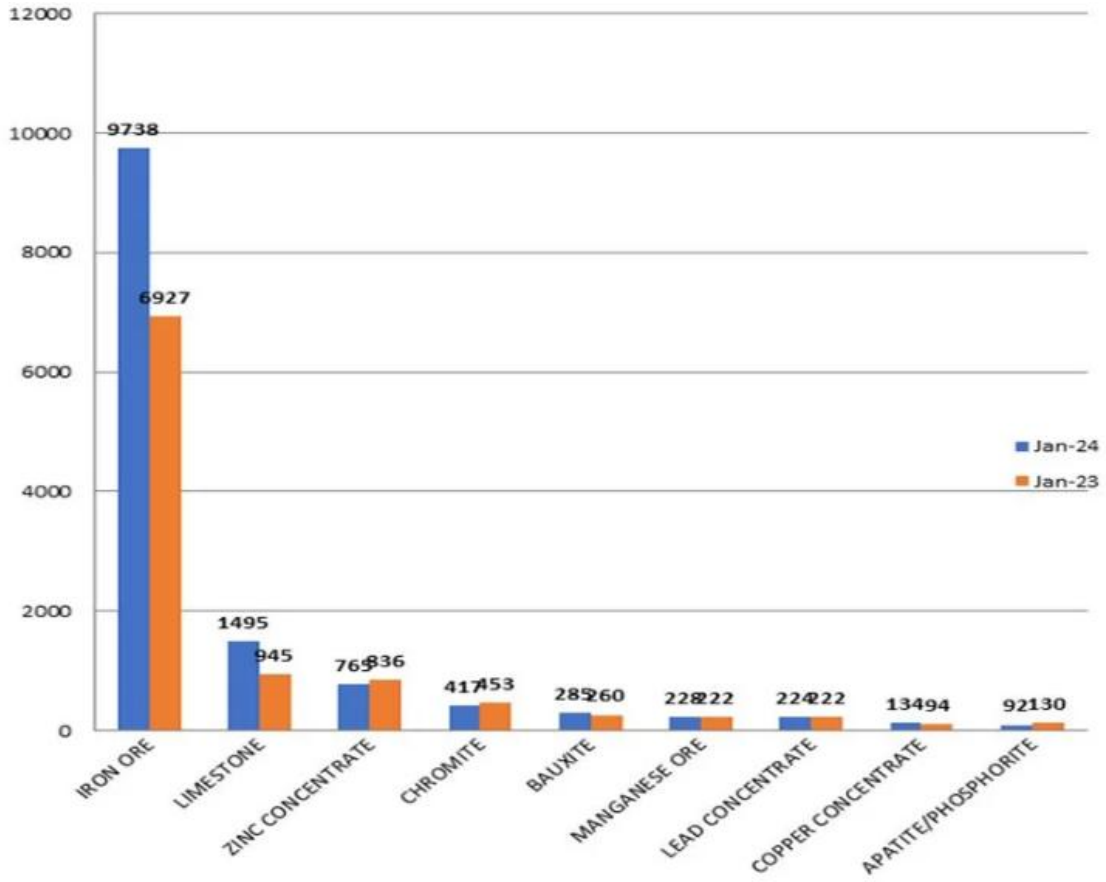


https://energyasia.co.in/mining/mineral-production-in-india-sees-steady-growth-in-january-2024/

## 3.5 सारांश

जल और खनिज संसाधन हमारे ग्रह की प्राकृतिक संपदा के लिए महत्वपूर्ण हैं, जो कृषि, उद्योग, ऊर्जा उत्पादन और तकनीकी प्रगति जैसी विभिन्न मानवीय गतिविधियों का समर्थन करते हैं। हालाँकि, बढ़ती माँग, प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन स्थायी जल प्रबंधन के लिए चुनौतियाँ पेश करते हैं। भविष्य की पीढ़ियों के लिए जल उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए संरक्षण, वर्षा जल संचयन और एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन जैसी रणनीतियाँ आवश्यक हैं। कोयला और पेट्रोलियम जैसे खनिज संसाधन ऊर्जा उत्पादन और निर्माण के लिए आवश्यक हैं, लेकिन इनका पर्यावरण पर महत्वपूर्ण प्रभाव हो सकता है। इन प्रभावों को कम करने के लिए जिम्मेदार खनन, पुनर्चक्रण और वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों जैसी स्थायी प्रथाएँ आवश्यक हैं। जल और खनिज संसाधनों का प्रबंधन आपस में जुड़ा हुआ है, खनन गतिविधियाँ स्थानीय जल आपूर्ति को प्रभावित करती हैं और ऊर्जा क्षेत्र निष्कर्षण और प्रसंस्करण के लिए पानी पर बहुत अधिक निर्भर करता है। पर्यावरणीय और सामाजिक निहितार्थों पर विचार करते हुए एक समग्र दृष्टिकोण आवश्यक है। जल और खनिज संसाधनों का स्थायी प्रबंधन पर्यावरणीय स्वास्थ्य, आर्थिक स्थिरता और सामाजिक समानता को बढ़ावा देता है। जिम्मेदार प्रथाओं को प्राथमिकता देना और नवाचार में निवेश करना भविष्य की पीढ़ियों के लिए इन संसाधनों की सुरक्षा कर सकता है, जिससे मानवीय आवश्यकताओं और प्राकृतिक पर्यावरण के बीच संतुलित सह–अस्तित्व सुनिश्चित हो सकता है।

## 3.6 बोध प्रश्न–

## 3.7 अभ्यासार्थ प्रश्न–

- जल संसाधन से आप क्या समझते हैं ?
- जल संसाधन के प्रकार की विवेचना कीजिए।
- सतही जल संसाधन से आप क्या समझते हैं ?
- अंतर्देशीय जल संसाधन से आप क्या समझते हैं ?
- महासागरीय जल संसाधन से आप क्या समझते हैं ?
- भूजल संसाधन से आप क्या समझते हैं ?
- जल संचयन से आप क्या समझते हैं ?
- कोयला एवं पेट्रोलियम संरक्षण की विवेचना कीजिए।

## 3.8 संदर्भ ग्रन्थ एवं उपयोगी पुस्तकें


- **https://hindi.indiawaterportal.org/articles/jal-sansadhan-ka-arth-aur-prakar**
- **Gleick, P. H. (1993).** "Water in Crisis: A Guide to the World's Fresh Water Resources." Oxford University Press.
- M. S. M. Pahl-Wostl, (2007). "Transitions towards adaptive management of water facing climate and global change." Water Resources Management, 21(1), 1-16.'
- Sullivan, R. (2013). "The Role of Minerals in the Economy: A Global Perspective." Mineral Economics, 26(1), 1-11.
- R. J. Smith & J. S. O. Wong (2018). "Integrated Water and Mineral Resources Management: A Guide for Practitioners." Springer.
- Prashant Hindurao Kamble , Jaydeep Suresh Kumbhar, An Overview of Impact of Coal Mining On Water Resources, International Journal of Scientific Research in Review Paper . Multidisciplinary Studies, Vol.5, Issue.12, pp.115-121, December (2019)
- Singh R N, Dharmappa H B, Sivakumar M, 1998, "Study of waste water quality management in Illawara coal mines", Coal Conference, University of Wollongong, pp: 456-473
- Xu L J and Gao Y M, 2009, "Coal mine subsided water quality assessment and subsided water resource comprehensive utilization analysis", International Conference on Environmental Science and Information Application Technology, pp: 225-228.
- Carlos V M, Pompeo M L M, Lobo F L, 2011, "Impact of coal mining on water quality of three artificial lakes in Morozini River Basin", Actd Limnologica Bratsiliensid, Vol. 23, pp: 271-281.
- Hancock S and Wolkersdorfer C 2012 Renewed demands for mine water management Mine Water and the Environment 31 147. https://doi.org/10.1007/s10230-012-0176-6

# इकाई–04

## ऊर्जा संसाधन, पवन शक्ति, ज्वार भाटा, प्राकृतिक गैस, जैविक ईंधन, सौर ऊर्जा, आणविक ईंधन आदि

**इकाई की रूपरेखा**

4.0 उदेश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 ऊर्जा संसाधन
4.3 पवन शक्ति
4.4 ज्वार भाटा
4.5 प्राकृतिक गैस
4.6 जैविक ईधन
4.7 सौर ऊर्जा
4.8 आणविक ईधन
4.9 सारांश
4.10 बोध प्रश्न
4.11 उपयोगी पुस्तकें

### 4.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में अध्ययन से हम निम्न विषयों को जानने एवं समझने में सक्षम होंगे।

- ऊर्जा संसाधन, आशय, स्रोत, महत्व एवं प्रकार।
- पवन शक्ति, आशय, महत्व, लाभ एवं भारत में उर्जा कम्पनियों की स्थिति।
- ज्वार भाटा, विभिन्न क्षेत्रों में ज्वार–भाटा का महत्व।
- प्राकृतिक गैस, आशय, महत्व प्राकृतिक गैस के संदर्भ में भारत की जलवायु नेति, गैस की खपत, गैस–बाजार एवं भण्डार।
- जैविक ईधन, आशय एवं महत्व।
- सौर ऊर्जा, आशय, महत्व, एवं भारत में सौर उर्जा की स्थिति।
- आणविक ईधन, आशय, महत्व एवं आणविक उर्जा स्टेशन।

### 4.1 प्रस्तावना

विभिन्न ऊर्जा संसाधन, पवन ऊर्जा, ज्वारीय धाराएँ, प्राकृतिक गैस, जैव ईंधन, सौर ऊर्जा और परमाणु ईंधन सहित नवीकरणीय और गैर–नवीकरणीय स्रोतों पर हम ध्यान केंद्रित करते हैं। जैसे–जैसे वैश्विक ऊर्जा की माँग बढ़ती है, जलवायु परिवर्तन को कम करने और ऊर्जा सुरक्षा को बढ़ावा देने के लिए संधारणीय ऊर्जा प्रणालियों में परिवर्तन तेजी से महत्वपूर्ण होता जाता है। पवन और सौर ऊर्जा नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्र के प्रमुख स्तंभों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जबकि ज्वारीय धाराएँ समुद्री ऊर्जा का दोहन करने का एक अनूठा अवसर प्रदान करती हैं। प्राकृतिक गैस कोयले और तेल की तुलना में कम उत्सर्जन के साथ एक संक्रमणकालीन ईंधन के रूप में कार्य करती है, लेकिन इसका निष्कर्षण और खपत पर्यावरण संबंधी चिंताओं को बढ़ाती है। जैव ईंधन परिवहन में ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लिए एक विकल्प

प्रस्तुत करते हैं, हालाँकि वे भूमि उपयोग और खाद्य सुरक्षा से संबंधित चुनौतियाँ भी पेश करते हैं। परमाणु ईंधन एक कम कार्बन ऊर्जा स्रोत प्रदान करता है, फिर भी सुरक्षा और अपशिष्ट प्रबंधन के मुद्दे महत्वपूर्ण बने हुए हैं। प्रस्तुत अध्ययन प्रत्येक ऊर्जा संसाधन से जुड़ी क्षमता, चुनौतियों और नवाचारों का मूल्यांकन करता है, एक विविध ऊर्जा पोर्टफोलियो के महत्व पर जोर देता है। अंततः, यह एकीकृत नीतियों की वकालत करता है जो पर्यावरण संरक्षण के साथ आर्थिक विकास को संतुलित करने के उद्देश्य से एक संधारणीय ऊर्जा भविष्य में अनुसंधान, विकास और निवेश का समर्थन करती हैं। बढ़ती वैश्विक ऊर्जा मांग और जलवायु परिवर्तन से निपटने की तत्काल आवश्यकता को देखते हुए, संधारणीय ऊर्जा समाधानों की खोज पहले कभी इतनी जरूरी नहीं रही। नवीकरणीय और गैर–नवीकरणीय दोनों तरह के विभिन्न ऊर्जा संसाधन हमारे ऊर्जा परिदृश्य को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनमें से, पवन ऊर्जा और सौर ऊर्जा स्वच्छ ऊर्जा भविष्य में संक्रमण में प्रमुख भूमिका निभाते हैं, जो न्यूनतम पर्यावरणीय प्रभाव के साथ बिजली उत्पन्न करने के लिए प्राकृतिक शक्तियों का उपयोग करते हैं। इसी तरह, ज्वारीय धाराएँ समुद्री ऊर्जा के दोहन के लिए एक आशाजनक मार्ग प्रस्तुत करती हैं, जो बिजली के पूर्वानुमानित और नवीकरणीय स्रोत प्रदान करती हैं। दूसरी ओर, प्राकृतिक गैस एक संक्रमणकालीन ईंधन के रूप में उभरी है, जिसे अक्सर पारंपरिक जीवाश्म ईंधन और स्वच्छ ऊर्जा विकल्पों के बीच एक सेतु माना जाता है। हालाँकि यह कोयले और तेल की तुलना में अधिक स्वच्छ तरीके से जलती है, लेकिन इसके निष्कर्षण और उपभोग के पर्यावरणीय प्रभावों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। जैविक पदार्थों से प्राप्त जैव ईंधन ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने का एक और मार्ग प्रदान करते हैं, विशेष रूप से परिवहन क्षेत्र में, हालाँकि वे भूमि उपयोग और खाद्य उत्पादन से संबंधित चुनौतियाँ पेश करते हैं।

परमाणु ऊर्जा, कम कार्बन बिजली उत्पादन की अपनी क्षमता के साथ, विशेष रूप से सुरक्षा और अपशिष्ट प्रबंधन के संबंध में लाभों और चुनौतियों का एक जटिल समूह प्रस्तुत करती है। इस बहुआयामी ऊर्जा परिदृश्य के लिए प्रत्येक संसाधन की क्षमता, सीमाओं और पर्यावरणीय प्रभावों की व्यापक समझ की आवश्यकता होती है। इसका उद्देश्य आज उपलब्ध विविध ऊर्जा संसाधनों का पता लगाना है, ऊर्जा स्थिरता प्राप्त करने में उनकी भूमिका पर प्रकाश डालना है। प्रत्येक प्रकार की ऊर्जा से जुड़े नवाचारों और रणनीतियों का विश्लेषण करके, हम एक विविध ऊर्जा पोर्टफोलियो के महत्व को रेखांकित करेंगे जो पर्यावरण संरक्षण को प्राथमिकता देते हुए आर्थिक विकास का समर्थन करता है। ऐसा करने में, हम एक बेहतर ऊर्जा भविष्य की ओर मार्ग प्रशस्त करना चाहते हैं।

| ऊर्जा संसाधन | प्रकार | लाभ | हानि |
|---|---|---|---|
| पवन शक्ति | नवीकरणीय | स्वच्छ, अक्षय, और लागत कम | जगह की आवश्यकता, अनियमितता |
| ज्वार भाटा | नवीकरणीय | पूर्वानुमानित, स्थायी | स्थल विशेष, निर्माण लागत उच्च |
| प्राकृतिक गैस | जीवाश्म | कम प्रदूषण, ऊर्जा घनत्व अधिक | कार्बन उत्सर्जन, सीमित संसाधन |
| जैविक ईंधन | नवीकरणीय | नवीकरणीय, स्थानीय उत्पादन | भूमि उपयोग, खाद्य सुरक्षा प्रभावित |
| सौर ऊर्जा | नवीकरणीय | स्वच्छ, असीमित, कम | प्रारंभिक लागत, मौसम |

| | | | |
|---|---|---|---|
| | | रखरखाव | पर निर्भरता |
| आणविक ईंधन | नवीकरणीय (विशेष) | उच्च ऊर्जा घनत्व, कम उत्सर्जन | कचरा प्रबंधन, सुरक्षा चिंताएँ |

## 4.2 ऊर्जा संसाधन

ऊर्जा संसाधन आधुनिक समाज के लिए आवश्यक हैं और इन्हें नवीकरणीय और गैर–नवीकरणीय स्रोतों में वर्गीकृत किया जा सकता है। गैर–नवीकरणीय संसाधन, जैसे कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस जैसे जीवाश्म ईंधन, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन और जलवायु परिवर्तन में योगदान करते हैं। परमाणु विखंडन के माध्यम से उत्पादित परमाणु ऊर्जा, कम ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन उत्पन्न करती है, लेकिन रेडियोधर्मी अपशिष्ट और सुरक्षा के बारे में चिंताएँ पैदा करती है। सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जलविद्युत शक्ति, बायोमास और भूतापीय ऊर्जा जैसे नवीकरणीय ऊर्जा संसाधन टिकाऊ हैं और प्राकृतिक रूप से पुनःपूर्ति करते हैं। ऊर्जा संसाधन आर्थिक विकास, तकनीकी उन्नति और जीवन स्तर में सुधार के लिए महत्वपूर्ण हैं। जलवायु परिवर्तन को कम करने, प्रदूषण को कम करने और भविष्य के लिए ऊर्जा सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए संधारणीय ऊर्जा प्रणालियों में संक्रमण आवश्यक है। ऊर्जा नीतियों और प्रथाओं के बारे में सूचित निर्णय लेने के लिए इन संसाधनों और उनके निहितार्थों को समझना महत्वपूर्ण है।

### ऊर्जा संसाधन के महत्व

ऊर्जा संसाधनों के मुख्य प्रकार जो निम्नलिखित हैं को जानकर ऊर्जा संसाधन के महत्व को रेखांकित करना उचित होगा।

### -1नवीकरणीय ऊर्जा संसाधन

- सौर ऊर्जा: सूर्य के प्रकाश को ऊर्जा में परिवर्तित करना।
- पवन ऊर्जा: पवन के बल से टर्बाइनों के माध्यम से ऊर्जा उत्पन्न करना।
- जल ऊजार्रू नदियों या जलाशयों के प्रवाह से बिजली उत्पादन करना (जलविद्युत)।
- जैव ऊर्जा: जैविक पदार्थों से ऊर्जा प्राप्त करना (जैसे, बायोमास)।
- भू–तापीय ऊर्जा: पृथ्वी की आंतरिक गर्मी का उपयोग करना।

### -2अ–नवीकरणीय ऊर्जा संसाधन

- कोयला: मुख्यतः ऊर्जा उत्पादन के लिए उपयोग होता है।
- पेट्रोलियम: विभिन्न ईंधनों का स्रोत, जैसे डीजल और पेट्रोल।
- प्राकृतिक गैस: घरेलू और औद्योगिक उपयोग में महत्वपूर्ण।
- यूरेनियम: परमाणु ऊर्जा के लिए उपयोग किया जाता है।

### -3अन्य ऊर्जा स्रोत

- हाइड्रोजन: ईंधन सेल में उपयोग होता है।
- न्यूक्लियर ऊर्जा: परमाणु विखंडन के माध्यम से ऊर्जा उत्पन्न करना।

इन संसाधनों का उपयोग विभिन्न उद्योगों, परिवहन, और घरेलू उपयोग के लिए किया जाता है।

## 4.3 पवन शक्ति

पवन ऊर्जा एक अक्षय ऊर्जा स्रोत है जो चलती हवा की गतिज ऊर्जा का उपयोग करता है, जो ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने और संधारणीय ऊर्जा प्रथाओं को बढ़ावा देने में

महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पवन टर्बाइन पवन ऊर्जा को बिजली में परिवर्तित करते हैं, जिसे पावर ग्रिड में डाला जा सकता है। पवन ऊर्जा प्रचुर मात्रा में, अक्षय और लागत प्रभावी है, जिसमें कम उत्सर्जन और हाल के वर्षों में लागत में उल्लेखनीय कमी आई है। हालाँकि, इसे रुकावट, वन्यजीव जोखिम और स्थान की आवश्यकता जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। बड़े पवन फार्मों के लिए महत्वपूर्ण भूमि क्षेत्रों की आवश्यकता होती है, जिससे भूमि उपयोग संघर्ष हो सकता है। जैसे–जैसे तकनीक आगे बढ़ती है और स्वच्छ ऊर्जा की मांग बढ़ती है, पवन ऊर्जा से वैश्विक ऊर्जा मिश्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की उम्मीद है। इसकी क्षमता को अधिकतम करने और इसे व्यापक ऊर्जा परिदृश्य में एकीकृत करने के लिए, अनुसंधान, बुनियादी ढांचे और सहायक नीतियों में निरंतर निवेश आवश्यक है।

**पवन शक्ति के महत्व**

पवन शक्ति (Wind Energy) के कई महत्वपूर्ण लाभ हैं:

**-1नवीकरणीय स्रोत**

पवन शक्ति एक नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत है, जिसका अर्थ है कि इसे समाप्त नहीं किया जा सकता। यह प्राकृतिक रूप से निरंतर उपलब्ध रहती है।

**-2पर्यावरण के लिए लाभकारी**

पवन ऊर्जा उत्पादन में ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन बहुत कम होता है, जिससे वायुमंडलीय प्रदूषण कम होता है और जलवायु परिवर्तन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

**-3आर्थिक विकास**

पवन ऊर्जा परियोजनाएं स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजित करती हैं, जैसे निर्माण, संचालन, और रखरखाव में।

**-4ऊर्जा सुरक्षा**

पवन शक्ति का उपयोग देश को ऊर्जा सुरक्षा प्रदान करता है, क्योंकि यह विदेशी ऊर्जा स्रोतों पर निर्भरता को कम करता है।

**-5लागत प्रभावशीलता**

पवन ऊर्जा की उत्पादन लागत पिछले कुछ वर्षों में काफी कम हुई है, जिससे यह पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों की तुलना में अधिक प्रतिस्पर्धात्मक हो गई है।

**-6विविधता में योगदान**

पवन ऊर्जा विभिन्न प्रकार की ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने में मदद करती है, जिससे ऊर्जा मिश्रण में विविधता आती है।

**-7स्थानिक लाभ**

पवन टर्बाइनों को विभिन्न स्थानों पर स्थापित किया जा सकता है, जैसे कि समुद्र तट, पहाड़ी क्षेत्रों और कृषि भूमि पर, जिससे भूमि का प्रभावी उपयोग होता है।

इन सभी पहलुओं के कारण, पवन शक्ति को विश्व स्तर पर ऊर्जा उत्पादन के एक महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में माना जा रहा है।

**भारत में पवन ऊर्जा कंपनियाँ**

भारत की पवन ऊर्जा कंपनियाँ देश के ऊर्जा परिदृश्य को बदल रही हैं, संधारणीय और नवीकरणीय ऊर्जा समाधानों को बढ़ावा दे रही हैं। दुनिया की चौथी सबसे अधिक स्थापित पवन ऊर्जा क्षमता के साथ, भारत में इसकी बिजली उत्पादन का %23 और इसकी ऊर्जा खपत का 10.%4 हिस्सा है। देश का ऊर्जा क्षेत्र पारंपरिक जीवाश्म ईंधन से पवन ऊर्जा जैसे नवीकरणीय विकल्पों की ओर बढ़ रहा है। भारत के बिजली उत्पादन (3.%77) में एक छोटी भूमिका निभाने के बावजूद, नवीकरणीय ऊर्जा किसी भी प्रमुख अर्थव्यवस्था की तुलना में सबसे

तेज दर से बढ़ रही है।

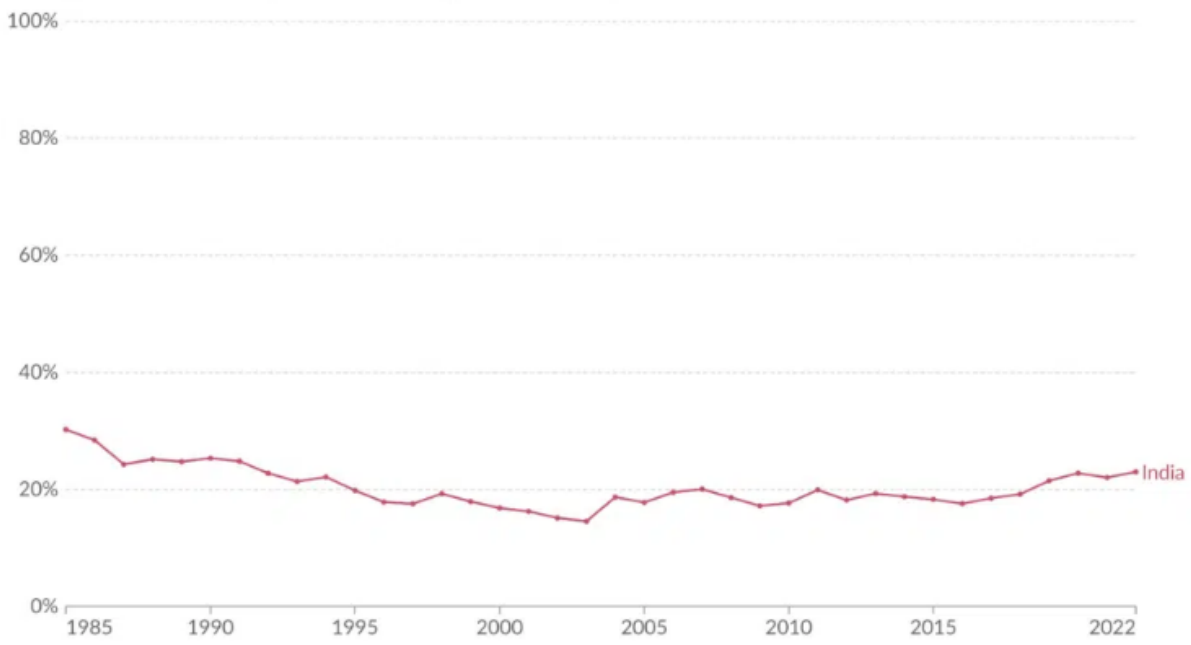


**Data source:** Ember - Yearly Electricity Data (2023); Ember - European Electricity Review (2022); Energy Institute - Statistical Review of World Energy (2023)
OurWorldInData.org/low-carbon-electricity-by-country | CC BY

भारत का लक्ष्य अगले पाँच वर्षों में अपनी पवन ऊर्जा क्षमता को 22गीगावाट तक बढ़ाना है और 2030तक 140गीगावाट की स्थापित क्षमता प्राप्त करना है, जो देश की लगभग 43. 8 गीगावाट क्षमता से तीन गुना अधिक है। यह वृद्धि देश की विशाल पवन ऊर्जा क्षमता और देश की विशाल पवन ऊर्जा क्षमता द्वारा संचालित है। सुजलॉन एनर्जी लिमिटेड भारत की सबसे बड़ी पवन ऊर्जा उत्पादक कंपनी है, जिसकी राजस्थान और गुजरात सहित नौ राज्यों में 111पवन ऊर्जा फार्मों से 14गीगावाट से अधिक की स्थापित क्षमता है। कंपनी के पास 17 देशों में अतिरिक्त 6गीगावाट की स्थापित क्षमता भी है। सबसे अधिक विकसित क्षमता वाले भारतीय राज्य तमिलनाडु और गुजरात हैं।

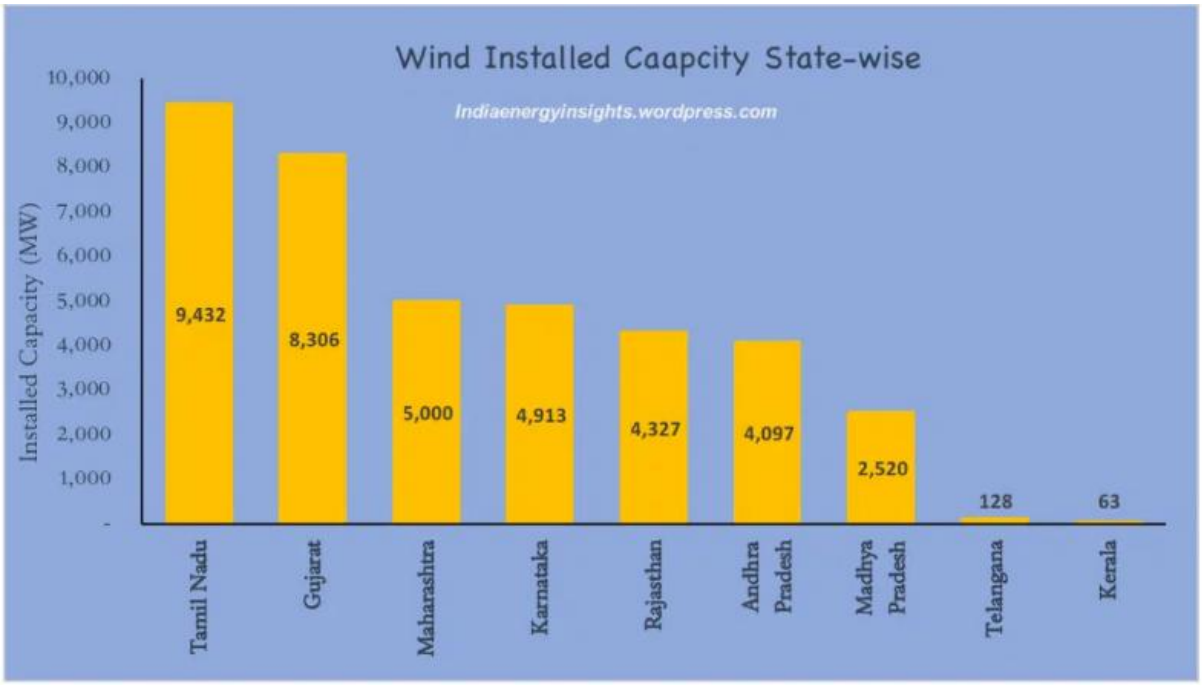


Source: India Energy Insights

दोनों राज्य मुख्य रूप से तटवर्ती पवन फार्मों पर निर्भर हैं, फिर भी उनके पास अप्रयुक्त अपतटीय क्षमता है। इस बीच, गुजरात और तमिलनाडु राज्यों में अकेले 70 गीगावाट की संयुक्त अपतटीय पवन क्षमता है, और भारत सरकार अपने तट की पवन क्षमता को भुनाने के लिए विकास को सुविधाजनक बनाने के लिए काम कर रही है। दिसंबर 2023 में, सरकार ने भारत में प्रमुख अपतटीय पवन ऊर्जा परियोजनाओं को विकसित करने के लिए पहली निविदाएँ जारी कीं। यह 2030 तक 37 गीगावाट अपतटीय पवन विकसित करने की एक बड़ी रणनीति है।

### 4.4 ज्वार भाटा

ज्वार भाटा एक नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत है जो बिजली उत्पन्न करने के लिए ज्वार और समुद्री धाराओं की गति का उपयोग करता है। इसे दो प्राथमिक तरीकों से इस्तेमाल किया जा सकता हैरू ज्वारीय धारा प्रणाली और ज्वारीय रेंज प्रणाली। ज्वार भाटा प्रणाली अत्यधिक पूर्वानुमान योग्य होती हैं, जिससे विश्वसनीय ऊर्जा उत्पादन संभव होता है। इनका पर्यावरण पर न्यूनतम प्रभाव पड़ता है और उचित रूप से डिजाइन किए जाने पर ये समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र के साथ सह–अस्तित्व में रह सकती हैं। ज्वार भाटा अवसंरचना का परिचालन जीवन लंबा हो सकता है, जिससे यह समय के साथ एक स्थिर निवेश बन जाता है। हालाँकि, चुनौतियों में उच्च प्रारंभिक लागत, सीमित स्थान और पर्यावरण संबंधी चिंताएँ शामिल हैं। जैसे–जैसे दुनिया संधारणीय ऊर्जा समाधानों की ओर बढ़ रही है, ज्वार भाटा एक व्यवहार्य विकल्प के रूप में ध्यान आकर्षित कर रही है। प्रौद्योगिकी में प्रगति और नवीकरणीय ऊर्जा अवसंरचना में बढ़ते निवेश से वैश्विक ऊर्जा परिदृश्य में, विशेष रूप से तटीय क्षेत्रों में इसकी भूमिका बढ़ सकती है। इसकी पूर्वानुमानितता और कम कार्बन पदचिह्न के साथ, ज्वारीय ऊर्जा में स्वच्छ ऊर्जा भविष्य में महत्वपूर्ण योगदान देने की क्षमता है।

### ज्वार भाटा के महत्व

ज्वार–भाटा (Tides) के कई महत्वपूर्ण पहलू हैं, जो प्राकृतिक और मानविकी दोनों दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण हैंरू

**-1ऊर्जा स्रोत**

ज्वार–भाटा ऊर्जा (Tidal Energy) एक नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत है, जो ज्वार के परिवर्तन के कारण उत्पन्न होती है। इसका उपयोग बिजली उत्पादन में किया जा सकता है, जिससे ऊर्जा सुरक्षा में वृद्धि होती है।

**-2जलवायु और पर्यावरण**

ज्वार भाटा समुद्र के पारिस्थितिकी तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह तटीय क्षेत्रों में जैव विविधता को बनाए रखता है और समुद्री जीवन के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करता है।

**-3मछली पालन**

ज्वार भाटा मछली पालन के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ प्रदान करता है। मछलियाँ और अन्य समुद्री जीव ज्वार के दौरान तट के करीब आते हैं, जिससे मछली पकड़ने के लिए अधिक अवसर मिलते हैं।

**-4तटीय संरक्षण**

ज्वार भाटा तटीय क्षेत्रों में भूमि की संरचना को बनाए रखने में मदद करता है, जिससे तटीय कटाव और बाढ़ की रोकथाम होती है।

**-5जलवायु परिवर्तन के प्रभाव**

ज्वार भाटा के नियमित चक्र से समुद्री जल स्तर में उतार–चढ़ाव होता है, जो जलवायु परिवर्तन के प्रभावों की समझ में सहायक होता है।

**-6वाणिज्यिक गतिविधियाँ**

ज्वार भाटा ने तटीय क्षेत्रों में वाणिज्यिक गतिविधियों को प्रभावित किया है, जैसे कि समुद्री परिवहन, पर्यटन, और रिसॉर्ट विकास।

**-7जैविक अनुसंधान**

ज्वार भाटा समुद्री जीवों और पारिस्थितिकी तंत्र पर अनुसंधान के लिए एक महत्वपूर्ण कारक है, जिससे वैज्ञानिक समुद्री जीवन और जलवायु के बदलावों को समझ सकते हैं।

इन सभी पहलुओं के कारण, ज्वार–भाटा का अध्ययन और संरक्षण आवश्यक है, ताकि इसके लाभों का अधिकतम उपयोग किया जा सके और इसके पर्यावरणीय प्रभावों को समझा जा सके।

## 4.5 प्राकृतिक गैस

प्राकृतिक गैस, मुख्य रूप से मीथेन से बना एक जीवाश्म ईंधन, एक बहुमुखी और कुशल ऊर्जा स्रोत है जो वैश्विक ऊर्जा परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह प्राचीन समुद्री जीवों के अवशेषों से लाखों वर्षों में बनता है, जो उच्च दबाव और तापमान में हाइड्रोकार्बन में बदल जाते हैं। प्राकृतिक गैस का उपयोग बिजली उत्पादन, हीटिंग, औद्योगिक अनुप्रयोगों और परिवहन के लिए किया जाता है, जिसमें संपीड़ित प्राकृतिक गैस (CNG) गैसोलीन और डीजल का एक स्वच्छ विकल्प है। प्राकृतिक गैस के लाभों में कम उत्सर्जन, लचीलापन और हाइड्रोलिक फ्रैक्चरिंग (फ्रैकिंग) जैसी निष्कर्षण तकनीकों में प्रगति के कारण प्रचुर आपूर्ति शामिल है। हालाँकि, चुनौतियों में मीथेन उत्सर्जन, पर्यावरण संबंधी चिंताएँ और निर्भरता के मुद्दे शामिल हैं। जबकि प्राकृतिक गैस को जलाने से कम $CO_2$ उत्सर्जित होता है, मीथेन निष्कर्षण और परिवहन के दौरान लीक हो सकता है, जिससे कुछ जलवायु लाभ प्रभावित होते हैं। फ्रैकिंग और अन्य निष्कर्षण विधियाँ स्थानीय जल आपूर्ति, पारिस्थितिकी तंत्र और वायु गुणवत्ता के लिए जोखिम पैदा कर सकती हैं। जैसे–जैसे देश कार्बन उत्सर्जन को कम करने और स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों में बदलाव करने का प्रयास करते हैं, प्राकृतिक गैस से एक संक्रमणकालीन भूमिका निभाने की उम्मीद की जाती है। दुनिया के कम कार्बन वाले भविष्य की ओर बढ़ने के

साथ इसके लाभों को संधारणीय प्रथाओं की आवश्यकता के साथ संतुलित करना महत्वपूर्ण होगा। प्रौद्योगिकी और विनियमन में निरंतर नवाचारों के साथ, प्राकृतिक गैस एक विविध ऊर्जा मिश्रण का हिस्सा बन सकती है जो आर्थिक विकास और पर्यावरणीय स्थिरता को समर्थन देती है।

## प्राकृतिक गैस के महत्व

प्राकृतिक गैस (Natural Gas) के कई महत्वपूर्ण लाभ और उपयोग हैं, जो इसे ऊर्जा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण संसाधन बनाते हैं:

### -1स्वच्छ ऊर्जा स्रोत

प्राकृतिक गैस को जलाने पर अन्य जीवाश्म ईंधनों की तुलना में कम कार्बन डाइऑक्साइड और अन्य हानिकारक गैसें उत्पन्न होती हैं। यह इसे एक स्वच्छ ऊर्जा विकल्प बनाता है, जो वायु गुणवत्ता में सुधार करता है।

### -2ऊर्जा उत्पादन

प्राकृतिक गैस बिजली उत्पादन के लिए एक प्रमुख स्रोत है। गैस–चालित विद्युत संयंत्रों में इसका उपयोग किया जाता है, जो त्वरित और कुशल ऊर्जा उत्पादन करते हैं।

### -3उद्योगों में उपयोग

यह विभिन्न औद्योगिक प्रक्रियाओं में ईंधन के रूप में उपयोग होती है, जैसे स्टील निर्माण, रासायनिक उत्पादन और अन्य उद्योग।

### -4गृह उपयोग

प्राकृतिक गैस का व्यापक उपयोग घरेलू ऊर्जा आवश्यकताओं के लिए होता है, जैसे खाना पकाना, गर्म पानी और हीटिंग के लिए।

### -5परिवहन ईंधन

प्राकृतिक गैस का उपयोग एक स्वच्छ परिवहन ईंधन के रूप में भी किया जाता है, जैसे कि सीएनजी (Compressed Natural Gas) और एलएनजी (Liquefied Natural Gas), जो वाहनों के लिए विकल्प प्रदान करते हैं।

### -6ऊर्जा सुरक्षा

प्राकृतिक गैस का घरेलू उत्पादन देशों को ऊर्जा में आत्मनिर्भर बनाता है, जिससे वे विदेशी ऊर्जा स्रोतों पर निर्भरता कम कर सकते हैं।

### -7अन्य उत्पादों का निर्माण

प्राकृतिक गैस से अन्य रासायनिक उत्पादों, जैसे उर्वरक (फर्टिलाइजर), प्लास्टिक और कई अन्य औद्योगिक सामग्रियों का उत्पादन होता है।

### -8संवहन और भंडारण

प्राकृतिक गैस को आसानी से परिवहन और भंडारण किया जा सकता है, जिससे इसकी आपूर्ति लचीली और मांग के अनुसार अनुकूलित की जा सकती है।

इन सभी कारणों से, प्राकृतिक गैस आज की ऊर्जा आवश्यकता के लिए एक महत्वपूर्ण और आवश्यक संसाधन बन गई है।

## प्राकृतिक गैस और भारत की जलवायु रणनीति

भारत गरीबी उन्मूलन और ऊर्जा पहुंच, स्वास्थ्य और शिक्षा में सुधार करते हुए अपनी वैश्विक जलवायु प्रतिबद्धताओं को पूरा करने का लक्ष्य बना रहा है। बड़ी और युवा आबादी वाले देश के लिए यह बदलाव अभूतपूर्व है। भारत की ऊर्जा संक्रमण रणनीति में जीवाश्म ईंधन और नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग बढ़ाना शामिल है। सरकार नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता, कोयला उत्पादन, पेट्रोलियम शोधन क्षमता और ऊर्जा मिश्रण में प्राकृतिक गैस की हिस्सेदारी बढ़ाने की

योजना बना रही है। हालाँकि, यह रणनीति भारत के डीकार्बोनाइजेशन मार्ग में प्राकृतिक गैस की भूमिका के बारे में सवाल उठाती है। जबकि प्राकृतिक गैस भारत को कम उत्सर्जन मार्ग पर ले जा सकती है, ऊर्जा प्रणाली की राजनीतिक अर्थव्यवस्था इसे एक सीमांत खिलाड़ी बना सकती है।

भारत ने जी– 20देशों से 2030तक प्रति व्यक्ति उत्सर्जन को वैश्विक औसत तक कम करने का आग्रह किया है, भले ही शुद्ध–शून्य उत्सर्जन लक्ष्य वर्ष घोषित करने का दबाव हो। देश ने जीवाश्म ईंधन और नवीकरणीय ऊर्जा दोनों में वृद्धि को आगे बढ़ाने की अपनी घरेलू ऊर्जा नीति के साथ तालमेल बिठाते हुए 2025तक कोयले को चरणबद्ध तरीके से समाप्त करने से भी इनकार कर दिया है। हालाँकि, इस रणनीति में कार्बन–गहन बुनियादी ढाँचे में चल रहे निवेश भी शामिल हैं, जैसे कि प्राकृतिक गैस क्षेत्र में 1ट्रिलियन रुपये का निवेश। 2030तक CNG पंप स्टेशनों की संख्या 10, 000तक पहुँचने की उम्मीद है, और भारत अपने पाइपलाइन नेटवर्क का विस्तार कर रहा है। समग्र डीकार्बोनाइजेशन रोडमैप अभी भी अस्पष्ट है, जिसमें नवीकरणीय ऊर्जा के कारण बिजली क्षेत्र में सबसे अधिक स्पष्टता है। प्राकृतिक गैस उत्सर्जन को कम करने में मदद कर सकती है, लेकिन भारत की जलवायु रणनीति में इसकी भूमिका नीतिगत पहलों पर निर्भर करती है।

**केंद्रीय विद्युत प्राधिकरण द्वारा 2030में भारत का अनुमानित विद्युत क्षेत्र मिश्रण**

| 2030 अनुमानित ऊर्जा मिश्रण | | |
|---|---|---|
| ईंधन का प्रकार | स्थापित क्षमता (मेगावाट) | संभावित उत्पादन )TWh) |
| हाइड्रो (आयात शामिल) | 60,977 | 206.6 |
| पंप स्टोरेज | 10,151 | 4.4 |
| लघु हाइड्रो और बायोमास | 15,000 | 7.2 |
| कोयला. लिग्नाइट | 266,911 | 1357.7 |
| गैस | 25,080 | 35.4 |
| परमाणु | 18,980 | 113 |
| सौर | 280,155 | 484.2 |
| पवन | 140,000 | 309.1 |
| बैटरी स्टोरेज | 27,000 | |

**Source:** Report on Optimal Generation Capacity mix for 2029-2030, January 2020, Central Electricity Authority, Ministry of Power, Government of India.

वित्त वर्ष 2020में भारत में क्षेत्रीय प्राकृतिक गैस की खपत

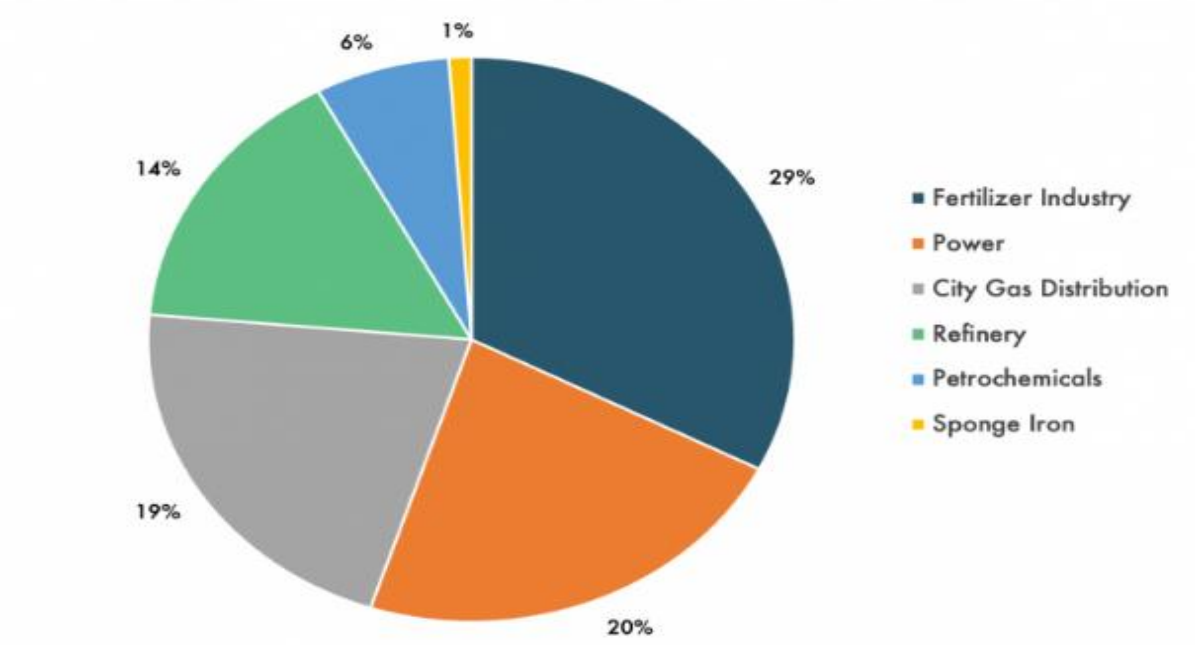


**Source:** Indian Petroleum and Natural Gas Statistics 2019-20, January 2021, Ministry of Petroleum and Natural Gas, Government of India.

## भारत में प्राकृतिक गैस बाजार

भारत का प्राकृतिक गैस बाजार लगातार बढ़ रहा है, इसकी मांग लगातार बढ़ रही है और तेजी से विस्तार की संभावना है। 2020तक, भारत के सिद्ध प्राकृतिक गैस भंडार 32.1 ट्रिलियन क्यूबिक मीटर तक पहुंच गए, जो 20वर्षों में %5.80की वृद्धि है। हालांकि, भारत का हिस्सा वैश्विक भंडार का केवल %7.0है, जबकि एशिया–प्रशांत में %8.8है। चीन %5.4 हिस्सेदारी के साथ एशिया–प्रशांत क्षेत्र में सबसे आगे है, उसके बाद ऑस्ट्रेलिया, भारत और इंडोनेशिया हैं। वैश्विक प्राकृतिक गैस संसाधन असमान रूप से वितरित हैं, रूस, ईरान और कतर के पास क्रमशः वैश्विक भंडार का %1.17 ख%9.19और %1.13है। इन देशों ने सामूहिक रूप से 2020में 188टीसीएम के वैश्विक प्राकृतिक गैस भंडार का %50नियंत्रित किया।

**भारत में प्रमाणित प्राकृतिक गैस भंडार**

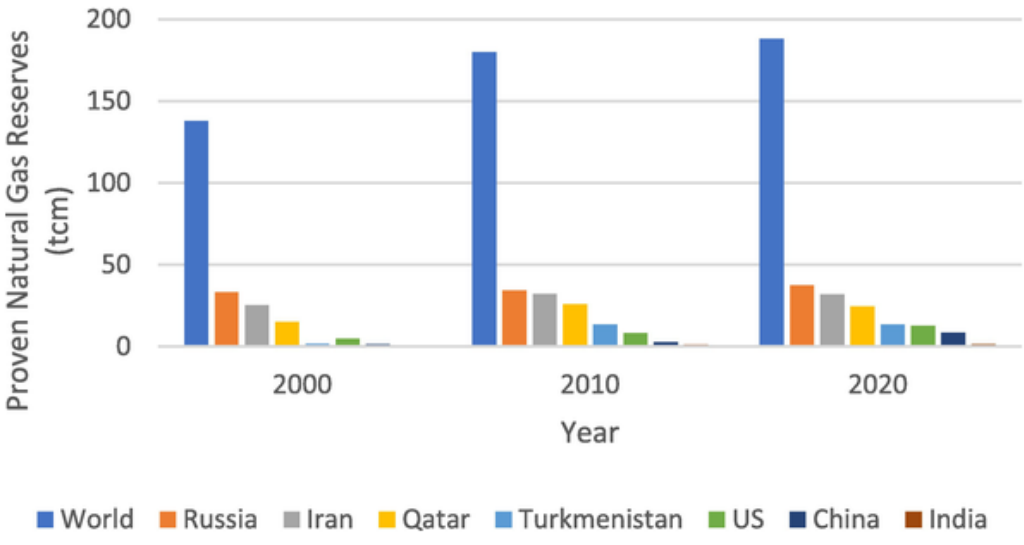


Source: prepared by the authors using Statistical Review of World Energy 2021.

भारत का प्राकृतिक गैस उत्पादन सरकार और परिचालन कंपनियों के लिए चिंता का विषय रहा है। उपभोक्ता उद्योग, खास तौर पर बिजली और उर्वरक उत्पादक, इससे प्रभावित हैं। प्राकृतिक गैस के उत्पादन में गिरावट ने बिजली और उर्वरक उत्पादकों को बुरी तरह प्रभावित किया है। अगर भारत मौजूदा दर पर उत्पादन जारी रखता है तो रिजर्व टू प्रोडक्शन रेशियो (आर/पी) से पता चलता है कि प्राकृतिक गैस 56साल तक चल सकती है। हालांकि, भविष्य में उत्पादन दर में वृद्धि होना तय है, जिससे आरध्पी अनुपात में गिरावट आएगी।

**भारत का घरेलू प्राकृतिक गैस उत्पादन**

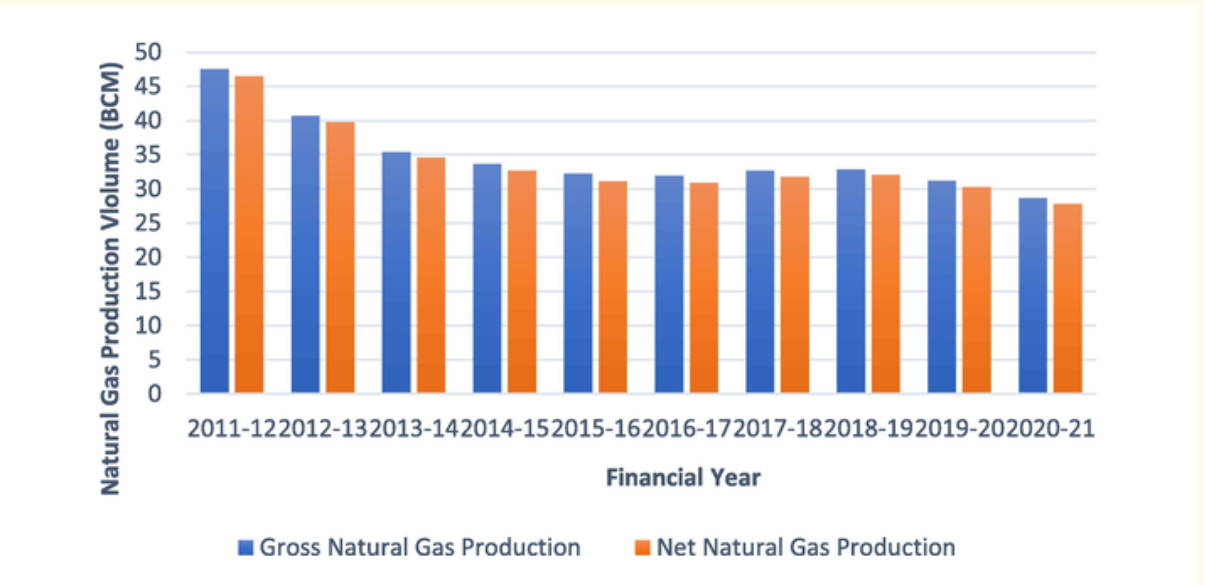


Source: prepared by the authors using Statistical Review of World Energy 2021.

## 4.6 जैविक ईंधन

जैव ईंधन नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत हैं जो कार्बनिक पदार्थों, जैसे कि पौधे के पदार्थ और पशु अपशिष्ट से प्राप्त होते हैं, जो जीवाश्म ईंधन के लिए एक स्थायी विकल्प प्रदान करते हैं। इनका उपयोग गैसोलीन एडिटिव्स, बायोडीजल, बायोगैस या शैवाल या कृषि अपशिष्ट जैसे गैर–खाद्य फीडस्टॉक से बने उन्नत जैव ईंधन के रूप में किया जा सकता है। जैव ईंधन नवीकरणीय, कार्बन तटस्थ हैं, और आयातित जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता को कम करके ऊर्जा सुरक्षा प्रदान करते हैं। हालाँकि, वे भूमि–उपयोग–गहन भी हो सकते हैं, जिससे संभावित रूप से खाद्य मूल्य में वृद्धि और वनों की कटाई हो सकती है। कुछ जैव ईंधन उत्पादन प्रक्रियाएँ संसाधन–गहन हो सकती हैं, जिसके लिए महत्वपूर्ण पानी और उर्वरकों की आवश्यकता होती है, जो पर्यावरणीय लाभों को कम कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, जैव ईंधन प्रदूषक उत्पन्न कर सकते हैं, और उनका शुद्ध पर्यावरणीय प्रभाव उत्पादन विधियों के आधार पर भिन्न होता है। जैसे–जैसे स्वच्छ ऊर्जा की मांग बढ़ती है, जैव ईंधन एक स्थायी ऊर्जा प्रणाली में संक्रमण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। अनुसंधान और नवाचार उत्पादन दक्षता में सुधार, पर्यावरणीय प्रभावों को कम करने और गैर–खाद्य फीडस्टॉक का उपयोग करके उन्नत जैव ईंधन विकसित करने पर केंद्रित हैं। जैव ईंधन को ऊर्जा मिश्रण में एकीकृत करके, समाज अधिक टिकाऊ और लचीले ऊर्जा समाधानों की ओर बढ़ सकते हैं।

**जैविक ईंधन के महत्व**

जैविक ईंधन (Biofuel) के कई महत्वपूर्ण लाभ हैं, जो इसे पारंपरिक ईंधनों के मुकाबले एक आकर्षक विकल्प बनाते हैं:

**.1नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत**

जैविक ईंधन पौधों और जैविक पदार्थों से प्राप्त होते हैं, जिन्हें नियमित रूप से उगाया जा सकता है, जिससे ये एक नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत बनते हैं।

**.2पर्यावरणीय लाभ**

जैविक ईंधन का जलना पारंपरिक जीवाश्म ईंधनों की तुलना में कम कार्बन डाइऑक्साइड और अन्य हानिकारक गैसों का उत्सर्जन करता है, जिससे वायु प्रदूषण में कमी आती है।

**.3ऊर्जा सुरक्षा**

जैविक ईंधन का उपयोग देशों को ऊर्जा में आत्मनिर्भरता बढ़ाने में मदद करता है, जिससे विदेशी ऊर्जा स्रोतों पर निर्भरता कम होती है।

**.4कृषि विकास**

जैविक ईंधन के उत्पादन के लिए कृषि फसलों की आवश्यकता होती है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि विकास और रोजगार के अवसर बढ़ते हैं।

**.5कारइवद सिंक**

पौधे, जो जैविक ईंधन का स्रोत होते हैं, वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करते हैं, जिससे जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने में मदद मिलती है।

**.6ऊर्जा विविधता**

जैविक ईंधन विभिन्न प्रकार के स्रोतों से निर्मित होते हैं, जैसे कि फसले (जैसे गन्ना, मक्का) और अपशिष्ट (जैसे खाद्य अपशिष्ट), जिससे ऊर्जा मिश्रण में विविधता आती है।

**.7स्थानीय विकास**

जैविक ईंधन के उत्पादन से स्थानीय स्तर पर आर्थिक विकास होता है, क्योंकि इसका उत्पादन अक्सर स्थानीय समुदायों द्वारा किया जाता है।

**.8उपचारात्मक अनुप्रयोग**

कुछ जैविक ईंधन जैसे बायोडीजल और इथेनॉल, पारंपरिक ईंधनों के साथ मिश्रित होकर उपयोग किए जा सकते हैं, जिससे उनकी ऊर्जा दक्षता में वृद्धि होती है।

इन सभी कारणों से, जैविक ईंधन आधुनिक ऊर्जा व्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और सतत विकास के लिए एक प्रमुख विकल्प बनते हैं।

**4.7 सौर ऊर्जा**

सूर्य के विकिरण से प्राप्त सौर ऊर्जा एक स्वच्छ और प्रचुर मात्रा में नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत है जो कार्बन उत्सर्जन को कम करने और जलवायु परिवर्तन से निपटने में महत्वपूर्ण योगदान देता है। इसे दो प्राथमिक तकनीकों के माध्यम से बिजली या गर्मी में परिवर्तित किया जा सकता है**:** फोटोवोल्टिक (पीवी) सिस्टम, जो अर्धचालक पदार्थों का उपयोग करके सूर्य के प्रकाश को सीधे बिजली में परिवर्तित करते हैं, और सौर तापीय प्रणाली, जो बिजली उत्पादन या हीटिंग के लिए भाप बनाने के लिए एक तरल पदार्थ को गर्म करती है। सौर ऊर्जा नवीकरणीय, टिकाऊ है, और इसका पर्यावरण पर न्यूनतम प्रभाव पड़ता है, जो स्वच्छ हवा और कम ग्रीनहाउस गैसों में योगदान देता है। यह ऊर्जा स्रोतों में विविधता लाकर ऊर्जा सुरक्षा को भी बढ़ाता है। हालाँकि, चुनौतियों में रुक–रुक कर आने वाली धूप, उच्च प्रारंभिक लागत और स्थान की आवश्यकताएँ शामिल हैं। जैसे–जैसे तकनीक आगे बढ़ती है और स्वच्छ ऊर्जा की वैश्विक माँग बढ़ती है, सौर ऊर्जा में उल्लेखनीय वृद्धि होने की संभावना है। पीवी

तकनीक, ऊर्जा भंडारण समाधान और स्मार्ट ग्रिड एकीकरण में नवाचार सौर ऊर्जा प्रणालियों की दक्षता और विश्वसनीयता को बढ़ा रहे हैं। सहायक नीतियों और निवेश के साथ, सौर ऊर्जा एक टिकाऊ, कम कार्बन ऊर्जा भविष्य में संक्रमण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

## सौर ऊर्जा के महत्व

सौर ऊर्जा (Solar Energy) के कई महत्वपूर्ण लाभ हैं, जो इसे ऊर्जा के क्षेत्र में एक आकर्षक विकल्प बनाते हैं:

### .1नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत

सौर ऊर्जा एक नवीकरणीय स्रोत है, जिसका अर्थ है कि यह असीमित है और इसके लिए किसी भी प्राकृतिक संसाधन के समाप्त होने का डर नहीं है।

### .2पर्यावरण के अनुकूल

सौर ऊर्जा का उत्पादन करते समय ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन नहीं होता, जिससे वायु प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों में कमी आती है।

### .3ऊर्जा सुरक्षा

सौर ऊर्जा का उपयोग करने से देशों को ऊर्जा में आत्मनिर्भरता मिलती है, जिससे विदेशी ऊर्जा स्रोतों पर निर्भरता कम होती है।

### .4कम संचालन लागत

एक बार सौर पैनल स्थापित हो जाने के बाद, उनकी संचालन लागत काफी कम होती है। सूर्य की रोशनी मुफ्त होती है, और रखरखाव की आवश्यकता भी सीमित होती है।

### .5स्थानीय ऊर्जा उत्पादन

सौर ऊर्जा का उपयोग स्थानीय स्तर पर किया जा सकता है, जिससे दूरस्थ क्षेत्रों में भी बिजली पहुंचाई जा सकती है, जहाँ पारंपरिक ग्रिड सुविधाएँ नहीं हैं।

### .6आर्थिक विकास

सौर ऊर्जा परियोजनाएँ स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजित करती हैं, जैसे कि पैनल निर्माण, स्थापना, और रखरखाव में।

### .7विभिन्न उपयोग

सौर ऊर्जा का उपयोग विभिन्न उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है, जैसे घरेलू बिजली उत्पादन, पानी गर्म करना, और सौर वाहनों के लिए ऊर्जा प्रदान करना।

### .8बिजली की कमी को दूर करना

विशेष रूप से विकासशील देशों में, जहाँ बिजली की कमी है, सौर ऊर्जा स्थानीय समुदायों को आवश्यक ऊर्जा प्रदान करके जीवन स्तर में सुधार कर सकती है।

### .9सौर ऊर्जा स्टोरेज

नई तकनीकों के साथ, सौर ऊर्जा को बैटरी में संग्रहित किया जा सकता है, जिससे इसे दिन और रात दोनों समय उपयोग किया जा सकता है।

इन सभी कारणों से, सौर ऊर्जा एक महत्वपूर्ण और स्थायी ऊर्जा विकल्प के रूप में उभर रही है, जो वैश्विक ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायता कर सकती है।

## भारत में सौर ऊर्जा

भारत की आर्थिक वृद्धि के कारण बिजली की मांग में वृद्धि हुई है, जिसे सरकार नए सौर ऊर्जा संयंत्रों में वृद्धि के माध्यम से संबोधित कर रही है। भारत में कुल स्थापित सौर उत्पादन क्षमता 2016 में लगभग दोगुनी हो गई और 2017 में फिर से दोगुनी होने वाली है। तमिलनाडु ने 500MW सौर निविदा शुरू की, जबकि भारतीय सौर ऊर्जा निगम द्वारा देश भर में 2–3GW सौर क्षमता के लिए निविदाएँ खोलने की उम्मीद है। एशियाई विकास बैंक को उम्मीद है कि

भारत की अर्थव्यवस्था 2017 में %7 और 2018 में %8.7 बढ़ेगी, जबकि अमेरिकी ऊर्जा सूचना प्रशासन ने भारत के सबसे तेजी से बढ़ते बिजली क्षेत्र की भविष्यवाणी की है, जिसमें 2012 और 2040 के बीच शुद्ध बिजली उत्पादन में सालाना औसतन %5.3 की वृद्धि होने की उम्मीद है।

जून 2015में, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने आधिकारिक तौर पर 2022तक नई सौर क्षमता स्थापित करने के लक्ष्य को 20GW से बढ़ाकर 100GW कर दिया। मेरकॉम कैपिटल के आंकड़ों के अनुसार, छत और उपयोगिता–स्तरीय सौर ऊर्जा दोनों की वार्षिक स्थापनाएं 2015में साल–दर–साल दोगुनी से अधिक बढ़कर 3.2GW हो गईं और 2016में लगभग दोगुनी होकर 4GW होने का अनुमान है।

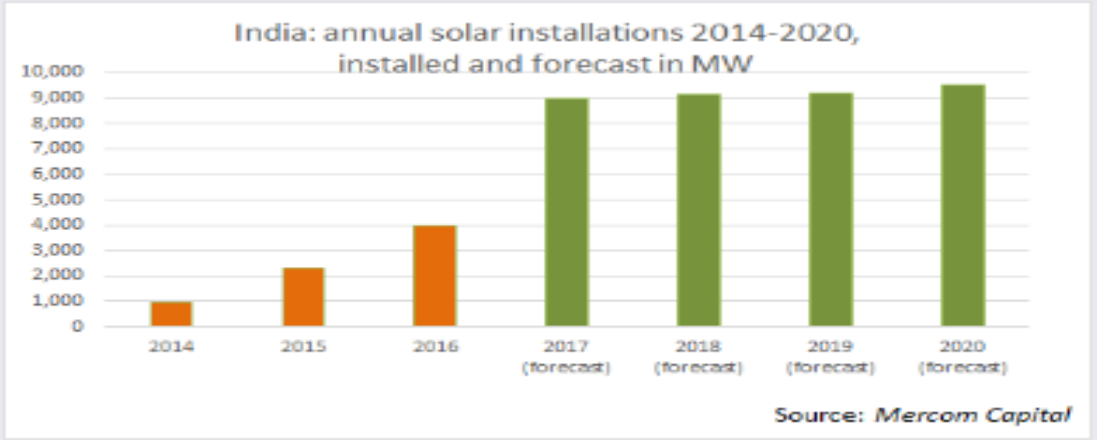


https://www.ijglobal.com/articles//104157data-analysis-india-solar-powers-up

दिसंबर 2016तक भारत में 9GW यूटिलिटी–स्केल सोलर पावर चालू है, 14ळॅ विकास के चरण में है और 308ख्6MW टेंडर हो चुके हैं। 2017में नए सोलर क्षमता प्रतिष्ठानों के 9GW से ज्यादा होने का अनुमान है और 2020तक इसमें वृद्धि जारी रहेगी। टाटा पावर और अदानी जैसे स्थानीय समूहों के पास लगभग %20बिजली संयंत्र हैं, जबकि अमेरिका स्थित फर्स्ट सोलर शीर्ष 10सोलर डेवलपर्स में आठवें स्थान पर है। पाइपलाइन में 20GW की परियोजनाओं पर भारतीय कंपनियों का दबदबा है, जिसमें रीन्यू पावर, अदानी और ग्रीनको सबसे आगे हैं। अंतरराष्ट्रीय कंपनियाँ सोलर डायरेक्ट और EDF शीर्ष 20डेवलपर्स में सबसे नीचे हैं।

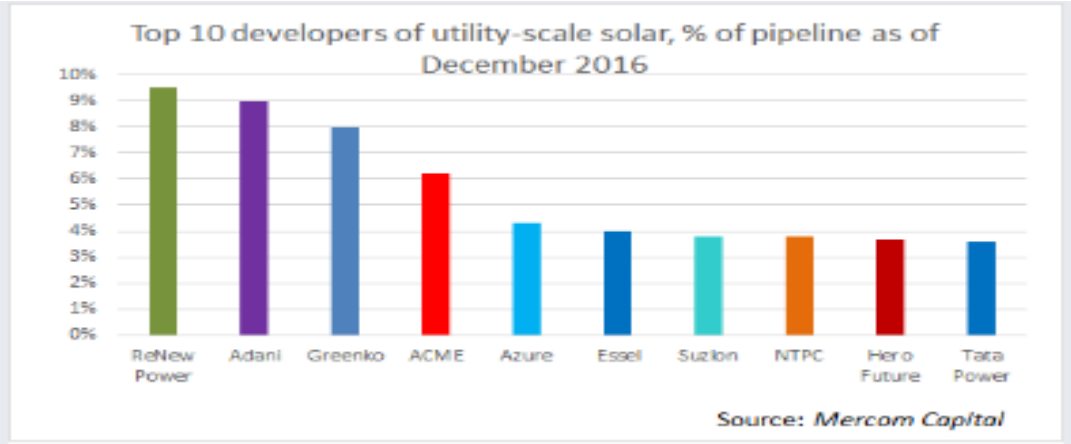


https://www.ijglobal.com/articles//104157data-analysis-india-solar-powers-up

विदेशी डेवलपर्स को भारत में उपयोगिता–स्तरीय सौर ऊर्जा संयंत्रों के वित्तपोषण में चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, जिनमें से अधिकांश का वित्तपोषण भारतीय बैंकों द्वारा किया जा

रहा है। दिसंबर 2016 तक सौर ऊर्जा शुल्क घटकर 4 रुपये (07.0+) प्रति किलोवाट घंटा होने के बावजूद, मॉड्यूल की कीमतों में भारी कमी ने बैंकों को सौर विकास के लिए परियोजना वित्तपोषण प्रदान करने में अधिक सहज बना दिया है। परिणामस्वरूप, सौर परियोजना वित्तपोषण पर औसत ब्याज दरें Q2015 4 में %50.11 से घटकर Q2016 4 में लगभग %11 रह गई हैं।

### 4.8 आणविक ईंधन

परमाणु ईंधन, जो मुख्य रूप से यूरेनियम या प्लूटोनियम के समस्थानिकों से बना होता है, परमाणु ऊर्जा उत्पादन का एक महत्वपूर्ण घटक है, जो जीवाश्म ईंधन के लिए कम कार्बन वाला विकल्प प्रदान करता है। इस प्रक्रिया में परमाणु विखंडन शामिल है, जहाँ न्यूट्रॉन यूरेनियम–235 पर बमबारी करते हैं, जिससे ऊर्जा की एक महत्वपूर्ण मात्रा निकलती है और आगे की विखंडन प्रतिक्रियाएँ शुरू होती हैं। विखंडन से उत्पन्न ऊष्मा का उपयोग पानी को भाप में बदलने के लिए किया जाता है, जिससे टर्बाइन बिजली पैदा करते हैं। परमाणु ईंधन को आम तौर पर छर्रों में बनाया जाता है और ईंधन की छड़ों में इकट्ठा किया जाता है, जिन्हें रिएक्टर कोर में एक साथ बांधा जाता है। परमाणु ऊर्जा न्यूनतम ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन के साथ बिजली उत्पन्न करती है, जिससे व्यापक ईंधन खनन और परिवहन की आवश्यकता कम हो जाती है। यह विश्वसनीय बेस लोड पावर भी प्रदान करता है, जो पवन और सौर जैसे रुक–रुक कर आने वाले नवीकरणीय स्रोतों का पूरक है। हालाँकि, चुनौतियों में रेडियोधर्मी अपशिष्ट निपटान, परमाणु दुर्घटनाएँ और उच्च प्रारंभिक लागत शामिल हैं। रिएक्टर तकनीक में प्रगति, जैसे कि छोटे मॉड्यूलर रिएक्टर और पीढ़ी IV रिएक्टर, बढ़ी हुई सुरक्षा और दक्षता का वादा करते हैं। इसके अतिरिक्त, थोरियम जैसे वैकल्पिक ईंधनों का विकास और बेहतर अपशिष्ट प्रबंधन रणनीतियाँ परमाणु ऊर्जा की स्थिरता को बढ़ा सकती हैं। जैसे–जैसे वैश्विक समुदाय कम कार्बन ऊर्जा प्रणालियों की ओर बढ़ रहा है, परमाणु ईंधन के ऊर्जा मिश्रण में एक प्रमुख खिलाड़ी बने रहने की उम्मीद है, विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन और ऊर्जा सुरक्षा को संबोधित करने में।

### आणविक ईंधन के महत्व

आणविक ईंधन (Nuclear Fuel) के कई महत्वपूर्ण लाभ हैं, जो इसे ऊर्जा उत्पादन के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण विकल्प बनाते हैं:

#### .1उच्च ऊर्जा घनत्व

आणविक ईंधन, जैसे यूरेनियम और प्लूटोनियम, अन्य ऊर्जा स्रोतों की तुलना में बहुत अधिक ऊर्जा उत्पन्न करते हैं। एक छोटी मात्रा में आणविक ईंधन बड़ी मात्रा में ऊर्जा प्रदान कर सकती है।

#### .2कम ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन

आणविक ऊर्जा उत्पादन में ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन बहुत कम होता है, जिससे जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में मदद मिलती है।

#### .3स्थिर ऊर्जा स्रोत

आणविक ऊर्जा एक स्थिर और निरंतर ऊर्जा स्रोत है। यह मौसम के प्रभावों से मुक्त होती है, जिससे बिजली उत्पादन में स्थिरता बनी रहती है।

#### .4लंबी अवधि की ऊर्जा सुरक्षा

आणविक ईंधन की भंडारण क्षमता और इसकी उच्च ऊर्जा घनत्व के कारण, यह दीर्घकालिक ऊर्जा सुरक्षा प्रदान करता है।

### .5कम भूमि का उपयोग

आणविक ऊर्जा संयंत्रों को संचालित करने के लिए अपेक्षाकृत कम भूमि की आवश्यकता होती है, जो भूमि उपयोग के लिए अन्य विकल्पों की तुलना में अधिक प्रभावी है।

### .6आर्थिक लाभ

हालांकि प्रारंभिक निवेश उच्च होता है, एक बार संयंत्र स्थापित हो जाने के बाद, आणविक ऊर्जा की उत्पादन लागत अन्य ऊर्जा स्रोतों की तुलना में प्रतिस्पर्धी हो सकती है।

### .7उत्सर्जन में कमी

आणविक ऊर्जा का उपयोग पारंपरिक जीवाश्म ईंधनों के उपयोग को कम करता है, जिससे वायु प्रदूषण में कमी आती है।

### .8वैश्विक ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करना

आणविक ऊर्जा कई देशों के लिए ऊर्जा आपूर्ति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जिससे वैश्विक ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने में मदद मिलती है।

इन सभी कारणों से, आणविक ईंधन आधुनिक ऊर्जा व्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और ऊर्जा उत्पादन के क्षेत्र में एक स्थायी विकल्प के रूप में माना जाता है।

### भारत के परमाणु ऊर्जा स्टेशन

भारत की वर्तमान परमाणु ऊर्जा संयंत्र क्षमता लगभग 7गीगावाट है, जिसके वित्त वर्ष 30तक 19गीगावाट होने का अनुमान है। फ्रांसीसी उपयोगिता ईडीएफ ने हाल ही में महाराष्ट्र में छह तीसरी पीढ़ी के ईपीआर परमाणु रिएक्टरों के लिए अपना अंतिम प्रस्ताव प्रस्तुत किया है। इस क्षमता के लिए टैरिफ 94.1से 31.5रुपये/किलोवाट घंटा तक है, जैसा कि परमाणु ऊर्जा विभाग द्वारा निर्धारित किया गया है। एक चार्ट अलग–अलग स्टेशन की क्षमता और डिस्कॉम को बिजली बिक्री के लिए स्वीकृत टैरिफ दिखाता है।

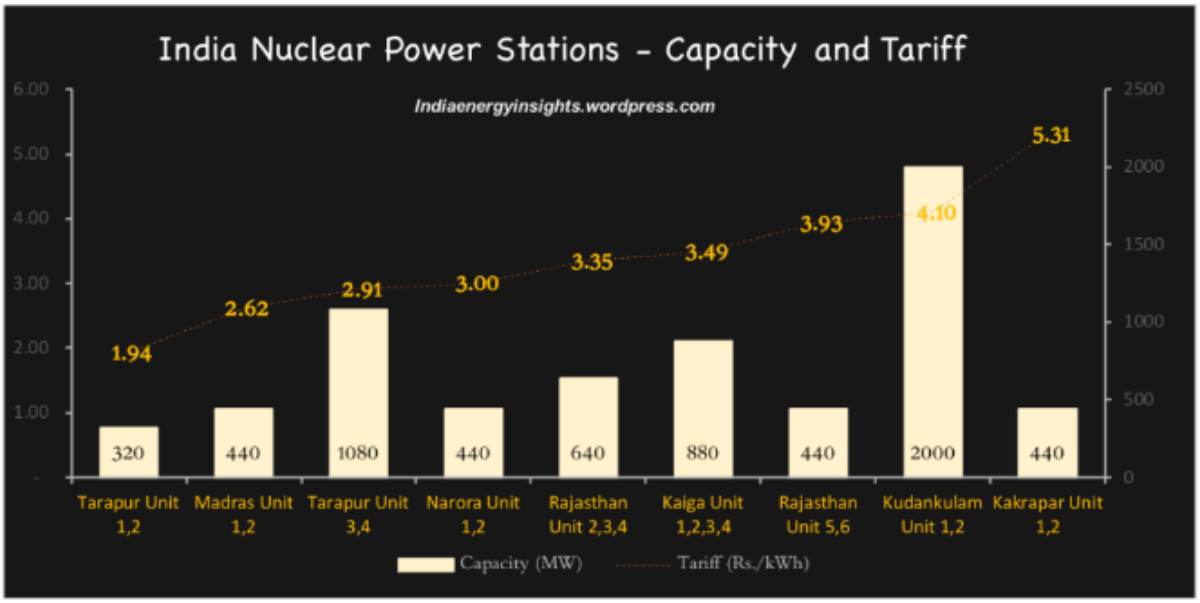


https://indiaenergyinsights.wordpress.com/2021/04/28/indias-nuclear-power-stations-capacity-and-tariff/

### 4.9 सारांश

ऊर्जा संसाधन, पवन शक्ति, ज्वार भाटा, प्राकृतिक गैस, जैव ईंधन, सौर ऊर्जा और परमाणु ईंधन सहित विभिन्न ऊर्जा संसाधनों की खोज, एक स्थायी ऊर्जा भविष्य में संक्रमण की

जटिलता को उजागर करती है। पवन और सौर जैसे नवीकरणीय स्रोत ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने और पर्यावरणीय प्रभावों को कम करने के लिए महत्वपूर्ण हैं। ज्वारीय ऊर्जा समुद्री शक्ति का दोहन करने के लिए एक अप्रयुक्त अवसर प्रदान करती है। प्राकृतिक गैस एक संक्रमणकालीन समाधान है, लेकिन निष्कर्षण पर्यावरणीय जोखिम पैदा करता है। जैव ईंधन उत्सर्जन को कम कर सकते हैं लेकिन भूमि उपयोग और खाद्य सुरक्षा के बारे में सवाल उठाते हैं। परमाणु ऊर्जा बड़े पैमाने पर, कम कार्बन बिजली की क्षमता प्रदान करती है, लेकिन सुरक्षा और अपशिष्ट निपटान महत्वपूर्ण चुनौतियां बनी हुई हैं। एक संतुलित और टिकाऊ ऊर्जा पोर्टफोलियो प्राप्त करने के लिए, नीति निर्माताओं, शोधकर्ताओं और उद्योग के नेताओं को नवाचार को बढ़ावा देने, निवेश का समर्थन करने और नियामक ढांचे को लागू करने के लिए सहयोग करना चाहिए। ऊर्जा स्रोतों का एक विविध मिश्रण ऊर्जा सुरक्षा को बढ़ा सकता है, आर्थिक विकास को बढ़ावा दे सकता है और भविष्य की पीढ़ियों के लिए पर्यावरण की रक्षा कर सकता है।

### 4.10 बोध प्रश्न–

- ऊर्जा संसाधन से आप क्या समझते हैं ?
- पवन शक्ति से आप क्या समझते हैं ?
- ज्वार भाटा से आप क्या समझते हैं ?
- प्राकृतिक गैस की विवेचना कीजिए।
- जैविक ईधन की विवेचना कीजिए।
- सौर ऊर्जा की विवेचना कीजिए।
- आणविक ईधन की विवेचना कीजिए।

## 4.11 उपयोगी पुस्तकें


- **Global Renewable Energy Outlook 2023**. International Renewable Energy Agency (IRENA). Retrieved from IRENA website.
- **U.S. Energy Information Administration (EIA)**. (2023). *Natural Gas Explained: Use of Natural Gas*. Retrieved from EIA website.
- **Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC)**. (2022). *Climate Change 2022: Impacts, Adaptation, and Vulnerability*. Cambridge University Press.
- **International Atomic Energy Agency (IAEA)**. (2021). *Nuclear Energy and the Environment*. Retrieved from IAEA website.
- **National Renewable Energy Laboratory (NREL)**. (2023). *Wind Technologies Market Report*. Retrieved from NREL website.
- **López, J. (2022)**. *Tidal Energy: Current Status and Future Prospects*. Renewable Energy Journal, 187, 106-115. DOI: 10.1016/j.renene.2022.05.015.
- **Renewable Fuels Association**. (2023). *Biofuel Production in the U.S.* Retrieved from RFA website.
- **World Nuclear Association**. (2023). *Nuclear Power and the Environment*. Retrieved from WNA website.
- **Bureau of Ocean Energy Management (BOEM)**. (2022). *Offshore Wind Energy Development*. Retrieved from BOEM website.
- **Sustainable Energy for All (SEforall)**. (2023). *Energy Access and Renewable Energy in Developing Countries*. Retrieved from SEforall website.

# इकाई – 5
# खाद्य संसाधन एवं खाद्य सुरक्षा

**5.0 उद्देश्य**
**5.1 प्रस्तावना**
**5.2 खाद्य संसाधन**
**5.3 खाद्य सुरक्षा**
**5.4 खाद्य सुरक्षा के मात्रात्मक स्वरूप**
**5.5 खाद्य सुरक्षा के गुणात्मक स्वरूप**
**5.6 भारत में खाद्य सुरक्षा की आवश्यकता**
**5.7 सार्वजनिक वितरण प्रणाली**
**5.8 संशोधित वितरण प्रणाली**
**5.9 लक्षित वितरण प्रणाली**
**5.10 बोध प्रश्न**
**5.11 उपयोगी पुस्तकें**

## 5.0 उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई में हम खाद्य संसाधन के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे
प्रस्तुत इकाई में खाद्य सुरक्षा को जानेंगे
प्रस्तुत इकाई में हम खाद्य सुरक्षा के मात्रात्मक स्वरूप की जानकारी प्राप्त करेंगे
प्रस्तुत इकाई में खाद्य सुरक्षा के गुणात्मक स्वरूप की जानकारी प्राप्त करेंगे
प्रस्तुत इकाई में भारत में खाद्य सुरक्षा की आवश्यकता की जानकारी प्राप्त करेंगे
प्रस्तुत इकाई में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की जानकारी प्राप्त करेंगे
इस इकाई में हम संशोधित तथा लक्षित वितरण प्रणाली की जानकारी प्राप्त करेंगे

## 5.1 प्रस्तावना

महात्मा गांधी ने कहा था की संसार में ऐसे भी लोग हैं जो इतने भूखे की उनके सामने भगवान रोटी के रूप में भी प्रकट हो सकते हैं इससे खाद्य संसाधनों की महत्ता भलीं–भांति समझी जा सकती है की मानव जीवन के लिए हवा, पानी, ऑक्सीजन के साथ–साथ कुछ और भी आवश्यक है तो वह भोजन है बिना भोजन के मनुष्य कुछ ही दिनों तक जीवित रह सकता है मानव सभ्यता के प्रारंभ में मनुष्य कुछ भी खाकर अपना पेट भर लेता था परंतु धीरे–धीरे मनुष्य ने स्वयं को विकसित करते–करते खाद्य संसाधनों को भी विकसित किया जिसके परिणामस्वरुप मनुष्य को पोषण युक्त भोजन की पहचान हुई एक समय पश्चात् पौष्टिक भोजन लेना मनुष्य के शारीरिक व मानसिक विकास के लिए बहुत ही आवश्यक हो गया है पौष्टिक भोजन के अभाव में मानव शरीर कुपोषित होकर विभिन्न बीमारियों से ग्रसित हो जाता है तथा कुपोषण का सर्वाधिक प्रभाव महिलाओं पर होता है जिससे कि कुपोषित महिला, कुपोषित बच्चों को जन्म देती है जिससे जन्म लेने वाले कुपोषित बच्चे की जीवन संभाव्यता बहुत ही कम होता है इसीलिए सही समय पर सही पोषण प्राप्त करना अति आवश्यक है अन्यथा कुपोषण का यह दुश्चक्र कभी भी समाप्त न होने वाला दुष्चक्र है।

कुपोषण की समस्या किसी भी देश की उच्च मृत्यु दर का के मुख्य कारणों में से एक है यह उसे देश के सर्वांगीण विकास पर नकारात्मक प्रभाव डालती है भारत भी इससे अछूता नहीं है

इसीलिए हर देश की सरकारों के लिए यह सुनिश्चित करना आवश्यक होता जा रहा है कि जनता को समय पर पोषण युक्त भोजन उपलब्ध हो सके इसके लिए प्रत्येक देश ने खाद्य संसाधन और खाद्य सुरक्षा होना बहुत जरूरी माना है संयुक्त राष्ट्र ने खाद्य संसाधन और खाद्य सुरक्षा को विश्व के समुचित विकास के लिए अति आवश्यक माना है और इससे सतत विकास लक्ष्यों में सम्मिलित किया जिसके लिए सतत विकास लक्ष्य 2 में जीरो हंगर अर्थात भुखमरी समाप्त करें, खाद्य सुरक्षा प्राप्त करें और बेहतर पोषण प्राप्त करें और सतत कृषि को बढ़ावा दें जैसे उद्देश्यों को शामिल किया जिसमें केवल खाद्य सुरक्षा ही नही बल्कि उसके अन्य सभी लक्ष्य किसी न किसी तरह खाद्य संसाधन और खाद्य सुरक्षा से संबंधित है।

**5.2 खाद्य संसाधन–**

खाद्य संसाधन का तात्पर्य उन सभी स्रोतों से है जिससे खाद्य पदार्थो की आपूर्ति होती है जिन्हें मुख्यतः दो प्रकार से वर्गीकृत किया गया है पहला वानस्पतिक स्त्रोत जो की हमें पेड़ पौधे वनस्पतियों से प्राप्त होते हैं जैसे अनाज, दालें, सब्जियां ,फल, खादय तेल, मसाले इत्यादि दूसरा स्त्रोत पक्षी, जंतुओं एवं जलीय जीवों से प्राप्त होता है जैसे दूध, मांस, अंडे, मछली इत्यादि इन्हीं स्रोतों के द्वारा मनुष्य अपने लिए भोजन आवश्यकताओं की पूर्ति करता है जिससे कि मनुष्य को प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन तथा खनिज लवण जैसे तत्व प्राप्त होते हैं जो की मनुष्य के शारीरिक एवं मानसिक विकास के लिए अति आवश्यक है।

**5.3 खाद्य सुरक्षा–**

राष्ट्रीय खाद्य और कृषि संस्थान अमेरिका के अनुसार खाद्य सुरक्षा का तात्पर्य एक परिवार के लिए एक सक्रिय और स्वस्थ जीवन के लिए हर समय सभी सदस्यों की पर्याप्त भोजन तक पहुंच खाद्य सुरक्षा में शामिल है पौष्टिक रूप से पर्याप्त और सुरक्षित खाद्य पदार्थ की तैयार उपलब्धता और सामाजिक रूप से स्वीकार तरीकों से स्वीकार खाद्य पदार्थ प्राप्त करने की सुनिश्चित क्षमता जबकि पोषण सुरक्षा का तात्पर्य खाद्य और पेय पदार्थ की निरंतर पहुंच और किफायती लागत पर उपलब्धता से है जो जनकल्याण को बढ़ावा देते हैं और विशेष रूप से आदिवासी जनजाति, अल्पसंख्यक आबादी, कम आय वाली आबादी और ग्रामीण दूरस्थ आबादी के बीच बीमारी को नियंत्रित करते हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ और कृषि संगठन के अनुसार– खाद्य सुरक्षा तब मौजूद होती है जब सभी लोगों को हर समय सक्रिय और स्वस्थ जीवन के लिए अपनी आहार संबंधी जरूरत और भोजन की प्राथमिकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त सुरक्षित और पौष्टिक भोजन तक भौतिक और आर्थिक पहुंच प्राप्त हो इस प्रकार खाद्य सुरक्षा का अर्थ न्यूनतम आवश्यक पोषण युक्त भोजन की उपलब्धता से है जिसे हर कोई उचित दर पर प्राप्त कर सके और यह हर जगह हर परिस्थिति में लोगों की पहुंच तक सुलभ हो सके।

भारत में खाद्य और पोषण सुरक्षा आजादी के समय भारत खाद्य पदार्थों की कमी से जूझ रहा था उसे अपनी खाद्यान्न जरूरतों को पूरा करने के लिए विदेश से अनाज आयत करना पड़ रहा था वर्ष 1950–51 में खाद्यान्नो का उत्पादन महज 50 मिलियन टन आज भारत ना केवल अपने खाद्यान्न आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम है बल्कि यह विश्व में खाद्यान्न पदार्थों के प्रमुख निर्यातक के रूप में शामिल है जिसमें भारत विश्व का सबसे बड़ा चीनी उत्पादक देश है और चावल और गेहूं उत्पादन में दूसरे स्थान पर है चावल गेहूं चीनी अन्य अनाज और मांस का अब तक का सबसे अधिक निर्यात किया गया है।

हमारे कृषि वैज्ञानिक व किसानों की अथक मेहनत और सरकार की प्रोत्साहित नीतियों के कारण आज भारत खाद्यान्न आयातक देश से खाद्यान्न निर्यातक देश बन गया आजादी के बाद से ही खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ इस बात पर भी विशेष जोर दिया गया कि

देश की अंतिम छोर पर स्थित लोगों तक खाद्यान्न समय पर उपलब्ध कराया जा सके खाद्यान्न और पोषण सुरक्षा को लेकर सरकार हमेशा से गंभीर रही है और समय–समय पर विशेष योजनाओं व वार्षिक बजट की प्रावधानों के द्वारा समाज के सभी वर्गों को पोषण युक्त भोजन उपलब्ध कराने का निरंतर प्रयास किया गया है।

खाद्य सुरक्षा का अर्थ सभी लोगों को सभी समयो पर पर्याप्त मात्रा में खाद्यान्न अर्थात भोजन उपलब्ध कराना ताकि वे सक्रिय व स्वस्थ जीवन व्यतीत कर सकें विश्व विकास रिपोर्ट के अनुसार "सभी व्यक्तियों के लिए सभी समय पर एक सक्रिय स्वस्थ जीवन के लिए पर्याप्त भोजन की उपलब्धि के रूप में की है" खाद्य एवं कृषि संस्था खाद्य सुरक्षा को स्पष्ट करते हुए कहा "सभी व्यक्तियों को सभी समय पर उनके लिए आवश्यक बुनियादी भोजन के लिए भौतिक एवं आर्थिक दोनों रूप में उपलब्धि के आश्वासन के रूप में की है" तथा पी.वी. श्रीनिवासन ने खाद्य सुरक्षा को स्पष्ट करते हुए कहा कि "इसके लिए यह आवश्यक है कि न केवल समग्र स्तर पर खाद्यान्नों की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध हो बल्कि व्यक्तियों परिवारों के पास उपयुक्त क्रय शक्ति भी हो ताकि वह आवश्यकता अनुसार खाद्यान्नों की खरीद कर सके" जहां तक पर्याप्त मात्रा का संबंध है इसके दो स्वरूप मात्रात्मक स्वरूप एवं गुणात्मक स्वरूप हैं।

**5.4 खाद्य सुरक्षा का मात्रात्मक स्वरूप–**

खाद्य सुरक्षा के मात्रात्मक स्वरूप से आशय किसी देश में खाद्यान्नों की उपलब्धि इतनी होगी वह देश में उत्पन्न होने वाली समस्त माँगों की पूर्ति आसानी से कर सके अर्थात समस्त जनसंख्या के लिए खाद्य पदार्थों की भौतिक उपलब्धि हो सके साथ ही साथ खाद्य पदार्थ को प्राप्त करने के लिए समस्त जनसँख्या के पास पर्याप्त क्रय शक्ति हो अतः मात्रात्मक स्वरूप समग्र जनसंख्या के लिए खाद्यान्नों की मात्रा उपलब्ध कराने से है जो की एक संकुचित दृ ष्टिकोण है।

**5.5 खाद्य सुरक्षा का गुणात्मक स्वरूप–**

खाद्य सुरक्षा के गुणात्मक पहलू से है अर्थात किसी देश की जनसंख्या को खाद्यान्नों की पर्याप्त मात्रा की उपलब्धता के साथ–साथ जनसंख्या की पोषण आवश्यकताओं को भी पूरा करने से है अर्थात सभी के लिए खाद्यान्नों की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध हो साथ ही साथ अनाज, दाल, दूध, फल, सब्जियां, अंडे, मछली और मांस, हरी सब्जियां आदि पौष्टिक आहार संपूर्ण जनसंख्या के लिए सुनिश्चित की जा सके जो कि वर्तमान समय में किसी भी देश के लिए चुनौती पूर्ण है अतः इस समस्या से निपटने के लिए भारत सरकार द्वारा सार्वजनिक वितरण प्रणाली, समेकित बाल विकास सेवाएं तथा दोपहर भोजन कार्यक्रम जैसे विभिन्न कार्यक्रम अपनाए गए हैं।

5.6 **भारत में खाद्य सुरक्षा की आवश्यकता–**

**तीव्र जनसंख्या वृद्धि–**

भारत में लगातार तीव्र जनसंख्या वृद्धि हो रही हैं जिससे समस्त जनसख्या के लिए खाद्य पदार्थ को उपलब्ध कराना चुनौती पूर्ण है अतः भारत में बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए खाद्यान्न उत्पादन में भी तीव्र वृद्धि करने की आवश्यकता है जिससे कि सभी को पर्याप्त मात्रा में खाद्य पदार्थ की उपलब्धता हो सके।

**कुपोषण–**

भारत वर्तमान में कुपोषण अर्थात भोजन में न्यूनतम ऊर्जा की आवश्यकता को पूरा करने के लिए पर्याप्त कैलोरी के अभाव की समस्या से जूझ रहा है जिसका पता हमें ग्लोबल हंगर इंडेक्स रिपोर्ट 2022 में 121 देशो में भारत का 107 वां स्थान से यह स्पष्ट होता है कि भारत से भुखमरी का नामोनिशान मिटाने के लिए अभी लंबा समय तय करना होगा जिसके लिए

भारत सरकार 2030 के सतत विकास लक्ष्यो को प्राप्त करने के लिए पूरी दृढ़ता से वचनबद्ध है भारत में इस समय कुपोषण की जो स्थिति है उसे नीतिगत पहल के प्रति उच्च स्तर की राष्ट्रीय वचनबद्धताओं का औचित्य साबित होता है ऐसी पहल से देश में तमाम तरह के कुपोषण से निपटने के लिए प्रमाण और जानकारी पर आधारित होनी चाहिए।

**जल का अभाव–**

आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन के अध्ययन के अनुसार वर्ष 2050 तक विश्व की आधी जनसंख्या को पीने योग्य स्वच्छ पानी की समस्या का सामना करना पड़ेगा पानी की कमी के परिणाम स्वरुप कृषि उत्पादन भी अत्यधिक प्रभावित होगा एवं खाद्य सुरक्षा का मुद्दा भी एक समस्या बनकर उभर सकता है।

**कृषि योग्य भूमि के आकार में कमी–**

भूमि सीमित संसाधनों में से एक है जिसमें की कृषि योग्य भूमि वर्तमान समय में शहरीकरण तथा और अवसंरचनात्मक विकास के चलते कृषि योग्य भूमि के आकार में लगातार कमी होती जा रही है जिससे कि कृषि पर खाद्यान्नों के लिए निर्भरता बढ़ती जा रही है जनसंख्या के तीव्र वृद्धि के दबाव के कारण खाद्यान्नों की मांग भी लगातार बढ़ रही जबकि आपूर्ति मांग की तुलना में कम हो रही है तथा खाद्यान्नों की उत्पादकता में भी पर्याप्त मात्रा में वृद्धि न हो पाने के कारण खाद्यान्नों की कीमतों में लगातार वृद्धि हो रही है जिससे कि भारत में गरीबों के लिए वर्ष भर खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना एक बड़ी चुनौती बनती जा रही है।

**जलवायु परिवर्तन–**

वर्तमान समय में खाद्यान्न के लिए जलवायु परिवर्तन एक बड़ी चुनौती है जिसके कारण बढ़ती हुई प्राकृतिक आपदाएं बाढ़, सूखा, अकाल, सुनामी, भू–स्खलन आदि खाद्यान्नों के उत्पादन में समस्याएं उत्पन्न कर रही हैं।

**पर्याप्त मात्रा में बफर स्टॉक रखना–**

योजना आयोग के तकनीकी ग्रुप द्वारा 1988 में 150 तथा 160 लाख टन बफर स्टॉक रखने की सिफारिश की थी जिसका मूल उद्देश्य सट्टेबाजो तथा व्यापारियों द्वारा बाजार में कीमतों के नियंत्रण को प्रभावित करने के लिए जिससे कि उपभोक्ताओं को किसी प्रकार की कोई समस्या उत्पन्न ना हो तथा प्राकृतिक आपदाओं सुखा, बाढ, भूकंप, आदि आने की स्थिति में सभी को खाद्यान्न आसानी से उपलब्ध कराया जा सके।

**5.7 सार्वजनिक वितरण प्रणाली–**

सार्वजनिक वितरण प्रणाली का मुख्य उद्देश्य उपभोक्ताओं को सस्ती कीमतों पर आवश्यक उपभोग वस्तुएं उपलब्ध कराना ताकि उन्हें बढ़ती हुई कीमतों के प्रभाव से बचाया जा सके और जनसंख्या को न्यूनतम आवश्यक उपभोग स्तर प्राप्त करने में सहायता दी जा सके इस प्रणाली में संपूर्ण जनसंख्या को शामिल किया गया जिसमें किसी वर्ग विशेष तक सीमित नहीं रखा गया सार्वजनिक वितरण प्रणाली 1960 एवं 70 के दशक में खाद्य दुर्लभता के समय उपभोक्ताओं के लिए कीमत स्थिरीकरण के उपकरण के रूप में कार्य करने लगी जिससे कि निजी व्यापारी द्वारा दुर्लभता की स्थिति में कीमत वृद्धि कर अधिक लाभ प्राप्त न कर सके खाद्यान्नों के अभाव की स्थिति में खाद्यान्न प्रबंधन और उचित मूल्य पर खाद्यान्नों के वितरण के लिए सार्वजनिक वितरण प्राणाली तैयार की गई थी जिसे राज्य एवं केंद्र सरकार के अधीन चलाया गया सार्वजनिक वितरण प्रणाली विशेष रूप से खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने एवं भुखमरी से निपटने में मुख्य भूमिका निभाई साथ ही साथ खाद्यान्नों के मूल्य वृद्धि को रोकने में सहयोग किया तथा देश के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में उपभोक्ताओं तक खाद्यान्न पहुंच को सुनिश्चित किया 1960 के दशक में हरित क्रांति की सफलता के बाद 1970–80 के दशक में

सार्वजनिक वितरण प्रणाली का विस्तार जनजाति तथा अधिक गरीबी वाले क्षेत्रों में इस कल्याणकारी कार्यक्रम का दर्जा दिया गया तथा 1985 में यह प्रयास किया गया कि सभी जनजातीय ब्लॉकों में सस्ती दर पर खाद्यान्न उपलब्ध कराया जाए 1992 तक सार्वजनिक प्रणाली का लाभ बिना किसी विशेष वर्ग को लक्षित किए सभी उपभोक्ताओं को सरकारी राशन की दुकानों या उचित दर की दुकानों के माध्यम से जिसमें मुख्यतः गेहूं चावल प्राप्त कराया जाता था तथा मोटे अनाज जैसे ज्वार, बाजरा, मक्का आदि के वितरण पर बहुत कम ध्यान दिया जाता था।

### 5.8 संशोधित वितरण प्रणाली–

जिसे जून 1992 में प्रारंभ करके 1775 विकास खंडो में लागू किया गया जहां पर सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम, एकीकृत जनजाति विकास परियोजना, मरुस्थल विकास कार्यक्रम राज्य सरकारों के परामर्श से पहचान किए गए कुछ विशिष्ट पहाड़ी क्षेत्रों को शामिल करके सार्वजनिक वितरण प्रणाली शुरू करने का प्रयास किया गया जिसमें खाद्यान्नों को केंद्रीय निर्गत मूल्य से 50 प्रतिशत कम कीमत पर जारी किया गया था इस प्रणाली के तहत अनाज की मात्रा 20 किलो प्रति कार्ड प्रति परिवार तक थी जिसे राज्य सरकारों द्वारा पहचान किए गए क्षेत्र में उचित मूल्य की दुकानों तक सार्वजनिक प्रणाली के अंतर्गत शामिल न होने वाले परिवारों के अतिरिक्त राशन कार्ड इत्यादि जैसी अवसंरचना संबंधी आवश्यकताओं और सार्वजनिक वितरण प्रणाली की दुकानों के वितरण हेतु चाय, नमक, दाल, साबुन आदि अतिरिक्त वस्तुओं की पहुंच सुनिश्चित करने के लिए सरकार द्वारा प्रयास किया गया था।

### 5.9 लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली–

इसे भारत सरकार ने जून 1997 में प्रारंभ किया जिसके अंतर्गत राज्यों द्वारा गरीबों के लिए अनाज वितरण की पक्की व्यवस्था की गई थी जिसके अंतर्गत गरीबों की पहचान कर उन तक पारदर्शी एवं उत्तरदाई ढंग से अनाज पहुंचना था जिसके लिए राज्य सरकारों को सुझाव दिए गए कि ग्राम पंचायत और नगर पालिकाओं को शामिल करते हुए गरीबी रेखा से नीचे (बी.पी.एल.) रहने वाले परिवारों की पहचान करें तथा इसमें गरीबी रेखा से नीचे उन परिवारों को रखने की व्यवस्था की गई जिनकी वार्षिक आय 15000 से कम है शुरू में प्रति परिवार 10 किलोग्राम खाद्यान्न प्रति माह देने की व्यवस्था की गई जिसे बाद में बढाकर 25 किलोग्राम प्रति माह कर दी गई तथा 1 अप्रैल 2002 को राशन की मात्रा को बढ़ाकर 35 किलोग्राम प्रति माह प्रति परिवार कर दिया गया।

लक्षित वितरण प्रणाली को अधिक केंद्रित बनाने तथा गरीब आबादी के अत्यंत गरीब वर्ग तक पहुंचने के लिए अंत्योदय अन्न योजना को दिसंबर 2000 में शुरू किया गया तथा गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले बी.पी.एल. परिवारों और गरीबी रेखा से ऊपर रहने वाले ए.पी.एल. परिवारों के लिए निर्गमन कीमतों में काफी अंतर रखा गया मार्च 2000 में सरकार ने निर्गमन कीमत को गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले बी.पी.एल. परिवारों के लिए भारतीय खाद्य निगम की आर्थिक लागत का 50 प्रतिशत और गरीबी रेखा से ऊपर रहने वाले ए.पी.एल. परिवारों के लिए आर्थिक लागत के बराबर सुनिश्चित किया गया उदाहरण के लिए हम यह समझ सकते हैं कि भारतीय खाद्य निर्गमन की वर्ष 2020–21 में आर्थिक लागत 1000 प्रति कुंतल थी इसलिए गरीब रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों के लिए निर्गमन कीमत ₹ 500 प्रति कुंतल निर्धारित की गई तथा गरीबी रेखा से ऊपर रहने वालों के लिए निर्गमन कीमत 1000 प्रति कुंतल निर्धारित की गई जिसके परिणाम स्वरूप गरीबी रेखा के ऊपर रहने वाले परिवारों ने सार्वजनिक वितरण प्रणाली से खाद्यान्नों की खरीद में बहुत कमी कर दी गई जिससे की भारतीय खाद्य निगम के पास भारी भंडार जमा हो गए।

## 5.10 बोध प्रश्न–

1–खाद्य संसाधन से आप क्या समझते हैं?
2–खाद्य सुरक्षा की व्याख्या कीजिए।
3–खाद्य सुरक्षा के मात्रात्मक स्वरूपों की व्याख्या कीजिए।
4–खाद्य सुरक्षा के गुणात्मक स्वरूप से आप क्या समझते हैं?
5–भारत में खाद्य सुरक्षा की आवश्यकता की विवेचना कीजिए।
6–भारतीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली से आप क्या समझते हैं?
7–संशोधित वितरण प्रणाली क्या है?
8–लक्षित वितरण प्रणाली की विवेचना कीजिए।

## 5.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें–

पर्यावरणीय अध्ययन सतीश कुमार दीप शिखा बी.बी.पी.पब्लिकेशन प्रा.लि. मेरठ
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र विविध आयाम अरुण कुमार सिंह
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र एम,एल.झिंगन
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र वी.सी. सिन्हा
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र आर.एन भटाचार्या

# इकाई–6
# जैव विविधिता एवं क्षय

**6.0 उद्देश्य**
**6.1 प्रस्तावना**
**6.2 जैव विविधता**
**6.3 जैव विविधता के प्रकार**
**6.4 जैव विविधता संरक्षण के लिए विशेष प्रयास**
**6.5 जैव विविधता के महत्व**
**6.6 जैव विविधता क्षय का आशय**
**6.7 विविधता के क्षय के प्रमुख कारण**
**6.8 जैव विविधता क्षय के प्रभाव**
**.6.9 जैविक विविधता क्षय का मानव जीवन पर प्रभाव**
**6.10 सारांश**
**6.11 बोध प्रश्न**
**6.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें**

## 6.0 उद्देश्य

1–प्रस्तुत इकाई में हम जैव विविधता के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
2–प्रस्तुत इकाई में जैव विविधता के प्रकारों के बारे में जानेंगे।
3– इस इकाई से हम जैव विविधता संरक्षण के प्रयासों को जानेंगे
4–इस इकाई में हम जैव विविधता के महत्व समझेंगे

5–इस इकाई में हम जैव विविधता के क्षय के प्रमुख कारणों की जानकारी प्राप्त करेंगे।
6–इस इकाई में जैव विविधता क्षय के मानव जीवन पर प्रभाव को जानेंगे।

## 6.1 प्रस्तावना–

यदि हम अपने चारों ओर हरे–भरे स्थान का निरीक्षण करते हैं तो हम यह पाते हैं कि छोटी–छोटी विभिन्न प्रकार की घासो से लेकर विभिन्न प्रकार के पेड़ पौधों विशाल वर्षों तक पादप जीवन की वृहत विविधता हमारे चारों ओर दिखाई देती है इसी प्रकार जंतु जीवन जैसे छोटे–छोटे कीट, पतंग से लेकर बड़े जानवर जैसे हाथी तक भी दिखाई पड़ते हैं इनके अतिरिक्त मृदा में अनेक सूक्ष्मजीव भी पाए जाते हैं जो हमें आंखों से नहीं दिखाई पड़ते उनको देखने के लिए हमें सूक्ष्मदर्शी लेंसों की आवश्यकता पड़ती है जो पृथ्वी के पारिस्थितिक तंत्र के लिए यह अतिआवश्यक है इन्हीं विभिन्न प्रकार के जीवो का पाया जाना जैविक विविधता अथवा संक्षेप में कहे तो जैव विविधता को प्रदर्शित करता है जो की एक स्थान से दूसरे स्थान परिवर्तन भी पर भिन्न–भिन्न दिखाई देते है।

## 6.2 जैव विविधता–

जैव विविधता शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग वॉल्टर जी रोजन द्वारा वर्ष 1985 में किया गया जिसमें विभिन्न समुदायों की प्रजातियां की विविधता और जीवन की परिवर्तनशीलता को बताएं यह

प्रजातियों के भीतर प्रजातियों के मध्य और समुदायों के बीच परिवर्तनशीलता को प्रदर्शित करती है विश्व के प्रत्येक क्षेत्र में पर्यावरण विभिन्नता के कारण किसी न किसी रूप में विविधता पाई जाती है जलवायु परिवर्तन के साथ ही भौगोलिक क्षेत्र के पर्यावरणीय दशाओं में भी परिवर्तन होते रहते हैं जिसके कारण वनस्पति एवं जीव जंतुओं में अनुवांशिक तथा प्रजाति परिवर्तन होते हैं।

जैव विविधता एक प्रकार का मापक है जो पृथ्वी पर जीवन के स्वास्थ्य को मापता है और उसे एक समृद्ध और अधिक विविधता प्रदान करता है जिसमें पर्यावरण भी अधिक टिकाऊ होता है जो इसमें रहने वाले मनुष्य जीव जंतु पेड़ पौधे कीट पतंग इत्यादि के लिए जीवन और स्वास्थ्य समृद्धि सुनिश्चित करता है जो कि जैव विविधता पारिस्थितिक तंत्र के प्रत्येक जीवन रूप की स्थिरता और लचीलेपन में योगदान देता है।

वर्ष 1992 में UNCED/ यूनिकैड जैव विविधता पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन के पृथ्वी सम्मेलन के दौरान जैव विविधता पर बने अंतरराष्ट्रीय संविधान के अनुच्छेद 2 के अनुसार जैव विविधता सभी स्रोतों से आए संजीव जीवों के बीच भिन्नता जिसमें स्थलीय, समुद्री तथा अन्य जलीय पारिस्थितिक तंत्र तथा वह पारिस्थितिक समिश्रण जिनके वे भाग सम्मिलित हैं जिसमें प्रजातियों के भीतर की उनके बीच आपस की तथा पारिस्थितिकी तंत्रों की विविधता सम्मिलित होती है।

## 6.3 जैव विविधता के प्रकार–

यह जैव विविधता के प्रकार आपस में परस्पर रूप से जुड़े हुए हैं जो की एक दूसरे को प्रभावित करते हैं जो की एक जैव विविधता को होने वाले नुकसान को अन्य प्रकार के पारिस्थितिक तंत्र के समग्र स्वास्थ्य पर भी नकारात्मक रूप में प्रभावित करता है।

### 6.3.1 अनुवांशिक विविधता–

यह प्रजाति के अंदर ही जीन की विविधता से संबंधित है जो की एक ही जीव के विभिन्न रूप में पूर्ण जीन में किसी विशेष गुण को निर्धारित करने वाले विशेषक अथवा गुणसूत्र संरचनाओं में होती है अनुवांशिक विविधता किसी प्रजाति की जनसंख्या को उसके परिवेश में ढालने और प्राकृतिक चयन पर प्रतिक्रिया करने में समर्थ बनती है यदि किसी प्रजाति में अधिक अनुवांशिक विविधता होती है तो वह अच्छे ढंग से बदली हुई पर्यावरणीय स्थितियों को अपना सकती है यही जाति उद्‌भव अथवा नई जाति के विकास का आधार है किसी समुदाय की कुल अनुवांशिक विविधता उसे स्थिति में अधिक होती है जब उसमें प्रजातियों की संख्या अधिक होती हैद्य अनुवांशिक विविधता जो किसी दी गई प्रजाति के भीतर जीन की विविधता है किसी प्रजाति के प्रत्येक व्यक्ति में जीन का एक अनूठा संयोजन होता है और अधिक अनुवांशिक विविधता प्रजातियों के अस्तित्व में योगदान दे सकती है।

### 6.3.2 प्रजाति विविधता–

प्रजाति विविधता को किसी निश्चित क्षेत्र में पाई जाने वाली सामान प्रजातियों की संख्या के आधार पर किसी निश्चित भू–भाग आवास में उनकी दुर्लभता या प्रचुरता के आधार पर मापा जा सकता है यह क्षेत्र के भीतर जातियों के विभिन्न प्रकारों से संबंधित है सामान्यत जितनी अधिक प्रजाति समृद्धता होती जाती है उतनी ही अधिक प्रजाति विविधता होती है वह क्षेत्र अधिक विविध होगा जिसमें वर्गिकीय रूप से संबंधित प्रजातियां अधिक होंगी।

### 6.3.3 पारिस्थितिक तंत्र विविधता–

पारिस्थितिक तंत्र विविधता जो आवासों जीवित समुदायों और पारिस्थितिकी तंत्रों की संख्या और प्रचुरता को परिभाषित करती है जिनके भीतर विभिन्न जीव रहते हैं और विकसित होते है।

पारिस्थितिक तंत्र के स्तर पर विविधता प्रायः तीन प्रकार की होती है।

### 6.3.3.1 अल्फा विविधता–

समुदाय के भीतर विविधता अल्फा विविधता कहलाती है इसका अर्थ जीवों की उस विविधता से है जो एक ही समुदाय आवास में रहते हैं। किसी निश्चित क्षेत्र में उपस्थित सभी प्रकार की प्रजातियां की संख्या अल्फा विविधता को प्रदर्शित करती है जिसके आकलन से उस क्षेत्र की जैव विविधता का ज्ञान होता है अल्फा दो क्षेत्र की जैव विविधता की तुलना करने पर जैव विविधता के संबंध में आसानी से विचार बनाया जा सकता है

### 6.3.3.2 बीटा विविधता–

समुदायों के मध्य विविधता को बीटा विविधता कहते हैं यह आवास अथवा समुदायों की प्रवणता के आधार पर प्रजाति के विस्थापित होने की दर है। बीटा विविधता जैव विविधता पर्यावरण के किसी गुण के बदलने के साथ प्रजातियों के संरचना के परिवर्तन को दर्शाती है यदि समुद्र से ऊंचाई परिवर्तन के साथ वनस्पतियों के प्रकार उनकी संख्या का अनुपात परिवर्तित होता है तो यह उच्च बीटा विविधता को प्रमाणित करता है लेकिन यदि विभिन्न ऊंचाई पर एक ही प्रकार की वनस्पतियां मिलती हैं तो विविधता की कमी है

### 6.3.3.3 गामा विविधता–

किसी क्षेत्र की संपूर्ण विविधता गामा विविधता कहलाती है यह संपूर्ण हो भूदृश्य अथवा भौगोलिक क्षेत्र में आवासों की विविधता से प्राप्त होती है। गामा विविधता यह बड़े भौगोलिक क्षेत्र से संबंधित है भौगोलिक परिवर्तन के साथ जिस दर से नई प्रजातियां एक प्रकार के आवास में नए स्थान पर पाई जाती हैं वह गामा विविधता को प्रदर्शित करते हैं इस प्रकार गामा विविधता विभिन्न स्थानों पर एक से आवास में प्रजातियों की विविध उत्पादन से संबंधित है जैविक विविधता कई प्रजातियों के संख्या में कमी या वृद्धि होना ही नहीं है यह जीवन परिवर्तन का भी द्योतक है।

जैव विविधता = प्रजातियों की संख्या × जैव् विविधता × प्रजातियों के बीच परस्पर क्रिया

हमको यह निश्चित रूप से यह ज्ञात नहीं की विश्व में कितनी प्रजातियां है लेकिन हम यह ज्ञात करने में सक्षम हुए हैं की कितनी प्रजातियां विलुप्त हो गई हैं तथा कुछ विलुप्त होने के कगार पर हैं पिछले 200 वर्षों के अध्ययन में 75 प्रतिशत कृषि संबंधी अनुवांशिक जातियां विलुप्त हो चुके हैं जिसको जैव विविधता परस्पर निर्भरता अनुवांशिक समूह का निर्माण करते हैं जैव विविधता और इसके महत्व को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर वर्ष 1992 पहली बार स्वीकार करते हुए रियों में पर्यावरण और विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में जैविक विविधता समझौते पर हस्ताक्षर किया गया जिसमें जैव विविधता संरक्षण जय संसाधनों का टिकाऊ प्रयोग और संयुक्त प्रयोग से होने वाले लाभों का उचित वितरण इस समझौते में विभिन्न विषयों को भी शामिल किया गया जिसमें है बौद्धिक संपदा अधिकार, वन आदि शामिल करते हुए 170 देश के राष्ट्राअध्यक्षों के हस्ताक्षर हुए और 104 से अधिक देशों द्वारा इसकी संस्तुति की गयी जिसका उद्देश्य जैव विविधता का संरक्षण एवं इसके घटकों का टिकाऊ प्रयोग अनुवांशिक स्रोतों से होने वाले लाभ का समान रूप से वितरण इस कारण इसमें स्थिति की आर्थिक और सामाजिक पक्षों पर समुचित रूप से ध्यान दिया गया।

## 6.4 जैव विविधता संरक्षण के लिए विशेष प्रयास–

जैव विविधता विश्व संरक्षण कार्य योजना में जल संरक्षण के लिए निम्नलिखित तथ्यों पर ध्यान दिया गया

संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण के लिए विशेष प्रयास

प्रजातियों को लुप्त होने से बचाने के लिए विशेष योजनाओं एवं आधुनिक प्रबंधन विधियों का उपयोग
खाद्यान्नों, चारे, पशुधन एवं अन्य प्रजातियों का संरक्षण
वन्य जीवों के आवास को पहचान कर उसकी सुरक्षा
प्रजातियों के विकसित होने तथा फलने–फूलने के लिए अनुकूल सुरक्षित स्थान
वन्यजीवों एवं वनस्पतियों का नियमानुसार अंतर्राष्ट्रीय व्यापार

### 6.4.1 जैव विविधिता को बढ़ाने वाले कारक–

किसी स्थान विशेष पर जैव विविधता को बढ़ाने वाले महत्वपूर्ण कारक निम्नलिखित है
भौतिक रूप से अनेक प्रकार का आवास
पर्यावरण के ताप वर्षा, पोषक तत्वों की आपूर्ति में परिवर्तन
पोषण स्तर पर अधिक विविधता जैसे अनेक प्रकार की वनस्पतियां
अनुक्रमण की मध्य स्थित
अच्छी उपजाऊ मृदा

### 6.4.2 जैव विविधता को घटाने वाले कारक–

पर्यावरणीय तनाव
किसी भी आवश्यक संसाधन में कमी
अत्यधिक अशांति एवं उपद्रव
किसी बाहरी प्रजाति का प्रवेश
अन्य पारिस्थितिक तंत्रों से भौगोलिक रूप से अलग होना
किसी कारक जैसे ताप, पानी की आपूर्ति, पी.एच का मान आदि की सहनशीलता की सीमा से कम या अधिक होना
एक ही प्रजाति की वनस्पतियों की अधिकता इत्यादि

## 6.5 जैव विविधता का महत्व–

जैव विविधता को महत्व देने के विभिन्न कारण है जैसे कुछ उपयोगितावादी कुछ आंतरिक अर्थात हम जैव विविधता को मनुष्य को प्रदान की जाने वाली उपयोगी तत्वों एवं एवं इसके मूल्यों के लिए महत्व देते हैं जो की मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करता है जैसे भोजन, ईंधन, आवश्यक दवाएं इत्यादि साथ ही साथ पारिस्थितिकी तंत्र, जलवायु विनियम, जल शोधन, पोषण चक्रण और कृषि कीटों के नियंत्रण जैसी महत्वपूर्ण सेवाएं देता है जैव विविधता उन संभावित लाभों के लिए भी मूल्य व्यक्त करता है जिन्हें अभी तक खोज नहीं जा सका है जैसे नई दवाइयां और अन्य जीव पौधे तथा संभावित अज्ञात सेवाएं जैव विविधता का मानव के लिए सांस्कृतिक मूल्य भी उदाहरण के लिए आध्यात्मिक और धार्मिक कारणों से जैव विविधता का आंतरिक मूल्य इसके अंतर्गत मूल्य को संदर्भित करता है जो किसी और चीज या किसी मूल्य से स्वतंत्र हैं।

जैव विविधता महत्वपूर्ण है क्योंकि यह एक थर्मामीटर है जो पृथ्वी पर जीवन के स्वास्थ्य को मापता है । एक समृद्ध और अधिक विविध पर्यावरण भी अधिक टिकाऊ होता है , जो इसमें रहने वाले लोगों के लिए जीवन और समृद्धि सुनिश्चित करता है, चाहे वे मनुष्य हों, जानवर हों या पौधे। जैव विविधता पारिस्थितिकी तंत्र के कामकाज और पूरे ग्रह की भलाई के लिए मौलिक है। प्रत्येक जीवन रूप की एक अनूठी भूमिका होती है और यह पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता और लचीलेपन में योगदान देता है। उदाहरण के लिए, पौधे

प्रकाश संश्लेषण करते हैं और ऑक्सीजन प्रदान करते हैं, मधुमक्खियां और अन्य कीड़े पौधों के निषेचन के लिए महत्वपूर्ण हैं, शिकारी शाकाहारी आबादी को नियंत्रण में रखते हैं, इत्यादि।

जैव विविधता मानव को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से विभिन्न प्रकार की सेवाएं प्रदान करता है जैसे कि भोजन, चिकित्सा, दवा, फाइबर, रेशा, रबर, लकड़ी इत्यादि रूपों में संसाधनों का स्रोत है अतः वर्तमान में देखा जाए तो 50 प्रतिशत से अधिक दवाइयां विभिन्न पादपो की 140 प्रजातियों से प्राप्त होने वाले पदार्थ से प्राप्त की जाती हैं जो की मूल्यवान औषधियों के रूप में विकसित होती हैं जैसे कि मॉर्फिन, दर्द निवारक औषधि के रूप में, कुनैन सिनकोना लेजिरिएना मलेरिया के उपचार के रूप में, टैक्साल कैंसर रोधी औषधि जो यू वृक्ष टैक्सस रैविफोलिया टैबैकाटा की छाल से प्राप्त की जाती है।

वर्तमान समय में आधुनिक कृषि में जैव विविधता का प्रयोग तीन प्रकार से किया जा रहा है।

नई फसलों के स्रोत के रूप में

उन्नत किस्म के स्रोत पदार्थ के रूप में

नए जैविक कीटनाशकों के स्रोत के रूप में

कार्बोहाइड्रेट वसा तेल, रेशे फाइबर आदि की फसलों के लिए अधिक से अधिक नई प्रजातियों की खोज की जानी चाहिए व्यावसायिक रूप से देशीकृत किस्म को अनेक संबंधियों के साथ संकरण कर उनके विशेष को उन्नत किया जाता है मानव के लिए जैव विविधता का सौंदर्य मूल्य भी है इसमें पर्यावरण पर्यटन, पक्षी निरीक्षण, वन्य जीव, पालतू जानवरों का रखरखाव, बागवानी तथा लोगों को मनोरंजन प्रदान करना यह सारे प्राचीन काल से ही लोग पादपो, पक्षियों इत्यादि का पालन करते आए हैं जो की मानव जीवन के लिए उपयोगी हुए हैं।

अतः जैव विविधता पारिस्थितिक संतुलन अथवा पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता को बनाए रखने के लिए आवश्यक है यह पारिस्थितिक तंत्रों तथा व्यक्तिक रूप में भी प्रजातियों से वस्तुओं तथा सेवाओं को बनाए रखने तथा उनके उचित उपयोग के लिए आवश्यक है इन सेवाओं में वायुमंडल के गैसीय संयोजन को बनाए रखना, वन तथा महासागरीय तंत्रों द्वारा जलवायु नियंत्रण पादपो का कीटों और पक्षियों द्वारा प्राकृतिक नाशक जीव नियंत्रण मृदा का निर्माण तथा संरक्षण, जल का संरक्षण तथा शुद्धिकरण एवं पोषण तत्वों का चक्रण आदि सम्मिलित है।

## 6.6 जैव विविधता क्षय का आशय –

जैव विविधता क्षय का अभिप्राय यह है कि जैविक विविधता संपन्न प्राकृतिक संसाधनों में कमी होना या उनका लुप्त हो जाना जिससे कि पृथ्वी पर रहने वाले जीवों की विविधता तथा उसके जैविक संगठन के विभिन्न स्तर और उनसे संबंधित आनुवांशिक परिवर्तनशीलता तथा पारिस्थितिक तंत्र में प्राकृतिक प्रारूप में परिवर्तन से होता है

जैव विविधता विश्व के किसी दिए गए क्षेत्र में जीनों, प्रजातियों का पारिस्थितिक तंत्रों की संपूर्णता है जैव विविधता को प्रजातियों की विभिन्नता या विविधता अथवा किसी प्राकृतिक समुदाय अथवा आवास में अन्य पादप जंतुओं व सूक्ष्म जीवों के वर्गों अथवा किसी परिवेश विशेष के समुदायों पारिस्थितिक विविधता अथवा प्रजातियों के बीच अनुवांशिक भिन्नता के रूप में परिभाषित होती है।

जैव विविधता का अभिप्राय पृथ्वी पर पाए जाने वाले विविध प्रकार के जीवों से है अर्थात जैव विविधता किसी निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में पाए जाने वाले विभिन्न जीवो एवं वनस्पतियों की संख्या से है जिसमें विभिन्न प्रकार के पौधों प्राणियों एवं सूक्ष्मजीवों को शामिल किया जाता है जो कि केवल जीवों की विविधताओं तक ही सीमित न होकर इसके अंतर्गत पर्यावरण को भी सम्मिलित किया जाता है जिसमें यह विभिन्न जीव निवास करते हैं तथा जैव विविधता जीवो

तथा उनके मध्य विविधताओं को देखा जाता है अर्थात जैव विविधता विभिन्न पारिस्थितिक तंत्र में उपस्थित जीवन के बीच तुलनात्मक विविधताओं का आकलन है।
जिसके लिए वर्ष 1992 में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन रियो डी जेनेरियों में जैव विविधता की परिभाषा स्पष्ट की गई जिसमें कहा गया कि जैव विविधता समस्त स्रोतों यथा अंतर क्षेत्रीय स्थलीय सागरीय एवं अन्य जलीय पारिस्थितिक तंत्र के जीवन के मध्य अंतर और साथ ही उन सभी पारिस्थितिक समूह जिनके यह भाग है में पाई जाने वाली विविधताएं हैं इसमें एक प्रजाति के अंदर पाई जाने वाली विविधता विभिन्न जातियों के मध्य विविधता तथा पारिस्थितिकी विविधता सम्मिलित होती है।

## 6.7 जैव विविधता क्षय के प्रमुख कारण–

जैव विविधता का क्षय एक वैश्विक संकट है वर्तमान में पृथ्वी पर शायद कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं बचा है जो पारिस्थितिक आपदाएं ना झेल रहा हो तथा भौगोलिक इतिहास में जैविक विलुप्तता एक प्राकृतिक घटना होती जा रही है लेकिन मानव के हस्तक्षेप अथवा दखल लेने क्षय की दर को बढ़ा दिया है जिसके विभिन्न प्रकार के दुष्परिणाम है।

### 6.7.1 आवास विलुप्तता अथवा खंडन–

विश्व भर में उष्णकटिबंधीय वनों तथा आर्द्र क्षेत्र एवं अन्य जैविक रूप से समृद्ध पारिस्थितिक तंत्र का विनाश जैव विविधता की क्षय का प्रमुख कारण है जब मनुष्य वृक्षों की कटाई, आर्द्र क्षेत्र की भराई, घास के मैदानों की जुताई कर देते हैं अथवा वनों की को जला देते हैं तो इससे प्रजातियों का प्राकृतिक आवास परिवर्तित अथवा नष्ट होता जाता है।

### 6.7.2 विक्षोभ अथवा प्रदूषण–

वर्तमान में मानव द्वारा पर्यावरण प्रदूषण में वृद्धि जैव विविधता के लिए खतरा है जैसे की आग लगना वृक्षों का गिरना, कीटों द्वारा पत्तों का गिरना, ऐसे प्राकृतिक विक्षोभ है जो की विभिन्न जीव समुदायों को प्रभावित करते हैं मानव द्वारा आग का अधिक प्रयोग विभिन्न प्रकार के जीवों की प्रजाति समृद्धता को परिवर्तित क्र रहा है प्रदूषण संवेदनशील प्रजातियों की जनसंख्या को कम अथवा विलुप्त करता जा रहा है जालीय जीवों का सुपोषण, पोषण समृद्धता में कमी लाकर प्रजाति विविधता को समाप्त करने की ओर अग्रसर है।
जैव विविधता, वायु, जल, भूमि एवं प्रकाश जैसे सभी प्रकार के प्रदूषणों से प्रभावित हो रही है जो की खतरनाक अपशिष्ट एवं रसायन सहित प्रदूषण को व्यापक रूप से सहन करने में अक्षम होती जा रही है।

### 6.7.3 आक्रामक विदेशी प्रजातियों की पुनर्स्थापना–

किसी भौगोलिक क्षेत्र में आने वाली नई प्रजातियां विदेशी प्रजातियां कहलाती हैं ऐसी प्रजातियां उसे भौगोलिक क्षेत्र में कब्जा करने वाली प्रजातियों की पुनर्स्थापना से जैविक परस्पर क्रियाओं के द्वारा स्थानीय प्रजाति के लुप्त होने की संभावना को जन्म देती हैं। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम के अनुसार जैविक विविधता क्षय का सर्वाधिक मुख्य कारणों में से एक आक्रामक विदेशी प्रजातियां हैं जो कि शिकारियों के रूप में कार्य करते हैं तथा भोजन हेतु प्रतिस्पर्धा करते हुए देशी प्रजातियों के साथ संकरण करते हैं एवं परजीवी एवं विभिन्न प्रकार की बीमारियों को प्रवेश कराते हैं आक्रामक विदेशी प्रजातियां ऐसी प्रजातियां हैं जिन्हें या तो स्वाभाविक रूप से अथवा सहयोग बस या जानबूझकर ऐसे वातावरण में लाया गया जो उनका अपना नहीं होता है।

### 6.7.4 शिकार तथा शिकार चोरी–

मानव द्वारा विभिन्न प्रकार के पशु पक्षियों को मनोरंजन भोजन, खाल, फर, सींघ, दांत इत्यादि के लिए वन्य जीवों को अनियंत्रित रूप से शिकार करने से जैव विविधता क्षय में लगातार वृद्धि हो रही है इनके साथ ही जैव विविधता के कुछ अन्य खतरे भी हैं जैसे मछली पकड़ना, मरुस्थलीकरण, स्थानांतरित जुताई अथवा झूम जुताई जिसमें वृक्षों को काटकर जला दिया जाता है तथा फसलों को पोषक तत्वों से समृद्ध राख में उगाया जाता है तप्त स्थल, भूमंडलीय जलवायु परिवर्तन, उच्च जनसंख्या, औद्योगिक कृषि, आर्थिक तंत्र तथा नीतियां जो पर्यावरण के महत्व पर जोर देने में असफल है इत्यादि जैव विविधता क्षय के प्रमुख कारणों में से एक है।

### 6.7.5 जलवायु परिवर्तन–

जलवायु परिवर्तन विभिन्न स्तरों प्रजातियां का वितरण जनसंख्या की गतिशीलता सामुदायिक संरचना एवं पारिस्थितिकी तंत्र की कार्य प्रणाली पर जैव विविधता को प्रभावित करता है संभवतः ऐसे संकेत प्राप्त होते हैं कि बढ़ता हुआ तापमान जैव विविधता को प्रभावित कर रहा है जबकि वर्षा के प्रतिरूप में परिवर्तन चरम मौसम की घटनाएं तथा महासागरों का अम्लीयकरण उन प्रजातियों को प्रभावित कर रहा है जो पूर्व से ही मानवीय गतिविधियों के कारण खतरे में थी।

### 6.7.6 पर्यावरण का विनाश –

पृथ्वी पर पाए जाने वाले जीव जंतुओं के प्राकृतिक पर्यावरण एवं उनके मूल निवास का कालांतर में विनाश होता जा रहा है जिससे मूल प्रजाति के जीव जंतु का निवास स्थल प्रभावित हो रहा है जिसके कारण या तो वह उसे मूल निवास स्थल से विस्थापित होते जा रहे हैं या तो मृत होते जा रहे हैं जिसके परिणाम स्वरूप पृथ्वी पर पाई जाने वाली विभिन्न जीव जंतुओं की एवं पौधों की प्रजातियां विलुप्त हो चुकी है या तो संकटापन्न स्थिति में पहुंच चुकी हैं।

### 6.7.7 प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन–

मानव द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन जैविक विविधता के विनाश का कारण है जो पृथ्वी पर पाए जाने वाले विभिन्न जीव जंतु पेड़ पौधों का अति दोहन उनके संकटग्रस्त या विलुप्त होने का कारण बनता जा रहा है।

## 6.8 जैव विविधता क्षय का प्रभाव–

### 6.8.1 पारिस्थितिक तंत्र पर प्रभाव–

पारिस्थितिक तंत्र के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए जैव विविधता महत्वपूर्ण है परंतु वर्तमान में पारिस्थितिकी तंत्र का क्षरण लगातार हो रहा है जो की जैव विविधता को भी प्रभावित कर रहा है कार्बन उत्सर्जन में वृद्धि वन एवं महासागर कार्बन पृथक कारक की भूमिका निभाते हैं इन प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र के अनुपस्थिति में कार्बन डाइऑक्साइड एक नवीन स्तर तक बढ़ता जा रहा है जो कि मानव जीवन के लिए अत्यंत थी हानिकारक सिद्ध हो सकता है साथ ही साथ पेड़ पौधे एवं अन्य प्रकार के जीव जंतु ऑन के जीवन के लिए यह खतरा है।

### 6.8.2 हानिकारक कीटों का प्रसार–

जैविक विविधता क्षय के परिणाम स्वरूप ऐसे विभिन्न प्रकार के कीड़ों की मात्रा में लगातार वृद्धि हो रही है जो की मानव जीवन के लिए उपयोगी पेड़ पौधों एवं वनस्पतियों को समाप्त

करने के जिम्मेदार है जिससे  रोंगों का प्रसार जैव विविधता क्षति से रोगों के प्रसार में निरंतर वृद्धि होने की संभावना है।

### 6.8.3 आर्थिक प्रभाव–

यदि जैव विविधता क्षय से पशु आहार के बायोमास में कमी आती है तो किसान अब पशु आहार की कमी के कारण पर्याप्त मात्रा में पशुओं का पालन नहीं कर पाएंगे जिससे स्थानीय लोगों की आजीविका पर इसका दुष्प्रभाव पड़ेगा जैसे कि यदि हमारे आस–पास से मधुमक्खी एवं तितली भंवरों जैसे किट नहीं रहेंगे तो पेड़ पौधों एवं फसलों में परागकणों के स्थानांतरण करने की क्रिया बाधित होगी जिससे कि उत्पादन में कमी आएगी जिसके कारण से भुखमरी एवं अकाल जैसी समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं।

## 6.9 जैविक विविधता क्षय का मानव जीवन पर प्रभाव–

जैव विविधता मनुष्यों को कई तरह के लाभ भी प्रदान करती है । पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य को संरक्षित करने से भोजन और अन्य प्रमुख संसाधनों तक पहुँच सुनिश्चित होती है, जैसे कि पौधों और जड़ी–बूटियों में निहित कुछ दवाओं के सक्रिय तत्व। इसके अलावा, स्वस्थ और विविध पारिस्थितिकी तंत्र वायु और जल शोधन, जलवायु विनियमन और बाढ़ की रोकथाम में भी योगदान देते हैं। जैव विविधता के क्षय से मानव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शारीरिक एवं आर्थिक दोनों ही रूपों में प्रभावित होता है इसके दुष्परिणाम निम्नलिखित हो सकते हैं।

### 6.9.1 खाद्यान्न उत्पादन में कमी–

जैविक विविधता क्षय के परिणाम स्वरूप विभिन्न खाद्यान्नों के उत्पादन में कमी का सामना करना पड़ रहा है तथा विभिन्न प्रकार के अनाजों की किस्में विलुप्त होती जा रही है क्योंकि यह फसल और पशुधन सुधार  परागण सेवाओं और प्राकृतिक कीट नियंत्रण के लिए अनुवांशिक संसाधन प्रदान करता है तथा जैव विविधता में कमी से कृषि उत्पादकता लगातार घटती जा रही है और किट और बीमारियों और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएँ बढ़ती जा रही है जिसका प्रभाव कृषि एवं वानिकी पर भी प्रत्यक्ष रूप से मत्स्य पालन और पर्यटन सहित विभिन्न उद्योगों पर उनकी घटती उत्पादकता से देखा जा सकता है।

### 6.9.2 जैव विविधिता का मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव–

जैव विविधता क्षय से मानव स्वास्थ्य  प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हो रहा है क्योंकि विभिन्न प्रकार की औषधीयाँ प्रकृति में पाए जाने वाले विभिन्न पौधों एवं जीव जंतुओं से बनाई जाती हैं जो की जैव विविधता तथा पारिस्थितिक तंत्र के क्षय से नष्ट होती जा रही हैं तथा वर्तमान में बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण से मनुष्य में विभिन्न प्रकार की बीमारियों का जन्म हो रहा है जैव विविधिता के नष्ट होने के कारण जिसका इलाज हो पाना असंभव हो जाएगा।

### 6.9.3 प्राकृतिक आपदाओं में वृद्धि–

जैविक विविधता क्षय के कारण प्राकृतिक आपदाओं में वृद्धि हो रही है जो कि पर्यावरण एवं विविध पारिस्थितिक तंत्र मानव समुदायों को बाढ़ तूफान और भूस्खलन जैसी प्राकृतिक आपदाओं से बचाने में सहायता प्रदान करती है तथा इसके क्षय के परिणाम स्वरूप पारिस्थितिक तंत्र में इसे नियंत्रित करने की क्षमता घटती जाएगी जिससे कि प्राकृतिक आपदाएं मानव जीवन को तीव्रता से नष्ट कर देंगे।

## 6.10 सारांश–

जैव विविधता मनुष्यों के दैनिक जीवन में एक महत्वपूर्ण संसाधन है जो की फसलों की विविधता या कृषि जैव विविधता के रूप में देखा जा सकता है जैव विविधता को उन संसाधनों के भंडार के रूप में भी समझा जा सकता है जिनकी उपयोगिता खाद्य पदार्थो, औषधीय,

सौंदर्य प्रसाधनों आदि के निर्माण में प्रयोग की जाती है जैव संसाधनों के क्षय के परिणाम स्वरूप इनके निर्माण का संकट उत्पन्न होने की पूर्ण संभावना है

## 6.11 बोध प्रश्न–

1–जैव विविधता से आप क्या समझते हैं?
2–जैव विविधता की परिभाषा दीजिए।
3–जैव विविधता के प्रकारों का उल्लेख कीजिए।
4–पारिस्थितिक तंत्र विविधता से आप क्या समझते हैं?
5–जैव विविधता के महत्व का उल्लेख कीजिए।
6–जैव विविधता क्षय से आप क्या समझते हैं।
7–जैव विविधता क्षय के प्रमुख कारणों का वर्णन कीजिए।
8–जैव विविधता क्षय के प्रभाव का उल्लेख कीजिए।

## 6.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें–

पर्यावरणीय अध्ययन सतीश कुमार दीप शिखा बी.बी.पी.पब्लिकेशन प्रा.लि. मेरठ
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र विविध आयाम अरुण कुमार सिंह
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र एम,एल.झिंगन
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र वी.सी. सिन्हा
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र आर.एन भटाचार्या

**खण्ड** – 03

**पर्यावरण क्षरण**

**इकाई** -01

# पर्यावरण क्षरण : नव-क्लासिकी दृष्टिकोण- बाज़ार विफलता, बाह्यताएं और सार्वजनिक वस्तुएं, कॉमन्स की त्रासदी

**इकाई की रूपरेखा:**

**1.0 उद्देश्य**
**1.1 प्रस्तावना**
**1.2.0 नव-क्लासिकी अर्थशास्त्र और पर्यावरणीय की अवधारणा**
**1.2.1 बाजार विफलता:**
**1.3.0 नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में बाह्यताएं (Externality) की अवधारणा**
**1.4.0 नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में कॉमन्स की त्रासदी का सिद्धांत (Tragedy of the Commons)**
**1.4.1 "कॉमन्स की त्रासदी" का सिद्धांत**
**1.4.2 ओस्ट्रोम के सिद्धांत**
**1.4.3 "कॉमन्स की त्रासदी" के कारण**
**1.5.0 नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में बाह्यताओं का प्रबंधन : बाजार विफलता और निपटने के उपाय**
**1.5.1 बाजार आधारित समाधान**
**1.5.2 लागत-लाभ विश्लेषण (Cost-Benefit Analysis)**
**1.6.0 नव-क्लासिकी दृष्टिकोण की सीमाएं**
**1.7.0 निष्कर्ष :**
**1.8.0 संदर्भ ग्रंथ सूची**
**1.9.0 सामान्य बोध प्रश्न**
**1.10.0 अभ्यासार्थ प्रश्न**

## 1.0 उद्देश्य :

इस इकाई के अध्ययन से आप निम्न बिन्दुओं को समझने में सक्षम हो जायेगे।

1. **नव-क्लासिकी दृष्टिकोण का उद्देश्य:** नव-क्लासिकी अर्थशास्त्र का मुख्य उद्देश्य यह समझाना है कि आर्थिक संसाधनों का कुशल आवंटन कैसे हो सकता है और यह बाजार की ताकतों के माध्यम से कैसे संभव है।
2. **बाज़ार विफलता का उद्देश्य:** नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में बाजार विफलता (Market Failure) का उद्देश्य उन परिस्थितियों की पहचान करना है जहाँ बाजार कुशलता से कार्य नहीं कर पाता है।
3. **बाह्यताओं का उद्देश्य:** बाह्यताओं का उद्देश्य उन आर्थिक गतिविधियों की पहचान करना है जिनके लाभ या हानि का प्रभाव उन लोगों पर भी पड़ता है जो उस आर्थिक गतिविधि में सीधे तौर पर शामिल नहीं होते।
4. **सार्वजनिक वस्तुओं का उद्देश्य:** नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में सार्वजनिक वस्तुओं का उद्देश्य उन वस्तुओं और सेवाओं की पहचान करना है जो व्यक्तिगत उपयोग के लिए नहीं होती हैं और जिनके उपभोग से किसी व्यक्ति का उपयोग अन्य व्यक्ति के लिए बाधा नहीं बनता।
5. **कॉमन्स की त्रासदी का उद्देश्य:** नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में "कॉमन्स की त्रासदी" का उद्देश्य यह समझाना है कि सामूहिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन को कैसे रोका जाए।

## 1.1 प्रस्तावना:

पर्यावरणीय क्षरण का संबंध मानव गतिविधियों के परिणामस्वरूप संसाधनों की गुणवत्ता और मात्रा में कमी से है। पर्यावरणीय क्षरण, यानी प्राकृतिक संसाधनों की गुणवत्ता और मात्रा में कमी, आधुनिक समय की प्रमुख समस्याओं में से एक है। औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, और आर्थिक विकास की तेजी ने पर्यावरण पर गहरा प्रभाव डाला है और पर्यावरणीय क्षरण की समस्या गहराती जा रही है। । पर्यावरणीय क्षरण के नव-क्लासिकी दृष्टिकोण के तहत माना जाता है कि संसाधनों का अव्यवस्थित उपयोग और अनियमित खपत इस समस्या के मुख्य कारक हैं, और इसे आर्थिक तंत्रों में सुधार करके हल किया जा सकता है।

नव-क्लासिकी दृष्टिकोण के अनुसार, पर्यावरणीय क्षरण को "बाह्यताओं" और "सार्वजनिक वस्तुओं" के सिद्धांत के माध्यम से समझा जा सकता है। बाह्यताओं के कारण आर्थिक क्रियाएं उनके वास्तविक लागत को प्रतिबिंबित नहीं करतीं, जिससे सामाजिक कल्याण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

इस अध्याय में, हम बाह्यताओं और सार्वजनिक वस्तुओं की अवधारणा का विस्तृत विवरण, इनके नव-क्लासिकी दृष्टिकोण को, "कॉमन्स की त्रासदी" और पर्यावरणीय क्षरण से निपटने में इनका महत्व समझेंगे।

## 1.2.0 नव-क्लासिकी अर्थशास्त्र और पर्यावरणीय की अवधारणा

नव-क्लासिकी अर्थशास्त्र मानता है कि बाजार की स्वत: स्फूर्त शक्तियाँ, जैसे मांग और आपूर्ति, अर्थव्यवस्था में संतुलन स्थापित करती हैं। लेकिन जब संसाधनों का अविवेकपूर्ण और अनियंत्रित उपयोग प्रयोग होता है, तो बाहरी प्रभाव उत्पन्न होते हैं, जो कि एक प्रकार की ' बाह्यता ' (Externality) हैं। उदाहरण के लिए, जब एक फैक्ट्री हवा में प्रदूषण छोड़ती है, तो इससे समाज के सभी सदस्य प्रभावित होते हैं, लेकिन इसका खर्च फैक्ट्री द्वारा नहीं वहन किया जाता।

यह दृष्टिकोण मानता है कि आर्थिक संसाधनों का इष्टतम वितरण तभी संभव है जब बाजार में पूर्ण स्वतंत्रता हो और सभी आर्थिक निर्णयों का प्रभाव व्यक्ति के निजी लाभ या हानि पर पड़े। परंतु, जब पर्यावरणीय संसाधनों की बात आती है, तो यह मान्यता अक्सर विफल होती है। नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में बाजार विफलता का मुख्य कारण बाह्यताओं का अस्तित्व, सार्वजनिक वस्तुएं, असमान जानकारी, और संपत्ति अधिकारों की अस्पष्टता है।

नव-क्लासिकी अर्थशास्त्र इस समस्या को बाह्यताओं के सिद्धांत से जोड़ता है और मानता है कि ऐसी वाह्ताओं का उचित प्रबंधन करके पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। इसके तहत कुछ महत्वपूर्ण अवधारणाओं पर विचार किया गया है, जैसे कि 'पोल्यूशन टैक्स' और 'कैप-एंड-ट्रेड' प्रणाली, जिनसे पर्यावरणीय क्षरण पर नियंत्रण किया जा सकता है।

### 1.2.1 बाजार विफलता:

अर्थशास्त्र में एक प्रसिद्ध प्रमेय कहता है कि एक प्रतिस्पर्धी उद्यम अर्थव्यवस्था संसाधनों के दिए गए स्टॉक से सबसे बड़ी संभावित आय उत्पन्न करेगी। कोई भी वास्तविक अर्थव्यवस्था प्रमेय की सटीक शर्तों को पूरा नहीं करती है, और सभी वास्तविक अर्थव्यवस्थाएं आदर्श अर्थव्यवस्था से पीछे रह जाएंगी - जिसे "बाज़ार विफलता" कहा जाता है। बाजार विफलता वह स्थिति होती है जिसमें बाजार स्वतंत्र रूप से कार्य करते हुए भी समाज के लिए आवश्यक संसाधनों का संतुलित वितरण नहीं कर पाता। पर्यावरणीय संदर्भ में बाजार विफलता का मुख्य कारण यह है कि बाजार, बाह्यताओं और सार्वजनिक वस्तुओं की लागत या लाभ को अपने क्रय-विक्रय में शामिल नहीं करता। उदाहरण के लिए, जब उद्योग प्रदूषण फैलाते हैं, तो वे इसके दुष्प्रभावों का भार नहीं उठाते और समाज को इसकी लागत वहन करनी पड़ती है।

**बाजार विफलता के प्रकार :** बाह्यताएं बाजार विफलता का प्रमुख कारण हैं। यह स्थिति तब उत्पन्न होती है जब किसी गतिविधि का प्रभाव उसकी लागत या लाभ में शामिल नहीं होता।

1. **बाह्यताएं (Externalities)**

- **नकारात्मक बाह्यताएं**: जैसे वायु और जल प्रदूषण।
- **सकारात्मक बाह्यताएं**: जैसे कि किसी सार्वजनिक उद्यान का विकास, जिससे समाज को लाभ होता है।

2. **सार्वजनिक वस्तुएं (Public Goods)**

सार्वजनिक वस्तुएं वे वस्तुएं हैं जो अनन्य (Non-excludable) और अविभाज्य (Non-rivalrous) होती हैं। इसका अर्थ है कि इसका उपयोग एक व्यक्ति द्वारा किए जाने पर भी दूसरों को इसके उपभोग में कमी नहीं होती। जैसे कि स्वच्छ हवा, स्वच्छ पानी, और जैव विविधता।

3. **संपत्ति अधिकारों की अस्पष्टता (Undefined Property Rights)**

जब संपत्ति अधिकार स्पष्ट नहीं होते, तो लोग उन संसाधनों का असीमित और अव्यवस्थित तरीके से उपयोग करते हैं, जो पर्यावरणीय क्षरण का कारण बनता है। उदाहरण के लिए, मछली पालन उद्योग में संपत्ति अधिकारों की कमी से अत्यधिक मछली पकड़ने की समस्या उत्पन्न होती है।

4. **असमान जानकारी (Imperfect Information)**

अक्सर, उपभोक्ता और उत्पादक को उत्पादों के पर्यावरणीय प्रभाव की पूरी जानकारी नहीं होती। इससे वे ऐसे उत्पादों का उपयोग करते हैं जो पर्यावरण को नुकसान पहुंचाते हैं, जैसे कि प्लास्टिक।

### 1.3.0 नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में बाह्यताएं (Externality) की अवधारणा:

बाह्यता वह स्थिति है, जिसमें किसी आर्थिक गतिविधि का असर उस गतिविधि के प्रत्यक्ष लाभार्थियों या उत्पादकों पर नहीं बल्कि समाज के अन्य व्यक्तियों पर पड़ता है। यह सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार की हो सकती है। नव-क्लासिकी दृष्टिकोण के अनुसार, पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान इसी बाह्यता की अवधारणा पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, किसी उद्योग का कार्बन उत्सर्जन वायुमंडल में प्रदूषण उत्पन्न करता है, जिससे ग्लोबल वार्मिंग और स्वास्थ्य समस्याओं का खतरा बढ़ता है, लेकिन इस बाहरीता की लागत उद्योग द्वारा नहीं वहन की जाती। नव-क्लासिकी अर्थशास्त्र इस बाहरीता के समाधान के लिए 'कार्बन टैक्स' का समर्थन करता है, जो प्रदूषण का मूल्य निर्धारण करता है और इसे रोकने के लिए आर्थिक प्रेरणा देता है।

नव-क्लासिकी दृष्टिकोण के अनुसार, पर्यावरणीय क्षरण की समस्याओं का समाधान बाह्यताओं का मूल्य निर्धारण करके किया जा सकता है। बाह्यताओं को मुख्यतः दो प्रकारों में बांटा जा सकता है:

- **नकारात्मक बाह्यताएं**: यह तब उत्पन्न होती हैं जब किसी क्रिया से समाज को नुकसान होता है। जैसे प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, जल प्रदूषण आदि।
- **सकारात्मक बाह्यताएं**: यह तब उत्पन्न होती हैं जब किसी क्रिया से समाज को लाभ होता है, जैसे पेड़ लगाना, स्वच्छ ऊर्जा का उपयोग आदि।

नकारात्मक बाह्यताओं का प्रभाव पर्यावरणीय क्षरण की स्थिति को बढ़ाता है। औद्योगिक क्रियाओं और परिवहन से वायुमंडलीय प्रदूषण, जल प्रदूषण, और मृदा प्रदूषण जैसी समस्याएं उत्पन्न होती हैं। इन बाह्यताओं का प्रभाव निम्नलिखित तरीके से हो सकता है:

1. **स्वास्थ्य समस्याएं**: वायु और जल प्रदूषण से स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, जिससे स्वास्थ्य खर्च बढ़ जाता है।
2. **पारिस्थितिकीय असंतुलन**: बाह्यताओं के कारण जैव विविधता प्रभावित होती है और पारिस्थितिकीय तंत्र में असंतुलन आता है।
3. **आर्थिक लागत**: बाह्यताओं के कारण समाज को दीर्घकालिक आर्थिक नुकसान होता है, जैसे प्राकृतिक संसाधनों की कमी।

### 1.4.0 नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में कॉमन्स की त्रासदी का सिद्धांत (Tragedy of the Commons):

"कॉमन्स की त्रासदी" का सिद्धांत पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में एक महत्वपूर्ण अवधारणा है। यह अवधारणा हमें बताती है कि जब कोई संसाधन सभी के लिए उपलब्ध होता है और उसका उपयोग अनियंत्रित होता है, तो वह संसाधन जल्द ही समाप्त हो सकता है। इस सिद्धांत का सबसे प्रासंगिक उदाहरण प्राकृतिक संसाधनों, जैसे वायु, जल, वन, और जैव विविधता में देखा जा सकता है, जहाँ अत्यधिक दोहन से पर्यावरणीय संतुलन बिगड़ने की संभावना होती है। **"कॉमन्स की त्रासदी" के सिद्धांत को सबसे पहले 1968 में गारेट हार्डिन** ने प्रस्तुत किया, जिसमें उन्होंने बताया कि स्वतंत्र व्यक्तियों के स्वार्थी निर्णय, सामूहिक संसाधनों के लिए किस तरह की समस्या उत्पन्न कर सकते हैं।

"कॉमन्स की त्रासदी" का सिद्धांत हमें यह समझाता है कि सार्वजनिक या सामूहिक संसाधन जब सभी के लिए स्वतंत्र रूप से उपलब्ध होते हैं, तो लोग व्यक्तिगत लाभ के लिए इन संसाधनों का अत्यधिक दोहन करते हैं, जो अंततः उन संसाधनों की समाप्ति का कारण बनता है। इसका अर्थ यह है कि सामूहिक हितों को ध्यान में रखते हुए उपयोग के बजाय लोग अपने निजी लाभ को अधिक प्राथमिकता देते हैं, जिससे संसाधन का नुकसान होता है। हार्डिन का यह सिद्धांत कई पर्यावरणीय मुद्दों, जैसे जल संकट, मृदा क्षरण, वन कटाई, और जैव विविधता की हानि के संदर्भ में अत्यधिक प्रासंगिक है।

### 1.4.1 "कॉमन्स की त्रासदी" का सिद्धांत

"कॉमन्स की त्रासदी" का आधार यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वयं के लाभ को अधिकतम करने के प्रयास में सामूहिक संसाधनों का उपयोग करता है, जिससे संसाधन का अत्यधिक उपयोग होता है। इस सिद्धांत के अनुसार, सामूहिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन दो मुख्य कारणों से होता है:

1. **निजी लाभ की प्राथमिकता**: प्रत्येक व्यक्ति अपने लाभ को बढ़ाने का प्रयास करता है, जिससे सामूहिक संसाधन का अत्यधिक दोहन होता है।
2. **सामूहिक लागत की अनदेखी**: क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तिगत लाभ को ध्यान में रखता है, इसलिए वह सामूहिक लागत या क्षति की अनदेखी करता है।

### 1.4.2 ओस्ट्रोम के सिद्धांत :

एलीनोर ओस्ट्रोम ने सामूहिक संसाधनों के सफल प्रबंधन के लिए कुछ सिद्धांत दिए। उनके अनुसार, सामूहिक संसाधनों का सफल प्रबंधन तभी संभव है जब समुदाय के लोग सहयोग करें और संसाधनों के उपयोग के लिए कुछ नियम बनाएं।

**"कॉमन्स की त्रासदी" के उदाहरण:**

1. **वन विनाश**

अगर वन क्षेत्रों के उपयोग पर कोई प्रतिबंध नहीं है, तो प्रत्येक इसका उपयोग अंधाधुंध लकड़ी काटने के लिए होगा तो इसका परिणाम यह होगा कि वन क्षेत्र समाप्त हो जाएंगे, जिससे जैव विविधता और पर्यावरण संतुलन को हानि पहुँचेगी।

2. **प्रदूषण**

स्वच्छ वायु और स्वच्छ जल जैसी सार्वजनिक वस्तुएं सभी के लिए उपलब्ध हैं। जब उद्योग और वाहन अपने उत्पादन या उपयोग के दौरान वायु और जल को प्रदूषित करते हैं, तो सभी को इसकी कीमत चुकानी पड़ती है।

### 1.4.3 "कॉमन्स की त्रासदी" के कारण

1. **संपत्ति अधिकारों की अस्पष्टता**: जब किसी सामूहिक संसाधन का स्पष्ट मालिकाना हक नहीं होता है, तो लोग इसे अपने लाभ के लिए स्वतंत्र रूप से उपयोग करते हैं, जिससे उसका अति-उपयोग होता है।
2. **स्व-हित की प्रवृत्ति**: जब लोग अपने लाभ के लिए सामूहिक संसाधनों का उपयोग करते हैं, तो वे अपने व्यक्तिगत हित को सामूहिक हितों से ऊपर रखते हैं।
3. **सामूहिक कार्रवाई की कमी**: कई बार सामूहिक समस्याओं के समाधान के लिए सामूहिक कार्रवाई की आवश्यकता होती है। लेकिन जब सभी लोग अपने व्यक्तिगत लाभ को प्राथमिकता देते हैं, तो सामूहिक कार्रवाई की आवश्यकता पूरी नहीं होती।
4. **दीर्घकालिक सोच की कमी**: लोग अपने निजी लाभ के लिए दीर्घकालिक सोच को नजरअंदाज करते हैं, जिससे सामूहिक संसाधनों का संरक्षण नहीं हो पाता।

### 1.5.0 नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में बाह्यताओं का प्रबंधन : बाजार विफलता और निपटने के उपाय

नव-क्लासिकी अर्थशास्त्र मानता है कि बाजार बाह्यताओं, सार्वजनिक वस्तुओं, और अस्पष्ट संपत्ति अधिकारों के कारण पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान नहीं कर सकता। इसीलिए, सरकार और अन्य संस्थाओं के हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है। नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में निम्नलिखित उपाय अपनाए जाते हैं:

1. **कार्बन टैक्स (Carbon Tax)**

कार्बन टैक्स एक आर्थिक नीति है, जिसका उद्देश्य उन उद्योगों और व्यक्तियों को प्रभावित करना है जो कार्बन उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार हैं। प्रदूषण और अन्य नकारात्मक बाह्यताओं को नियंत्रित करने के लिए कराधान का उपयोग किया जाता है इससे उत्पादकों को पर्यावरणीय प्रदूषण कम करने के लिए प्रेरणा मिलती है। नव-क्लासिकी अर्थशास्त्र मानता है कि कार्बन टैक्स प्रदूषण को नियंत्रित करने का एक प्रभावी तरीका है। इसके तहत कंपनियों और उपभोक्ताओं को उत्सर्जन की लागत का भुगतान करना पड़ता है, जिससे वे प्रदूषण को कम करने के लिए प्रोत्साहित होते हैं। उदाहरण के लिए, स्वीडन और अन्य यूरोपीय देशों में कार्बन टैक्स का सफल उपयोग किया गया है, जिससे कार्बन उत्सर्जन में कमी आई है।

### 2. सब्सिडी (Subsidies)

स्वच्छ ऊर्जा जैसे पर्यावरणीय लाभकारी प्रथाओं को बढ़ावा देने के लिए सब्सिडी दी जाती है। यह सकारात्मक बाह्यताओं को प्रोत्साहित करने में सहायक होती है।

### 3. कैप-एंड-ट्रेड प्रणाली (Cap-and-Trade System)

कैप-एंड-ट्रेड प्रणाली एक और महत्वपूर्ण नव-क्लासिकी उपाय है, जिसका उद्देश्य कार्बन उत्सर्जन को नियंत्रित करना है। इसके तहत एक सीमा (कैप) निर्धारित की जाती है, जो कि अधिकतम प्रदूषण स्तर को दर्शाती है। इसके बाद कंपनियों को ट्रेडिंग (लेन-देन) का अधिकार दिया जाता है, जिसमें वे अपनी आवश्यकता के अनुसार अतिरिक्त उत्सर्जन अधिकार खरीद सकते हैं। नव-क्लासिकी अर्थशास्त्र मानता है कि कैप-एंड-ट्रेड से प्रदूषण को आर्थिक दृष्टिकोण से नियंत्रित किया जा सकता है, जिससे पर्यावरणीय क्षरण पर अंकुश लगता है।

### 4. स्वच्छता प्रमाणपत्र (Clean Energy Certificates)

कई देशों में स्वच्छता प्रमाणपत्र प्रणाली लागू की गई है, जिसमें कंपनियों को स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों का उपयोग करने के लिए प्रमाणपत्र प्रदान किया जाता है। इससे न केवल प्रदूषण में कमी आती है, बल्कि स्वच्छ ऊर्जा के उपयोग को भी प्रोत्साहित किया जाता है।

### 5. नियमन (Regulation)

सरकार प्रदूषण नियंत्रण के लिए नियम और कानून बनाती है। जैसे, औद्योगिक कचरे के निस्तारण के लिए कठोर नियम बनाए जाते हैं।

### 6. संपत्ति अधिकार (Property Rights)

नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में एक महत्वपूर्ण पहलू संपत्ति अधिकार है। इस सिद्धांत के अनुसार, यदि संसाधनों पर संपत्ति अधिकार स्पष्ट रूप से निर्धारित हैं, तो लोग उन संसाधनों का उचित उपयोग और संरक्षण सुनिश्चित करेंगे। **कोज थ्योरम (Coase Theorem)** के तहत यह माना जाता है कि संपत्ति अधिकारों के परिभाषित होने पर बाहरीता का समाधान बिना किसी सरकारी हस्तक्षेप के किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, यदि एक नदी का स्वामित्व स्थानीय समुदाय के पास है, तो वे उसके प्रदूषण को रोकने के लिए अधिक सावधान होंगे।

## 1.5.1 बाजार आधारित समाधान:

नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान बाजार आधारित उपायों द्वारा करने पर जोर दिया जाता है। इसमें मुख्य रूप से दो प्रमुख सिद्धांत शामिल हैं:

1. **मांग और आपूर्ति के सिद्धांत**: पर्यावरणीय संसाधनों की मांग और आपूर्ति में संतुलन स्थापित कर पर्यावरणीय क्षरण को रोका जा सकता है।
2. **मूल्य निर्धारण (Valuation)**: पारिस्थितिकी सेवाओं, जैसे ऑक्सीजन उत्पादन, जल शुद्धिकरण, और जैव विविधता का आर्थिक मूल्य निर्धारित कर उनके प्रति समाज को अधिक जिम्मेदार बनाया जा सकता है।

### 1.5.2 लागत-लाभ विश्लेषण (Cost-Benefit Analysis)

नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में पर्यावरणीय क्षरण के आर्थिक प्रभावों का विश्लेषण करने के लिए लागत-लाभ विश्लेषण (Cost-Benefit Analysis) का उपयोग किया जाता है। इसके तहत पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान की आर्थिक लागत और उनके लाभों का मूल्यांकन किया जाता है। उदाहरण के लिए, प्रदूषण को रोकने के उपायों पर खर्च किए गए संसाधनों का विश्लेषण कर यह समझा जाता है कि इन उपायों से समाज को कितना लाभ हुआ है। इस विश्लेषण के आधार पर पर्यावरणीय नीतियों का निर्माण किया जाता है।

## 1.6.0 नव-क्लासिकी दृष्टिकोण की सीमाएं

हालांकि नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में पर्यावरणीय समस्याओं के आर्थिक समाधान प्रस्तुत किए गए हैं, लेकिन इनका पूरी तरह से लागू होना चुनौतीपूर्ण है। बाहरीता को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करना, सभी लोगों के लिए संपत्ति अधिकारों का निर्धारण करना, और बाजार आधारित उपायों का सही तरीके से कार्यान्वयन इनकी कुछ प्रमुख चुनौतियां हैं।

1. **बाजार की विफलता**: बाजार का पूरा ध्यान मुनाफे पर होता है, जिससे पर्यावरणीय क्षरण का उचित समाधान प्राप्त नहीं हो पाता।
2. **अल्पकालिक दृष्टिकोण**: आर्थिक लाभों के लिए अल्पकालिक उपाय किए जाते हैं, जो दीर्घकालिक पर्यावरणीय क्षरण को रोकने में सहायक नहीं होते।
3. **नीतिगत विफलता**: पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान के लिए सटीक नीतियों का अभाव है।
4. **राजनीतिक चुनौतियाँ**: सरकार द्वारा लगाए गए कराधान और नियमन का राजनीतिक विरोध भी होता है, जिससे नव-क्लासिकी नीतियाँ पूरी तरह लागू नहीं हो पातीं।

## 1.7.0 निष्कर्ष :

नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में "कॉमन्स की त्रासदी" का सिद्धांत यह बताता है कि सामूहिक संसाधनों का अंधाधुंध और असंवेदनशील उपयोग अंततः समाज के लिए ही हानिकारक सिद्ध होता है। सामूहिक संसाधनों के संरक्षण और उनका सही तरीके से उपयोग करने के लिए सामूहिक कार्रवाई, संपत्ति अधिकारों का निर्धारण, पर्यावरणीय कर और शुल्क, और जागरूकता जैसे उपाय आवश्यक हैं। पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में "कॉमन्स की त्रासदी" का सिद्धांत हमें यह सिखाता है कि सामूहिक संसाधनों का संरक्षण न केवल वर्तमान बल्कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी महत्वपूर्ण है।

नव-क्लासिकी दृष्टिकोण के अनुसार पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान बाजार आधारित उपायों से किया जा सकता है। इसके तहत कार्बन टैक्स, कैप-एंड-ट्रेड प्रणाली, संपत्ति अधिकारों का निर्धारण और मूल्य निर्धारण के माध्यम से पर्यावरणीय क्षरण को नियंत्रित करने की कोशिश की जाती है। हालांकि, इसका संपूर्ण समाधान प्राप्त करना कठिन हो सकता है, लेकिन यह दृष्टिकोण आर्थिक और पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखने में सहायक हो सकता है।

## 1.8.0 संदर्भ ग्रंथ सूची


1. **"Environmental and Natural Resource Economics"**
   लेखक: **Tom Tietenberg** और **Lynne Lewis**
   प्रकाशक: **Taylor & Francis, 13 March 2018, ISBN: 9781351803373**
2. **"Economics of the Environment: Selected Readings"**
   संपादक: **Robert N. Stavins**

प्रकाशक: **Edward Elgar Publishing, 2019, ISBN: 9781788972079**

3. **विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: **Dr. Anupam Agarwal, Dr. Alok Gupta**
   प्रकाशक: **SBPD Publications, 6 July 2021, ISBN: 9789389585339**
4. **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: डॉ. वी.सी. सिन्हा, डॉ. रितिका सिन्हा
   प्रकाशक: **SBPD Publishing House, 8 July 2024, ISBN: 9788119142392**
5. **"The Economics of Climate Change: The Stern Review"**
   लेखक: Nicholas Stern
   प्रकाशक: Cambridge University Press

### 1.9.0 सामान्य बोध प्रश्न

1. नव-क्लासिकी दृष्टिकोण का मुख्य उद्देश्य क्या है?
   (a) सरकारी हस्तक्षेप को बढ़ाना
   (b) व्यक्तिगत लाभ को अधिकतम करना
   (c) संसाधनों का कुशल आवंटन सुनिश्चित करना
   (d) बाह्यताओं को प्रोत्साहित करना
   **उत्तर:** (c) संसाधनों का कुशल आवंटन सुनिश्चित करना
2. बाज़ार विफलता का मुख्य कारण निम्नलिखित में से कौन-सा नहीं है?
   (a) बाह्यताएं
   (b) सार्वजनिक वस्तुएं
   (c) प्रतियोगिता का अभाव
   (d) निजी संपत्ति अधिकारों की स्पष्टता
   **उत्तर:** (d) निजी संपत्ति अधिकारों की स्पष्टता
3. बाह्यताओं से संबंधित नव-क्लासिकी दृष्टिकोण का क्या उद्देश्य है?
   (a) बाह्यताओं को अनदेखा करना
   (b) कर और सब्सिडी का उपयोग करके बाजार कुशलता प्राप्त करना
   (c) बाह्यताओं को प्रोत्साहन देना
   (d) बाजार में पूर्ण प्रतिस्पर्धा सुनिश्चित करना
   **उत्तर:** (b) कर और सब्सिडी का उपयोग करके बाजार कुशलता प्राप्त करना
4. सार्वजनिक वस्तुओं का एक उदाहरण कौन-सा है?
   (a) शिक्षा
   (b) स्वच्छ जल
   (c) राष्ट्रीय सुरक्षा
   (d) निजी संपत्ति
   **उत्तर:** (c) राष्ट्रीय सुरक्षा
5. "कॉमन्स की त्रासदी" का क्या तात्पर्य है?
   (a) निजी संपत्तियों का अत्यधिक दोहन
   (b) सामूहिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन
   (c) सरकारी संसाधनों का निजीकरण
   (d) सार्वजनिक वस्तुओं का प्रभावी उपयोग
   **उत्तर:** (b) सामूहिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन
6. नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में बाजार विफलता के समाधान के लिए कौन-सी नीति अपनाई जाती है?

(a) सभी निजी वस्तुओं का राष्ट्रीयकरण
(b) सरकारी हस्तक्षेप से बचना
(c) कर और सब्सिडी का उपयोग
(d) सार्वजनिक वस्तुओं का निजीकरण
**उत्तर:** (c) कर और सब्सिडी का उपयोग

7. निम्नलिखित में से कौन-सी एक सार्वजनिक वस्तु का गुण नहीं है?
(a) अविभाज्यता
(b) सभी के लिए सुलभ
(c) व्यक्तिगत उपभोग का लाभ
(d) गैर-प्रतिस्पर्धात्मकता
**उत्तर:** (c) व्यक्तिगत उपभोग का लाभ

8. नव-क्लासिकी दृष्टिकोण के अनुसार बाह्यताओं का नियंत्रण क्यों आवश्यक है?
(a) सरकारी खर्चों को कम करने के लिए
(b) संसाधनों का अनियंत्रित उपयोग रोकने के लिए
(c) प्रतियोगिता को बढ़ावा देने के लिए
(d) सार्वजनिक वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए
**उत्तर:** (b) संसाधनों का अनियंत्रित उपयोग रोकने के लिए

9. "कॉमन्स की त्रासदी" के सिद्धांत का प्रस्तावक कौन था?
(a) एडम स्मिथ
(b) गैरेट हार्डिन
(c) थॉमस माल्थस
(d) जॉन स्टुअर्ट मिल
**उत्तर:** (b) गैरेट हार्डिन

10. "कॉमन्स की त्रासदी" से बचने के लिए नव-क्लासिकी दृष्टिकोण किस प्रकार का सुझाव देता है?
(a) संसाधनों का निजीकरण
(b) सरकारी नियंत्रण का विस्तार
(c) मुक्त बाजार में बदलाव
(d) विदेशी निवेश का उपयोग
**उत्तर:** (a) संसाधनों का निजीकरण

## 1.10.0 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. नव-क्लासिकी दृष्टिकोण की परिभाषा और मुख्य सिद्धांतों को विस्तार से समझाइए।
2. बाजार विफलता के मुख्य कारणों का विश्लेषण कीजिए और उदाहरणों सहित बताइए कि कैसे बाजार विफलता से आर्थिक असंतुलन उत्पन्न होता है।
3. बाह्यताओं के कारण और उनके प्रभावों पर चर्चा कीजिए। सकारात्मक और नकारात्मक बाह्यताओं के उदाहरण देकर बताइए कि ये कैसे संसाधनों के असमान आवंटन का कारण बन सकते हैं।
4. सार्वजनिक वस्तुओं का नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में क्या महत्व है? उदाहरण देकर बताइए कि सार्वजनिक वस्तुओं की उपलब्धता में निजी बाजार की क्या सीमाएं हैं।
5. "कॉमन्स की त्रासदी" का सिद्धांत क्या है? इस सिद्धांत के मुख्य कारणों की व्याख्या कीजिए और यह भी बताइए कि सामूहिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन को रोकने के लिए कौन-से उपाय अपनाए जा सकते हैं।
6. "बाह्यताओं और सार्वजनिक वस्तुओं" के संदर्भ में सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता पर चर्चा कीजिए। किन परिस्थितियों में सरकार को बाज़ार में दखल देने की आवश्यकता होती है?

7. नव-क्लासिकी दृष्टिकोण के अनुसार, बाज़ार विफलता से निपटने के लिए कौन-कौन सी नीतियाँ और उपाय लागू किए जा सकते हैं?
8. कॉमन्स की त्रासदी से संबंधित एक सामूहिक संसाधन चुनें (जैसे जल संसाधन, वन, या वायु) और बताइए कि अत्यधिक उपयोग कैसे इस संसाधन को नष्ट कर सकता है। इस पर नियंत्रण के लिए संभावित समाधान सुझाइए।
9. सार्वजनिक वस्तुओं और बाह्यताओं की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए। चर्चा कीजिए कि कैसे निजी बाजार इनका उत्पादन करने में असफल रहता है।
10. बाजार विफलता के समाधान में टैक्स, सब्सिडी, और विनियमन की भूमिका पर चर्चा कीजिए। इसके साथ ही, उदाहरणों द्वारा समझाइए कि इन उपायों से आर्थिक संतुलन कैसे स्थापित किया जा सकता है।
11. नव-क्लासिकी दृष्टिकोण के संदर्भ में बाह्यताओं के नियंत्रण के लिए आर्थिक प्रोत्साहनों की भूमिका पर चर्चा कीजिए। यह भी बताइए कि आर्थिक प्रोत्साहन बाह्यताओं को कैसे नियंत्रित कर सकते हैं।
12. "कॉमन्स की त्रासदी" और "सार्वजनिक वस्तुओं की विफलता" के बीच मुख्य अंतर को स्पष्ट कीजिए।
13. यह स्पष्ट कीजिए कि नव-क्लासिकी दृष्टिकोण में बाज़ार विफलता के परिणामस्वरूप उपभोक्ताओं और उत्पादकों पर क्या प्रभाव पड़ता है।
14. नव-क्लासिकी दृष्टिकोण के अनुसार सार्वजनिक वस्तुएं और बाह्यताओं की समस्या से निपटने में निजीकरण और विनियमन के क्या लाभ और सीमाएँ हैं?
15. भारत या विश्व में किसी विशिष्ट समस्या का उदाहरण दीजिए जहाँ "कॉमन्स की त्रासदी" का प्रभाव देखा गया हो, और यह बताइए कि इस समस्या के समाधान के लिए कौन-कौन से कदम उठाए गए हैं या उठाए जा सकते हैं।

## इकाई -02
## समष्टिभावी दृष्टिकोण: अति औद्योगीकरण, संवृद्धि आधिक्य, मीडो का संवृद्धि परिसीमन

**इकाई की रूपरेखा:**

**2.0 उद्देश्य**
**2.1 प्रस्तावना**
**2.2 औद्योगीकरण का अर्थ और उद्देश्य**
**2.2.1 अति औद्योगीकरण का अर्थ**
**2.2.2 अति औद्योगीकरण के कारण**
**2.3.0 समष्टिभावी दृष्टिकोण: संवृद्धि आधिक्य**
**2.4.0 मीडो का संवृद्धि परिसीमन: अर्थ, सिद्धांत, और प्रभाव**
**2.4.1 मीडो का संवृद्धि परिसीमन का परिचय**
**2.4.2. मीडो के सिद्धांत का उद्देश्य**
**2.4.3. मीडो का संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत के प्रमुख तत्व**
**2.4.4. संवृद्धि आधिक्य के कारण**
**2.4.5. संवृद्धि आधिक्य के परिणाम:**
**2.4.5.1 संवृद्धि आधिक्य का सामाजिक प्रभाव**
**2.4.5.2 मीडो का संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत के पर्यावरणीय प्रभाव**
**2.4.6 मीडो का संवृद्धि परिसीमन और आर्थिक दृष्टिकोण**
**2.4.7 " संवृद्धि परिसीमन " के मुख्य निष्कर्ष**
**2.4.7.1 मीडो का संवृद्धि परिसीमन के अनुसार समाधान**
**2.5 मीडो का संवृद्धि परिसीमन का वर्तमान समय में महत्व**
**2.6. निष्कर्ष**
**2.7 संदर्भ ग्रंथ सूची**
**2.8 सामान्य बोध प्रश्न**
**2.9 अभ्यासार्थ प्रश्न**

**2.0 उद्देश्य:**

इस इकाई का अध्ययन करके आप निम्न बिन्दुओं को समझने में सक्षम हो जायेगें।

**1. समष्टिभावी दृष्टिकोण**

**2. अति औद्योगीकरण का उद्देश्य**

- आर्थिक वृद्धि को समझना
- पर्यावरणीय प्रभावों का विश्लेषण
- सामाजिक असमानता

**3. संवृद्धि आधिक्य का उद्देश्य**

- संसाधनों के दोहन का मूल्यांकन
- दृष्टिकोण की पहचान
- समाधान के लिए नीति निर्माण

**4. मीडो का संवृद्धि परिसीमन का उद्देश्य**

- संसाधनों की सीमितता
- दीर्घकालिक स्थिरता
- विकास नीतियों पर प्रभाव

## 2.1 प्रस्तावना

समष्टि (macro) दृष्टिकोण से अर्थव्यवस्था का अध्ययन करते समय यह आवश्यक होता है कि हम आर्थिक विकास और औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया के प्रभावों का विश्लेषण करें। औद्योगिकीकरण के कारण आर्थिक संवृद्धि और समृद्धि संभव हुई है, लेकिन इसके साथ ही पर्यावरणीय समस्याओं और सामाजिक असंतुलन का उद्भव भी हुआ है। अति औद्योगीकरण का अर्थ है उद्योगों का ऐसा विस्तार, जिससे संसाधनों का अत्यधिक दोहन हो और पर्यावरण पर गंभीर नकारात्मक प्रभाव पड़ें। अति औद्योगीकरण को समष्टि दृष्टिकोण से देखने का अर्थ है इसकी व्यापकता, प्रभाव, और दीर्घकालिक परिणामों का अध्ययन करना।

## 2.2 औद्योगीकरण का अर्थ और उद्देश्य

औद्योगीकरण का तात्पर्य उद्योगों का विकास और विस्तार से है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से आर्थिक गतिविधियों में उत्पादन, व्यापार, और रोजगार के अवसरों का सृजन होता है। आर्थिक दृष्टिकोण से औद्योगीकरण का मुख्य उद्देश्य उत्पादन और उपभोक्ता संतुष्टि को अधिकतम करना है। औद्योगीकरण से न केवल आर्थिक संवृद्धि होती है बल्कि समाज में रोजगार और शिक्षा के अवसर भी बढ़ते हैं। परंतु, जब औद्योगीकरण की प्रक्रिया अनियंत्रित हो जाती है और पर्यावरणीय संसाधनों पर अत्यधिक निर्भरता बढ़ती है, तब यह एक नकारात्मक रूप ले लेता है, जिसे "अति औद्योगीकरण" कहा जाता है।

### 2.2.1 अति औद्योगीकरण का अर्थ

अति औद्योगीकरण का अर्थ उस स्थिति से है, जहाँ उद्योगों का विकास इस हद तक हो जाता है कि यह प्राकृतिक संसाधनों की सीमा को लांघकर पर्यावरणीय असंतुलन का कारण बनता है। अति औद्योगीकरण तब होता है, जब:

- संसाधनों का अत्यधिक दोहन हो।
- उद्योगों के कारण वायु, जल, और मृदा प्रदूषण में वृद्धि हो।
- समाज के अन्य क्षेत्रों, जैसे कृषि और सेवा क्षेत्र, पर नकारात्मक प्रभाव पड़े।

अति औद्योगीकरण का अर्थव्यवस्था पर दीर्घकालिक प्रभाव पड़ता है और यह सतत विकास की राह में प्रमुख बाधा बन सकता है। भारत में औद्योगीकरण की प्रक्रिया स्वतंत्रता के बाद से तेज़ी से बढ़ी है। 2023 में चीन, भारत, और जर्मनी जैसे देशों में औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि देखी गई, जबकि कुछ विकसित देशों में स्थिरता या मामूली कमी दर्ज की गई। वर्तमान में, विनिर्माण क्षेत्र का GDP में योगदान लगभग 16% है, जो विकसित देशों की तुलना में कम है। हालांकि, 'मेक इन इंडिया' जैसी पहलों से विनिर्माण क्षेत्र में वृद्धि की उम्मीद है। विकसित देशों में औद्योगिक उत्पादन का योगदान अधिक होता है। उदाहरण के लिए, जापान और दक्षिण कोरिया में विनिर्माण क्षेत्र का सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में योगदान क्रमशः 20% और 30% से अधिक है।

### 2.2.2 अति औद्योगीकरण के कारण

**1.आर्थिक संवृद्धि का अत्यधिक दबाव**

अर्थव्यवस्था में उच्च विकास दर की आकांक्षा से सरकारें और व्यवसाय उद्योगों के विस्तार में तेजी लाते हैं। आर्थिक संवृद्धि को बनाए रखने की इस दौड़ में पर्यावरणीय संतुलन का ध्यान नहीं रखा जाता है, जिससे अति औद्योगीकरण की स्थिति उत्पन्न होती है।

**2. वैश्वीकरण**

वैश्वीकरण के कारण उद्योगों में प्रतिस्पर्धा बढ़ी है। वैश्विक बाजार में बने रहने के लिए देश अधिक से अधिक उत्पादन करते हैं और संसाधनों का असीमित दोहन करते हैं। इससे पर्यावरणीय असंतुलन और प्रदूषण की समस्या बढ़ जाती है।

**3. उपभोक्तावाद**

अति औद्योगीकरण के पीछे उपभोक्तावाद भी एक प्रमुख कारण है। अधिक से अधिक उत्पादों की माँग के कारण उत्पादन में तेजी आती है, जिससे उद्योग संसाधनों का अत्यधिक दोहन करते हैं।

**4. तकनीकी विकास**

हालांकि तकनीकी विकास उद्योगों की उत्पादकता को बढ़ाने में सहायक होता है, लेकिन इससे संसाधनों के अत्यधिक दोहन की संभावना बढ़ जाती है। नए तकनीकी उपकरण और मशीनें पर्यावरणीय क्षरण में योगदान करती हैं।

### 2.3 समष्टिभावी दृष्टिकोण: संवृद्धि आधिक्य

आर्थिक संवृद्धि (Economic growth) किसी भी देश की समृद्धि का महत्वपूर्ण संकेतक है। समष्टिभावी दृष्टिकोण से आर्थिक विकास को मापा और विश्लेषित किया जाता है ताकि यह समझा जा सके कि अर्थव्यवस्था की स्थिरता और विकास किस दिशा में बढ़ रहा है। लेकिन जब यह संवृद्धि अति (excessive) हो जाती है और संसाधनों की सीमाओं को अनदेखा कर दी जाती है, तो इसे "संवृद्धि आधिक्य" या "अति संवृद्धि" कहा जाता है। संवृद्धि आधिक्य वह स्थिति है जिसमें आर्थिक गतिविधियां प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरणीय संतुलन की परवाह किए बिना तेज गति से बढ़ती हैं, जिससे दीर्घकालिक नकारात्मक परिणाम हो सकते हैं।

**संवृद्धि आधिक्य का अर्थ:**

संवृद्धि आधिक्य (overgrowth) उस स्थिति को दर्शाता है जहाँ आर्थिक संवृद्धि अत्यधिक रूप से हो रही होती है, जिससे प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित दोहन होता है और पर्यावरणीय असंतुलन पैदा होता है। जब संसाधनों का अनियंत्रित उपयोग किया जाता है और दीर्घकालिक प्रभावों की परवाह किए बिना आर्थिक गतिविधियां संचालित होती हैं, तो यह भविष्य के विकास के लिए खतरा उत्पन्न कर सकती हैं।

संवृद्धि आधिक्य का अर्थ केवल आर्थिक विकास की अधिकता से नहीं है, बल्कि यह विकास की दिशा, संसाधनों की उपलब्धता, और पर्यावरणीय संतुलन पर इसके प्रभावों का सूचक है।

### 2.4 मीडो का संवृद्धि परिसीमन: अर्थ, सिद्धांत, और प्रभाव

डोनैला मीडो (Donella Meadows) और उनके सहयोगियों द्वारा 1972 में प्रस्तुत "Limits to Growth" नामक अध्ययन ने यह दर्शाया कि संसाधनों का अनियंत्रित दोहन और अत्यधिक आर्थिक संवृद्धि अंततः पर्यावरणीय और सामाजिक समस्याओं का कारण बन सकता है। इस अध्ययन में वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी थी कि यदि वैश्विक विकास दर इसी प्रकार बढ़ती रही, तो यह पृथ्वी के संसाधनों की सीमा तक पहुँच जाएगी और इसके गंभीर परिणाम होंगे। मीडो का संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत यह सिखाता है कि दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए हमें अपने विकास की गति को संतुलित करना होगा और संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करना होगा।

इस अध्याय में हम मीडो के संवृद्धि परिसीमन के सिद्धांत का विश्लेषण करेंगे और समझेंगे कि यह सिद्धांत किस प्रकार आधुनिक समाज और वैश्विक अर्थव्यवस्था के लिए प्रासंगिक है।

#### 2.4.1 मीडो का संवृद्धि परिसीमन का परिचय

**मीडो और "Limits to Growth" अध्ययन का इतिहास**

1972 में, डोनैला मीडो और उनके सहयोगियों ने रोम क्लब (Club of Rome) के सहयोग से "Limits to Growth" रिपोर्ट प्रकाशित की। यह अध्ययन कंप्यूटर मॉडलिंग का उपयोग करते हुए यह समझने के लिए किया गया कि वर्तमान संसाधनों पर आधारित विकास की गति पृथ्वी के लिए कितनी देर तक सहनीय है। इस अध्ययन में कंप्यूटर मॉडल "World3" का उपयोग करके जनसंख्या वृद्धि, औद्योगिक विकास, खाद्य उत्पादन, और पर्यावरणीय संसाधनों के बारे में विभिन्न परिदृश्यों का विश्लेषण किया गया था।

**संवृद्धि आधिक्य का अर्थ**

संवृद्धि आधिक्य (overgrowth) उस स्थिति को दर्शाता है जहाँ आर्थिक संवृद्धि अत्यधिक रूप से हो रही होती है, जिससे प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित दोहन होता है और पर्यावरणीय असंतुलन पैदा होता है। जब संसाधनों का अनियंत्रित उपयोग किया जाता है और दीर्घकालिक प्रभावों की परवाह किए बिना आर्थिक गतिविधियां संचालित होती हैं, तो यह भविष्य के विकास के लिए खतरा उत्पन्न कर सकती हैं।

संवृद्धि आधिक्य का अर्थ केवल आर्थिक विकास की अधिकता से नहीं है, बल्कि यह विकास की दिशा, संसाधनों की उपलब्धता, और पर्यावरणीय संतुलन पर इसके प्रभावों का सूचक है।

**मीडो का संवृद्धि परिसीमन और संवृद्धि आधिक्य**

1972 में, डोनैला मीडो और उनके सहयोगियों ने "Limits to Growth" नामक रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसमें उन्होंने संवृद्धि आधिक्य और प्राकृतिक संसाधनों के दोहन के दीर्घकालिक प्रभावों पर चर्चा की। मीडो के अनुसार, अगर विकास और संसाधनों का उपयोग इसी गति से चलता रहा, तो भविष्य में गंभीर पर्यावरणीय और आर्थिक संकट उत्पन्न हो सकता है। यह सिद्धांत इस बात पर जोर देता है कि विकास की सीमा को पहचानना और संतुलित संवृद्धि की ओर बढ़ना आवश्यक है।

क्लब ऑफ रोम द्वारा शुरू किए गए इस अध्ययन के निष्कर्षों को पहली बार की गर्मियों में मॉस्को 1971 अंतरराष्ट्रीय समारोहों में प्रस्तुत किया गया था। और रियो डी जनेरियो मेंरिपोर्ट के लेखक डोनेला एच . मीडोज, डेनिस एलमीडोज ., जोर्जेन रैंडर्स और विलियम डब्ल्यू-बेहरेंस .III हैं जो शोधकर्ताओं की एक 17 टीम का प्रतिनिधित्व करते हैं।

वर्ल्ड-3 मॉडल पाँच चरों पर आधारित है: "जनसंख्या, खाद्य उत्पादन, औद्योगीकरण, प्रदूषण, और गैर-नवीकरणीय प्राकृतिक संसाधनों की खपत"। अध्ययन के समय, ये सभी चर बढ़ रहे थे और माना जा रहा था कि ये तेजी से बढ़ते रहेंगे, जबकि संसाधनों को बढ़ाने के लिए प्रौद्योगिकी की क्षमता केवल रैखिक रूप से बढ़ी। लेखकों का इरादा एक स्थायी फीडबैक पैटर्न की संभावना का पता लगाना था जो तीन परिदृश्यों के तहत पांच चर के बीच विकास के रुझान को बदलकर हासिल किया जाएगा। उन्होंने नोट किया कि प्रत्येक परिदृश्य में चर के मूल्यों के लिए उनके अनुमान "केवल सीमित अर्थ में" पूर्वानुमान थे, और सिस्टम की व्यवहारिक प्रवृत्तियों के संकेत थे। इनमें से दो परिदृश्यों में 21वीं सदी के मध्य से उत्तरार्ध तक वैश्विक व्यवस्था का "अधिशेष और पतन" देखा गया, जबकि तीसरे परिदृश्य के परिणामस्वरूप "स्थिर विश्व" आया।

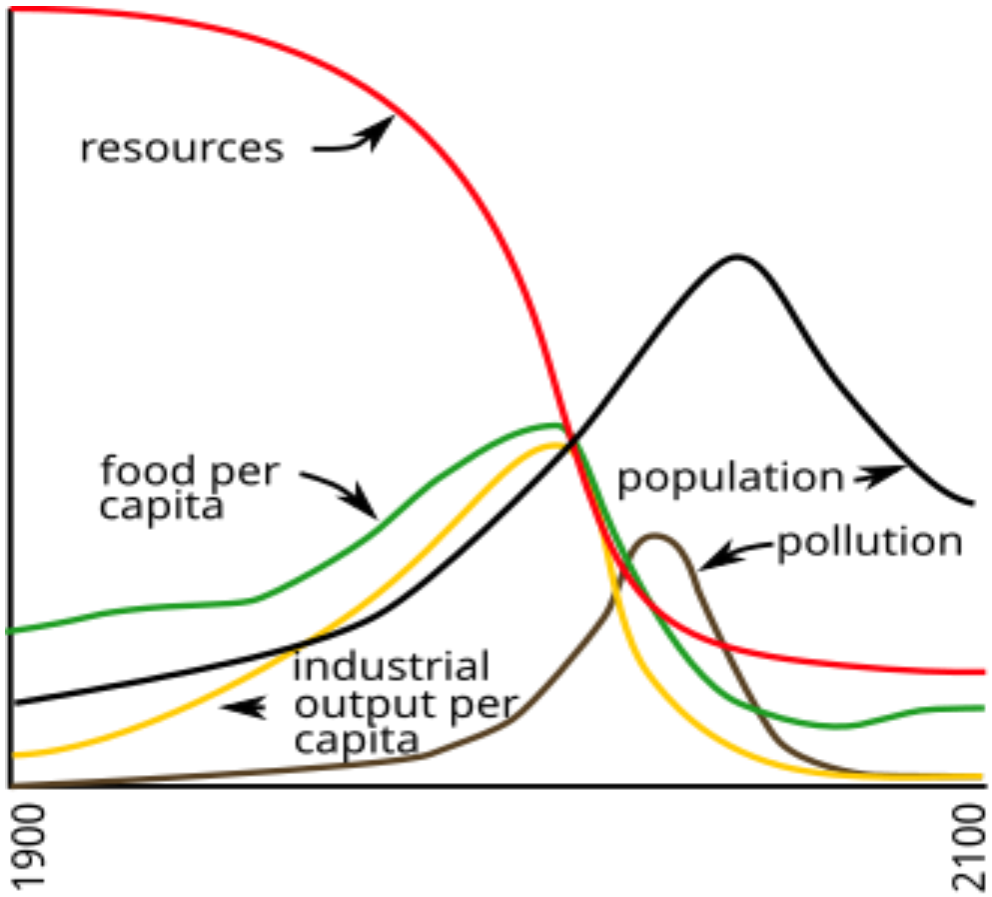


**2.4.2. मीडो के सिद्धांत का उद्देश्य**

मीडो का संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत यह चेतावनी देता है कि यदि विकास की मौजूदा गति, संसाधनों का अनियंत्रित दोहन, और जनसंख्या वृद्धि जारी रहती है, तो हम उन प्राकृतिक सीमाओं तक पहुँच सकते हैं

जहाँ संसाधनों की कमी, प्रदूषण में वृद्धि, और जीवन की गुणवत्ता में गिरावट आ सकती है। यह सिद्धांत हमें सतत विकास (Sustainable Development) की आवश्यकता के प्रति जागरूक करता है।

### 2.4.3. मीडो का संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत के प्रमुख तत्व:

मीडो के संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत के अंतर्गत कुछ प्रमुख तत्वों पर विचार किया गया है:

#### 3.1 संसाधनों की सीमित उपलब्धता (Finite Resources)

मीडो का सिद्धांत बताता है कि पृथ्वी के संसाधन सीमित हैं, और उनका अनियंत्रित दोहन उनकी उपलब्धता को कम करता है। यदि इनका विवेकपूर्ण उपयोग नहीं किया गया, तो भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों की उपलब्धता पर संकट उत्पन्न हो सकता है।

#### 3.2 जनसंख्या वृद्धि (Population Growth)

रिपोर्ट में कहा गया है कि जनसंख्या में वृद्धि से संसाधनों की माँग बढ़ती है। अधिक जनसंख्या के कारण जल, भोजन, ऊर्जा, और भूमि जैसे संसाधनों पर दबाव बढ़ता है, जिससे भविष्य में संसाधनों की कमी का खतरा उत्पन्न होता है।

#### 3.3 प्रदूषण (Pollution)

औद्योगिकीकरण और विकास के कारण प्रदूषण में वृद्धि होती है। मीडो का सिद्धांत यह दर्शाता है कि बढ़ते प्रदूषण से पर्यावरणीय संतुलन बिगड़ सकता है और मानव स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। प्रदूषण से मृदा, जल, और वायु की गुणवत्ता में गिरावट आती है।

#### 3.4 आर्थिक और औद्योगिक विकास (Economic and Industrial Growth)

औद्योगिक और आर्थिक विकास से संसाधनों का उपयोग बढ़ता है, लेकिन इसकी भी एक सीमा है। मीडो का सिद्धांत यह बताता है कि विकास की गति अगर नियंत्रण में नहीं होती है, तो यह प्राकृतिक संसाधनों की समाप्ति का कारण बन सकती है।

### 2.4.4. संवृद्धि आधिक्य के कारण:

#### 1. उपभोक्तावाद (Consumerism)

बढ़ते उपभोक्तावाद के कारण उपभोक्ताओं की मांग में तेजी आई है। अधिक से अधिक उत्पादों और सेवाओं की मांग के चलते उद्योगों का उत्पादन बढ़ा है, जिससे संवृद्धि की गति भी तेज हो गई है।

#### 2. तकनीकी प्रगति (Technological Progress)

तकनीकी प्रगति के कारण उत्पादन में तेजी आई है और आर्थिक विकास की गति तेज हुई है। हालांकि, इस प्रगति के कारण संसाधनों का अत्यधिक उपयोग हो रहा है और यह विकास संतुलित नहीं है।

#### 3. वैश्वीकरण (Globalization)

वैश्वीकरण के कारण वैश्विक प्रतिस्पर्धा में वृद्धि हुई है और देश अपने उत्पादन में वृद्धि करने के लिए दबाव में आ गए हैं। इसके परिणामस्वरूप औद्योगिक और आर्थिक गतिविधियों में तेजी आई है, जिससे संवृद्धि आधिक्य की स्थिति उत्पन्न हुई है।

#### 4. राजनीतिक और आर्थिक नीतियाँ (Political and Economic Policies)

अर्थव्यवस्था को तेजी से संवृद्धि की ओर ले जाने के लिए कई बार सरकारें आर्थिक नीतियों को अपनाती हैं जो लघु अवधि में विकास को बढ़ावा देती हैं लेकिन दीर्घकाल में असंतुलन का कारण बनती हैं।

#### 5. जनसंख्या वृद्धि (Population Growth)

जनसंख्या में वृद्धि होने से संसाधनों की माँग में तेजी आती है। इसका परिणाम यह होता है कि उत्पादन और उपभोग के स्तर में वृद्धि होती है, जो संवृद्धि आधिक्य का कारण बनती है।

### 2.4.5. संवृद्धि आधिक्य के परिणाम:

संवृद्धि आधिक्य का प्रभाव केवल आर्थिक स्तर पर ही नहीं, बल्कि सामाजिक और पर्यावरणीय स्तर पर भी पड़ता है। इसके कुछ प्रमुख परिणाम निम्नलिखित हैं:

#### पर्यावरणीय असंतुलन (Environmental Imbalance)

अत्यधिक आर्थिक गतिविधियाँ और संसाधनों का अत्यधिक उपयोग पर्यावरणीय असंतुलन का कारण बनते हैं। यह मृदा, जल, और वायु प्रदूषण का कारण बनता है।

**संसाधनों की कमी (Resource Depletion)**
संवृद्धि आधिक्य के कारण संसाधनों का अत्यधिक उपयोग होता है, जिससे प्राकृतिक संसाधनों की कमी होने लगती है। इससे भविष्य में संसाधनों की उपलब्धता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

**जैव विविधता की हानि (Loss of Biodiversity)**
जंगलों और प्राकृतिक क्षेत्रों का अत्यधिक दोहन जैव विविधता की हानि का कारण बनता है। संवृद्धि आधिक्य से वनों की कटाई और प्राकृतिक आवासों का विनाश होता है, जिससे कई प्रजातियाँ विलुप्त होने के कगार पर पहुँच जाती हैं।

**जलवायु परिवर्तन (Climate Change)**
संवृद्धि आधिक्य के कारण कार्बन उत्सर्जन बढ़ता है, जो ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन का कारण बनता है। यह जलवायु परिवर्तन न केवल पर्यावरण बल्कि आर्थिक और सामाजिक तंत्र पर भी गंभीर प्रभाव डालता है।

**आर्थिक अस्थिरता (Economic Instability)**
संवृद्धि आधिक्य के कारण अर्थव्यवस्था में अस्थिरता उत्पन्न होती है। जब संसाधनों की कमी हो जाती है, तो उत्पादन में गिरावट आती है, जिससे मुद्रास्फीति, बेरोजगारी और अन्य आर्थिक समस्याएं उत्पन्न होती हैं।

### 2.4.5.1 संवृद्धि आधिक्य का सामाजिक प्रभाव

संवृद्धि आधिक्य का सामाजिक प्रभाव भी महत्वपूर्ण है। इसके कारण निम्नलिखित समस्याएं उत्पन्न होती हैं:

- **स्वास्थ्य समस्याएं**: प्रदूषण और पर्यावरणीय असंतुलन के कारण लोगों के स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- **सामाजिक असमानता**: संवृद्धि आधिक्य का लाभ केवल कुछ वर्गों तक सीमित रहता है, जिससे सामाजिक असमानता बढ़ती है। औद्योगिक क्रांति ने मुख्य रूप से तीन नए वर्गों को जन्म दिया। प्रथम पूंजीवादी वर्ग, जिसमें व्यापारी और पूंजीपति सम्मिलित थे। द्वितीय मध्यम वर्ग, कारखानों के निरीक्षक, ठेकेदार, इंजीनियर, वैज्ञानिक आदि शामिल थे। तीसरा श्रमिक वर्ग जो अपने श्रम और कौशल से उत्पादन करते थे। विभिन्न वर्गों के उदय ने सामाजिक असंतुलन की स्थिति पैदा की। पूंजीपति वर्ग आर्थिक क्षेत्र में ही नहीं बल्कि राजनीतिक क्षेत्र में भी प्रभावी हो गया। मध्यम वर्ग बहुआयामी गतिविधियों में संलग्न था। यह अत्यंत महात्वाकांक्षी वर्ग था। अपने हितों के लिए यह वर्ग श्रमिकों को साथ लेकर उच्च वर्ग को नियंत्रित करने का प्रयास करता था।
- **ग्रामीण क्षेत्रों पर प्रभाव**: अत्यधिक संवृद्धि के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में संसाधनों की कमी होती है और कृषि क्षेत्र प्रभावित होता है। औद्योगिक क्रांति का नकारात्मक परिणाम था कुटीर उद्योगों का विनाश। किन्तु यहाँ समझने की बात यह है कि यह नकारात्मक परिणाम औद्योगिक देशों पर नहीं बल्कि औपनिवेशिक देशों पर पड़ा। दरअसल औद्योगिक देशों में कुटरी उद्योगों के विनाश से बेरोजगार हुए लोगों को नवीन उद्योगों के रूप में एक विकल्प प्राप्त हो गया। जबकि उपनिवेशों में इस वैकल्पिक रोजगार की व्यवस्था नहीं हो पाई।

### 2.4.5.2 मीडो का संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत के पर्यावरणीय प्रभाव

**जलवायु परिवर्तन (Climate Change)**
मीडो का सिद्धांत हमें यह बताता है कि अत्यधिक विकास के कारण ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन बढ़ रहा है, जिससे जलवायु परिवर्तन की समस्या उत्पन्न हो रही है। अगर संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग नहीं किया गया, तो जलवायु परिवर्तन के कारण प्राकृतिक आपदाओं का जोखिम बढ़ेगा।

**जैव विविधता की हानि (Loss of Biodiversity)**
अत्यधिक विकास के कारण प्राकृतिक क्षेत्रों का विनाश हो रहा है, जिससे कई वन्यजीव और पौधों की प्रजातियाँ विलुप्त हो रही हैं। मीडो का सिद्धांत यह दर्शाता है कि विकास की असीमित गति जैव विविधता के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न कर सकती है।

**वनों की कटाई (Deforestation)**

बदलते आर्थिक परिदृश्य के कारण गांवों के कुटीर उद्योगों का पतन हुआ। फलतः रोजगार के तलाश में लोग शहरों की ओर भागने लगे क्योंकि अब बड़े-बड़े उद्योग जहां स्थापित हुए थे, वहीं रोजगार की संभावनाएं थी। स्वाभाविक तौर पर शहरीकरण की प्रक्रिया तीव्र हो गई। नए शहर अधिकतर उन औद्योगिक केन्द्रों के आप-पास विकसित हुए जो लोहे, कोयले और पानी की व्यापक उपलब्धता वाले स्थानों के निकट थे। नगरों का उदय व्यापारिक केन्द्र के रूप में, उत्पादन केन्द्र, बंदरगाह नगरों के रूप में हुआ। शहरीकरण की प्रक्रिया केवल इंग्लैंड तक सीमित नहीं रही बल्कि फ्रांस, जर्मनी, आस्ट्रिया, इटली आदि में भी विस्तारित हुई। इस तरह शहरे अर्थव्यवस्था के आधार बनने लगे।औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के कारण वनों की कटाई हो रही है, जिससे मृदा की गुणवत्ता घट रही है और जलवायु असंतुलन उत्पन्न हो रहा है। वनों की कटाई के कारण न केवल पर्यावरण पर असर पड़ता है, बल्कि इससे कई जनजातीय समुदाय भी प्रभावित होते हैं।

### 2.4.6 मीडो का संवृद्धि परिसीमन और आर्थिक दृष्टिकोण

अत्यधिक विकास से आर्थिक असंतुलन राष्ट्रीय समस्या के रूप में सामने आया। विकसित और पिछड़े देशों के मध्य आर्थिक असमानता की खाई गहरी होती चली गई। औद्योगीकृत राष्ट्र अविकसित राष्ट्रों का खुलकर शोषण करने लगे। आर्थिक साम्राज्यवाद का युग आरंभ हुआ। इससे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर औपनिवेशिक साम्राज्यवादी व्यवस्था मजबूत हुई। औद्योगिक क्रांति के बाद राष्ट्रों की आपसी निर्भरता बहुत अधिक बढ़ गई जिससे एक देश में घटने वाली घटना दूसरे देश को सीधे प्रभावित करने लगी। फलतः अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक तेजी एवं मंदी का युग आरंभ हुआ। अत्यधिक विकास के कारण आर्थिक अस्थिरता उत्पन्न हो सकती है, जिससे मुद्रास्फीति, बेरोजगारी, और सामाजिक असमानता की समस्या बढ़ती है। मीडो का संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत आर्थिक दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण है। यह सिद्धांत दर्शाता है कि आर्थिक विकास की एक सीमा होती है, और दीर्घकालिक आर्थिक स्थिरता तभी प्राप्त हो सकती है जब संसाधनों का संतुलित उपयोग किया जाए।

### 2.4.7 " संवृद्धि परिसीमन " के मुख्य निष्कर्ष:

मीडो और उनके सहयोगियों द्वारा प्रस्तुत किए गए "Limits to Growth" के मुख्य निष्कर्ष निम्नलिखित थे:

1. **विकास की असीमित गति का खतरा**: यदि विकास की मौजूदा दर जारी रहती है, तो संसाधनों की कमी और प्रदूषण के कारण भविष्य में पर्यावरणीय और सामाजिक संकट उत्पन्न हो सकता है।
2. **जनसंख्या वृद्धि का प्रभाव**: तेजी से बढ़ती जनसंख्या संसाधनों पर दबाव डालती है, जिससे जल, भोजन और ऊर्जा की कमी का खतरा बढ़ता है।
3. **संसाधनों का संतुलित उपयोग**: भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों की उपलब्धता बनाए रखने के लिए विकास और संसाधनों के उपयोग में संतुलन आवश्यक है।
4. **सतत विकास की आवश्यकता**: "Limits to Growth" ने सतत विकास की दिशा में बढ़ने की आवश्यकता को रेखांकित किया ताकि आने वाली पीढ़ियों के लिए एक स्वस्थ पर्यावरण सुनिश्चित हो सके।

### 2.4.7.1 मीडो का संवृद्धि परिसीमन के अनुसार समाधान

मीडो के सिद्धांत के अनुसार, विकास और संसाधनों के उपयोग में संतुलन बनाए रखने के लिए कुछ प्रमुख समाधान निम्नलिखित हैं:

**1. सतत विकास की नीति (Policy of Sustainable Development)**

सतत विकास का अर्थ है कि वर्तमान पीढ़ी अपने संसाधनों का इस प्रकार उपयोग करे कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी संसाधनों की उपलब्धता बनी रहे। इसके लिए नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों, पुनर्चक्रण, और संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

**2. पर्यावरणीय कर (Environmental Taxes)**

मीडो का सिद्धांत यह सुझाता है कि सरकार को प्रदूषण और संसाधनों के अति-दोहन को नियंत्रित करने के लिए पर्यावरणीय कर लागू करना चाहिए। जैसे, कार्बन टैक्स का उपयोग करके उद्योगों को प्रदूषण कम करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

**3. जनसंख्या नियंत्रण (Population Control)**
मीडो के सिद्धांत के अनुसार जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करना भी आवश्यक है। इसके लिए परिवार नियोजन कार्यक्रम, शिक्षा, और स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार की आवश्यकता है।

**4. नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग (Use of Renewable Energy)**
संवृद्धि की असीमित गति को रोकने के लिए नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, और जैविक ईंधन का उपयोग बढ़ाना चाहिए। इससे जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता कम होती है और पर्यावरणीय प्रभावों में भी कमी आती है।

**5. शिक्षा और जागरूकता (Education and Awareness)**
मीडो का सिद्धांत यह दर्शाता है कि लोगों को पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति जागरूक करना आवश्यक है। शिक्षा और जागरूकता के माध्यम से लोग संसाधनों का संतुलित उपयोग और संरक्षण के प्रति जागरूक हो सकते हैं।

## 2.5 मीडो का संवृद्धि परिसीमन का वर्तमान समय में महत्व

डोनैला मीडो और उनके सहयोगियों द्वारा प्रस्तुत "Limits to Growth" (संवृद्धि परिसीमन) सिद्धांत, आज के समय में अत्यंत प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है। यह सिद्धांत यह दर्शाता है कि प्राकृतिक संसाधन सीमित हैं, और उनका अनियंत्रित दोहन पर्यावरण और समाज के लिए गंभीर संकट उत्पन्न कर सकता है। 1972 में प्रस्तुत इस सिद्धांत का मुख्य उद्देश्य यह था कि तेजी से बढ़ती जनसंख्या, संसाधनों का अत्यधिक उपयोग, और अति औद्योगिकीकरण की गति पर नियंत्रण किया जाए, ताकि दीर्घकालिक स्थिरता प्राप्त की जा सके।

वर्तमान समय में, जब जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, जैव विविधता की हानि, और प्रदूषण जैसी समस्याएँ तेजी से बढ़ रही हैं, मीडो का सिद्धांत हमारी चेतना को जागृत करता है कि विकास की असीमित गति असंभव है। आज का युग अत्यधिक उपभोग, उपभोक्तावाद और संसाधनों के असीमित उपयोग का है, जो हमारे भविष्य के लिए खतरा है। मीडो के सिद्धांत के अनुसार, यदि हमने अब भी अपने संसाधनों के उपयोग में संतुलन और स्थिरता का पालन नहीं किया, तो प्राकृतिक संसाधन समाप्त हो सकते हैं, जिससे मानवता को गंभीर संकट का सामना करना पड़ सकता है।

मीडो का सिद्धांत हमें सतत विकास (Sustainable Development) की ओर प्रेरित करता है। इसका उद्देश्य यह है कि हम विकास की प्रक्रिया को इस प्रकार से संचालित करें कि वर्तमान पीढ़ी के संसाधनों की आवश्यकताएँ पूरी हों, लेकिन इसके साथ ही भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी पर्याप्त संसाधन उपलब्ध रहें। नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग, पुनर्चक्रण, और संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग ऐसे समाधान हैं जिनके द्वारा हम संतुलित विकास की ओर बढ़ सकते हैं।

इसके अलावा, मीडो का सिद्धांत जलवायु परिवर्तन की चुनौती से निपटने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। ग्लोबल वार्मिंग, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन, और कार्बन फुटप्रिंट को कम करने के लिए आज मीडो के सिद्धांत की नीतियों और विचारों को अपनाने की आवश्यकता है। इसके माध्यम से हम प्रदूषण को नियंत्रित कर सकते हैं और पर्यावरण को सुरक्षित रख सकते हैं।

संक्षेप में, मीडो का संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत हमें यह सिखाता है कि प्रकृति के संसाधनों की सीमाओं को समझते हुए विकास की दिशा में आगे बढ़ना आवश्यक है। यह सिद्धांत न केवल हमारे आर्थिक और औद्योगिक विकास को संतुलित करने की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान करता है, बल्कि यह पर्यावरणीय स्थिरता और सामाजिक कल्याण के प्रति भी हमें जिम्मेदार बनाता है। वर्तमान समय में, जब संसाधनों का संकट बढ़ता जा रहा है और जलवायु असंतुलन बढ़ता जा रहा है, मीडो का सिद्धांत हमारी नीतियों और दृष्टिकोण में संतुलन और स्थिरता की जरूरत पर जोर देता है, जो दीर्घकालिक और टिकाऊ भविष्य के लिए अनिवार्य है।

## 2.6 निष्कर्ष

समष्टिभावी दृष्टिकोण से संवृद्धि आधिक्य का अध्ययन करना यह बताता है कि अनियंत्रित और अत्यधिक विकास आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय संकट का कारण बन सकता है। संवृद्धि आधिक्य के कारण

प्राकृतिक संसाधनों का अति-दोहन होता है, जैव विविधता में कमी आती है, और पर्यावरणीय असंतुलन उत्पन्न होता है।
समष्टि दृष्टिकोण से, मीडो का सिद्धांत हमें एक स्थिर और संतुलित विकास की दिशा में प्रेरित करता है, जहाँ वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों की उपलब्धता बनी रहे। मीडो का संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत आज भी एक महत्वपूर्ण मार्गदर्शक सिद्धांत है, जो हमें बताता है कि विकास को दीर्घकालिक स्थिरता और पर्यावरणीय संतुलन के साथ कैसे प्राप्त किया जा सकता है। संवृद्धि आधिक्य की समस्याओं से निपटने के लिए सतत विकास, पर्यावरणीय कर, जागरूकता, और नवीकरणीय ऊर्जा के उपयोग जैसे समाधान आवश्यक हैं। इसके साथ ही, सरकार और समाज दोनों को मिलकर संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करना चाहिए ताकि भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक स्थिर और सुरक्षित पर्यावरण सुनिश्चित किया जा सके।

## 2.7 संदर्भ ग्रंथ सूची


1. **"Environmental and Natural Resource Economics"**
   लेखक: **Tom Tietenberg** और **Lynne Lewis**
   प्रकाशक: **Taylor & Francis, 13 March 2018, ISBN: 9781351803373**
2. **"Economics of the Environment: Selected Readings"**
   संपादक: **Robert N. Stavins**
   प्रकाशक: **Edward Elgar Publishing, 2019, ISBN: 9781788972079**
3. **विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: **Dr. Anupam Agarwal, Dr. Alok Gupta**
   प्रकाशक: **SBPD Publications, 6 July 2021, ISBN: 9789389585339**
4. **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: डॉ. वी.सी. सिन्हा, डॉ. रितिका सिन्हा
   प्रकाशक: **SBPD Publishing House, 8 July 2024, ISBN: 9788119142392**
5. **"The Economics of Climate Change: The Stern Review"**
   लेखक: Nicholas Stern
   प्रकाशक: Cambridge University Press


## 2.8.0 सामान्य बोध प्रश्न:

1. **समष्टिभावी दृष्टिकोण का उद्देश्य क्या है?**
   (a) व्यक्तियों के व्यक्तिगत लाभ को अधिकतम करना
   (b) आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संतुलन का समग्र अध्ययन
   (c) केवल औद्योगिक उत्पादन बढ़ाना
   (d) केवल सरकारी नीतियों का अध्ययन करना
   **उत्तर:** (b) आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संतुलन का समग्र अध्ययन
2. **अति औद्योगीकरण का अर्थ क्या है?**
   (a) कृषि का विस्तार
   (b) उद्योगों का अत्यधिक विस्तार और संसाधनों का दोहन
   (c) विनिर्माण का राष्ट्रीयकरण
   (d) केवल तकनीकी विकास
   **उत्तर:** (b) उद्योगों का अत्यधिक विस्तार और संसाधनों का दोहन
3. **संवृद्धि आधिक्य किस स्थिति को दर्शाता है?**
   (a) आर्थिक विकास की असीमित और अनियंत्रित गति

(b) सरकार द्वारा नियंत्रित आर्थिक विकास
(c) आर्थिक मंदी की स्थिति
(d) संतुलित विकास
**उत्तर:** (a) आर्थिक विकास की असीमित और अनियंत्रित गति

4. **मीडो का संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत किस वर्ष प्रस्तुत किया गया था?**
(a) 1950
(b) 1965
(c) 1972
(d) 1985
**उत्तर:** (c) 1972

5. **मीडो के संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत का मुख्य उद्देश्य क्या है?**
(a) संसाधनों का असीमित दोहन
(b) विकास की सीमाओं को पहचानना और सतत विकास को बढ़ावा देना
(c) केवल उद्योगों को प्रोत्साहित करना
(d) प्राकृतिक संसाधनों को अनदेखा करना
**उत्तर:** (b) विकास की सीमाओं को पहचानना और सतत विकास को बढ़ावा देना

6. **अति औद्योगीकरण के कारण होने वाली प्रमुख समस्या कौन सी है?**
(a) आर्थिक समृद्धि
(b) वायु और जल प्रदूषण
(c) केवल रोजगार की वृद्धि
(d) शहरीकरण
**उत्तर:** (b) वायु और जल प्रदूषण

7. **संवृद्धि आधिक्य का सबसे अधिक प्रभाव किस पर पड़ता है?**
(a) शिक्षा क्षेत्र पर
(b) कृषि क्षेत्र पर
(c) प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण पर
(d) खेल उद्योग पर
**उत्तर:** (c) प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण पर

8. **मीडो के सिद्धांत के अनुसार दीर्घकालिक स्थिरता के लिए क्या आवश्यक है?**
(a) आर्थिक विकास की गति को अनियंत्रित रखना
(b) संसाधनों का संतुलित और विवेकपूर्ण उपयोग
(c) केवल तकनीकी उन्नति
(d) केवल व्यक्तिगत लाभ की वृद्धि
**उत्तर:** (b) संसाधनों का संतुलित और विवेकपूर्ण उपयोग

9. **अति औद्योगीकरण के सामाजिक प्रभाव में क्या शामिल है?**
(a) अधिक कराधान
(b) आर्थिक असमानता और स्वास्थ्य समस्याएं
(c) ग्रामीण क्षेत्र का विकास
(d) केवल सांस्कृतिक विकास
**उत्तर:** (b) आर्थिक असमानता और स्वास्थ्य समस्याएं

10. **संवृद्धि आधिक्य को नियंत्रित करने के लिए कौन-सी नीति अपनाई जा सकती है?**
(a) आर्थिक मंदी को बढ़ावा देना
(b) सतत विकास की नीति

(c) केवल औद्योगिक विस्तार
(d) सभी कृषि क्षेत्रों को उद्योगों में बदलना
**उत्तर:** (b) सतत विकास की नीति

## 2.9 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. समष्टिभावी दृष्टिकोण के सिद्धांत का संक्षेप में वर्णन करें और बताएं कि यह आर्थिक विकास और पर्यावरणीय स्थिरता को कैसे प्रभावित करता है।
2. अति औद्योगीकरण से उत्पन्न मुख्य समस्याओं का उल्लेख करें और इसका समाज, पर्यावरण, और संसाधनों पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसका विश्लेषण करें।
3. संवृद्धि आधिक्य की अवधारणा को विस्तार से समझाएं। किस प्रकार आर्थिक विकास का असंतुलित प्रवाह संवृद्धि आधिक्य को जन्म देता है?
4. मीडो के संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत के अनुसार, यदि विकास और संसाधनों का अनियंत्रित उपयोग जारी रहा तो इसके क्या परिणाम हो सकते हैं?
5. अति औद्योगीकरण के कारण क्या हैं? इस पर चर्चा करें कि कैसे वैश्वीकरण और उपभोक्तावाद इस प्रक्रिया को बढ़ावा देते हैं।
6. संवृद्धि आधिक्य के कारण पर्यावरणीय संसाधनों पर क्या प्रभाव पड़ता है? उदाहरण देकर समझाएँ कि कैसे प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन इसके परिणामस्वरूप उत्पन्न होते हैं।
7. मीडो का संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत सतत विकास की आवश्यकता पर कैसे जोर देता है? इसका उल्लेख करें और इसके समाधान सुझाएं।
8. औद्योगीकरण की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए यह बताएं कि मीडो का सिद्धांत वर्तमान वैश्विक परिप्रेक्ष्य में क्यों महत्वपूर्ण है।
9. अति औद्योगीकरण के सामाजिक प्रभावों का विस्तार से वर्णन करें, विशेष रूप से स्वास्थ्य और आर्थिक असमानता पर इसके प्रभाव का विश्लेषण करें।
10. सतत विकास की नीतियाँ कैसे अति औद्योगीकरण और संवृद्धि आधिक्य की समस्याओं को हल कर सकती हैं? इन नीतियों का प्रभावी कार्यान्वयन कैसे संभव है?
*11. मीडो के सिद्धांत के अनुसार, संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग के लिए किन-किन उपायों को अपनाया जा सकता है?*
*12. अति औद्योगीकरण और संवृद्धि आधिक्य के बीच क्या संबंध है? इसे उदाहरणों के माध्यम से स्पष्ट करें।*
*13. मीडो का संवृद्धि परिसीमन सिद्धांत जलवायु परिवर्तन जैसे पर्यावरणीय संकटों को हल करने में किस प्रकार सहायक हो सकता है?*
*14. विकासशील देशों के लिए अति औद्योगीकरण और संवृद्धि आधिक्य से निपटने के लिए क्या चुनौतियाँ हैं? इसके समाधान में उनकी क्या भूमिका हो सकती है?*
*15. समष्टिभावी दृष्टिकोण से यह समझाएं कि सरकार, उद्योग, और समाज के अन्य हितधारकों की भूमिका सतत विकास को सुनिश्चित करने में किस प्रकार महत्वपूर्ण हो सकती है।*

## इकाई -03
## तीन प्रणालियाँ एवं उनका अन्तर्सम्बन्ध: जैविक, आर्थिक एवं सामाजिक प्रणाली

**इकाई की रूपरेखा:**

**3.0 उद्देश्य**
**3.1 प्रस्तावना**
**3.2 जैविक प्रणाली का परिचय**
**3.2.1 मुख्य तत्व**
**3.2.2 जैविक प्रणाली का पर्यावरण अर्थशास्त्र में महत्व**
**3.2.3 जैविक प्रणाली में पर्यावरणीय असंतुलन और समस्याएँ**
**3.2.4 जैविक प्रणाली का महत्व और इसके संतुलन की आवश्यकता**
**3.3 पर्यावरण अर्थशास्त्र में "आर्थिक प्रणाली"**
**3.3.1 आर्थिक प्रणाली का परिचय**
**3.3.2 पर्यावरण अर्थशास्त्र में आर्थिक प्रणाली का महत्व**
**3.3.3 आर्थिक प्रणाली के तत्व**
**3.3.4 आर्थिक प्रणाली और पर्यावरणीय समस्याएँ**
**3.3.5 आर्थिक प्रणाली के पर्यावरणीय समाधान**
**3.4 पर्यावरण अर्थशास्त्र में "सामाजिक प्रणाली"**
**3.4.1 सामाजिक प्रणाली का परिचय**
**3.4.2 सामाजिक प्रणाली का पर्यावरण अर्थशास्त्र में महत्व**
**3.4.3 सामाजिक प्रणाली के माध्यम से पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने के उपाय**
**3.5.0 तीनों प्रणालियों का अंतर्संबंध**
**3.5.1 तीनों प्रणालियों का त्रिकोणीय संबंध**
**3.6.0 निष्कर्ष**
**3.7.0 संदर्भ ग्रंथ सूची**
**3.8.0 सामान्य बोध प्रश्न**
**3.9.0 अभ्यासार्थ प्रश्न**

**3.0 उद्देश्य:**

1. **जैविक प्रणाली का संरक्षण**
2. **आर्थिक विकास में स्थिरता**
3. **सामाजिक कल्याण और समानता**
4. **सतत विकास को बढ़ावा देना**
5. **पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान**

### पर्यावरण अर्थशास्त्र में "जैविक प्रणाली"

**3.1 प्रस्तावना:**

पर्यावरण अर्थशास्त्र में जैविक प्रणाली का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है। जैविक प्रणाली, जिसे आमतौर पर पारिस्थितिकी तंत्र (ecosystem) भी कहा जाता है, पृथ्वी पर जीवन के समस्त घटकों के बीच की अंतर्संबंधित प्रक्रियाओं को दर्शाता है। इन प्रणालियों में पेड़-पौधे, जीव-जंतु, सूक्ष्मजीव, और उनके भौतिक आवास, जैसे भूमि, जल, और वायुमंडल, शामिल होते हैं। पर्यावरण अर्थशास्त्र में जैविक प्रणाली का अध्ययन हमें यह समझने में सहायता करता है कि यह प्राकृतिक संपदा किस प्रकार से आर्थिक विकास में

योगदान करती है और किस तरह से इसके असंतुलन का समाज और अर्थव्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

### 3.2 जैविक प्रणाली का परिचय

जैविक प्रणाली एक प्राकृतिक ढांचा है, जिसमें विभिन्न जीव-जंतु और पादप एक दूसरे के साथ और अपने भौतिक परिवेश के साथ अंतर्संबंधित होते हैं। ये प्रणालियाँ ऊर्जा और पोषक तत्वों का प्रवाह सुनिश्चित करती हैं, जो विभिन्न जैविक प्रक्रियाओं को बनाए रखता है। जैविक प्रणाली विभिन्न स्तरों पर कार्य करती है, जिसमें प्रत्येक स्तर का योगदान पृथ्वी पर जीवन को बनाए रखने में सहायक होता है।

**3.2.1 मुख्य तत्व:** जैविक प्रणाली के कुछ प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं:

- **उत्पादक** (Producers): पेड़-पौधे जो प्रकाश संश्लेषण द्वारा भोजन और ऊर्जा का निर्माण करते हैं।
- **उपभोक्ता** (Consumers): वह जीव जो अन्य जीवों या पौधों पर निर्भर रहते हैं, जैसे शाकाहारी, मांसाहारी, और सर्वाहारी।
- **अपघटक** (Decomposers): वे सूक्ष्मजीव जो मृत जैविक पदार्थ को विघटित कर पोषक तत्वों में परिवर्तित करते हैं।

जैविक प्रणाली में ये तत्व ऊर्जा चक्र (energy cycle) और पोषक तत्वों के चक्र (nutrient cycle) को बनाए रखते हैं, जिससे पारिस्थितिकी तंत्र का संतुलन बना रहता है।

### 3.2.2 जैविक प्रणाली का पर्यावरण अर्थशास्त्र में महत्व

पर्यावरण अर्थशास्त्र में जैविक प्रणाली का अध्ययन महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह प्राकृतिक संसाधनों और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं के प्रबंधन, उपयोग और संरक्षण को समझने में सहायक होता है। जैविक प्रणाली, जिसे पारिस्थितिकी तंत्र भी कहा जाता है, पेड़-पौधों, जीव-जंतुओं, सूक्ष्मजीवों, और उनके भौतिक आवास के बीच की अंतर्संबंधित प्रक्रियाओं को दर्शाती है। जैविक प्रणाली का संतुलन आर्थिक विकास, समाजिक कल्याण, और पर्यावरणीय स्थिरता के लिए आवश्यक है। इसका अध्ययन पर्यावरणीय क्षरण को रोकने और सतत विकास की दिशा में काम करने में सहायक है।

#### 1. जैविक प्रणाली और पारिस्थितिकी सेवाएँ (Ecosystem Services)

जैविक प्रणाली का पर्यावरण अर्थशास्त्र में मुख्य महत्व इसके द्वारा प्रदान की जाने वाली पारिस्थितिकी सेवाओं से है, जो मानव समाज के लिए आवश्यक हैं। ये सेवाएँ निम्नलिखित प्रकार की होती हैं:

- **समर्थन सेवाएँ (Supporting Services):** इनमें पोषक तत्वों का चक्रण, मृदा निर्माण, और पौधों की वृद्धि शामिल है। ये सेवाएँ जैविक प्रणाली की आधारभूत संरचना को बनाए रखती हैं।
- **प्रावधान सेवाएँ (Provisioning Services):** भोजन, जल, लकड़ी, औषधियाँ, और अन्य आवश्यक संसाधन प्रदान करना जैविक प्रणाली का महत्वपूर्ण योगदान है। इन संसाधनों के बिना मानव समाज का अस्तित्व संभव नहीं है।
- **नियमन सेवाएँ (Regulating Services):** जैविक प्रणाली जलवायु नियंत्रण, बाढ़ नियंत्रण, वायु और जल की सफाई में मदद करती है। ये सेवाएँ पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में सहायक हैं।
- **सांस्कृतिक सेवाएँ (Cultural Services):** जैविक प्रणाली लोगों को सौंदर्य, मनोरंजन, पर्यटन और आध्यात्मिक अनुभव प्रदान करती है, जो मानसिक और शारीरिक कल्याण में सहायक हैं।

#### 2. आर्थिक मूल्यांकन (Economic Valuation)

जैविक प्रणाली के तत्वों का आर्थिक मूल्यांकन पर्यावरण अर्थशास्त्र का एक महत्वपूर्ण भाग है। पारिस्थितिकी सेवाओं का मूल्यांकन करना कठिन है, क्योंकि इनमें से कई सेवाओं का कोई प्रत्यक्ष बाजार मूल्य नहीं होता। हालांकि, पारिस्थितिकी सेवाओं का मूल्यांकन करने से यह समझने में मदद मिलती है कि जैविक प्रणाली का हमारे जीवन और अर्थव्यवस्था पर क्या प्रभाव है। उदाहरण के लिए, एक जंगल न केवल लकड़ी और ईंधन प्रदान करता है बल्कि कार्बन को भी अवशोषित करता है, जिससे ग्लोबल वार्मिंग में कमी आती है। इन सेवाओं का आर्थिक मूल्यांकन नीति निर्माताओं को संसाधनों के सतत उपयोग और संरक्षण में मदद करता है।

### 3. जैविक प्रणाली और सतत विकास (Sustainable Development)

जैविक प्रणाली का संतुलन बनाए रखना सतत विकास के लिए आवश्यक है। सतत विकास का उद्देश्य जैविक प्रणालियों का संरक्षण करना और उनके स्थायी उपयोग को सुनिश्चित करना है ताकि वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों की उपलब्धता बनी रहे। जैविक प्रणाली का आर्थिक महत्व यह है कि यह सामाजिक और आर्थिक स्थिरता का आधार है।

उदाहरण के लिए, जैविक प्रणाली मृदा उर्वरता को बनाए रखती है, जिससे कृषि उत्पादकता बनी रहती है। यह खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में सहायक है और समाज में भुखमरी और गरीबी की समस्याओं को कम करता है।

### 4. जलवायु परिवर्तन और जैविक प्रणाली

जलवायु परिवर्तन जैविक प्रणाली पर गंभीर प्रभाव डाल रहा है। वैश्विक तापमान में वृद्धि, अत्यधिक वर्षा या सूखा, और मौसम के पैटर्न में बदलाव से जैविक प्रणाली असंतुलित हो रही है। इससे पौधों और जीवों की जीवन प्रक्रिया बाधित होती है और कई प्रजातियाँ विलुप्त होने के कगार पर पहुँच रही हैं

पर्यावरण अर्थशास्त्र में जैविक प्रणाली का अध्ययन न केवल पर्यावरणीय संतुलन के लिए बल्कि समाज और अर्थव्यवस्था के सतत विकास के लिए भी आवश्यक है। जैविक प्रणाली हमें प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से जीवन की आधारभूत आवश्यकताएँ प्रदान करती है। इसके संरक्षण के बिना दीर्घकालिक आर्थिक और सामाजिक स्थिरता संभव नहीं है।

जैविक प्रणाली के संरक्षण के लिए सतत विकास, नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग, पुनर्चक्रण, और जागरूकता जैसे उपाय आवश्यक हैं। आर्थिक नीतियों के माध्यम से संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और जैव विविधता का संरक्षण सुनिश्चित किया जा सकता है। जैविक प्रणाली का महत्व आज के संदर्भ में अत्यधिक बढ़ गया है, और इसका संरक्षण ही एक स्थायी और संतुलित भविष्य की कुंजी है।

### 5. जैव विविधता का संरक्षण

जैविक प्रणाली जैव विविधता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जैव विविधता पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता और सुदृढ़ता को बनाए रखने के लिए आवश्यक है। जैव विविधता का संरक्षण पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखने के साथ-साथ आर्थिक विकास के लिए भी सहायक है, क्योंकि जैव विविधता के माध्यम से विभिन्न उत्पाद और सेवाएँ प्राप्त की जा सकती हैं।

जैव विविधता का महत्व पर्यटन, कृषि, औषधि निर्माण और अन्य उद्योगों में है। जैविक प्रणाली में असंतुलन होने से जैव विविधता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, जिससे इन उद्योगों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

### 6. जैविक प्रणाली और सामाजिक कल्याण

जैविक प्रणाली सामाजिक कल्याण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। स्वच्छ हवा, स्वच्छ जल, और स्वस्थ वातावरण लोगों के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं। जैविक प्रणाली इन आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायक है। इसके अलावा, जैविक प्रणाली मनोरंजन, पर्यटन और सांस्कृतिक गतिविधियों के अवसर भी प्रदान करती है, जिससे समाज में संतुलन बना रहता है।

सामाजिक कल्याण के लिए जैविक प्रणाली का संरक्षण महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह लोगों को एक स्वस्थ और स्वच्छ जीवन जीने का अवसर प्रदान करती है।

### 7. जैविक प्रणाली का आर्थिक विकास में योगदान

जैविक प्रणाली प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से आर्थिक विकास में योगदान देती है। खाद्य उत्पादन, ऊर्जा, और कच्चे माल की उपलब्धता जैविक प्रणाली पर निर्भर करती है। जैविक प्रणाली के बिना, कृषि, मछली पालन, और वन उद्योग का संचालन संभव नहीं है।

विभिन्न उद्योगों के लिए प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता का आधार जैविक प्रणाली है, और इसका संरक्षण अर्थव्यवस्था के दीर्घकालिक विकास के लिए आवश्यक है। जैविक प्रणाली का संतुलन और स्थिरता बनाए रखना आर्थिक विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसका असंतुलन आर्थिक अस्थिरता का कारण बन सकता है।

## 3.2.3 जैविक प्रणाली में पर्यावरणीय असंतुलन और समस्याएँ

जैविक प्रणाली, जिसे पारिस्थितिकी तंत्र भी कहा जाता है, पृथ्वी पर जीवन के विविध रूपों के बीच एक संतुलित संबंध का प्रतिनिधित्व करती है। यह प्रणाली कई जैविक और अजैविक घटकों के बीच अंतर्संबंधों के माध्यम से संचालित होती है, जिनमें पौधे, जीव-जंतु, सूक्ष्मजीव, और अन्य प्राकृतिक तत्व शामिल हैं। हालाँकि, मानवीय गतिविधियों और प्राकृतिक कारणों के कारण जैविक प्रणाली में असंतुलन उत्पन्न हो रहा है, जिससे विभिन्न प्रकार की पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। यह असंतुलन न केवल जैविक प्रणाली के लिए बल्कि मानव जीवन के लिए भी गंभीर खतरा है। जैविक प्रणाली पर विभिन्न मानवजनित और प्राकृतिक कारणों से गंभीर खतरे उत्पन्न हो रहे हैं। ये समस्याएँ जैव विविधता में ह्रास, जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, और संसाधनों के अत्यधिक दोहन के रूप में देखी जा सकती हैं।

### 3.2.4 जैविक प्रणाली का महत्व और इसके संतुलन की आवश्यकता

जैविक प्रणाली जीवन के विविध रूपों के बीच पारस्परिक संबंधों का एक जटिल तंत्र है। इसमें ऊर्जा और पोषक तत्वों का प्रवाह होता है, जो विभिन्न जीवों के अस्तित्व और विकास के लिए आवश्यक होता है। जैविक प्रणाली का संतुलन पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखता है, जिससे खाद्य श्रृंखला, जल चक्र, और पोषक तत्वों का चक्र सुचारू रूप से संचालित होता है। लेकिन जब यह संतुलन बिगड़ता है, तो जैविक प्रणाली के विभिन्न घटक एक दूसरे पर प्रतिकूल प्रभाव डालने लगते हैं, जिससे व्यापक पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

जैविक प्रणाली, जिसे पारिस्थितिकी तंत्र भी कहा जाता है, प्रकृति का एक जटिल ढाँचा है जिसमें सभी जीवित और अजैविक घटक शामिल होते हैं। इसमें पौधे, जीव-जंतु, सूक्ष्मजीव, और अन्य प्राकृतिक तत्व शामिल हैं, जो एक दूसरे के साथ संतुलन बनाए रखते हैं। जैविक प्रणाली का महत्व इस बात में है कि यह प्राकृतिक संसाधनों का पुनर्चक्रण करती है, कार्बन चक्र और जल चक्र को बनाए रखती है, और जीवन के लिए आवश्यक पोषक तत्वों का प्रवाह सुनिश्चित करती है। यह प्रणाली न केवल पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखती है, बल्कि समाज को स्वच्छ जल, स्वच्छ हवा, और भोजन जैसी आवश्यक वस्तुएँ भी उपलब्ध कराती है।

जैविक प्रणाली का संतुलन पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने के लिए आवश्यक है। जब इस प्रणाली में असंतुलन उत्पन्न होता है, जैसे वनों की कटाई, प्रदूषण, और जलवायु परिवर्तन के कारण, तो इसके दुष्परिणाम व्यापक होते हैं। जैविक असंतुलन से जैव विविधता में कमी, मृदा का क्षरण, और जल स्रोतों की गुणवत्ता में गिरावट आ सकती है। इसीलिए, जैविक प्रणाली का संतुलन बनाए रखना दीर्घकालिक स्थिरता और सतत विकास के लिए आवश्यक है। इसके लिए प्राकृतिक संसाधनों का सतत और विवेकपूर्ण उपयोग, जैव विविधता का संरक्षण, और प्रदूषण नियंत्रण जैसे उपायों का पालन अनिवार्य है। जैविक प्रणाली का संतुलन बनाए रखने से ही भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक सुरक्षित और स्वस्थ पर्यावरण सुनिश्चित किया जा सकता है।

## 3.3 पर्यावरण अर्थशास्त्र में "आर्थिक प्रणाली"

पर्यावरण अर्थशास्त्र में आर्थिक प्रणाली का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह यह दर्शाता है कि मानव समाज अपने आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का किस प्रकार उपयोग करता है। पर्यावरण अर्थशास्त्र, पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र को आर्थिक मॉडलों में एकीकृत करता है।आर्थिक प्रणाली संसाधनों के उत्पादन, वितरण, और उपभोग की प्रक्रियाओं को नियंत्रित करती है। इस प्रक्रिया में संसाधनों का सही ढंग से उपयोग करने और पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने के लिए आवश्यक नीतियाँ विकसित की जाती हैं।

पर्यावरण अर्थशास्त्र में आर्थिक प्रणाली का अध्ययन इस दृष्टिकोण से किया जाता है कि कैसे आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संरक्षण के बीच संतुलन स्थापित किया जा सकता है। आर्थिक प्रणाली का उद्देश्य केवल आर्थिक उत्पादन को बढ़ाना नहीं, बल्कि पर्यावरणीय स्थिरता को बनाए रखना भी होना चाहिए। इस प्रकार, आर्थिक प्रणाली को इस तरह से संचालित करना आवश्यक है कि वह सतत विकास के लक्ष्यों की पूर्ति में सहायक हो और समाज के लिए एक संतुलित, स्थायी और सुरक्षित भविष्य सुनिश्चित कर सके।

### 3.3.1 आर्थिक प्रणाली का परिचय

आर्थिक प्रणाली किसी भी समाज की आधारभूत संरचना होती है, जो उत्पादन, वितरण और उपभोग की गतिविधियों को नियंत्रित करती है। यह प्रणाली विभिन्न संसाधनों के उपयोग के माध्यम से समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयास करती है। आर्थिक प्रणाली में मुख्यतः चार घटक शामिल होते हैं: उत्पादन, वितरण, उपभोग, और विनियमन। उत्पादन वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों, जैसे कि भूमि, जल, खनिज और ऊर्जा, का उपयोग कर वस्तुएं और सेवाएं निर्मित की जाती हैं।

वितरण का तात्पर्य उन उत्पादों और सेवाओं को समाज के विभिन्न वर्गों में बाँटने से है, ताकि लोगों की आवश्यकताएँ पूरी हो सकें। उपभोग वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से लोग उन वस्तुओं और सेवाओं का उपयोग करते हैं। विनियमन वह तत्व है जो आर्थिक गतिविधियों को नियंत्रित और संतुलित करने में मदद करता है ताकि संसाधनों का संतुलित और सतत उपयोग सुनिश्चित किया जा सके।

आर्थिक प्रणाली का उद्देश्य केवल समाज की भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करना ही नहीं है, बल्कि यह भी सुनिश्चित करना है कि यह प्रक्रिया दीर्घकालिक रूप से सतत और पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखे। इसके लिए नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग, पुनर्चक्रण, और प्रदूषण नियंत्रण जैसे उपाय भी अपनाए जाते हैं। एक सफल आर्थिक प्रणाली वह होती है, जो आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संरक्षण के बीच संतुलन बनाए रखते हुए सतत विकास की दिशा में अग्रसर हो।

### 3.3.2 पर्यावरण अर्थशास्त्र में आर्थिक प्रणाली का महत्व

पर्यावरण अर्थशास्त्र में आर्थिक प्रणाली का महत्व इसलिए भी है, क्योंकि यह समझने में मदद करता है कि आर्थिक गतिविधियों से पर्यावरण पर किस प्रकार का प्रभाव पड़ता है। आर्थिक प्रणाली में शामिल प्रमुख गतिविधियाँ निम्नलिखित हैं:

### 2.1 संसाधनों का दोहन और संतुलित उपयोग

प्राकृतिक संसाधनों जैसे कि जल, भूमि, वन, और खनिज का दोहन और उनका उत्पादन आर्थिक प्रणाली का हिस्सा है। लेकिन इन संसाधनों का अत्यधिक उपयोग पर्यावरणीय असंतुलन उत्पन्न कर सकता है, जिससे जैविक प्रणाली को हानि होती है। पर्यावरण अर्थशास्त्र का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि इन संसाधनों का उपयोग इस प्रकार से किया जाए कि वे दीर्घकालिक स्थिरता बनाए रखें।

### 2.2 प्रदूषण और अपशिष्ट प्रबंधन

उत्पादन प्रक्रियाओं में औद्योगिक गतिविधियों के कारण प्रदूषण और अपशिष्ट की समस्या उत्पन्न होती है। आर्थिक प्रणाली में उत्पादन को संतुलित करते हुए प्रदूषण नियंत्रण का प्रावधान किया जाना चाहिए। प्रदूषण और अपशिष्ट प्रबंधन में सुधार के लिए पर्यावरणीय कर, कानून, और नीतियाँ आवश्यक हैं, जो पर्यावरण अर्थशास्त्र का प्रमुख उद्देश्य है।

### 2.3 पुनर्चक्रण और सतत विकास

आर्थिक प्रणाली में पुनर्चक्रण और सतत विकास के सिद्धांत को अपनाने से प्राकृतिक संसाधनों की बचत हो सकती है। यह प्रणाली प्राकृतिक संसाधनों का पुनः उपयोग करने और उनकी पुनःपूर्ति के लिए उपाय सुझाती है। पर्यावरण अर्थशास्त्र का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है कि आर्थिक प्रणाली इस प्रकार संचालित हो कि वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी संसाधन उपलब्ध हों।

### 3.3.3 आर्थिक प्रणाली के तत्व

आर्थिक प्रणाली के कुछ प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं:

- **उत्पादन**: प्राकृतिक संसाधनों से वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन।
- **वितरण**: उत्पादन की गई वस्तुओं और सेवाओं को समाज के विभिन्न वर्गों में वितरित करना।
- **उपभोग**: वस्तुओं और सेवाओं का उपभोग, जिससे लोगों की आवश्यकताएँ पूरी होती हैं।
- **नियंत्रण**: आर्थिक गतिविधियों का पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने के लिए नियंत्रण करना।

### 3.3.4 आर्थिक प्रणाली और पर्यावरणीय समस्याएँ

आर्थिक प्रणाली में कई समस्याएँ उत्पन्न होती हैं, जिनका पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है:

- **संसाधनों का अत्यधिक दोहन**: अधिक लाभ कमाने की प्रवृत्ति से संसाधनों का अत्यधिक दोहन होता है।

- **प्रदूषण**: औद्योगिक उत्पादन और ऊर्जा की खपत से वायु, जल, और मृदा प्रदूषण बढ़ता है।
- **जलवायु परिवर्तन**: जीवाश्म ईंधनों का उपयोग और ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन से जलवायु परिवर्तन होता है।

### 3.3.5 आर्थिक प्रणाली के पर्यावरणीय समाधान

पर्यावरण अर्थशास्त्र में आर्थिक प्रणाली को संतुलित करने के लिए कई उपाय सुझाए गए हैं, जिनमें प्रमुख हैं:

- **पर्यावरणीय कर**: प्रदूषण फैलाने वाली गतिविधियों पर कर लगाना।
- **नवीकरणीय ऊर्जा**: जीवाश्म ईंधनों के बजाय सौर, पवन, और जल ऊर्जा का उपयोग करना।
- **पुनर्चक्रण**: पुनर्चक्रण और अपशिष्ट प्रबंधन को बढ़ावा देना।

## 3.4 पर्यावरण अर्थशास्त्र में "सामाजिक प्रणाली"

पर्यावरण अर्थशास्त्र में सामाजिक प्रणाली का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह समाज के सदस्यों के बीच की संरचना और उनके व्यवहार का विश्लेषण करती है, जो सीधे-सीधे पर्यावरण और आर्थिक विकास को प्रभावित करते हैं। सामाजिक प्रणाली पर्यावरणीय समस्याओं की जड़ तक पहुँचने और उनके समाधान खोजने में मदद करती है। सामाजिक प्रणाली का अध्ययन इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि यह समझने में सहायता करता है कि कैसे समाज में लोग संसाधनों का उपभोग करते हैं, प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन करते हैं, और आर्थिक एवं पर्यावरणीय नीतियों के प्रति अपनी प्रतिक्रियाएँ देते हैं।

### 3.4.1 सामाजिक प्रणाली का परिचय

सामाजिक प्रणाली समाज में लोगों, उनके समूहों, और उनकी गतिविधियों का एक ऐसा ढाँचा है, जहाँ पर लोग एक दूसरे के साथ अंतर्संबंधित होते हैं और एक साथ कार्य करते हैं। इसमें परंपराएँ, मान्यताएँ, सांस्कृतिक धारणाएँ, और व्यवहारिक नियम शामिल होते हैं, जो समाज में पर्यावरणीय और आर्थिक गतिविधियों के संचालन को प्रभावित करते हैं। सामाजिक प्रणाली के द्वारा हम यह समझ सकते हैं कि समाज के लोग किस प्रकार से अपने पर्यावरण और आर्थिक निर्णय लेते हैं, जो प्राकृतिक संसाधनों और पारिस्थितिकी तंत्र पर सीधा प्रभाव डालता है।

### 3.4.2 सामाजिक प्रणाली का पर्यावरण अर्थशास्त्र में महत्व

पर्यावरण अर्थशास्त्र में सामाजिक प्रणाली का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि यह समाज के विभिन्न घटकों और उनके पर्यावरणीय संसाधनों के उपयोग को नियंत्रित करती है। सामाजिक प्रणाली, जिसमें सांस्कृतिक धारणाएँ, परंपराएँ, मान्यताएँ और संस्थाएँ शामिल हैं, यह निर्धारित करती है कि लोग अपने संसाधनों का उपयोग किस प्रकार से करते हैं। यह प्रणाली आर्थिक गतिविधियों, पर्यावरणीय नीतियों, और संसाधनों के सतत उपयोग में समाज को मार्गदर्शन प्रदान करती है।

सामाजिक प्रणाली का महत्व पर्यावरण संरक्षण में भी है, क्योंकि यह लोगों को पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति जागरूक बनाती है। शिक्षा, जन जागरूकता, और सामुदायिक सहभागिता के माध्यम से सामाजिक प्रणाली संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग, पुनर्चक्रण, और प्रदूषण नियंत्रण को बढ़ावा देती है। इसके अलावा, सामाजिक प्रणाली सरकार और नीति निर्माताओं को पर्यावरणीय नीतियाँ बनाने के लिए प्रेरित करती है, जो सतत विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायक होती हैं।

सामाजिक प्रणाली पर्यावरण और अर्थव्यवस्था के बीच एक सेतु का कार्य करती है, जो आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संरक्षण के बीच संतुलन बनाए रखती है। इस प्रकार, पर्यावरण अर्थशास्त्र में सामाजिक प्रणाली का अध्ययन यह सुनिश्चित करता है कि समाजिक और आर्थिक गतिविधियाँ पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखते हुए सतत विकास की दिशा में अग्रसर हों। इसका अध्ययन हमें निम्नलिखित क्षेत्रों में मार्गदर्शन प्रदान करता है:

#### *2.1 प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण*

सामाजिक प्रणाली समाज को प्राकृतिक संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग के प्रति जागरूक कर सकती है। इसमें लोग संसाधनों का संचय, पुनः उपयोग, और पुनर्चक्रण कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, जल के प्रति

जागरूकता, पेड़ लगाना, और ऊर्जा का संतुलित उपयोग करना सामाजिक प्रणाली के प्रयास हैं जो पर्यावरणीय संरक्षण में सहायक हैं।

***2.2 पर्यावरणीय शिक्षा और जागरूकता***

पर्यावरणीय शिक्षा और जागरूकता बढ़ाने के लिए सामाजिक प्रणाली महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षा और जागरूकता अभियान से लोग अपने पर्यावरण के प्रति अधिक संवेदनशील हो सकते हैं और सतत विकास की दिशा में कार्य कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, स्वच्छता अभियान, प्लास्टिक का कम उपयोग, और जैविक उत्पादों के प्रति जागरूकता जैसे प्रयास पर्यावरणीय समस्याओं को कम करने में सहायक होते हैं।

***2.3 नीति निर्माण में योगदान***

सामाजिक प्रणाली सरकार को पर्यावरणीय नीतियाँ बनाने में भी सहयोग देती है। जब समाज के लोग पर्यावरण के प्रति अधिक जागरूक होते हैं, तो वे नीति निर्माताओं पर दबाव डालते हैं कि वे कठोर पर्यावरणीय नीतियाँ अपनाएँ। सामाजिक संगठन, एनजीओ, और नागरिक आंदोलनों के माध्यम से समाज अपनी बात सरकार तक पहुँचाता है और पर्यावरण संरक्षण के लिए नीतियाँ बनवाने में सहायक होता है।

**3.4.3 सामाजिक प्रणाली के माध्यम से पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने के उपाय**

सामाजिक प्रणाली के अंतर्गत कई ऐसे उपाय हैं जो पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में सहायक हो सकते हैं। ये उपाय समाज के प्रत्येक व्यक्ति को पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान में योगदान देने के लिए प्रेरित करते हैं। इनमें से कुछ उपाय निम्नलिखित हैं:

***1. पर्यावरण शिक्षा का प्रसार***

स्कूलों, कॉलेजों, और कार्यस्थलों पर पर्यावरण शिक्षा का प्रसार करने से लोग पर्यावरण संरक्षण के प्रति अधिक जागरूक हो सकते हैं। इससे समाज में पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान खोजने के प्रति जागरूकता बढ़ती है।

***2. सामुदायिक सहभागिता***

सामाजिक प्रणाली में सामुदायिक सहभागिता का एक महत्वपूर्ण स्थान है। लोग स्थानीय स्तर पर पर्यावरण संरक्षण के लिए समूहों का निर्माण कर सकते हैं, जैसे कि वृक्षारोपण अभियान, सफाई अभियान, और जल संरक्षण गतिविधियाँ।

***3. सरकारी नीतियाँ और कार्यक्रम***

सामाजिक प्रणाली नीति निर्माण में योगदान करती है। सरकार को पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रभावी नीतियाँ और कार्यक्रम अपनाने चाहिए। सामाजिक प्रणाली सरकार पर दबाव बना सकती है कि वह प्रदूषण नियंत्रण, जल संरक्षण, और स्वच्छ ऊर्जा के उपयोग पर ध्यान दे।

***4. उपभोग की आदतों में बदलाव***

उपभोक्तावादी संस्कृति को कम करने के लिए समाज में जागरूकता बढ़ाई जानी चाहिए। उपभोग की आदतों में बदलाव लाकर और अनावश्यक वस्त्र, भोजन, और संसाधनों का अपव्यय रोककर पर्यावरणीय संसाधनों को सुरक्षित किया जा सकता है।

पर्यावरण अर्थशास्त्र में सामाजिक प्रणाली का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। यह प्रणाली न केवल पर्यावरणीय समस्याओं के कारणों और उनके प्रभावों को समझने में सहायक है, बल्कि यह पर्यावरण संरक्षण के समाधान भी प्रस्तुत करती है। सामाजिक प्रणाली के माध्यम से लोग पर्यावरण के प्रति जागरूक होते हैं और अपने व्यवहार में आवश्यक बदलाव करते हैं।

सामाजिक प्रणाली के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण की दिशा में प्रयास करना सतत विकास को प्रोत्साहित करता है और दीर्घकालिक संतुलन बनाए रखने में सहायक होता है। अतः, सामाजिक प्रणाली का अध्ययन पर्यावरणीय स्थिरता और मानव समाज के कल्याण के लिए अनिवार्य है।

**3.5.0 तीनों प्रणालियों का अंतर्संबंध**

जैविक, आर्थिक और सामाजिक प्रणालियाँ एक जटिल और परस्पर निर्भर संरचना का निर्माण करती हैं, जो समाज, पर्यावरण और अर्थव्यवस्था के संतुलित विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। इन तीनों प्रणालियों

का अंतर्संबंध न केवल पर्यावरणीय संरक्षण के संदर्भ में बल्कि समाज के दीर्घकालिक विकास और आर्थिक स्थिरता के लिए भी आवश्यक है। इस अंतर्संबंध को समझना पर्यावरणीय स्थिरता, आर्थिक विकास, और सामाजिक कल्याण के संदर्भ में महत्वपूर्ण है:

1. **जैविक और आर्थिक प्रणाली का संबंध:** आर्थिक प्रणाली जैविक प्रणाली पर आधारित है। प्राकृतिक संसाधन, जैसे कि पेड़, जल, खनिज, और मिट्टी, आर्थिक गतिविधियों के लिए आवश्यक कच्चे माल प्रदान करते हैं। औद्योगिक उत्पादन, कृषि, और ऊर्जा का उत्पादन जैविक संसाधनों पर निर्भर होता है। जैविक प्रणाली में असंतुलन या क्षरण से आर्थिक गतिविधियाँ प्रभावित होती हैं, जैसे वनों की कटाई से जैव विविधता में कमी, जलवायु परिवर्तन, और पानी की कमी होती है, जो आर्थिक उत्पादन को सीमित कर सकता है। जैविक प्रणाली प्राकृतिक संसाधनों, जैसे कि जल, भूमि, वन, और खनिज, का स्रोत होती है, जिनका उपयोग आर्थिक प्रणाली द्वारा उत्पादन और विकास के लिए किया जाता है। आर्थिक गतिविधियाँ जैविक संसाधनों पर निर्भर होती हैं, जैसे कि कृषि, मछलीपालन, और औद्योगिक उत्पादन, जिनमें प्राकृतिक संसाधनों का दोहन शामिल होता है। जैविक प्रणाली पर अत्यधिक दबाव डालने से पर्यावरणीय असंतुलन उत्पन्न हो सकता है, जिससे आर्थिक गतिविधियाँ भी प्रभावित होती हैं। इसलिए, आर्थिक प्रणाली का सतत और विवेकपूर्ण संचालन जैविक प्रणाली की स्थिरता बनाए रखने के लिए आवश्यक है।
2. **आर्थिक और सामाजिक प्रणाली का संबंध:** आर्थिक प्रणाली समाज के विकास और कल्याण का आधार होती है। आर्थिक गतिविधियाँ रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, और जीवन-स्तर को प्रभावित करती हैं। आर्थिक विकास के माध्यम से समाज में संसाधनों का वितरण होता है, जिससे जीवन की गुणवत्ता में सुधार होता है। लेकिन आर्थिक असमानता और संसाधनों का असंतुलित वितरण सामाजिक असंतुलन का कारण बन सकता है। इसलिए, एक सुदृढ़ आर्थिक प्रणाली, जो समाज के सभी वर्गों के लिए लाभकारी हो, सामाजिक स्थिरता के लिए आवश्यक है।आर्थिक विकास सामाजिक कल्याण के लिए महत्वपूर्ण है। अधिक रोजगार, बेहतर जीवन स्तर, और शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार, ये सभी आर्थिक प्रणाली के माध्यम से संभव होते हैं। लेकिन आर्थिक विकास का संतुलित होना भी आवश्यक है, क्योंकि अनियंत्रित आर्थिक विकास से असमानता, गरीबी और सामाजिक अस्थिरता का खतरा बढ़ सकता है।
3. **जैविक और सामाजिक प्रणाली का संबंध:** जैविक प्रणाली के संसाधन सामाजिक प्रणाली को बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं। जैविक प्रणाली का संतुलन समाज की भौतिक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है। प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय क्षरण का प्रभाव सीधे समाज के जीवन स्तर और स्वास्थ्य पर पड़ता है। इसलिए, सामाजिक प्रणाली का कर्तव्य है कि वह जैविक संसाधनों का संरक्षण और पुनःस्थापन सुनिश्चित करे। जैविक प्रणाली समाज के लिए आवश्यक वस्तुएँ और सेवाएँ प्रदान करती है, जैसे कि भोजन, स्वच्छ जल, और शुद्ध वायु। इसके अतिरिक्त, जैविक प्रणाली मानसिक और सांस्कृतिक संतुलन बनाए रखने में भी सहायक है, क्योंकि समाज के लोग प्रकृति से प्रेरणा और आराम पाते हैं। लेकिन समाज द्वारा संसाधनों का अनियंत्रित उपयोग और प्रदूषण जैविक प्रणाली को हानि पहुँचाते हैं, जिससे समाज के स्वास्थ्य और जीवन-स्तर पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

### 3.5.1 तीनों प्रणालियों का त्रिकोणीय संबंध:

जैविक, आर्थिक और सामाजिक प्रणालियों का त्रिकोणीय संबंध एक संतुलित और सतत विकास के लिए आवश्यक है। जैविक संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग, आर्थिक विकास की स्थिर गति, और समाज के सभी वर्गों का कल्याण सुनिश्चित करना इस संबंध का उद्देश्य है। उदाहरण के लिए, यदि समाज ने जैविक प्रणाली की उपेक्षा की और केवल आर्थिक विकास पर ध्यान केंद्रित किया, तो लंबे समय में यह विकास अस्थिर हो जाएगा और समाज पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा। तीनों प्रणालियों के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है ताकि एक सुदृढ़, सतत और स्वस्थ समाज का निर्माण हो सके। जैविक प्रणाली का संरक्षण और संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग आर्थिक विकास को बनाए रखते हुए सामाजिक कल्याण को सुनिश्चित

कर सकता है। इसलिए, समाज और सरकार को ऐसी नीतियाँ बनानी चाहिए जो जैविक, आर्थिक, और सामाजिक प्रणालियों के अंतर्संबंधों का सम्मान करती हों और सतत विकास को बढ़ावा दें। इस प्रकार, तीनों प्रणालियों का समन्वय और संतुलन एक सुरक्षित और समृद्ध भविष्य की कुंजी है, जो समाज और पर्यावरण के बीच के संबंध को बनाए रखता है।

### 3.6.0 निष्कर्ष

जैविक, आर्थिक, और सामाजिक प्रणालियाँ आपस में गहराई से जुड़ी हुई हैं और एक-दूसरे पर निर्भर हैं। तीनों प्रणालियों के बीच संतुलन बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है ताकि हम पर्यावरणीय स्थिरता, आर्थिक विकास, और सामाजिक कल्याण को प्राप्त कर सकें। इस अंतर्संबंध को समझकर हम एक संतुलित और सतत विकास की ओर अग्रसर हो सकते हैं, जो न केवल वर्तमान पीढ़ी के लिए बल्कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी एक सुरक्षित और स्वस्थ जीवन सुनिश्चित करेगा।

तीनों प्रणालियों के बीच संतुलन स्थापित कर, पर्यावरण का संरक्षण, आर्थिक प्रगति, और समाज का कल्याण एक साथ प्राप्त किया जा सकता है, जो दीर्घकालिक विकास के लिए आवश्यक है।

### 3.7.0 संदर्भ ग्रंथ सूची


6. **"Environmental and Natural Resource Economics"**
   लेखक: **Tom Tietenberg** और **Lynne Lewis**
   प्रकाशक: **Taylor & Francis, 13 March 2018, ISBN: 9781351803373**
7. **"Economics of the Environment: Selected Readings"**
   संपादक: **Robert N. Stavins**
   प्रकाशक: **Edward Elgar Publishing, 2019, ISBN: 9781788972079**
8. **विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: **Dr. Anupam Agarwal, Dr. Alok Gupta**
   प्रकाशक: **SBPD Publications, 6 July 2021, ISBN: 9789389585339**
9. **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: डॉ. वी.सी. सिन्हा, डॉ. रितिका सिन्हा
   प्रकाशक: **SBPD Publishing House, 8 July 2024, ISBN: 9788119142392**
10. **"The Economics of Climate Change: The Stern Review"**
    लेखक: Nicholas Stern
    प्रकाशक: Cambridge University Press


### 3.8.0 सामान्य बोध प्रश्न:

1. **जैविक प्रणाली का क्या अर्थ है?**
   (a) प्राकृतिक संसाधनों का उत्पादन
   (b) जीव-जंतुओं और पर्यावरण के बीच के संबंध
   (c) केवल वनस्पतियों का संरक्षण
   (d) आर्थिक गतिविधियों का नियंत्रण
   **उत्तर:** (b) जीव-जंतुओं और पर्यावरण के बीच के संबंध
2. **आर्थिक प्रणाली का मुख्य उद्देश्य क्या है?**
   (a) समाज की भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करना
   (b) प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण
   (c) केवल वनों का संरक्षण
   (d) समाजिक असंतुलन बढ़ाना
   **उत्तर:** (a) समाज की भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करना
3. **सामाजिक प्रणाली का क्या कार्य है?**
   (a) केवल आर्थिक संसाधनों का दोहन

(b) समाजिक संरचना और लोगों के बीच संबंधों का प्रबंधन
(c) जैविक प्रणाली का विनाश
(d) पर्यावरणीय नीतियाँ बनाना
**उत्तर:** (b) समाजिक संरचना और लोगों के बीच संबंधों का प्रबंधन

4. **तीनों प्रणालियों के बीच अंतर्संबंध का क्या उद्देश्य है?**
(a) पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखना
(b) केवल आर्थिक लाभ प्राप्त करना
(c) जैविक प्रणाली को अनदेखा करना
(d) प्रदूषण को बढ़ावा देना
**उत्तर:** (a) पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखना

5. **जैविक और आर्थिक प्रणाली के बीच का संबंध क्या दर्शाता है?**
(a) जैविक संसाधनों का आर्थिक विकास के लिए उपयोग
(b) केवल जैविक प्रणाली का संरक्षण
(c) केवल आर्थिक मुनाफे को बढ़ाना
(d) सामाजिक असमानता बढ़ाना
**उत्तर:** (a) जैविक संसाधनों का आर्थिक विकास के लिए उपयोग

6. **सामाजिक प्रणाली का आर्थिक प्रणाली से क्या संबंध है?**
(a) रोजगार और जीवन-स्तर को प्रभावित करना
(b) केवल उद्योगों का विकास
(c) केवल पारिस्थितिकी तंत्र को प्रभावित करना
(d) प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट करना
**उत्तर:** (a) रोजगार और जीवन-स्तर को प्रभावित करना

7. **जैविक, आर्थिक और सामाजिक प्रणालियों के बीच संतुलन बनाए रखने का मुख्य उद्देश्य क्या है?**
(a) सतत विकास को बढ़ावा देना
(b) आर्थिक गतिविधियों को बढ़ाना
(c) केवल पर्यावरण को नष्ट करना
(d) जैविक असंतुलन बढ़ाना
**उत्तर:** (a) सतत विकास को बढ़ावा देना

8. **तीनों प्रणालियों के संतुलन से कौन-सी समस्या हल होती है?**
(a) प्रदूषण
(b) आर्थिक असमानता
(c) प्राकृतिक संसाधनों का दोहन
(d) सभी
**उत्तर:** (d) सभी

9. **जैविक प्रणाली का समाज के लिए मुख्य योगदान क्या है?**
(a) वायु, जल, और भोजन की आपूर्ति
(b) केवल आर्थिक लाभ
(c) केवल सांस्कृतिक महत्व
(d) केवल ऊर्जा उत्पादन
**उत्तर:** (a) वायु, जल, और भोजन की आपूर्ति

10. **सतत विकास का मुख्य उद्देश्य क्या है?**
(a) भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों का संरक्षण

(b) वर्तमान में सभी संसाधनों का उपयोग
(c) केवल आर्थिक मुनाफा कमाना
(d) केवल प्रदूषण बढ़ाना
**उत्तर:** (a) भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों का संरक्षण

### 3.9.0 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. जैविक प्रणाली का संक्षेप में वर्णन करें।
2. आर्थिक प्रणाली का उद्देश्य क्या है?
3. सामाजिक प्रणाली किन तत्वों से मिलकर बनी होती है?
4. जैविक, आर्थिक और सामाजिक प्रणालियों का आपसी संबंध क्यों महत्वपूर्ण है?
5. जैविक प्रणाली और आर्थिक प्रणाली के बीच संबंध पर चर्चा करें।
6. सामाजिक प्रणाली और जैविक प्रणाली के अंतर्संबंध का महत्व क्या है?
7. आर्थिक प्रणाली और सामाजिक प्रणाली के बीच के अंतर्संबंध का समाज पर क्या प्रभाव पड़ता है?
8. तीनों प्रणालियों के बीच संतुलन बनाए रखने के क्या लाभ हो सकते हैं?
9. पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान में जैविक, आर्थिक और सामाजिक प्रणालियों का अंतर्संबंध कैसे सहायक हो सकता है?
10. तीनों प्रणालियों के असंतुलन के परिणामस्वरूप क्या समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं?
11. जैविक, आर्थिक और सामाजिक प्रणालियों का संतुलन बनाए रखने के लिए नीतियाँ क्यों आवश्यक हैं?
12. सामाजिक प्रणाली के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण के क्या उपाय हो सकते हैं?
13. आर्थिक प्रणाली में पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने के लिए कौन-कौन से उपाय किए जा सकते हैं?
14. तीनों प्रणालियों के अंतर्संबंध को समझने के लिए पर्यावरण अर्थशास्त्र का क्या महत्व है?
15. जैविक प्रणाली का असंतुलन कैसे आर्थिक और सामाजिक समस्याओं को जन्म दे सकता है?

**इकाई -04**

# अनव्यकरणीय संसाधनों का ह्रास और पृथ्वी एवं संपदा की सीमाएँ

**इकाई की रूपरेखा:**

**4.0 उद्देश्य**
**4.1 प्रस्तावना : अनव्यकरणीय संसाधनों का ह्रास**
**4.2 पृथ्वी एवं संपदा की सीमाएँ : एक संकल्पना**
**4.3 अनव्यकरणीय संसाधनों के प्रकार**
**4.4 अनव्यकरणीय संसाधनों की प्रमुख विशेषताएँ**
**4.5 अनव्यकरणीय संसाधनों का महत्व**
**4.6 अनव्यकरणीय संसाधनों का ह्रास के कारण**
**4.7 वैश्विक परिप्रेक्ष्य: दुनिया भर में अनव्यकरणीय संसाधनों का ह्रास**
**4.8 अनव्यकरणीय संसाधनों के संरक्षण के लिए वैश्विक प्रयास**
**4.9 नवीकरणीय संसाधनों के विकल्प: भविष्य के लिए दृष्टिकोण**
**4.10 नवीकरणीय संसाधनों का महत्व और लाभ**
**4.11 अनव्यकरणीय संसाधनों के संरक्षण के लिए भारत सरकार की पहल**
**4.12 जन जागरूकता और शिक्षा की भूमिका**
**4.13 निष्कर्ष**
**4.14 संदर्भ ग्रंथ सूची**
**4.15 सामान्य बोध प्रश्न**
**4.16 अभ्यासार्थ प्रश्न**

## 4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप निम्न बिन्दुओं को भलीभॉति समझ जायेंगे?

- **नव्यकरणीय संसाधनों के सीमित भंडार को समझना**
- **पृथ्वी की सीमाओं का महत्व**
- **संसाधनों के अति-उपयोग से उत्पन्न समस्याएँ**
- **स्थायी विकास और संरक्षण के उपाय**
- **भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों का संरक्षण**
- **पर्यावरणीय नीतियों का निर्माण और जागरूकता बढ़ाना**

## 4.1 प्रस्तावना: अनव्यकरणीय संसाधनों का ह्रास

अनव्यकरणीय संसाधन (Non-renewable Resources) वे प्राकृतिक संसाधन हैं जिनका एक बार दोहन करने के बाद पुनः निर्माण या पुनः उपलब्धता बहुत धीमी गति से होती है, जो मानव जीवन के लिए अप्राप्य या असंभव होती है। ये संसाधन हमारी औद्योगिक और ऊर्जा आवश्यकताओं का मुख्य आधार हैं । इन संसाधनों में मुख्य रूप से जीवाश्म ईंधन (कोयला, तेल, प्राकृतिक गैस) और खनिज (लोहा, सोना, तांबा, बॉक्साइट आदि) शामिल हैं, जो लाखों वर्षों में जैविक प्रक्रियाओं और भूगर्भीय परिवर्तनों के माध्यम से बनते हैं।

अनव्यकरणीय संसाधनों का उपयोग औद्योगिक विकास, ऊर्जा उत्पादन, परिवहन और विभिन्न घरेलू कार्यों में होता है। आधुनिक युग में औद्योगिक गतिविधियों से लेकर घरेलू कार्यों तक में इन संसाधनों का व्यापक

उपयोग हो रहा है। उल्लेखनीय है कि जीवाश्म ईंधन में कई सौ वर्षों तक पूरी दुनिया की ऊर्जा मांगों को पूरा करने की क्षमता है। इसने बीसवीं शताब्दी में हुई औद्योगिक क्रांति में भी एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। इनके सीमित होने के कारण इनका अत्यधिक और अनियंत्रित दोहन एक गंभीर समस्या है, जिससे इनके तेजी से समाप्त होने का खतरा है, जिसके कारण दुनिया इसके प्रतिस्थापन के बारे में सोचने को मजबूर हो गई। 1970 के दशक में पर्यावरणविदों ने जीवाश्म ईंधन से हमारी निर्भरता को कम करने और उसके प्रतिस्थापन के रूप में नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावा देना शुरू किया। 21वीं सदी की शुरुआत में दुनिया की ऊर्जा खपत का 20 प्रतिशत नवीकरणीय ऊर्जा से प्राप्त होने लगा था। ध्यातव्य है कि पिछले कुछ वर्षों में भारत ने भी अपनी बिजली उत्पादन क्षमता का काफी विस्तार किया है। विगत तीन वर्षों में नवीकरणीय स्रोतों से प्राप्त होने वाली ऊर्जा में लगभग 25 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है।

## 4.2 पृथ्वी एवं संपदा की सीमाएँ : एक संकल्पना

"पृथ्वी एवं संपदा की सीमाएँ" का तात्पर्य प्राकृतिक संसाधनों की उस सीमित मात्रा से है, जो पृथ्वी हमें प्रदान कर सकती है। पृथ्वी पर उपलब्ध जल, खनिज, वन, जैव विविधता और ऊर्जा जैसे संसाधन हमारे जीवन के लिए आवश्यक हैं, लेकिन इनकी मात्रा सीमित है। आज के समय में बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण, और औद्योगिकीकरण के कारण इन संसाधनों का अत्यधिक दोहन हो रहा है, जो पर्यावरणीय असंतुलन, जलवायु परिवर्तन, और आर्थिक अस्थिरता का कारण बनता जा रहा है।

पृथ्वी की सीमाओं का विचार पहली बार "क्लब ऑफ रोम" द्वारा 1970 के दशक में प्रस्तुत किया गया था, जिसमें कहा गया था कि पृथ्वी के संसाधनों की सीमा होती है, और उनका अनियंत्रित उपयोग विनाशकारी परिणाम ला सकता है। "लिमिट्स टू ग्रोथ" के सिद्धांत के अनुसार, आर्थिक विकास और संसाधनों के अनियंत्रित दोहन से पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है, जिससे संसाधनों का ह्रास होगा और अंततः मानव समाज के लिए समस्याएँ उत्पन्न होंगी। "पृथ्वी एवं संपदा की सीमाएँ" हमें यह संदेश देती हैं कि प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण और सतत उपयोग हमारे दीर्घकालिक अस्तित्व और पर्यावरणीय स्थिरता के लिए आवश्यक है। संसाधनों का अत्यधिक दोहन पर्यावरणीय और आर्थिक अस्थिरता का कारण बन सकता है। इसके लिए सरकार, उद्योग, और समाज सभी को मिलकर संसाधनों का संरक्षण करना होगा। नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग, अपशिष्ट प्रबंधन, और पर्यावरणीय शिक्षा जैसे उपाय अपनाकर हम पृथ्वी की सीमाओं का सम्मान कर सकते हैं और एक सुरक्षित और स्वस्थ भविष्य का निर्माण कर सकते हैं।

## 4.3 अनव्यकरणीय संसाधनों के प्रकार

अनव्यकरणीय संसाधन (Non-renewable Resources) वे संसाधन होते हैं जिनकी पुनःप्राप्ति या तो अत्यंत धीमी गति से होती है या फिर उपयोग के बाद उपलब्ध नहीं हो पाती। इनमें प्रमुख रूप से जीवाश्म ईंधन और खनिज शामिल हैं। ये संसाधन हमारी ऊर्जा आवश्यकताओं, औद्योगिक विकास और अर्थव्यवस्था के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। आइए इन संसाधनों के मुख्य प्रकारों को विस्तार से समझते हैं:

### 4.3.1 जीवाश्म ईंधन (Fossil Fuels)

जीवाश्म ईंधन जैविक पदार्थों (पौधों और जीवों) के लाखों वर्षों तक संपीड़न और भूगर्भीय प्रक्रियाओं के कारण बनने वाले ऊर्जा स्रोत हैं। इनमें तीन प्रमुख प्रकार के ईंधन शामिल हैं:

(a) कोयला (Coal)

- कोयला एक ठोस जीवाश्म ईंधन है जो मुख्यतः पौधों के अवशेषों से बना होता है। इसका उपयोग बिजली उत्पादन, इस्पात निर्माण, और उद्योगों में किया जाता है।
- यह ऊर्जा का एक प्रमुख स्रोत है, लेकिन इसके जलने से वायु प्रदूषण और ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन होता है, जिससे पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

(b) पेट्रोलियम (Petroleum)

- पेट्रोलियम या कच्चा तेल एक तरल जीवाश्म ईंधन है, जो जमीन के भीतर पाई जाने वाली कार्बन युक्त सामग्री से बना होता है। इससे पेट्रोल, डीजल, केरोसिन, और अन्य पेट्रोलियम उत्पाद बनाए जाते हैं।

- पेट्रोलियम का उपयोग परिवहन, उद्योग, और रसायनिक निर्माण में होता है। इसकी उच्च मांग के कारण इसकी कीमतें अक्सर अनिश्चित रहती हैं, और इसका अनियंत्रित उपयोग पर्यावरण के लिए हानिकारक है।

(c) प्राकृतिक गैस (Natural Gas)

- प्राकृतिक गैस एक स्वच्छतर जीवाश्म ईंधन है, जिसमें मुख्यतः मीथेन ($CH_4$) गैस होती है। इसे बिजली उत्पादन, घरों में खाना पकाने, और वाहनों में उपयोग किया जाता है।
- प्राकृतिक गैस का उपयोग पेट्रोलियम और कोयले की तुलना में कम प्रदूषणकारी है, लेकिन इसके निष्कर्षण में ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन होता है।

### 4.3.2 खनिज (Minerals)

खनिज संसाधन वे ठोस पदार्थ हैं जो पृथ्वी की सतह पर या अंदर पाए जाते हैं। इनका उपयोग औद्योगिक निर्माण, प्रौद्योगिकी, और बुनियादी ढांचे में किया जाता है। इनमें प्रमुख खनिज हैं:

(a) लौह अयस्क (Iron Ore)

- लौह अयस्क से लोहे और इस्पात का उत्पादन किया जाता है, जिसका उपयोग निर्माण, ऑटोमोबाइल, और भारी मशीनरी में होता है। यह निर्माण उद्योग का मुख्य आधार है।

(b) बॉक्साइट (Bauxite)

- बॉक्साइट एल्यूमिनियम उत्पादन का मुख्य स्रोत है। एल्यूमिनियम का उपयोग विमानन, इलेक्ट्रॉनिक्स, और घरेलू उपकरणों में किया जाता है। यह एक हल्की और संक्षारण-प्रतिरोधी धातु है।

(c) तांबा (Copper)

- तांबा विद्युत और संचार उद्योग में महत्वपूर्ण धातु है, जिसका उपयोग बिजली के तार, इलेक्ट्रॉनिक्स, और पाइपलाइन निर्माण में होता है। इसकी उच्च चालकता इसे इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के लिए आवश्यक बनाती है।

(d) सोना और चांदी (Gold and Silver)

- ये कीमती धातुएँ न केवल गहनों में बल्कि वित्तीय स्थिरता के प्रतीक के रूप में भी काम आती हैं। साथ ही, इनका उपयोग इलेक्ट्रॉनिक्स और चिकित्सा उपकरणों में भी किया जाता है।

(e) यूरेनियम (Uranium)

- यूरेनियम एक रेडियोधर्मी धातु है जिसका उपयोग परमाणु ऊर्जा के उत्पादन में किया जाता है। यह ऊर्जा का एक केंद्रित और शक्तिशाली स्रोत है, लेकिन इसके उपयोग में सुरक्षा संबंधी गंभीर चिंताएँ शामिल हैं।

### 4.3.3 औद्योगिक खनिज (Industrial Minerals)

औद्योगिक खनिज वे खनिज हैं जो औद्योगिक उत्पादन और कृषि में उपयोग किए जाते हैं। ये संसाधन मुख्य रूप से निर्माण और कृषि के लिए उपयोग किए जाते हैं। इनमें शामिल हैं:

(a) फॉस्फेट (Phosphate)

- फॉस्फेट का उपयोग मुख्यतः कृषि में उर्वरक के रूप में किया जाता है। यह पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक है और वैश्विक खाद्य उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है।

(b) चूना पत्थर (Limestone)

- चूना पत्थर का उपयोग सीमेंट, कागज और स्टील उद्योग में होता है। यह निर्माण उद्योग में एक प्रमुख सामग्री है और इसका व्यापक उपयोग होता है।

(c) गंधक (Sulfur)

- गंधक का उपयोग रसायनों, उर्वरकों, और औद्योगिक प्रक्रियाओं में किया जाता है। इसके अलावा, यह दवाओं और रबर उत्पादन में भी सहायक है।

(d) पोटाश (Potash)

- पोटाश उर्वरक उत्पादन में उपयोग होता है, जो पौधों की वृद्धि में मदद करता है। इसका मुख्य उपयोग कृषि में होता है, विशेषकर मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए।

### 4.3.4 अन्य अनव्यकरणीय संसाधन

अन्य अनव्यकरणीय संसाधन भी हैं जिनका विशेष उपयोग होता है:

(a) ग्रेफाइट (Graphite)

- ग्रेफाइट का उपयोग इलेक्ट्रोड, लुब्रिकेंट्स और बैटरियों में किया जाता है। यह ऊर्जा संचय के लिए आवश्यक सामग्री है।

(b) रेयर अर्थ तत्व (Rare Earth Elements)

- रेयर अर्थ तत्वों का उपयोग इलेक्ट्रॉनिक्स, मैग्नेट, और हाइब्रिड कारों में किया जाता है। इनमें लैन्थेनम, सेरियम, और नियोडिमियम जैसे तत्व शामिल हैं जो उन्नत प्रौद्योगिकी के लिए आवश्यक हैं।

## 4.4 अनव्यकरणीय संसाधनों की प्रमुख विशेषताएँ:

1. **सीमित उपलब्धता**: अनव्यकरणीय संसाधनों की मात्रा सीमित होती है। इनका भंडार समाप्त होने पर उनका पुनः निर्माण बहुत धीमी गति से होता है, जो मानव जीवनकाल में संभव नहीं होता। पृथ्वी पर उपलब्ध ताजे पानी की मात्रा केवल 2.5% है। बढ़ती जनसंख्या और जलवायु परिवर्तन के कारण स्वच्छ जल की कमी हो रही है।
2. **विलुप्त होने का खतरा**: इन संसाधनों का अत्यधिक उपयोग इनकी कमी का कारण बन सकता है, जिससे भविष्य में ऊर्जा और अन्य जरूरतों के लिए संकट उत्पन्न हो सकता है।
3. **लंबी समयावधि में निर्माण**: ये संसाधन प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा लाखों वर्षों में बनते हैं, जैसे जीवाश्म ईंधन जैविक अवशेषों के संपीड़न और तापमान के तहत बनते हैं।
4. **पर्यावरणीय प्रभाव**: इनका उपयोग, विशेषकर जीवाश्म ईंधनों का जलना, वायु प्रदूषण, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन, और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याओं का कारण बनता है। इनके खनन से पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, जैसे भूमि का क्षरण, जल प्रदूषण और जैव विविधता का ह्रास।
5. **ऊर्जा स्रोत का आधार**: अनव्यकरणीय संसाधन ऊर्जा उत्पादन के मुख्य स्रोत होते हैं। औद्योगिक युग में इनका उपयोग ऊर्जा, परिवहन, और बिजली उत्पादन के लिए बड़े पैमाने पर हो रहा है।
6. **अर्थव्यवस्था पर प्रभाव**: इन संसाधनों के उत्पादन और खपत का सीधा प्रभाव किसी भी देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। अनव्यकरणीय संसाधनों का निर्यात कई देशों के लिए महत्वपूर्ण आय का स्रोत है।

## 4.5 अनव्यकरणीय संसाधनों का महत्व:

1. ऊर्जा उत्पादन का मुख्य स्रोत

अनव्यकरणीय संसाधन, जैसे कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस, वैश्विक ऊर्जा आपूर्ति के मुख्य स्रोत हैं। औद्योगिक उत्पादन, बिजली उत्पादन, परिवहन और घरेलू ऊर्जा आवश्यकताओं के लिए इन संसाधनों पर निर्भरता बहुत अधिक है। इनके बिना आज के आधुनिक जीवन और अर्थव्यवस्था की कल्पना मुश्किल है।

2. औद्योगिक विकास का आधार

अनव्यकरणीय खनिज और धातुएँ औद्योगिक विकास के लिए अनिवार्य हैं। लोहा, तांबा, और अन्य धातुएँ मशीनरी, भवन निर्माण, और विभिन्न औद्योगिक उत्पादों में उपयोग की जाती हैं। ये तत्व निर्माण, परिवहन, और संचार उद्योगों का आधार हैं और आधुनिक जीवन को सुचारू रूप से चलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

3. आर्थिक योगदान और रोजगार
अनव्यकरणीय संसाधनों के खनन, उत्पादन और वितरण से रोजगार के अवसर उत्पन्न होते हैं और यह राष्ट्र की आर्थिक स्थिरता में योगदान देते हैं। इन संसाधनों का निर्यात भी कई देशों की अर्थव्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण होता है, जिससे विदेशी मुद्रा अर्जित होती है।
4. सामाजिक विकास में योगदान
ऊर्जा और खनिज संसाधनों की उपलब्धता समाज के जीवन स्तर को बेहतर बनाती है। घरों में बिजली, परिवहन, और औद्योगिक विकास के कारण रोजगार के अवसर समाज के विकास और जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाते हैं। इन संसाधनों से कई सामाजिक लाभ भी जुड़े होते हैं, जैसे स्वास्थ्य सेवाएँ, शिक्षा, और बुनियादी ढांचे का विकास।
5. रक्षा और सुरक्षा में उपयोग
अनव्यकरणीय संसाधन, विशेषकर धातुएँ और खनिज, रक्षा क्षेत्र में उपयोग किए जाते हैं। आधुनिक सैन्य उपकरणों और वाहनों के निर्माण में इनका उपयोग होता है, जो किसी भी देश की सुरक्षा और रक्षा के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।
6. भविष्य की ऊर्जा सुरक्षा के लिए आवश्यक संसाधन
कुछ अनव्यकरणीय संसाधन, जैसे यूरेनियम, परमाणु ऊर्जा उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण हैं। यह भविष्य की ऊर्जा जरूरतों को सुरक्षित रखने में सहायक हो सकता है, खासकर तब जब पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों की कमी होती है।

### 4.6 अनव्यकरणीय संसाधनों का ह्रास के कारण

1. **अत्यधिक दोहन:** ऊर्जा और खनिजों की अत्यधिक मांग के कारण इनका तीव्रता से दोहन हो रहा है, जो संसाधनों के समाप्त होने की स्थिति पैदा कर रहा है।
2. **उपभोक्तावाद:** तेजी से बढ़ते उपभोक्तावादी समाज में वस्तुओं की मांग और उनका उत्पादन अधिक हो रहा है, जिससे प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन हो रहा है।
3. **जनसंख्या वृद्धि:** जनसंख्या में वृद्धि के कारण संसाधनों की माँग भी बढ़ती जा रही है, जिससे इनके भंडार तेजी से घट रहे हैं।
4. **तकनीकी प्रगति:** आधुनिक तकनीकों का उपयोग कर इन संसाधनों का अधिक मात्रा में उत्पादन किया जा रहा है, जिससे वे तेजी से समाप्त हो रहे हैं।

### 4.7 वैश्विक परिप्रेक्ष्य: दुनिया भर में अनव्यकरणीय संसाधनों का ह्रास

दुनिया भर में अनव्यकरणीय संसाधनों का ह्रास आज एक गंभीर वैश्विक समस्या बन गई है। औद्योगिक क्रांति के बाद से, अनव्यकरणीय संसाधनों जैसे कि कोयला, तेल, प्राकृतिक गैस और खनिजों का अत्यधिक दोहन किया जा रहा है। इन संसाधनों का सीमित भंडार है और इनकी पुनःपूर्ति लाखों वर्षों में होती है, जिसके कारण इनके समाप्त होने का खतरा तेजी से बढ़ रहा है। यह ह्रास न केवल वैश्विक अर्थव्यवस्था को प्रभावित कर रहा है, बल्कि पर्यावरणीय संतुलन पर भी नकारात्मक प्रभाव डाल रहा है। आइए, इसे वैश्विक दृष्टिकोण से समझें।

### 1. ऊर्जा संकट और जीवाश्म ईंधन की घटती उपलब्धता

(a) कोयला (Coal)

- कोयला आज भी विश्व के कई देशों में ऊर्जा का प्रमुख स्रोत है, खासकर चीन, भारत, और अमेरिका में। हालांकि, अत्यधिक खनन के कारण इसके भंडार तेजी से घट रहे हैं। चीन और भारत जैसे देश, जिनकी ऊर्जा आवश्यकताएँ बढ़ रही हैं, कोयले पर अत्यधिक निर्भर हैं। इससे न केवल कोयले की उपलब्धता कम हो रही है, बल्कि पर्यावरणीय समस्याएँ भी बढ़ रही हैं।

(b) तेल (Petroleum)

- मध्य-पूर्व के देश जैसे सऊदी अरब, ईरान, और इराक विश्व के प्रमुख तेल उत्पादक देश हैं। तेल की बढ़ती माँग और सीमित भंडार के कारण कई देशों में ऊर्जा संकट की संभावना बढ़ रही है।

कई विशेषज्ञों का मानना है कि आने वाले दशकों में "पीक ऑयल" की स्थिति आ सकती है, जहाँ तेल उत्पादन अपने चरम पर पहुँच जाएगा और इसके बाद इसका उत्पादन घटने लगेगा।

(c) प्राकृतिक गैस (Natural Gas)

- रूस, अमेरिका, और कतर जैसे देश प्राकृतिक गैस के प्रमुख उत्पादक हैं। हालाँकि, प्राकृतिक गैस की माँग तेजी से बढ़ रही है, जिससे इसका भंडार भी कम होता जा रहा है। यूरोप और एशिया में प्राकृतिक गैस की कमी के कारण ऊर्जा की कीमतों में वृद्धि हो रही है, जो वैश्विक अर्थव्यवस्था को अस्थिर कर रही है।

**2. खनिजों का ह्रास**

(a) लोहा (Iron) और इस्पात (Steel)

- लौह अयस्क का अत्यधिक खनन और उत्पादन वैश्विक स्तर पर निर्माण और औद्योगिक गतिविधियों में सहायक है। चीन और भारत जैसे देशों में तेजी से औद्योगिक विकास के कारण लोहा और इस्पात की मांग बढ़ी है, लेकिन इससे इनके भंडार तेजी से कम हो रहे हैं।

(b) बॉक्साइट (Bauxite)

- बॉक्साइट एल्यूमिनियम उत्पादन का मुख्य स्रोत है। ऑस्ट्रेलिया और गिनी जैसे देश इसके प्रमुख उत्पादक हैं। एल्यूमिनियम के बढ़ते उपयोग के कारण बॉक्साइट के भंडार तेजी से घट रहे हैं, जो वैश्विक उद्योगों के लिए चिंता का विषय है।

(c) कीमती धातु (Gold, Silver)

- सोना और चांदी जैसी कीमती धातुओं का वैश्विक भंडार तेजी से कम हो रहा है। इनका उपयोग न केवल आभूषणों में होता है, बल्कि वित्तीय स्थिरता और औद्योगिक उत्पादों में भी होता है। इनकी सीमित उपलब्धता के कारण कीमतों में भी वृद्धि हो रही है।

(d) रेयर अर्थ तत्व (Rare Earth Elements)

- लैन्थेनम, नियोडिमियम, और अन्य रेयर अर्थ तत्व उच्च तकनीक उपकरणों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। चीन रेयर अर्थ तत्वों का प्रमुख उत्पादक है, लेकिन इनके अत्यधिक उपयोग और सीमित भंडार के कारण इनके अभाव का खतरा उत्पन्न हो गया है।

**3. अनव्यकरणीय संसाधनों के ह्रास के कारण और प्रभाव**

(a) अत्यधिक खपत और जनसंख्या वृद्धि

- वैश्विक जनसंख्या वृद्धि और तेजी से बढ़ती उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण संसाधनों की खपत में अत्यधिक वृद्धि हुई है। यह संसाधनों के ह्रास का प्रमुख कारण है।

(b) औद्योगिकीकरण और शहरीकरण

- औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के कारण अनव्यकरणीय संसाधनों की माँग लगातार बढ़ रही है। शहरों में बढ़ती आबादी और आधुनिक सुविधाओं के निर्माण से ऊर्जा और खनिजों की आवश्यकता अधिक हो रही है।

(c) पर्यावरणीय असंतुलन

- अनव्यकरणीय संसाधनों के ह्रास का पर्यावरण पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है। जीवाश्म ईंधनों का अत्यधिक उपयोग वायु प्रदूषण, ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन, और जलवायु परिवर्तन का कारण बनता है।

(d) अंतरराष्ट्रीय तनाव

- कई देशों के बीच संसाधनों की कमी और बढ़ती माँग के कारण तनाव बढ़ रहा है। तेल और गैस जैसे संसाधनों पर निर्भरता से भू-राजनीतिक संघर्ष भी उत्पन्न होते हैं।

**4.8 अनव्यकरणीय संसाधनों के संरक्षण के लिए वैश्विक प्रयास**

अनव्यकरणीय संसाधनों का ह्रास आज की एक गंभीर वैश्विक समस्या है, जो न केवल आर्थिक अस्थिरता और पर्यावरणीय समस्याओं का कारण बन रहा है, बल्कि मानवता के भविष्य के लिए भी खतरा उत्पन्न कर रहा है। यह आवश्यक है कि दुनिया भर के देश एकजुट होकर नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग

बढ़ाएँ, पुनर्चक्रण और पुनःउपयोग को प्रोत्साहित करें, और अनव्यकरणीय संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करें। साथ ही, जन जागरूकता और नीति निर्माताओं के सहयोग से संसाधनों का सतत उपयोग सुनिश्चित करना भी अनिवार्य है ताकि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी संसाधनों की उपलब्धता बनी रहे और एक संतुलित और सुरक्षित पर्यावरण का निर्माण हो सके।

(a) नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग

- दुनिया भर के देश अब सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, और जल ऊर्जा जैसे नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों की ओर बढ़ रहे हैं ताकि अनव्यकरणीय संसाधनों पर निर्भरता कम हो।

(b) कार्बन टैक्स और नीतिगत उपाय

- कार्बन टैक्स, अपशिष्ट प्रबंधन, और ऊर्जा दक्षता जैसे नीतिगत उपाय अपनाए जा रहे हैं ताकि जीवाश्म ईंधनों के उपयोग को नियंत्रित किया जा सके और प्रदूषण में कमी लाई जा सके।

(c) पुनर्चक्रण और पुनःउपयोग

- कई देशों में पुनर्चक्रण को प्रोत्साहित किया जा रहा है। धातुओं और प्लास्टिक का पुनःउपयोग करके खनिजों और अन्य अनव्यकरणीय संसाधनों पर दबाव कम किया जा सकता है।

(d) अंतरराष्ट्रीय सहयोग और समझौते

- पेरिस जलवायु समझौता, संयुक्त राष्ट्र की जलवायु वार्ताएँ, और विभिन्न अंतरराष्ट्रीय संगठनों द्वारा सामूहिक प्रयास किए जा रहे हैं ताकि वैश्विक स्तर पर संसाधनों के उपयोग को संतुलित किया जा सके और पर्यावरणीय असंतुलन को कम किया जा सके।

**अनव्यकरणीय संसाधनों के ह्रास के प्रभाव**

1. **पर्यावरणीय असंतुलन:** कोयला और तेल जैसे संसाधनों का अत्यधिक दोहन वायु प्रदूषण और ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को बढ़ाता है, जिससे जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।
2. **आर्थिक अस्थिरता:** अनव्यकरणीय संसाधनों की कमी से उनके मूल्य में वृद्धि होती है, जिससे आर्थिक अस्थिरता उत्पन्न होती है। उत्पादन की लागत बढ़ने के कारण मुद्रास्फीति भी बढ़ती है।
3. **ऊर्जा संकट:** अनव्यकरणीय ऊर्जा स्रोतों के समाप्त होने की संभावना के कारण ऊर्जा संकट उत्पन्न हो सकता है, जिससे बिजली और ईंधन की कमी होगी।
4. **आगामी पीढ़ियों पर प्रभाव:** अनव्यकरणीय संसाधनों का अत्यधिक दोहन भविष्य की पीढ़ियों को इन संसाधनों से वंचित कर सकता है, जिससे वे अपनी ऊर्जा और औद्योगिक आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ रहेंगे।

## 4.9 नवीकरणीय संसाधनों के विकल्प: भविष्य के लिए दृष्टिकोण

दुनिया में बढ़ती जनसंख्या, औद्योगिकीकरण, और ऊर्जा की बढ़ती माँग के चलते अनव्यकरणीय संसाधनों का ह्रास हो रहा है। इससे न केवल आर्थिक अस्थिरता उत्पन्न हो रही है बल्कि पर्यावरणीय संतुलन पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। इस चुनौती से निपटने के लिए नवीकरणीय संसाधनों का उपयोग महत्वपूर्ण बन गया है। नवीकरणीय संसाधन (Renewable Resources) ऐसे संसाधन हैं जो प्राकृतिक रूप से पुनः उत्पन्न होते हैं और अनवरत उपलब्ध रहते हैं, जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल ऊर्जा, और जैव ऊर्जा।

आइए नवीकरणीय संसाधनों के विभिन्न विकल्पों और उनके भविष्य के दृष्टिकोण को विस्तार से समझते हैं:

### 1. सौर ऊर्जा (Solar Energy)

सौर ऊर्जा सूर्य की किरणों से उत्पन्न होती है और इसे बिजली के रूप में बदलने के लिए सोलर पैनलों का उपयोग किया जाता है। यह ऊर्जा का एक अनंत और स्वच्छ स्रोत है, जो पर्यावरण को प्रदूषित किए बिना ऊर्जा प्रदान करता है।

- **विकास की संभावना:** सौर ऊर्जा प्रौद्योगिकी में निरंतर सुधार हो रहा है और इसके उपकरणों की कीमतें भी कम हो रही हैं। इसके परिणामस्वरूप सौर ऊर्जा का उपयोग न केवल घरों में बल्कि औद्योगिक स्तर पर भी बढ़ रहा है।

- **भविष्य का दृष्टिकोण:** भविष्य में सौर ऊर्जा को बिजली उत्पादन का एक प्रमुख स्रोत माना जा रहा है। भारत, चीन, और अमेरिका जैसे देशों में सौर ऊर्जा परियोजनाओं को बड़े पैमाने पर प्रोत्साहन दिया जा रहा है।

**2. पवन ऊर्जा (Wind Energy)**

पवन ऊर्जा हवा की गति से उत्पन्न होती है। पवन टरबाइन का उपयोग करके हवा की गति को विद्युत ऊर्जा में बदला जाता है। यह ऊर्जा का एक साफ, सुरक्षित और सस्ता विकल्प है।

- **विकास की संभावना:** पवन ऊर्जा के क्षेत्र में तकनीकी प्रगति के कारण आज यह ऊर्जा स्रोत अधिक सुलभ और किफायती होता जा रहा है। इसे छोटे और बड़े दोनों पैमाने पर उपयोग किया जा सकता है।
- **भविष्य का दृष्टिकोण:** भविष्य में पवन ऊर्जा का उपयोग उन क्षेत्रों में बढ़ने की संभावना है जहाँ हवा की गति तेज होती है। यह ऊर्जा स्रोत ग्रामीण और दूरदराज के इलाकों के लिए महत्वपूर्ण है, जहाँ ऊर्जा की उपलब्धता सीमित होती है।

**3. जल ऊर्जा (Hydro Energy)**

जल ऊर्जा पानी के प्रवाह से उत्पन्न होती है। बाँधों और जल विद्युत संयंत्रों के माध्यम से पानी के प्रवाह को विद्युत ऊर्जा में बदला जाता है। यह ऊर्जा का एक विश्वसनीय स्रोत है जो कई दशकों से उपयोग में है।

- **विकास की संभावना:** जल ऊर्जा के क्षेत्र में अनुसंधान और तकनीकी उन्नति से छोटे हाइड्रोपावर प्रोजेक्ट्स का विकास हो रहा है। यह पर्यावरण पर न्यूनतम प्रभाव डालते हुए ऊर्जा उत्पन्न कर सकता है।
- **भविष्य का दृष्टिकोण:** भविष्य में जल ऊर्जा का अधिकतर उपयोग उन देशों में होगा जहाँ पर्याप्त जल स्रोत उपलब्ध हैं। यह ऊर्जा स्रोत विशेषकर कृषि और सिंचाई के लिए महत्वपूर्ण है।

**4. जैव ऊर्जा (Biomass Energy)**

जैव ऊर्जा पौधों और जैविक कचरे से उत्पन्न होती है। इसमें कृषि कचरा, पशु अपशिष्ट, और पेड़-पौधों का उपयोग किया जाता है। इस ऊर्जा का उत्पादन बायोगैस संयंत्रों में किया जाता है, जिससे स्वच्छ और नवीकरणीय ऊर्जा प्राप्त होती है।

- **विकास की संभावना:** जैव ऊर्जा को उर्वरकों और गैस के रूप में उपयोग किया जा सकता है। कृषि-प्रधान देशों में इस ऊर्जा का बहुत अधिक महत्व है।
- **भविष्य का दृष्टिकोण:** जैव ऊर्जा का उपयोग भविष्य में ग्रामीण और कृषि क्षेत्रों में बढ़ने की संभावना है, जहाँ ऊर्जा के अन्य साधन सीमित हैं। इससे कचरे के प्रबंधन में भी सहायता मिलती है।

**5. भू-तापीय ऊर्जा (Geothermal Energy)**

भू-तापीय ऊर्जा पृथ्वी के आंतरिक ताप से उत्पन्न होती है। पृथ्वी की सतह के नीचे मौजूद गर्म पानी और भाप का उपयोग करके बिजली का उत्पादन किया जाता है।

- **विकास की संभावना:** भू-तापीय ऊर्जा का उत्पादन केवल उन्हीं क्षेत्रों में संभव है जहाँ पृथ्वी की सतह के नीचे गर्म पानी उपलब्ध होता है, जैसे कि ज्वालामुखी क्षेत्रों में।
- **भविष्य का दृष्टिकोण:** भविष्य में भू-तापीय ऊर्जा का उपयोग विशेषकर उन देशों में बढ़ेगा जहाँ ज्वालामुखी सक्रिय होते हैं, जैसे कि आइसलैंड, फिलीपींस, और इंडोनेशिया।

**6. समुद्री ऊर्जा (Marine Energy)**

समुद्री ऊर्जा समुद्र की लहरों, ज्वार-भाटा और समुद्र की धाराओं से उत्पन्न होती है। यह ऊर्जा स्रोत समुद्र तटवर्ती क्षेत्रों में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

- **विकास की संभावना:** समुद्री ऊर्जा तकनीक अभी विकासशील चरण में है, लेकिन इसे ऊर्जा उत्पादन का स्वच्छ और विश्वसनीय स्रोत माना जा रहा है।
- **भविष्य का दृष्टिकोण:** भविष्य में तटीय देशों में समुद्री ऊर्जा का उपयोग बढ़ेगा। यह ऊर्जा स्रोत विशेष रूप से उन क्षेत्रों में सहायक होगा जहाँ समुद्री गतिविधियाँ प्रमुख हैं।

## 4.10 नवीकरणीय संसाधनों का महत्व और लाभ

1. **पर्यावरण संरक्षण:** नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत पर्यावरण के लिए हानिकारक नहीं होते और कार्बन उत्सर्जन में कमी लाते हैं।
2. **लंबी अवधि में सस्ते:** नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत प्रारंभिक निवेश के बाद सस्ते होते हैं, क्योंकि उनका ईंधन प्राकृतिक रूप से उपलब्ध होता है।
3. **ऊर्जा सुरक्षा:** नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग देश को ऊर्जा के मामले में आत्मनिर्भर बनाता है और अंतरराष्ट्रीय कीमतों पर निर्भरता कम करता है।
4. **रोजगार के अवसर:** नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाएँ रोजगार के नए अवसर प्रदान करती हैं, विशेषकर ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में।

## 4.11 अनव्यकरणीय संसाधनों के संरक्षण के लिए भारत सरकार की पहल

भारत सरकार ने अनव्यकरणीय संसाधनों के संरक्षण और नवीकरणीय ऊर्जा के विकास के लिए कई महत्वपूर्ण नीतियाँ और योजनाएँ बनाई हैं। इनमें प्रमुख हैं:

(a) राष्ट्रीय सौर मिशन (National Solar Mission)

- इस मिशन का उद्देश्य 2022 तक सौर ऊर्जा का उत्पादन 100 गीगावॉट तक बढ़ाना था। इस योजना के तहत, सरकार ने सौर पैनल के उपयोग को प्रोत्साहित किया है और सौर ऊर्जा को सस्ते और सुलभ बनाने का प्रयास किया है।

(b) राष्ट्रीय जैव ईंधन नीति (National Biofuel Policy)

- इस नीति का उद्देश्य बायोफ्यूल को प्रोत्साहित करना है, जिससे तेल पर निर्भरता को कम किया जा सके। बायोफ्यूल के उपयोग से अनव्यकरणीय संसाधनों की खपत में कमी आती है और पर्यावरण को भी लाभ होता है।

(c) राष्ट्रीय पवन ऊर्जा मिशन (National Wind Energy Mission)

- पवन ऊर्जा उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए इस मिशन को शुरू किया गया है। इसका उद्देश्य पवन ऊर्जा का उत्पादन बढ़ाना और इसे ऊर्जा का एक स्थायी स्रोत बनाना है।

(d) अपशिष्ट प्रबंधन नीति (Waste Management Policy)

- अपशिष्ट प्रबंधन के माध्यम से सरकार पुनर्चक्रण को बढ़ावा दे रही है। इससे कचरे से ऊर्जा उत्पादन और धातुओं का पुनः उपयोग कर अनव्यकरणीय संसाधनों की खपत कम की जा सकती है।

(e) पेट्रोलियम उत्पादों पर कर (Taxes on Petroleum Products)

- सरकार ने पेट्रोल और डीजल पर कर लगाकर इसके उपयोग को नियंत्रित किया है। इसके अलावा, इलेक्ट्रिक वाहनों को प्रोत्साहित करने के लिए सब्सिडी प्रदान की जा रही है।

(f) राष्ट्रीय हरित ऊर्जा कोष (National Green Energy Fund)

- यह कोष नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाओं के विकास में सहायता करता है। इसका उद्देश्य हरित ऊर्जा स्रोतों को बढ़ावा देकर अनव्यकरणीय संसाधनों पर निर्भरता कम करना है।

(g) विद्युत वाहन प्रोत्साहन (Electric Vehicle Promotion)

- सरकार विद्युत वाहनों को बढ़ावा दे रही है, जिससे पेट्रोल और डीजल की खपत में कमी आए और पर्यावरणीय लाभ प्राप्त हो सके। इसके लिए 'फेम इंडिया योजना' (FAME India Scheme) के तहत सब्सिडी और वित्तीय सहायता दी जाती है।

## 4.12 जन जागरूकता और शिक्षा की भूमिका

उल्लेखनीय है कि एक थर्मल प्लांट की प्रति मेगावाट औसत लागत सौर संयंत्र की तुलना में लगभग 25 प्रतिशत कम है। थर्मल प्लांट विशाल क्षमता के होते हैं और एक थर्मल प्लांट औसतन 18 सौर या पवन प्लांट के समान ही बिजली उत्पन्न करता है। इसलिये गैर-जीवाश्म स्वच्छ ऊर्जा की ओर बढ़ने हेतु भविष्य में बड़े सौर और पवन संयंत्रों का निर्माण किया जाना आवश्यक है ताकि वे थर्मल प्लांट के समान कार्य कर सकें।आँकड़े दर्शाते हैं कि बीते दो दशकों में कुल उत्पादन क्षमता का 63 प्रतिशत निजी क्षेत्र से आया है।

अतः यह स्पष्ट है कि यदि देश में नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावा देना है तो निजी क्षेत्र को निवेश हेतु अधिक-से-अधिक प्रेरित करना होगा। अनव्यकरणीय संसाधनों का संरक्षण केवल सरकारी नीतियों से संभव नहीं है; इसमें जनता की सहभागिता भी अनिवार्य है। लोगों में जागरूकता और शिक्षा के माध्यम से इन संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करने की प्रेरणा दी जा सकती है। पर्यावरणीय शिक्षा, सामुदायिक सहभागिता, और ऊर्जा संरक्षण जैसे प्रयासों से समाज में संसाधनों के सतत उपयोग के प्रति जागरूकता लाई जा सकती है।

## 4.13 निष्कर्ष

अनव्यकरणीय संसाधनों का ह्रास एक गंभीर समस्या है, जिसका प्रभाव न केवल वर्तमान समाज पर बल्कि भविष्य की पीढ़ियों पर भी पड़ेगा। इनके संरक्षण के लिए नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग, पुनर्चक्रण, और ऊर्जा संरक्षण जैसे उपाय अपनाने आवश्यक हैं। इसके अतिरिक्त, समाज में जागरूकता बढ़ाकर संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करना अनिवार्य है। यदि हमने इन संसाधनों के संरक्षण पर ध्यान नहीं दिया, तो इससे पर्यावरणीय, आर्थिक, और सामाजिक असंतुलन उत्पन्न हो सकता है, जो भविष्य में गहरी समस्याएँ उत्पन्न करेगा।

भारत में अनव्यकरणीय संसाधनों का ह्रास एक महत्वपूर्ण मुद्दा है, जिसके कारण पर्यावरणीय, आर्थिक, और सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। सरकार ने इस समस्या के समाधान के लिए कई महत्वपूर्ण पहलें की हैं, जिनमें नवीकरणीय ऊर्जा का प्रोत्साहन, अपशिष्ट प्रबंधन, और पेट्रोलियम उत्पादों पर कर शामिल हैं। इसके अलावा, जन जागरूकता और शिक्षा के माध्यम से भी लोगों को अनव्यकरणीय संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग के प्रति जागरूक किया जा सकता है।

आने वाले वर्षों में, भारत को अनव्यकरणीय संसाधनों की कमी का सामना करना पड़ सकता है। इसलिए, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का विकास और इन संसाधनों का सतत उपयोग अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह न केवल पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखने में सहायक होगा, बल्कि ऊर्जा सुरक्षा और आर्थिक स्थिरता के लिए भी आवश्यक है।

## 4.14 संदर्भ ग्रंथ सूची


6. **"Environmental and Natural Resource Economics"**
   लेखक: **Tom Tietenberg** और **Lynne Lewis**
   प्रकाशक: **Taylor & Francis, 13 March 2018, ISBN: 9781351803373**
7. **"Economics of the Environment: Selected Readings"**
   संपादक: **Robert N. Stavins**
   प्रकाशक: **Edward Elgar Publishing, 2019, ISBN: 9781788972079**
8. **विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: **Dr. Anupam Agarwal, Dr. Alok Gupta**
   प्रकाशक: **SBPD Publications, 6 July 2021, ISBN: 9789389585339**
9. **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: डॉ. वी.सी. सिन्हा, डॉ. रितिका सिन्हा
   प्रकाशक: **SBPD Publishing House, 8 July 2024, ISBN: 9788119142392**
10. **"The Economics of Climate Change: The Stern Review"**
    लेखक: Nicholas Stern
    प्रकाशक: Cambridge University Press


## 4.15 सामान्य बोध प्रश्न

1. **अनव्यकरणीय संसाधन क्या हैं?**
   (a) ऐसे संसाधन जो पुनः उत्पन्न हो सकते हैं

(b) ऐसे संसाधन जो सीमित मात्रा में उपलब्ध हैं और पुनः उत्पन्न होने में लाखों वर्ष लगते हैं
(c) केवल पानी और हवा
(d) प्राकृतिक रूप से उपलब्ध सभी संसाधन
**उत्तर:** (b) ऐसे संसाधन जो सीमित मात्रा में उपलब्ध हैं और पुनः उत्पन्न होने में लाखों वर्ष लगते हैं

2. **पृथ्वी एवं संपदा की सीमाओं का क्या अर्थ है?**
(a) सभी संसाधनों की अनंत आपूर्ति
(b) पृथ्वी पर संसाधनों की सीमित उपलब्धता
(c) केवल जल संसाधनों का सीमित होना
(d) संपत्ति का बँटवारा
**उत्तर:** (b) पृथ्वी पर संसाधनों की सीमित उपलब्धता

3. **कौन-सा अनव्यकरणीय संसाधन नहीं है?**
(a) कोयला
(b) तांबा
(c) सौर ऊर्जा
(d) पेट्रोलियम
**उत्तर:** (c) सौर ऊर्जा

4. **"लिमिट्स टू ग्रोथ" सिद्धांत का उद्देश्य क्या है?**
(a) अनंत संसाधनों का उपयोग
(b) पृथ्वी की सीमाओं का संतुलन समझना
(c) सभी संसाधनों का नष्ट होना
(d) केवल जैव विविधता का संरक्षण
**उत्तर:** (b) पृथ्वी की सीमाओं का संतुलन समझना

5. **कौन-सा देश प्रमुख रूप से प्राकृतिक गैस का उत्पादक है?**
(a) जापान
(b) कतर
(c) भारत
(d) श्रीलंका
**उत्तर:** (b) कतर

6. **अनव्यकरणीय संसाधनों का अत्यधिक दोहन किस समस्या को जन्म दे सकता है?**
(a) वायु प्रदूषण
(b) जलवायु परिवर्तन
(c) ऊर्जा संकट
(d) सभी
**उत्तर:** (d) सभी

7. **पुनर्चक्रण किस संसाधन का उपयोग कम करने में सहायक है?**
(a) नवीकरणीय संसाधन
(b) अनव्यकरणीय संसाधन
(c) जल
(d) सौर ऊर्जा
**उत्तर:** (b) अनव्यकरणीय संसाधन

8. **संसाधनों के ह्रास के कारण कौन-सी सामाजिक समस्या उत्पन्न हो सकती है?**
(a) सामाजिक असमानता

(b) जनसंख्या में वृद्धि
(c) भाषा का विकास
(d) सांस्कृतिक समानता
**उत्तर:** (a) सामाजिक असमानता

9. **नवीकरणीय ऊर्जा का प्रमुख स्रोत कौन-सा है?**
(a) कोयला
(b) पेट्रोलियम
(c) सौर ऊर्जा
(d) गैस
**उत्तर:** (c) सौर ऊर्जा

10. **जनसंख्या वृद्धि से अनव्यकरणीय संसाधनों पर क्या प्रभाव पड़ता है?**
(a) इनकी माँग बढ़ती है
(b) इनकी खपत घटती है
(c) केवल जैव विविधता पर असर पड़ता है
(d) संसाधनों का संरक्षण होता है
**उत्तर:** (a) इनकी माँग बढ़ती है

## 4.16 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. अनव्यकरणीय संसाधनों के प्रमुख प्रकार कौन-कौन से हैं**?** अनव्यकरणीय संसाधनों का संक्षेप में वर्णन करें।
2. पृथ्वी की सीमाओं का क्या अर्थ है**?**
3. अनव्यकरणीय संसाधनों के ह्रास के प्रमुख कारण क्या हैं**?** अनव्यकरणीय संसाधनों के ह्रास का पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ता है**?**
4. अनव्यकरणीय संसाधनों की कमी से आर्थिक अस्थिरता कैसे उत्पन्न होती है**?**
5. अनव्यकरणीय संसाधनों के अत्यधिक दोहन से भविष्य की पीढ़ियों पर क्या प्रभाव पड़ेगा**?**
6. भारत में अनव्यकरणीय संसाधनों के ह्रास को रोकने के लिए सरकार द्वारा कौन-कौन सी पहल की जा रही हैं**?**
7. पृथ्वी के संसाधनों के ह्रास को कम करने में शिक्षा और जन जागरूकता की भूमिका क्या है**?**
8. पृथ्वी की सीमाओं का उल्लंघन क्यों चिंता का विषय है**?**
9. नवीकरणीय संसाधनों के उपयोग से अनव्यकरणीय संसाधनों के ह्रास को कैसे कम किया जा सकता है**?**
10. पृथ्वी की संपदा का असीमित दोहन प्राकृतिक आपदाओं को कैसे बढ़ावा दे सकता है**?**

# इकाई -05

# आर्थिक विचारों का इतिहास में पर्यावरणीय चेतना: संपोषणीय विकास, पूर्ति पक्ष की सीमाएं - डेविड रिकार्डो, और थॉमस मॉल्थस , माँग पक्ष की सीमाएं : महान आर्थिक मंदी एवं कीन्स का पक्ष

**इकाई की रूपरेखा:**

**5.0 उद्देश्य**
**5.1 प्रस्तावना : आर्थिक विचारों के इतिहास में पर्यावरणीय चेतना**
**5.1.1 प्रारंभिक आर्थिक विचार और पर्यावरणीय चेतना का अभाव**
**5.1.2 औद्योगिक क्रांति और पर्यावरण पर प्रभाव**
**5.2.0 डेविड रिकार्डो का विचार और पूर्ति पक्ष की सीमाएँ (सापेक्ष लाभ सिद्धांत)**
**5.3.0 मॉल्थस का विचार और संसाधनों की सीमाएँ**
**5.4.0 नियो-क्लासिकल अर्थशास्त्र और पर्यावरणीय सोच का अभाव**
**5.5.0 आधुनिक पर्यावरणीय अर्थशास्त्र की शुरुआत**
**5.6.0 संपोषणीय विकास: पूर्ति पक्ष की सीमाएँ**
**5.6.1 पूर्ति पक्ष की सीमाओं की अवधारणा**
**5.7.0 वर्तमान समय में पर्यावरणीय चेतना और आर्थिक विचार**
**5.8.0 महान आर्थिक मंदी और कीन्स का पक्ष**
**5.8.1 महान आर्थिक मंदी का परिचय और कारण**
**5.8.2 आर्थिक मंदी का प्रभाव**
**5.8.3 कीन्स का पक्ष: आर्थिक मंदी से उबरने का समाधान**
**5.8.4 कीन्स के विचारों की विशेषताएँ**
**5.8.5 कीन्सियन नीतियों का प्रभाव और आलोचना**
**5.8.6 वर्तमान समय में कीन्सियन सिद्धांत का महत्व**
**5.9.0 निष्कर्ष**
**5.10 संदर्भ ग्रंथ सूची**
**5.11 सामान्य बोध प्रश्न**
**5.12 अभ्यासार्थ प्रश्न**

## 5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप निम्न बिन्दुओं को भलीभॉति समझ जायेंगे?

- पर्यावरणीय चेतना का विकास समझना
- संपोषणीय विकास में पूर्ति पक्ष की सीमाओं का अध्ययन
- महान आर्थिक मंदी के कारणों और परिणामों का विश्लेषण
- कीन्स के आर्थिक सिद्धांतों के महत्व को समझना
- आधुनिक अर्थशास्त्र में संतुलन बनाना
- दीर्घकालिक और सतत विकास के लिए नीतिगत सुझाव

## 5.1 प्रस्तावना: आर्थिक विचारों के इतिहास में पर्यावरणीय चेतना

आर्थिक विचारों का इतिहास एक लंबी और विकसित प्रक्रिया है, जिसमें समाज, मानव जरूरतों, और संसाधनों के उपयोग पर कई प्रकार की सोच विकसित हुई है। प्रारंभिक आर्थिक विचारों में पर्यावरण का

स्थान सीमित था, लेकिन जैसे-जैसे औद्योगिक क्रांति और आधुनिक आर्थिक सिद्धांतों का उदय हुआ, पर्यावरण पर आर्थिक गतिविधियों के प्रभाव को लेकर चेतना बढ़ी। वर्तमान में, आर्थिक विचारों में पर्यावरणीय चेतना का गहरा प्रभाव है, जिसमें सतत विकास, संसाधनों का संरक्षण, और पर्यावरणीय नीतियों का निर्माण महत्वपूर्ण हैं।

### 5.1.1 प्रारंभिक आर्थिक विचार और पर्यावरणीय चेतना का अभाव

प्रारंभिक आर्थिक सिद्धांत, जैसे कि मरकेंटिलिज्म और शास्त्रीय अर्थशास्त्र, मुख्य रूप से राष्ट्रीय धन और आर्थिक विकास पर केंद्रित थे। इस दौरान संसाधनों के उपभोग को अधिकतम करना और धन संचय को बढ़ावा देना ही आर्थिक सफलता का प्रतीक माना जाता था।

(a) मरकेंटिलिज्म (Mercantilism)

- 16वीं और 17वीं शताब्दी के मरकेंटिलिज्म ने आर्थिक सोच में वैश्विक व्यापार और संसाधनों के अधिकतम दोहन पर जोर दिया। इस विचारधारा में पर्यावरण की परवाह किए बिना आर्थिक शक्ति और संपत्ति की प्राप्ति पर ध्यान केंद्रित किया गया था।

(b) शास्त्रीय अर्थशास्त्र (Classical Economics)

- एडम स्मिथ, डेविड रिकार्डो, और थॉमस मॉल्थस जैसे शास्त्रीय अर्थशास्त्रियों ने उत्पादन, मांग, और आर्थिक विकास पर ध्यान केंद्रित किया। हालांकि मॉल्थस ने जनसंख्या वृद्धि को लेकर संसाधनों की सीमाओं का उल्लेख किया, परंतु पर्यावरणीय चेतना की समग्र अवधारणा अभी भी विकसित नहीं हुई थी।

### 5.1.2 औद्योगिक क्रांति और पर्यावरण पर प्रभाव

औद्योगिक क्रांति ने उत्पादन और औद्योगिक गतिविधियों को अभूतपूर्व गति प्रदान की। इस काल में पर्यावरण के प्रति विचारधारा को प्राथमिकता नहीं दी गई। संसाधनों का अंधाधुंध उपयोग, कोयले और अन्य जीवाश्म ईंधनों का अत्यधिक दोहन, और वनों की कटाई आम हो गई। इस काल में लाभ अधिकतम करने और उत्पादन बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित रहा।

(a) पर्यावरणीय क्षति

- औद्योगिक क्रांति ने वायु, जल और मृदा प्रदूषण में वृद्धि की, लेकिन उस समय इसके पर्यावरणीय प्रभावों के प्रति चेतना नहीं थी।

(b) प्राकृतिक संसाधनों की कमी

- इस समय में प्राकृतिक संसाधनों को अंतहीन समझा गया और उनके ह्रास की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया। इससे प्राकृतिक असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हुई।

## 5.2.0 डेविड रिकार्डो का विचार और पूर्ति पक्ष की सीमाएँ (सापेक्ष लाभ सिद्धांत)

डेविड रिकार्डो एक प्रसिद्ध ब्रिटिश अर्थशास्त्री थे जिन्होंने 19वीं शताब्दी में अपने "सापेक्ष लाभ सिद्धांत" और भूमि उपयोग पर अपने सिद्धांतों के माध्यम से आर्थिक विचारधारा को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया। रिकार्डो का मुख्य कार्य "भूमि की सीमितता" और उत्पादन की लागत पर इसके प्रभाव को समझाना था, जो अंततः पूर्ति पक्ष की सीमाओं से जुड़ा हुआ है।

रिकार्डो ने अपने सापेक्ष लाभ सिद्धांत (Comparative Advantage) में यह बताया कि देशों को उन वस्तुओं का उत्पादन करना चाहिए जिनमें उनके पास सापेक्ष लाभ है। यह सिद्धांत अंतरराष्ट्रीय व्यापार में महत्वपूर्ण है और यह मानता है कि सभी देशों को प्राकृतिक संसाधनों की सीमित उपलब्धता के बावजूद व्यापार में शामिल होना चाहिए। लेकिन यह सिद्धांत प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता की सीमाओं के कारण व्यवहार में कठिनाइयों का सामना करता है, खासकर तब, जब एक देश के पास प्राकृतिक संसाधनों की कमी होती है।

### भूमि की सीमितता और उत्पादन की लागत

रिकार्डो ने भूमि की सीमितता को अपने आर्थिक सिद्धांतों में मुख्य भूमिका दी। उन्होंने बताया कि भूमि एक सीमित संसाधन है और उसकी गुणवत्ता में भी भिन्नता होती है। उच्च गुणवत्ता वाली भूमि का उपयोग पहले किया जाता है, लेकिन जैसे-जैसे आबादी और मांग बढ़ती है, कम गुणवत्ता वाली भूमि का उपयोग करना

पड़ता है, जिससे उत्पादन की लागत बढ़ जाती है। इसे रिकार्डो ने "घटती उपज का नियम" (Law of Diminishing Returns) कहा, जिसमें भूमि की सीमितता के कारण उत्पादन में वृद्धि सीमित हो जाती है।

**पूर्ति पक्ष की सीमाएँ**

रिकार्डो का यह विचार पूर्ति पक्ष की सीमाओं की ओर इंगित करता है। जैसे-जैसे प्राकृतिक संसाधनों की सीमित उपलब्धता बढ़ती है, उत्पादन की लागत में वृद्धि होती है। अधिक भूमि और संसाधनों का उपयोग करने पर भी उनकी उत्पादकता घटने लगती है, जिससे अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। रिकार्डो का यह दृष्टिकोण आधुनिक अर्थशास्त्र में संपोषणीय विकास की आवश्यकताओं और प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग की चेतावनी देता है।

डेविड रिकार्डो का भूमि और संसाधनों की सीमितता पर जोर देने वाला दृष्टिकोण आज भी प्रासंगिक है, खासकर संसाधनों के अधिक उपयोग और बढ़ती जनसंख्या के संदर्भ में। रिकार्डो का यह विचार पूर्ति पक्ष की सीमाओं की समझ को गहरा करता है, जो आधुनिक अर्थशास्त्र और पर्यावरणीय नीतियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

## 5.3.0 मॉल्थस का विचार और संसाधनों की सीमाएँ

थॉमस रॉबर्ट मॉल्थस एक ब्रिटिश अर्थशास्त्री और पादरी थे, जिन्होंने 18वीं शताब्दी के अंत में जनसंख्या वृद्धि और संसाधनों की सीमाओं पर अपने महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत किए। उनका सिद्धांत, जिसे मॉल्थसियन सिद्धांत या जनसंख्या सिद्धांत के रूप में जाना जाता है, इस विचार पर आधारित था कि जनसंख्या वृद्धि का प्रभाव संसाधनों पर गंभीर पड़ता है। मॉल्थस ने यह सिद्ध किया कि यदि जनसंख्या अनियंत्रित रूप से बढ़ती रही, तो यह उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों को समाप्त कर देगी और समाज में भुखमरी, गरीबी, और संघर्ष की स्थिति पैदा होगी।

**मॉल्थस का जनसंख्या सिद्धांत**

मॉल्थस ने अपनी पुस्तक "एन एसे ऑन द प्रिंसिपल ऑफ पॉपुलेशन" (1798) में यह तर्क दिया कि जनसंख्या वृद्धि एक ज्यामितीय दर (जैसे 2, 4, 8, 16...) से होती है, जबकि खाद्य उत्पादन केवल अंकगणितीय दर (जैसे 1, 2, 3, 4...) से बढ़ता है। उन्होंने बताया कि प्राकृतिक संसाधनों, विशेष रूप से खाद्य उत्पादन, की वृद्धि जनसंख्या की दर से कम होती है। इस अंतर के कारण संसाधनों की कमी होती है, जिससे गरीबी, भुखमरी और जनसंख्या का नियंत्रण आवश्यक हो जाता है। मॉल्थस ने यह भी सुझाव दिया कि प्रकृति में भुखमरी, रोग, और युद्ध जैसी घटनाएँ जनसंख्या को नियंत्रित करने के स्वाभाविक साधन हैं।

**संसाधनों की सीमाएँ**

मॉल्थस का सिद्धांत इस विचार को भी स्थापित करता है कि पृथ्वी के संसाधनों की एक सीमा है। उनकी सोच के अनुसार, जब संसाधनों की मांग उनकी उपलब्धता से अधिक हो जाती है, तो प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास और पर्यावरणीय असंतुलन जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। मॉल्थस का यह दृष्टिकोण आगे चलकर पर्यावरणीय अर्थशास्त्र और सतत विकास की अवधारणा का आधार बना।

1. **खाद्य उत्पादन की सीमाएँ**: मॉल्थस ने बताया कि कृषि उत्पादकता की एक सीमा होती है, और इसे असीमित रूप से नहीं बढ़ाया जा सकता। जलवायु, भूमि की गुणवत्ता, और अन्य प्राकृतिक कारक इस पर निर्भर करते हैं, जिससे खाद्य उत्पादन की क्षमता सीमित होती है।
2. **प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास**: मॉल्थस के अनुसार, प्राकृतिक संसाधन जैसे पानी, खनिज और ऊर्जा स्रोत सीमित मात्रा में उपलब्ध हैं। अत्यधिक जनसंख्या वृद्धि से इनका दोहन तेजी से होता है, जिससे पर्यावरणीय संकट पैदा होता है।
3. **पर्यावरणीय समस्याएँ**: मॉल्थस का विचार था कि जनसंख्या वृद्धि और संसाधनों की कमी से प्रदूषण, वनों की कटाई, और जैव विविधता का ह्रास जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। यह भविष्य में प्राकृतिक संसाधनों पर संकट का कारण बन सकता है।

**मॉल्थस का प्रभाव और आलोचना**

मॉल्थस के विचारों का प्रभाव आज भी देखा जा सकता है, खासकर पर्यावरणीय चिंताओं और संसाधनों के सतत उपयोग के संदर्भ में। हालांकि, उनके सिद्धांत की आलोचना भी हुई है। उनके आलोचकों का मानना है कि तकनीकी प्रगति और कृषि में नवाचारों ने खाद्य उत्पादन को बढ़ाने में मदद की है, जिससे जनसंख्या वृद्धि का सामना किया जा सकता है। फिर भी, मॉल्थस का विचार इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि उन्होंने प्राकृतिक संसाधनों की सीमाओं और उनके संतुलित उपयोग की आवश्यकता को समझाया।

मॉल्थस का सिद्धांत संसाधनों के सतत उपयोग और पर्यावरणीय संतुलन की दिशा में एक महत्वपूर्ण चेतावनी है। आज, जब जनसंख्या लगातार बढ़ रही है और संसाधनों पर अत्यधिक दबाव है, मॉल्थस के विचार और भी प्रासंगिक हो गए हैं। यह आवश्यक है कि हम प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करें और सतत विकास की दिशा में आगे बढ़ें ताकि आने वाली पीढ़ियाँ भी इन संसाधनों का लाभ उठा सकें।

### 5.4.0 नियो-क्लासिकल अर्थशास्त्र और पर्यावरणीय सोच का अभाव

नियो-क्लासिकल अर्थशास्त्रियों जैसे अल्फ्रेड मार्शल और विल्फ्रेडो पारेतो का मुख्य ध्यान उत्पादन, उपभोग, और मूल्य निर्धारण पर था। इस विचारधारा में पर्यावरण का स्थान बहुत सीमित था।

(a) पर्यावरणीय चेतना का अभाव

- नियो-क्लासिकल अर्थशास्त्र में प्रकृति को केवल संसाधनों के स्रोत के रूप में देखा गया और इन संसाधनों के पर्यावरणीय प्रभाव की उपेक्षा की गई।

(b) अर्थशास्त्र में उपभोग और उत्पादन का स्थान

- उपभोग और उत्पादन की अधिकता ने प्राकृतिक संसाधनों के ह्रास को बढ़ावा दिया, लेकिन इसके पर्यावरणीय परिणामों के प्रति कोई विशेष चिंता नहीं दिखाई गई।

### 5.5 आधुनिक पर्यावरणीय अर्थशास्त्र की शुरुआत

20वीं शताब्दी के मध्य में, पर्यावरणीय क्षति और संसाधनों के ह्रास पर ध्यान केंद्रित होना शुरू हुआ। इस काल में कई अर्थशास्त्रियों ने पर्यावरणीय समस्याओं को समझा और इसे अर्थशास्त्र में शामिल करने की पहल की।

(a) पिगुवियन कर (Pigouvian Tax)

आर्थर पिगू ने प्रदूषण और बाह्यताओं के लिए कर की अवधारणा प्रस्तुत की। इस सिद्धांत का उद्देश्य उन गतिविधियों पर कर लगाना था जो समाज के लिए नकारात्मक बाह्य प्रभाव उत्पन्न करती हैं, जैसे प्रदूषण।

पिगुवियन कर (Pigovian Tax) एक प्रकार का कर है जिसे अर्थशास्त्री आर्थर पिगू ने बाह्यताओं (externalities) को नियंत्रित करने के लिए प्रस्तावित किया था। बाह्यताएँ वे आर्थिक गतिविधियाँ होती हैं जिनका प्रभाव समाज पर सकारात्मक या नकारात्मक रूप में पड़ता है, लेकिन इनका मूल्य या लागत बाजार में शामिल नहीं होती। उदाहरण के लिए, औद्योगिक उत्पादन से उत्पन्न प्रदूषण एक नकारात्मक बाह्यता है जो पर्यावरण और समाज को प्रभावित करती है, लेकिन इसके नकारात्मक प्रभावों का मूल्य उत्पादन की लागत में शामिल नहीं होता।

पिगू का सुझाव था कि सरकार ऐसी नकारात्मक बाह्यताओं पर कर लगाए, जिससे प्रदूषण और अन्य हानिकारक गतिविधियों को हतोत्साहित किया जा सके। यह कर प्रदूषण जैसे नकारात्मक प्रभावों को कम करने के लिए उस पर एक अतिरिक्त लागत लगाता है। उदाहरणस्वरूप, कार्बन टैक्स एक पिगुवियन कर का ही प्रकार है, जिसे कार्बन उत्सर्जन को कम करने के उद्देश्य से लागू किया जाता है।

पिगुवियन कर का उद्देश्य उन गतिविधियों को महंगा बनाना है जो समाज और पर्यावरण पर बुरा असर डालती हैं, ताकि कंपनियाँ और उपभोक्ता कम हानिकारक विकल्प अपनाएँ और सतत विकास की दिशा में बढ़ें।

(b) कोस्ट सिद्धांत (Coase Theorem)

कोस्ट सिद्धांत (Coase Theorem) एक महत्वपूर्ण आर्थिक सिद्धांत है जिसे अर्थशास्त्री रोनाल्ड कोस्ट ने प्रस्तुत किया। यह सिद्धांत बताता है कि यदि संपत्ति अधिकार स्पष्ट रूप से परिभाषित हों और लेन-देन की

लागत नगण्य हो, तो बाह्यताओं (externalities) की समस्या को प्रभावित पक्षों के बीच बातचीत के माध्यम से हल किया जा सकता है, भले ही संपत्ति का अधिकार किसके पास हो। रोनाल्ड कोस्ट ने बाह्यताओं को नियंत्रित करने के लिए सौदेबाजी और संपत्ति अधिकारों की अवधारणा विकसित की। कोस्ट का विचार था कि यदि संपत्ति अधिकार स्पष्ट रूप से परिभाषित हैं, तो लोग पर्यावरणीय नुकसान को रोकने के लिए आपसी समझौते कर सकते हैं।

कोस्ट सिद्धांत के अनुसार, प्रदूषण जैसे नकारात्मक बाह्यताओं के मामले में, अगर प्रदूषक और प्रभावित पक्षों के बीच संपत्ति अधिकार और लेन-देन स्पष्ट हों, तो वे एक ऐसा समझौता कर सकते हैं जो सभी पक्षों के लिए लाभकारी हो। इस प्रकार, सरकारी हस्तक्षेप के बिना भी समाज की कल्याणकारी स्थिति प्राप्त की जा सकती है।

हालाँकि, कोस्ट सिद्धांत तभी प्रभावी है जब लेन-देन की लागत कम हो, जैसे कि वार्ता के खर्च, कानूनी प्रक्रियाओं की लागत आदि। वास्तविक जीवन में, कई बार लेन-देन की लागत अधिक होती है, जिससे यह सिद्धांत व्यवहार में कठिन हो जाता है। इसके बावजूद, कोस्ट सिद्धांत ने पर्यावरणीय अर्थशास्त्र और सार्वजनिक नीति में निजी समाधान की भूमिका को समझाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

## 5.6 संपोषणीय विकास: पूर्ति पक्ष की सीमाएँ

संपोषणीय विकास का तात्पर्य ऐसे विकास से है जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करता है, लेकिन भविष्य की पीढ़ियों की जरूरतों को खतरे में डाले बिना। यह अवधारणा ब्रंटलैंड रिपोर्ट (1987) से प्रेरित है और इसके तीन प्रमुख स्तंभ हैं: आर्थिक विकास, सामाजिक समावेश, और पर्यावरणीय संरक्षण। लेकिन इस संतुलन को प्राप्त करना विशेष रूप से तब चुनौतीपूर्ण हो जाता है जब हम पूर्ति पक्ष की सीमाओं का सामना करते हैं। पूर्ति पक्ष की सीमाओं का अर्थ उन समस्याओं और चुनौतियों से है जो प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता, तकनीकी विकास, और पर्यावरणीय क्षति के संदर्भ में विकास की पूर्ति में अवरोध उत्पन्न करती हैं।

1970 के दशक में "सतत विकास" और "पर्यावरणीय अर्थशास्त्र" के विचारों का विकास हुआ। यह समय था जब वैश्विक स्तर पर पर्यावरणीय चेतना बढ़ने लगी थी और पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान के लिए आर्थिक नीतियों की आवश्यकता महसूस की गई।

(a) सतत विकास

- ब्रंटलैंड रिपोर्ट (1987) में सतत विकास की अवधारणा को प्रस्तुत किया गया। इस रिपोर्ट में कहा गया कि विकास ऐसा होना चाहिए कि वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके और भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं को भी नुकसान न हो।

(b) पर्यावरणीय अर्थशास्त्र का उदय

- पर्यावरणीय अर्थशास्त्र ने पारंपरिक अर्थशास्त्र के अंतर्गत पर्यावरणीय बाह्यताओं, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, और पर्यावरणीय करों जैसे विषयों को शामिल किया। इसका मुख्य उद्देश्य आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संतुलन के बीच सामंजस्य बनाना था।

### 5.6.1 पूर्ति पक्ष की सीमाओं की अवधारणा

पूर्ति पक्ष की सीमाएँ, संपोषणीय विकास में उपलब्ध संसाधनों, उनकी पुनः पूर्ति की गति, और उनकी सतत आपूर्ति की सीमाओं को दर्शाती हैं। जब विकास गतिविधियाँ अधिकाधिक संसाधनों की मांग करती हैं, तो पूर्ति पक्ष की सीमाएँ विकास की स्थिरता पर सवाल खड़े करती हैं। प्राकृतिक संसाधनों के सीमित भंडार, उत्पादन की पारिस्थितिक सीमाएँ, और तकनीकी बाधाएँ प्रमुख अवरोध के रूप में उभरते हैं।

#### (a) प्राकृतिक संसाधनों की सीमित उपलब्धता

- कोयला, तेल, प्राकृतिक गैस, और खनिज जैसे अनव्यकरणीय संसाधन सीमित हैं और उनका अत्यधिक दोहन सतत विकास के लिए खतरा बन सकता है। ये संसाधन फिर से उत्पन्न नहीं हो सकते, और इनकी समाप्ति की संभावना संपोषणीय विकास की दृष्टि से एक बड़ी चुनौती है।

**(b) पुनः पूर्ति की धीमी दर**

- कुछ संसाधन जैसे वन, मृदा, और जल अपने आप पुनः उत्पन्न होते हैं, लेकिन इसकी गति काफी धीमी होती है। अतः यदि उनका अत्यधिक दोहन किया जाता है, तो पुनः पूर्ति की प्रक्रिया ठप हो जाती है, जो लंबी अवधि में नुकसानदायक है।

**(c) प्रौद्योगिकी की सीमाएँ**

- तकनीकी विकास के बावजूद, संसाधनों के कुशल उपयोग की सीमाएँ होती हैं। कुछ संसाधनों को दोबारा उपयोग में लाने या पुनःचक्रण में तकनीकी बाधाएँ होती हैं, जिससे सतत आपूर्ति का अभाव होता है।

संपोषणीय विकास की प्राप्ति में पूर्ति पक्ष की सीमाएँ एक गंभीर चुनौती हैं। संसाधनों का अत्यधिक उपयोग, पर्यावरणीय क्षति, और जलवायु परिवर्तन के कारण पूर्ति पक्ष की सीमाएँ और अधिक गहरी हो रही हैं। इन समस्याओं का समाधान नवीकरणीय ऊर्जा, पुनर्चक्रण, जागरूकता, और कठोर नीतियों के माध्यम से ही संभव है। भविष्य में सतत विकास के लिए यह आवश्यक है कि हम संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करें और पर्यावरण के संरक्षण के प्रति जागरूक रहें।

## 5.7 वर्तमान समय में पर्यावरणीय चेतना और आर्थिक विचार

वर्तमान समय में, पर्यावरणीय चेतना आर्थिक नीति निर्धारण का एक महत्वपूर्ण भाग बन गई है। वैश्विक वार्ता, नीतियाँ, और अंतरराष्ट्रीय समझौते, जैसे पेरिस समझौता, इसके उदाहरण हैं।

(a) पर्यावरणीय कर और नीतियाँ

- कई देशों में प्रदूषण कर, कार्बन टैक्स, और उत्सर्जन व्यापार प्रणाली को लागू किया गया है। इसका उद्देश्य पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखते हुए आर्थिक विकास करना है।

(b) ग्रीन अर्थशास्त्र

- ग्रीन अर्थशास्त्र का लक्ष्य है कि आर्थिक विकास पर्यावरणीय सततता के साथ हो। इसमें नवीकरणीय ऊर्जा, हरित प्रौद्योगिकी, और जैविक कृषि का प्रोत्साहन शामिल है।

आज, आर्थिक सोच में पर्यावरणीय चेतना एक महत्वपूर्ण स्थान ले चुकी है। सतत विकास, कार्बन फुटप्रिंट में कमी, और नवीकरणीय ऊर्जा के उपयोग को बढ़ावा देना आज की जरूरत बन गया है। वर्तमान में आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण में संतुलन बनाए रखना एक प्रमुख चुनौती है, लेकिन यह सतत भविष्य के लिए अत्यंत आवश्यक है।

## 5.8 महान आर्थिक मंदी और कीन्स का पक्ष

महान आर्थिक मंदी (Great Depression) का काल 1929 से लेकर 1939 तक का समय था, जब वैश्विक अर्थव्यवस्था गंभीर संकट से गुजर रही थी। इस मंदी का आरंभ अमेरिकी स्टॉक मार्केट क्रैश से हुआ, जिसे "ब्लैक ट्यूसडे" (29 अक्टूबर 1929) कहा जाता है। इसका प्रभाव विश्वभर की अर्थव्यवस्थाओं पर पड़ा, जिससे उत्पादन में गिरावट, बेरोजगारी, और वैश्विक गरीबी में वृद्धि हुई। इस संकट के बीच, जॉन मेनार्ड कीन्स ने अपने नए आर्थिक विचार प्रस्तुत किए, जिन्हें "कीन्सियन अर्थशास्त्र" के रूप में जाना जाता है। कीन्स का पक्ष आर्थिक संकटों से उबरने के लिए सरकार की भूमिका और मांग को बढ़ाने पर आधारित था।

### 5.8.1 महान आर्थिक मंदी का परिचय और कारण

**(a) अत्यधिक स्टॉक मार्केट निवेश और अटकलें**

- 1920 के दशक में अमेरिका और कई अन्य देशों में शेयर बाजार में अटकलों का दौर चरम पर था। लोग शेयरों में बिना सोचे-समझे निवेश कर रहे थे, और अधिक लाभ कमाने की उम्मीद में अटकलें लगा रहे थे। इस अटकलों के कारण शेयर बाजार अस्थिर हो गया और आखिरकार 1929 में यह टूट गया।

**(b) बैंकिंग प्रणाली की विफलता**

- स्टॉक मार्केट के क्रैश के बाद बैंकिंग प्रणाली पर दबाव बढ़ा, जिससे कई बैंकों का पतन हो गया। बैंक दिवालिया होने लगे और लोगों की जमा पूंजी नष्ट हो गई। इससे लोगों की क्रय शक्ति घट गई और आर्थिक मंदी गहरा गई।

**(c) उत्पादन में कमी और मांग का अभाव**

- मंदी के कारण उद्योगों में उत्पादन घटने लगा, जिससे बेरोजगारी में वृद्धि हुई। बेरोजगारी और निम्न आय के कारण मांग में गिरावट आई, जिससे अर्थव्यवस्था ठहर गई।

**(d) अंतरराष्ट्रीय व्यापार में गिरावट**

- विभिन्न देशों के बीच व्यापारिक संधियाँ और अंतरराष्ट्रीय व्यापार संबंध टूट गए। इससे निर्यात और आयात में कमी आई, और वैश्विक आर्थिक संकट और गहरा हो गया।

### 5.8.2 आर्थिक मंदी का प्रभाव

**(a) बेरोजगारी में वृद्धि**

- लाखों लोग बेरोजगार हो गए और उनके जीवन पर विपरीत प्रभाव पड़ा। अमेरिका में बेरोजगारी दर 25% तक पहुँच गई थी। इसका प्रभाव श्रमिक वर्ग, किसानों और छोटे व्यापारियों पर पड़ा।

**(b) वित्तीय संकट**

- बैंकों का पतन होने से वित्तीय संकट उत्पन्न हुआ। लोग अपनी जमा पूंजी खो बैठे और बैंकों से ऋण प्राप्त करना असंभव हो गया। इस संकट ने आम लोगों का विश्वास आर्थिक प्रणाली से हटा दिया।

**(c) सामाजिक असमानता**

- मंदी के दौरान गरीब और अमीर के बीच की खाई बढ़ गई। अमीर लोग अपने निवेश बचाने में सक्षम रहे, जबकि गरीब लोग कठिनाइयों का सामना कर रहे थे।

**(d) अंतरराष्ट्रीय व्यापार में कमी**

- व्यापार और निवेश में कमी के कारण अंतरराष्ट्रीय व्यापार घट गया, जिससे वैश्विक अर्थव्यवस्था पर भी बुरा असर पड़ा। इससे अर्थव्यवस्था की पुनरुत्थान की प्रक्रिया धीमी हो गई।

### 5.8.3 कीन्स का पक्ष: आर्थिक मंदी से उबरने का समाधान

जॉन मेनार्ड कीन्स ने आर्थिक मंदी से निपटने के लिए एक नया दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। उनके विचारों को "कीन्सियन अर्थशास्त्र" कहा जाता है। कीन्स का मानना था कि आर्थिक संकट से उबरने के लिए सरकार को सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए।

**(a) मांग पक्ष को प्रोत्साहन**

- कीन्स का मुख्य विचार था कि आर्थिक संकट से बाहर निकलने के लिए सरकार को मांग को बढ़ावा देना चाहिए। उनका मानना था कि जब लोग वस्तुओं और सेवाओं की खरीददारी करने के लिए तैयार नहीं होते हैं, तो सरकार को खर्च बढ़ाकर इस मांग को उत्पन्न करना चाहिए।

**(b) सरकारी व्यय में वृद्धि**

- कीन्स का सुझाव था कि सरकार को बुनियादी ढाँचे, सार्वजनिक कल्याण, और विकास कार्यों पर खर्च बढ़ाना चाहिए। इससे रोजगार के अवसर पैदा होंगे और लोगों की आय में वृद्धि होगी, जिससे उनकी क्रय शक्ति बढ़ेगी।

**(c) ऋण देने की नीति**

- कीन्स के अनुसार, जब निजी क्षेत्र ऋण नहीं दे पाता, तब सरकार को ऋण देना चाहिए और निवेश में सहायता करनी चाहिए। इससे अर्थव्यवस्था में पैसे का प्रवाह बढ़ेगा और आर्थिक गतिविधियाँ पुनः आरंभ होंगी।

**(d) मौद्रिक नीति का उपयोग**

- कीन्स ने मौद्रिक नीति के तहत ब्याज दरों को घटाने का सुझाव दिया ताकि लोग कर्ज लेकर खर्च करें और निवेश करें। इससे अर्थव्यवस्था में धन की उपलब्धता बढ़ेगी और आर्थिक गतिविधियों में गति आएगी।

**(e) चक्रवृद्धि प्रभाव**

- कीन्स ने चक्रवृद्धि प्रभाव (Multiplier Effect) का सिद्धांत भी प्रस्तुत किया। इसका मतलब यह है कि जब सरकार व्यय करती है, तो उसका प्रभाव अर्थव्यवस्था में कई गुना अधिक होता है। उदाहरण के लिए, अगर सरकार सड़कों का निर्माण करती है, तो यह केवल सड़क निर्माण का खर्च नहीं है, बल्कि इससे अन्य उद्योगों को भी फायदा होता है, जिससे समग्र मांग बढ़ती है।

### 5.8.4 कीन्स के विचारों की विशेषताएँ

**(a) सरकार की भूमिका का समर्थन**

- कीन्स ने मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था की बजाय सरकार की भूमिका का समर्थन किया। उनका मानना था कि सरकार को आर्थिक संकट के समय मांग बढ़ाने के लिए सक्रिय होना चाहिए, जिससे अर्थव्यवस्था पुनः विकास की ओर बढ़े।

**(b) संयमित आर्थिक नीतियाँ**

- कीन्स ने सुझाव दिया कि सरकार को मंदी के समय व्यय बढ़ाना चाहिए और आर्थिक उछाल के समय व्यय को घटाना चाहिए। इससे आर्थिक असंतुलन को नियंत्रित किया जा सकता है और दीर्घकालिक स्थिरता लाई जा सकती है।

**(c) बेरोजगारी और मांग की बढ़ोतरी**

- कीन्स ने कहा कि आर्थिक मंदी में सरकार द्वारा किए गए खर्च से रोजगार के अवसर उत्पन्न होंगे, जिससे लोगों की आय बढ़ेगी और उनकी क्रय शक्ति में सुधार होगा। इससे मांग बढ़ेगी और अर्थव्यवस्था में सुधार आएगा।

### 5.8.5 कीन्सियन नीतियों का प्रभाव और आलोचना

कीन्स के विचारों का प्रभाव 1930 के दशक में वैश्विक आर्थिक नीतियों पर पड़ा। अमेरिका और अन्य देशों ने उनकी सलाह पर बड़ी मात्रा में सरकारी खर्च को बढ़ावा दिया। इससे आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ और रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई। "न्यू डील" योजना के तहत अमेरिकी राष्ट्रपति फ्रैंकलिन डी. रूजवेल्ट ने कई सामाजिक और आर्थिक सुधार किए, जिससे अमेरिका की अर्थव्यवस्था धीरे-धीरे स्थिरता की ओर बढ़ी।

कीन्स के सिद्धांत की आलोचना भी की गई। कुछ अर्थशास्त्रियों का मानना था कि सरकारी खर्च से कर्ज बढ़ता है और इससे दीर्घकालिक अस्थिरता उत्पन्न हो सकती है। इसके अतिरिक्त, कीन्स के विचारों के खिलाफ मुक्त बाजार के समर्थक यह मानते थे कि सरकार का हस्तक्षेप अर्थव्यवस्था में विकृतियाँ उत्पन्न कर सकता है।

### 5.8.6 वर्तमान समय में कीन्सियन सिद्धांत का महत्व

कीन्सियन सिद्धांत आज भी प्रासंगिक है। 2008 की वैश्विक आर्थिक मंदी के समय कई देशों ने कीन्सियन नीतियों का पालन किया और अपने अर्थतंत्र को स्थिर करने के लिए सरकारी व्यय बढ़ाया। आज की आधुनिक अर्थव्यवस्थाओं में भी कीन्सियन सिद्धांत का महत्व है, विशेषकर जब आर्थिक संकट और मंदी का सामना किया जा रहा हो।

**(a) मुद्रास्फीति और आर्थिक मंदी में संतुलन**

- कीन्सियन सिद्धांत आर्थिक मंदी के दौरान मांग बढ़ाने और मुद्रास्फीति के समय व्यय को नियंत्रित करने का समर्थन करता है। इससे अर्थव्यवस्था में संतुलन बना रहता है।

**(b) सामाजिक कल्याण और सार्वजनिक व्यय**

- कीन्सियन सिद्धांत का उद्देश्य केवल आर्थिक वृद्धि नहीं, बल्कि सामाजिक कल्याण को भी बढ़ावा देना है। इसके लिए सार्वजनिक व्यय को बढ़ाकर रोजगार के अवसर और सामाजिक स्थिरता में सुधार लाया जाता है।

महान आर्थिक मंदी ने वैश्विक अर्थव्यवस्था को एक बड़े संकट में डाल दिया था, लेकिन जॉन मेनार्ड कीन्स के आर्थिक विचारों ने इस संकट से उबरने का एक नया रास्ता दिखाया। कीन्स के सिद्धांतों में सरकारी हस्तक्षेप, मांग की बढ़ोतरी, और सार्वजनिक व्यय पर जोर दिया गया है, जिससे आर्थिक मंदी के दौरान

आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा मिला। आधुनिक अर्थव्यवस्था में भी कीन्सियन नीतियों का महत्व बना हुआ है। इन नीतियों के माध्यम से दीर्घकालिक आर्थिक स्थिरता और सामाजिक कल्याण की दिशा में एक संतुलित रास्ता प्रदान किया जा सकता है।

### 5.9.0 निष्कर्ष

"आर्थिक विचारों के इतिहास में पर्यावरणीय चेतना" का अध्ययन हमें यह समझने में मदद करता है कि कैसे समय के साथ आर्थिक सोच में पर्यावरण के प्रति जागरूकता बढ़ी है। प्रारंभिक विचारों में जहाँ पर्यावरणीय चेतना का अभाव था, वहीं आज आर्थिक नीति निर्माण में पर्यावरण का प्रमुख स्थान है। आर्थिक विकास के साथ-साथ पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने की दिशा में बढ़ते कदम एक समृद्ध और सतत भविष्य की ओर संकेत करते हैं।

### 5.10 संदर्भ ग्रंथ सूची


1. **"Environmental and Natural Resource Economics"**
   लेखक: **Tom Tietenberg** और **Lynne Lewis**
   प्रकाशक: **Taylor & Francis, 13 March 2018, ISBN: 9781351803373**
2. **"Economics of the Environment: Selected Readings"**
   संपादक: **Robert N. Stavins**
   प्रकाशक: **Edward Elgar Publishing, 2019, ISBN: 9781788972079**
3. **विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: **Dr. Anupam Agarwal, Dr. Alok Gupta**
   प्रकाशक: **SBPD Publications, 6 July 2021, ISBN: 9789389585339**
4. **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: डॉ. वी.सी. सिन्हा, डॉ. रितिका सिन्हा
   प्रकाशक: **SBPD Publishing House, 8 July 2024, ISBN: 9788119142392**
5. **"The Economics of Climate Change: The Stern Review"**
   लेखक: Nicholas Stern
   प्रकाशक: Cambridge University Press


### 5.11 सामान्य बोध प्रश्न

1. **पर्यावरणीय चेतना का अर्थ क्या है?**
   (a) प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग
   (b) अधिक से अधिक उपभोग
   (c) केवल ऊर्जा संसाधनों का उपयोग
   (d) अर्थव्यवस्था का विकास
   **उत्तर:** (a) प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग
2. **संपोषणीय विकास का उद्देश्य क्या है?**
   (a) केवल वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करना
   (b) भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखे बिना विकास करना
   (c) वर्तमान और भविष्य दोनों की आवश्यकताओं को संतुलित करना
   (d) केवल औद्योगिक विकास
   **उत्तर:** (c) वर्तमान और भविष्य दोनों की आवश्यकताओं को संतुलित करना
3. **महान आर्थिक मंदी का मुख्य कारण क्या था?**
   (a) अत्यधिक निवेश और अटकलें
   (b) जनसंख्या में वृद्धि
   (c) मुद्रास्फीति

(d) तकनीकी प्रगति

**उत्तर:** (a) अत्यधिक निवेश और अटकलें

4. **कीन्स का सुझाव था कि आर्थिक मंदी से बाहर निकलने के लिए क्या किया जाना चाहिए?**
   (a) सरकारी व्यय में वृद्धि
   (b) निजी क्षेत्र में कटौती
   (c) उत्पादन को बंद करना
   (d) व्यापार पर रोक लगाना
   **उत्तर:** (a) सरकारी व्यय में वृद्धि
5. **संपोषणीय विकास में पूर्ति पक्ष की सीमा का अर्थ क्या है?**
   (a) अधिक उत्पादन की क्षमता
   (b) प्राकृतिक संसाधनों की सीमित उपलब्धता
   (c) उपभोग की अधिकता
   (d) अनंत संसाधन
   **उत्तर:** (b) प्राकृतिक संसाधनों की सीमित उपलब्धता
6. **कोस्ट सिद्धांत किसके समाधान के लिए लागू किया जाता है?**
   (a) बाजार के विकास के लिए
   (b) बाह्यताओं के प्रबंधन के लिए
   (c) केवल उत्पादन में वृद्धि के लिए
   (d) मुद्रा की स्थिरता के लिए
   **उत्तर:** (b) बाह्यताओं के प्रबंधन के लिए
7. **ब्रंटलैंड रिपोर्ट किस विषय से संबंधित है?**
   (a) व्यापार संतुलन
   (b) संपोषणीय विकास
   (c) मुद्रा नीति
   (d) कराधान
   **उत्तर:** (b) संपोषणीय विकास
8. **कीन्सियन अर्थशास्त्र में 'चक्रवृद्धि प्रभाव' (Multiplier Effect) का क्या अर्थ है?**
   (a) निवेश का बढ़ता हुआ प्रभाव
   (b) सरकार के खर्च का कई गुना असर
   (c) केवल निजी क्षेत्र का लाभ
   (d) बेरोजगारी का समाधान
   **उत्तर:** (b) सरकार के खर्च का कई गुना असर
9. **पर्यावरणीय चेतना का आरंभिक रूप में आर्थिक विचारों में कब समाहित होना शुरू हुआ?**
   (a) मरकेंटिलिज्म के दौरान
   (b) औद्योगिक क्रांति के समय
   (c) 20वीं शताब्दी के मध्य में
   (d) कृषि क्रांति के समय
   **उत्तर:** (c) 20वीं शताब्दी के मध्य में
10. **महान आर्थिक मंदी के दौरान अमेरिका के राष्ट्रपति फ्रैंकलिन डी. रूजवेल्ट ने किस योजना की शुरुआत की थी?**
    (a) न्यू डील
    (b) ग्रेट प्लान
    (c) इकोनॉमिक रिवाइवल

(d) ग्रोथ इनिशिएटिव

**उत्तर:** (a) न्यू डील

## 5.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. प्रारंभिक आर्थिक विचारों में पर्यावरणीय चेतना का क्या स्थान था?
2. औद्योगिक क्रांति का पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ा?
3. मॉल्थस के जनसंख्या सिद्धांत में संसाधनों की सीमाओं को कैसे दर्शाया गया है?
4. संपोषणीय विकास का उद्देश्य क्या है और इसमें पूर्ति पक्ष की सीमाएँ कैसे बाधक बनती हैं?
5. महान आर्थिक मंदी के दौरान किन कारकों ने आर्थिक संकट को गहरा बनाया?
6. कीन्स का आर्थिक संकट से उबरने के लिए दिया गया समाधान क्या था?
7. ब्रंटलैंड रिपोर्ट का क्या उद्देश्य था, और यह संपोषणीय विकास के लिए क्यों महत्वपूर्ण है?

# इकाई -06

# नवीन पर्यावरण सचेतक और आर्थिक विकास सम्बन्धी विचार : डेली, सोलो, और ई. एफ़ शूमाकर

**इकाई की रूपरेखा:**


**6.0 उद्देश्य**

**6.1 प्रस्तावना: नवीन पर्यावरण सचेतक और आर्थिक विकास संबंधी विचार**

- **6.1.1 पर्यावरणीय आर्थिक विकास की अवधारणा**
- **6.1.2 ग्रीन इकोनॉमी और उसके सिद्धांत**
- **6.1.3 पर्यावरण सचेतक आर्थिक नीतियाँ और उनका कार्यान्वयन**
- **6.1.4 नवीन पर्यावरण सचेतक विकास मॉडल**
- **6.1.5 नवीन पर्यावरणीय सोच के लाभ**
- **6.1.6 चुनौतियाँ और सीमाएँ**

**6.2 डेली और आर्थिक विकास संबंधी विचार**

- **6.2.1 पारंपरिक आर्थिक विकास के सिद्धांतों पर डेली की आलोचना**
- **6.2.2 डेली का स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था (Steady-State Economy) का सिद्धांत**
- **6.2.3 डेली के अनुसार विकास और पर्यावरण के बीच संबंध**
- **6.2.4 डेली के विचारों में ग्रीन इन्वेस्टमेंट और पर्यावरणीय कर की भूमिका**
- **6.2.5 डेली की स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था के लाभ**
- **6.2.6 स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था के कार्यान्वयन में चुनौतियाँ**

**6.3 सोलो और आर्थिक विकास संबंधी विचार**

**6.3.1 सोलो विकास मॉडल की अवधारणा**

- **6.3.2 सोलो मॉडल और सतत विकास**
- **6.3.3 सोलो के मॉडल की सीमाएँ**

**6.4. ई. एफ. शूमाकर और आर्थिक विकास संबंधी विचार**

- **6.4.1 शूमाकर के आर्थिक विचारों की मुख्य विशेषताएँ**
- **6.4.2 बौद्धिक अर्थशास्त्र (Buddhist Economics)**
- **6.4.3 उपयुक्त प्रौद्योगिकी (Appropriate Technology)**
- **6.4.4 पर्यावरणीय स्थिरता**
- **6.4.5 विकेन्द्रित विकास (Decentralized Development)**
- **6.4.6 शूमाकर के विचारों की आधुनिक प्रासंगिकता**

**6.5 निष्कर्ष**

**6.6 संदर्भ ग्रंथ सूची**

**6.7 सामान्य बोध प्रश्न**

**6.8 अभ्यासार्थ प्रश्न**

## 6.0 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप निम्न बिन्दुओं को भलीभॉति समझ जायेंगे?

- पर्यावरणीय चेतना का विकास
- स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था **(Steady-State Economy)** की अवधारणा
- तकनीकी प्रगति और सतत विकास के संबंध को समझना
- छोटे पैमाने पर विकास और स्थानीयता पर जोर
- सतत विकास के लिए ग्रीन इन्वेस्टमेंट और पर्यावरणीय कर
- समाज**,** अर्थव्यवस्था**,** और पर्यावरण के बीच संतुलन बनाना

## 6.1 प्रस्तावना: नवीन पर्यावरण सचेतक और आर्थिक विकास संबंधी विचार

21वीं सदी में पर्यावरणीय संकट और संसाधनों की कमी ने आर्थिक विकास के पारंपरिक मॉडलों पर सवाल खड़े कर दिए हैं। बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण, और औद्योगिक विकास ने प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन किया है, जिससे पर्यावरणीय असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हुई है। इस संकट को समझते हुए, आर्थिक विचारकों और नीति-निर्माताओं ने एक ऐसे विकास मॉडल की आवश्यकता महसूस की है जो पर्यावरण और आर्थिक विकास के बीच संतुलन स्थापित करे। इसे "पर्यावरण सचेतक आर्थिक विकास" या "ग्रीन इकोनॉमिक थिंकिंग" के रूप में जाना जाता है। इस विचार का मुख्य उद्देश्य एक ऐसा सतत विकास मॉडल तैयार करना है जो न केवल आर्थिक वृद्धि को बढ़ावा दे बल्कि पर्यावरणीय संतुलन भी बनाए रखे। इसे प्राप्त करने के लिए विभिन्न नवीन विचारों, सिद्धांतों, और नीतियों का विकास किया गया है। इस अध्याय में, हम इन्हीं नवीन पर्यावरण सचेतक विचारों का अध्ययन करेंगे, जिनका उद्देश्य आर्थिक विकास के साथ-साथ पर्यावरणीय संरक्षण को प्राथमिकता देना है।

### 6.1.1 पर्यावरणीय आर्थिक विकास की अवधारणा

पर्यावरणीय आर्थिक विकास का तात्पर्य एक ऐसे विकास मॉडल से है जो आर्थिक प्रगति के साथ-साथ पर्यावरणीय संतुलन को भी बनाए रखे। इस अवधारणा का उद्देश्य आर्थिक वृद्धि की प्रक्रिया में प्राकृतिक संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग को सुनिश्चित करना है ताकि पारिस्थितिकीय संतुलन बना रहे और दीर्घकालिक स्थिरता प्राप्त हो सके। पर्यावरणीय आर्थिक विकास का विचार इस मान्यता पर आधारित है कि आर्थिक विकास और पर्यावरणीय संरक्षण परस्पर विरोधी नहीं हैं, बल्कि इनका संतुलन बनाए रखना आवश्यक है।

इसमें नवीकरणीय ऊर्जा, सर्कुलर इकोनॉमी, हरित निवेश, और पुनर्चक्रण को बढ़ावा देकर कार्बन उत्सर्जन को घटाना, प्रदूषण को नियंत्रित करना और जैव विविधता का संरक्षण करना शामिल है। पर्यावरणीय आर्थिक विकास के लिए नीति-निर्माण में पर्यावरणीय कर (जैसे कार्बन टैक्स) का प्रावधान, सतत कृषि, और हरित उद्योगों को प्रोत्साहित करना आवश्यक है। इस अवधारणा का उद्देश्य वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को इस प्रकार पूरा करना है कि भविष्य की पीढ़ियाँ भी अपने संसाधनों का उपयोग कर सकें। इस प्रकार, पर्यावरणीय आर्थिक विकास एक संतुलित और स्थायी भविष्य की दिशा में एक आवश्यक कदम है।

#### (a) सतत विकास (Sustainable Development)

इस मॉडल में पर्यावरणीय सीमाओं का ध्यान रखते हुए विकास किया जाता है। सतत विकास का अर्थ है ऐसा विकास जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को इस प्रकार पूरा करता है कि भविष्य की पीढ़ियाँ भी अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर सकें। यह अवधारणा 1987 में ब्रंटलैंड रिपोर्ट के माध्यम से सामने आई थी, जिसमें आर्थिक प्रगति, सामाजिक समावेश, और पर्यावरणीय संतुलन के बीच एक संतुलित दृष्टिकोण अपनाने पर बल दिया गया था।

सतत विकास के तीन प्रमुख स्तंभ हैं: आर्थिक, सामाजिक, और पर्यावरणीय। आर्थिक स्तंभ का उद्देश्य आर्थिक गतिविधियों को इस प्रकार संचालित करना है कि विकास और रोजगार सृजन को बढ़ावा मिले।

सामाजिक स्तंभ सभी के लिए समान अवसर, शिक्षा, स्वास्थ्य, और कल्याण सुनिश्चित करता है। पर्यावरणीय स्तंभ प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और प्रदूषण नियंत्रण पर ध्यान केंद्रित करता है ताकि पारिस्थितिकी तंत्र सुरक्षित रहे। सतत विकास को प्राप्त करने के लिए नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग, जैविक कृषि, और अपशिष्ट प्रबंधन जैसे कदम आवश्यक हैं। साथ ही, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने और कार्बन फुटप्रिंट घटाने की दिशा में नीतियाँ भी महत्वपूर्ण हैं। सतत विकास एक संतुलित भविष्य की ओर बढ़ने का मार्ग है जो वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों की उपलब्धता को सुनिश्चित करता है।

**(b) ग्रीन इकोनॉमी**

ग्रीन इकोनॉमी का उद्देश्य है कि आर्थिक विकास में ऐसे उपाय अपनाए जाएँ जो पर्यावरणीय नुकसान को कम करें और समाज में स्थिरता लाएँ। इसमें नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग, अपशिष्ट प्रबंधन, और जैव विविधता का संरक्षण प्रमुख भूमिका निभाते हैं। ग्रीन इकोनॉमी का उद्देश्य एक ऐसा आर्थिक ढाँचा तैयार करना है जो पर्यावरणीय स्थिरता और आर्थिक विकास को संतुलित कर सके। इसका फोकस इस बात पर है कि आर्थिक गतिविधियाँ पर्यावरण को नुकसान पहुँचाए बिना संसाधनों का उपयोग करें और दीर्घकालिक विकास सुनिश्चित करें। ग्रीन इकोनॉमी में नवीकरणीय ऊर्जा, जैविक कृषि, सर्कुलर इकोनॉमी, और अपशिष्ट प्रबंधन जैसे उपायों को अपनाकर प्रदूषण कम करने, कार्बन उत्सर्जन घटाने और प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करने पर जोर दिया जाता है।

### 6.1.2 ग्रीन इकोनॉमी और उसके सिद्धांत

ग्रीन इकोनॉमी का विचार आर्थिक विकास को पर्यावरणीय दृष्टि से अनुकूल बनाता है। इस अवधारणा का उद्देश्य एक ऐसा आर्थिक मॉडल विकसित करना है जो ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करे, प्रदूषण घटाए, और जैव विविधता को बढ़ावा दे। इस मॉडल में पर्यावरणीय कर (जैसे कार्बन टैक्स) और ग्रीन इन्वेस्टमेंट को प्रोत्साहन दिया जाता है ताकि पर्यावरण के अनुकूल तकनीकों को बढ़ावा मिले। ग्रीन इकोनॉमी न केवल पर्यावरण की रक्षा करती है, बल्कि इसके माध्यम से ग्रीन रोजगार के नए अवसर भी उत्पन्न होते हैं, जिससे सामाजिक और आर्थिक स्थिरता को भी बल मिलता है। ग्रीन इकोनॉमी का लक्ष्य एक ऐसे विकास मॉडल को अपनाना है जो प्राकृतिक संसाधनों का सतत उपयोग करे और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी लाए। इस प्रकार, यह एक स्थायी भविष्य के लिए पर्यावरणीय और आर्थिक लक्ष्यों के बीच एक संतुलन स्थापित करने का प्रयास है।

**(a) नवीकरणीय ऊर्जा का विकास**

ग्रीन इकोनॉमी के अंतर्गत सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, और जल ऊर्जा जैसे नवीकरणीय स्रोतों का उपयोग बढ़ाने का प्रयास किया जाता है। इससे ऊर्जा उत्पादन में पर्यावरणीय प्रभाव कम होता है और कार्बन फुटप्रिंट घटता है। नवीकरणीय ऊर्जा का विकास एक स्थायी और स्वच्छ ऊर्जा भविष्य की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इसमें सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल विद्युत, बायोमास, और भू-तापीय ऊर्जा जैसे संसाधनों का उपयोग शामिल है, जो लगातार प्राकृतिक रूप से पुनः उत्पन्न होते हैं और कार्बन उत्सर्जन को कम करने में सहायक होते हैं। इन ऊर्जा स्रोतों का मुख्य लाभ यह है कि ये पारंपरिक जीवाश्म ईंधनों की तुलना में प्रदूषण नहीं फैलाते, जिससे पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में मदद मिलती है। वर्तमान में, दुनिया भर के कई देश नवीकरणीय ऊर्जा में निवेश बढ़ा रहे हैं। सौर और पवन ऊर्जा में तकनीकी प्रगति के साथ उनकी लागत में कमी आ रही है, जिससे इनका उपयोग व्यापक रूप से बढ़ रहा है। ग्रीन एनर्जी सब्सिडी, कर प्रोत्साहन, और तकनीकी नवाचार जैसे प्रयास नवीकरणीय ऊर्जा के विकास को बढ़ावा दे रहे हैं।

नवीकरणीय ऊर्जा का विकास न केवल ऊर्जा सुरक्षा को सुनिश्चित करता है, बल्कि रोजगार के नए अवसर भी प्रदान करता है और ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली पहुँचाने में सहायक होता है। यह दीर्घकालिक आर्थिक स्थिरता और पर्यावरणीय सुरक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण साधन है, जो एक सतत और स्वच्छ भविष्य का मार्ग प्रशस्त करता है।

**(b) पर्यावरणीय कर**

पर्यावरणीय कर, जिन्हें पिगुवियन कर भी कहा जाता है, का उद्देश्य उन गतिविधियों पर कर लगाना है जो पर्यावरण को नुकसान पहुँचाती हैं। उदाहरण के लिए, कार्बन टैक्स का उद्देश्य कार्बन उत्सर्जन को नियंत्रित करना है। इससे प्रदूषणकारी गतिविधियों को हतोत्साहित किया जा सकता है। इसका उद्देश्य प्रदूषण और संसाधनों के अनियंत्रित उपयोग को हतोत्साहित करना है। पर्यावरणीय करों का मुख्य उद्देश्य प्रदूषणकारी गतिविधियों से होने वाले बाह्य प्रभावों की भरपाई करना और पर्यावरण को संरक्षित रखना है। इसका एक सामान्य उदाहरण कार्बन टैक्स है, जो जीवाश्म ईंधनों के जलने से होने वाले कार्बन उत्सर्जन को नियंत्रित करने के लिए लगाया जाता है।

पर्यावरणीय कर प्रदूषण को घटाने और नवीकरणीय ऊर्जा के उपयोग को बढ़ावा देने में सहायक होते हैं। जब कंपनियाँ या व्यक्ति पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने वाली गतिविधियों में लिप्त होते हैं, तो इस कर के माध्यम से उन्हें उस क्षति के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है। इससे प्रदूषणकारी कंपनियों पर आर्थिक दबाव बनता है, जो उन्हें अधिक पर्यावरणीय रूप से अनुकूल विकल्प अपनाने के लिए प्रेरित करता है।

पर्यावरणीय कर से मिलने वाले राजस्व का उपयोग अक्सर हरित प्रौद्योगिकी, नवीकरणीय ऊर्जा विकास, और पर्यावरणीय संरक्षण परियोजनाओं में किया जाता है। इस प्रकार, पर्यावरणीय कर एक प्रभावी साधन है जो सतत विकास और स्वच्छ पर्यावरण के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायक है।

**(c) सर्कुलर इकोनॉमी**

सर्कुलर इकोनॉमी एक आर्थिक प्रणाली है जिसका उद्देश्य संसाधनों का पुनर्चक्रण, पुन:उपयोग, और अधिकतम संरक्षण करना है ताकि अपशिष्ट को कम किया जा सके और पर्यावरणीय संतुलन बना रहे। इसके विपरीत, पारंपरिक लीनियर इकोनॉमी में संसाधनों का उपयोग "उत्पादन, उपभोग, और निपटान" के मॉडल पर आधारित होता है, जिसमें कचरे की मात्रा बढ़ती है। सर्कुलर इकोनॉमी का लक्ष्य कचरे को कम करना और संसाधनों का चक्रीय रूप से उपयोग करना है ताकि उनका दोहन सीमित हो और पर्यावरणीय क्षति रोकी जा सके।

इस मॉडल में उत्पाद डिज़ाइन, उत्पादन, और उपभोग के हर चरण में संसाधनों के पुनर्चक्रण और पुनःउपयोग पर ध्यान दिया जाता है। सर्कुलर इकोनॉमी के सिद्धांत में उत्पादों को इस प्रकार डिजाइन करना शामिल है कि वे लंबे समय तक टिक सकें और उनका पुनर्चक्रण आसानी से किया जा सके। इसके अलावा, इस मॉडल में कचरे को नए संसाधनों में बदलने की प्रक्रियाओं को प्रोत्साहित किया जाता है।

सर्कुलर इकोनॉमी से न केवल प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण होता है, बल्कि यह आर्थिक स्थिरता और सतत विकास में भी सहायक है। यह मॉडल अधिक ऊर्जा-कुशल और पर्यावरण के अनुकूल है, जो भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक स्वच्छ और स्थायी दुनिया का निर्माण करता है।

**(d) ग्रीन इन्वेस्टमेंट और रोजगार**

ग्रीन इन्वेस्टमेंट का उद्देश्य पर्यावरणीय स्थिरता को बढ़ावा देते हुए आर्थिक विकास और रोजगार के अवसर पैदा करना है। इसमें उन क्षेत्रों में निवेश किया जाता है जो पर्यावरण को सुरक्षित रखते हुए विकास में योगदान देते हैं, जैसे नवीकरणीय ऊर्जा, जैविक कृषि, जल संरक्षण, और ग्रीन तकनीक। ग्रीन इन्वेस्टमेंट से न केवल कार्बन उत्सर्जन में कमी आती है, बल्कि यह सतत विकास के लक्ष्यों को भी पूरा करता है।

ग्रीन इन्वेस्टमेंट से रोजगार के नए अवसर भी उत्पन्न होते हैं जिन्हें "ग्रीन जॉब्स" कहा जाता है। उदाहरण के लिए, सौर ऊर्जा और पवन ऊर्जा के क्षेत्र में तकनीकी कर्मियों, इंजीनियरों, और शोधकर्ताओं की आवश्यकता होती है। इसके अलावा, अपशिष्ट प्रबंधन, पुनर्चक्रण, और हरित भवन निर्माण में भी ग्रीन रोजगार का बड़ा योगदान है। ये रोजगार न केवल आर्थिक स्थिरता प्रदान करते हैं बल्कि लंबे समय में पर्यावरण के अनुकूल अर्थव्यवस्था के निर्माण में भी सहायक होते हैं। ग्रीन इन्वेस्टमेंट से प्रदूषण कम होता है, ऊर्जा की खपत में कमी आती है, और पारिस्थितिकी तंत्र को सुरक्षित रखा जा सकता है। इस प्रकार, ग्रीन इन्वेस्टमेंट और ग्रीन रोजगार पर्यावरणीय और आर्थिक लक्ष्यों के बीच एक संतुलन स्थापित करने का मार्ग प्रदान करते हैं।

### 6.1.3 पर्यावरण सचेतक आर्थिक नीतियाँ और उनका कार्यान्वयन

पर्यावरण सचेतक आर्थिक विकास की दिशा में विभिन्न देशों ने कई नीतियाँ लागू की हैं। इन नीतियों का उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना, प्रदूषण को कम करना और सतत विकास को बढ़ावा देना है।

#### (a) कार्बन क्रेडिट प्रणाली

- कार्बन क्रेडिट प्रणाली एक प्रकार का व्यापारिक तंत्र है जहाँ कंपनियों को एक निश्चित सीमा तक कार्बन उत्सर्जन की अनुमति दी जाती है। यदि कोई कंपनी अपनी सीमा से कम उत्सर्जन करती है, तो वह अपने बचाए गए क्रेडिट को दूसरी कंपनी को बेच सकती है। इससे उत्सर्जन को सीमित करने में मदद मिलती है।

#### (b) पर्यावरणीय शिक्षा

- पर्यावरणीय शिक्षा के माध्यम से समाज में जागरूकता बढ़ाई जाती है। इसका उद्देश्य लोगों को पर्यावरण के महत्व और सतत विकास की आवश्यकता के प्रति सचेत करना है। इससे व्यक्ति और उद्योग अपने कार्यों में पर्यावरण का ध्यान रखते हैं।

#### (c) सार्वजनिक परिवहन को प्रोत्साहन

- यातायात क्षेत्र में प्रदूषण को कम करने के लिए सरकारें सार्वजनिक परिवहन का विकास करती हैं। इससे वाहनों की संख्या कम होती है और कार्बन उत्सर्जन में कमी आती है।

#### (d) अपशिष्ट प्रबंधन नीतियाँ

- कचरे का उचित निपटान और पुनर्चक्रण अपशिष्ट प्रबंधन की प्रमुख गतिविधियाँ हैं। इसके माध्यम से कचरे का पुनः उपयोग करके संसाधनों को बचाया जा सकता है और पर्यावरणीय क्षति को रोका जा सकता है।

### 6.1.4 नवीन पर्यावरण सचेतक विकास मॉडल

नवीन विकास मॉडल पर्यावरणीय संरक्षण और आर्थिक विकास के सामंजस्य को ध्यान में रखते हुए तैयार किए जाते हैं। इस मॉडल में विशेष रूप से ध्यान दिया जाता है कि आर्थिक गतिविधियाँ पर्यावरण के अनुकूल हों।

#### (a) नीली अर्थव्यवस्था (Blue Economy)

नीली अर्थव्यवस्था का उद्देश्य समुद्री और तटीय संसाधनों का सतत और संतुलित उपयोग करना है ताकि आर्थिक विकास, पर्यावरणीय स्थिरता, और सामुदायिक कल्याण को बढ़ावा मिल सके। इस अवधारणा के अंतर्गत समुद्र से जुड़े उद्योगों, जैसे मत्स्य पालन, समुद्री परिवहन, तटीय पर्यटन, और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों (जैसे ज्वार-भाटा और पवन ऊर्जा) को पर्यावरण के अनुकूल तरीके से विकसित करना शामिल है।

नीली अर्थव्यवस्था का विकास जैव विविधता के संरक्षण और समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र को संतुलित बनाए रखने पर आधारित है। इसका एक मुख्य उद्देश्य समुद्र से मिलने वाले लाभों को अधिकतम करना है, लेकिन इस प्रकार कि यह संसाधनों का अत्यधिक दोहन न करे और समुद्री जीवन को हानि न पहुँचे। नीली अर्थव्यवस्था में प्रदूषण को नियंत्रित करने, अपशिष्ट प्रबंधन, और समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

समुद्री उद्योगों के सतत विकास के माध्यम से नीली अर्थव्यवस्था रोजगार के नए अवसर प्रदान करती है, विशेषकर तटीय और द्वीपीय क्षेत्रों में। यह न केवल आर्थिक विकास में सहायक है, बल्कि पर्यावरणीय चुनौतियों, जैसे समुद्री प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन, से निपटने में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। नीली अर्थव्यवस्था एक संतुलित और टिकाऊ भविष्य की दिशा में समुद्री संसाधनों के जिम्मेदार उपयोग का मार्ग प्रस्तुत करती है।

#### (b) स्मार्ट शहर (Smart Cities)

- स्मार्ट सिटी योजना का उद्देश्य शहरीकरण को पर्यावरण के अनुकूल बनाना है। इसमें स्वच्छ ऊर्जा का उपयोग, अपशिष्ट प्रबंधन, हरित आवास और डिजिटल तकनीक का समावेश है, जो एक सस्टेनेबल शहरी विकास को संभव बनाता है।

**(c) हरित कृषि**

हरित कृषि एक ऐसा कृषि पद्धति है जो पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखते हुए उत्पादन बढ़ाने पर केंद्रित है। इसमें रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के बजाय जैविक खाद, प्राकृतिक कीटनाशक, और पारंपरिक कृषि विधियों का उपयोग किया जाता है। हरित कृषि का उद्देश्य मृदा की गुणवत्ता, जल संसाधनों का संरक्षण, और जैव विविधता का संरक्षण करना है।

इस पद्धति से न केवल उत्पादों की गुणवत्ता बढ़ती है, बल्कि यह स्वास्थ्य के लिए भी लाभकारी होती है और पर्यावरणीय क्षति को कम करती है। हरित कृषि से सतत और पर्यावरण-अनुकूल कृषि प्रणाली का विकास होता है, जो दीर्घकालिक खाद्य सुरक्षा में सहायक है।

हरित कृषि का उद्देश्य रसायनों का उपयोग कम कर जैविक कृषि को बढ़ावा देना है। जैविक खेती से मृदा की गुणवत्ता बनी रहती है और जल, भूमि और वायु पर नकारात्मक प्रभाव कम होता है।

**(d) वृक्षारोपण और वनीकरण**

- पर्यावरण संरक्षण के लिए वन क्षेत्र का विस्तार एक महत्वपूर्ण कदम है। वृक्षारोपण और वनीकरण से कार्बन सोखने की क्षमता बढ़ती है और जैव विविधता का संरक्षण होता है।

### 6.1.5 नवीन पर्यावरणीय सोच के लाभ

**(a) पर्यावरण संरक्षण**

- नवीन पर्यावरण सचेतक मॉडल के माध्यम से पर्यावरण का संतुलन बनाए रखने में मदद मिलती है। प्रदूषण नियंत्रण, जलवायु परिवर्तन का सामना और जैव विविधता का संरक्षण इन मॉडलों के प्रमुख लाभ हैं।

**(b) लंबी अवधि में आर्थिक स्थिरता**

- पर्यावरण सचेतक विकास मॉडल प्राकृतिक संसाधनों का सतत उपयोग करते हैं। इससे दीर्घकालिक आर्थिक स्थिरता प्राप्त होती है और आर्थिक गतिविधियाँ पर्यावरण को नुकसान पहुँचाए बिना संचालित होती हैं।

**(c) स्वास्थ्य और जीवन की गुणवत्ता में सुधार**

- हरित नीतियों के कार्यान्वयन से वायु और जल प्रदूषण में कमी आती है, जिससे लोगों का स्वास्थ्य बेहतर होता है और जीवन की गुणवत्ता में सुधार होता है।

**(d) नए रोजगार के अवसर**

- ग्रीन सेक्टर में निवेश से ग्रीन रोजगार के अवसर उत्पन्न होते हैं। यह रोजगार सतत विकास में योगदान देते हैं और रोजगार की उपलब्धता में वृद्धि करते हैं।

### 6.1.6 चुनौतियाँ और सीमाएँ

**(a) उच्च लागत**

- ग्रीन प्रौद्योगिकी और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों की स्थापना की प्रारंभिक लागत अधिक होती है, जिससे कई विकासशील देशों के लिए इसे अपनाना चुनौतीपूर्ण है।

**(b) नीति और कार्यान्वयन में अंतर**

- पर्यावरणीय नीतियाँ बनाना आसान है, लेकिन उनका प्रभावी कार्यान्वयन चुनौतीपूर्ण हो सकता है। भ्रष्टाचार, राजनीतिक अस्थिरता, और जन जागरूकता की कमी इसके प्रमुख कारण हैं।

**(c) अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की कमी**

- पर्यावरणीय संकटों का समाधान अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सहयोग के बिना संभव नहीं है। लेकिन सभी देशों की प्राथमिकताएँ अलग-अलग होने के कारण यह एक कठिन कार्य बन जाता है।

## 6.2 डेली और आर्थिक विकास संबंधी विचार

हरमन डेली, एक प्रमुख पर्यावरणीय अर्थशास्त्री, ने आर्थिक विकास और पर्यावरण के बीच संतुलन बनाए रखने पर जोर दिया। उनका मानना था कि असीमित आर्थिक विकास की अवधारणा पृथ्वी के सीमित संसाधनों के साथ असंगत है। उन्होंने "स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था" (Steady-State Economy) का विचार

प्रस्तुत किया, जिसमें आर्थिक विकास को प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता के अनुरूप सीमित किया जाना चाहिए।

डेली का मानना था कि पारंपरिक आर्थिक मॉडलें, जो असीमित वृद्धि पर आधारित हैं, प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन और पर्यावरणीय क्षति को बढ़ावा देती हैं। इसके बजाय, उन्होंने सुझाव दिया कि अर्थव्यवस्था को एक स्थिर स्थिति में बनाए रखना चाहिए, जहाँ संसाधनों का उपभोग और उत्पादन पर्यावरण के पुनरुत्पादन और पुनःपूर्ति की क्षमता के अनुरूप हो।

डेली ने पर्यावरणीय कर, नवीकरणीय संसाधनों का संरक्षण, और अपशिष्ट प्रबंधन जैसी नीतियों पर जोर दिया, ताकि आर्थिक गतिविधियों का पर्यावरणीय प्रभाव कम किया जा सके। उनके विचारों का उद्देश्य एक ऐसी सतत अर्थव्यवस्था बनाना था, जो आने वाली पीढ़ियों के लिए भी संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित कर सके।

### 6.2.1 पारंपरिक आर्थिक विकास के सिद्धांतों पर डेली की आलोचना

पारंपरिक आर्थिक विकास मॉडल का उद्देश्य है अधिक से अधिक उत्पादन और उपभोग, जिसमें राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक वृद्धि को मापने के लिए जीडीपी (सकल घरेलू उत्पाद) जैसे संकेतकों का उपयोग किया जाता है। इस मॉडल में यह माना जाता है कि विकास अनंत हो सकता है और किसी प्रकार की भौतिक सीमा नहीं है। हरमन डेली ने इस विचार का कड़ा विरोध किया और इसे पर्यावरणीय दृष्टिकोण से असंगत माना।

डेली के अनुसार, प्राकृतिक संसाधन सीमित हैं और उनका असीमित दोहन अस्थिरता का कारण बन सकता है। उन्होंने बताया कि जिस प्रकार अर्थव्यवस्था और पर्यावरण का संबंध है, उसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। उन्होंने चेतावनी दी कि जब संसाधनों का उपयोग उनकी पुनःपूर्ति दर से अधिक हो जाता है, तब पर्यावरणीय असंतुलन पैदा होता है, जिससे जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, और जैव विविधता का ह्रास जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

### 6.2.2 डेली का स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था (Steady-State Economy) का सिद्धांत

डेली का मुख्य विचार एक स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था (Steady-State Economy) का था, जिसमें संसाधनों के उपयोग, उत्पादन और खपत को सीमित रखा जाए ताकि पर्यावरणीय संतुलन बना रहे। इस सिद्धांत के अनुसार, आर्थिक गतिविधियों का विस्तार तभी तक किया जाना चाहिए जब तक कि यह पर्यावरणीय क्षमता के अंतर्गत हो।

#### (a) आर्थिक और पारिस्थितिकीय संतुलन

- स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था का उद्देश्य अर्थव्यवस्था और पारिस्थितिकी के बीच संतुलन बनाना है। डेली ने कहा कि आर्थिक विकास के बजाय अर्थव्यवस्था को एक स्थिर स्थिति में रखने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए, जहाँ संसाधनों का पुनःउपयोग हो सके और अपशिष्ट उत्पादन कम से कम हो।

#### (b) पर्यावरणीय पूँजी की अवधारणा

- डेली ने पर्यावरणीय पूँजी का विचार प्रस्तुत किया, जिसमें कहा गया कि आर्थिक गतिविधियाँ पर्यावरणीय पूँजी के रूप में संसाधनों का उपयोग करती हैं, जिन्हें पुनः उत्पन्न किया जाना आवश्यक है। इसका अर्थ है कि प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग उनकी पुनःपूर्ति दर से अधिक नहीं होना चाहिए।

#### (c) अर्थव्यवस्था का आकार और सीमाएँ

- डेली का मानना था कि अर्थव्यवस्था का आकार पर्यावरणीय क्षमता के अनुरूप होना चाहिए। उन्होंने सुझाव दिया कि विकास की सीमाएँ होनी चाहिए और उसे पर्यावरण की वहन क्षमता के अनुसार सीमित करना चाहिए।

### 6.2.3 डेली के अनुसार विकास और पर्यावरण के बीच संबंध

हरमन डेली के अनुसार, विकास और पर्यावरण का संबंध गहरा और परस्पर निर्भर है। उनका मानना था कि आर्थिक विकास अनियंत्रित रूप से नहीं हो सकता क्योंकि पृथ्वी के संसाधन सीमित हैं। डेली का विचार

था कि पारंपरिक विकास मॉडल, जो असीमित आर्थिक वृद्धि को प्रोत्साहित करते हैं, पर्यावरणीय असंतुलन का कारण बनते हैं और प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन करते हैं।
डेली ने इस पर बल दिया कि विकास को उस सीमा तक सीमित किया जाना चाहिए जो पर्यावरण सहन कर सके। उन्होंने "स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था" का सिद्धांत प्रस्तुत किया, जिसमें संसाधनों के उपयोग और उत्पादन को पारिस्थितिकी तंत्र की क्षमता के अनुसार संतुलित करने की बात कही गई है। उनके अनुसार, विकास का उद्देश्य केवल आर्थिक वृद्धि नहीं होना चाहिए, बल्कि यह पर्यावरणीय संतुलन और प्राकृतिक संसाधनों का सतत उपयोग सुनिश्चित करना भी होना चाहिए।
डेली का दृष्टिकोण एक सतत और संतुलित आर्थिक प्रणाली की आवश्यकता को रेखांकित करता है, जहाँ विकास पर्यावरण के अनुकूल हो और भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों की उपलब्धता बनी रहे।
उन्होंने तीन प्रमुख सिद्धांत प्रस्तुत किए:

**(a) विकास की भौतिक सीमाएँ**

- डेली के अनुसार, विकास की भौतिक सीमाएँ होती हैं, जो संसाधनों की सीमित उपलब्धता और पर्यावरणीय पुनःपूर्ति क्षमता पर आधारित हैं। उन्होंने कहा कि आर्थिक गतिविधियाँ केवल उन्हीं सीमाओं के अंतर्गत होनी चाहिए।

**(b) उपभोग का संयमित उपयोग**

- डेली ने संसाधनों के संयमित उपयोग पर जोर दिया, ताकि उनके दीर्घकालिक उपयोग की संभावना बनी रहे। उनके अनुसार, उपभोग की अत्यधिक प्रवृत्ति को नियंत्रित करने के लिए संसाधनों का संतुलित और संयमित उपयोग आवश्यक है।

**(c) पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखना**

- डेली का मानना था कि विकास का उद्देश्य केवल आर्थिक लाभ तक सीमित नहीं होना चाहिए। इसके बजाय, यह पर्यावरणीय और पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखने के लिए भी महत्वपूर्ण होना चाहिए।

### 6.2.4 डेली के विचारों में ग्रीन इन्वेस्टमेंट और पर्यावरणीय कर की भूमिका

डेली ने पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान ढूँढने के लिए ग्रीन इन्वेस्टमेंट और पर्यावरणीय कर का सुझाव दिया। उनका मानना था कि प्रदूषण और पर्यावरणीय क्षति जैसी समस्याओं को हल करने के लिए आर्थिक उपाय आवश्यक हैं।

**(a) ग्रीन इन्वेस्टमेंट**

- डेली ने कहा कि ग्रीन इन्वेस्टमेंट, जैसे नवीकरणीय ऊर्जा, जैविक कृषि, और जल संरक्षण, एक स्थिर अर्थव्यवस्था के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। इसके माध्यम से संसाधनों का सतत उपयोग सुनिश्चित किया जा सकता है।

**(b) पर्यावरणीय कर (Environmental Tax)**

- डेली ने प्रदूषणकारी गतिविधियों को नियंत्रित करने के लिए पर्यावरणीय कर की सिफारिश की। उन्होंने पिगुवियन कर का समर्थन किया, जिसमें प्रदूषण और अपशिष्ट उत्पादन पर कर लगाया जाता है। इससे प्रदूषणकारी उद्योगों को पर्यावरणीय उपाय अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।

### 6.2.5 डेली की स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था के लाभ

डेली की स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था का उद्देश्य दीर्घकालिक स्थिरता और पर्यावरणीय संतुलन को सुनिश्चित करना है। इस सिद्धांत के कई लाभ हैं:

**(a) संसाधनों का संरक्षण**

- स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था में संसाधनों का संतुलित उपयोग होता है, जिससे उनका दीर्घकालिक संरक्षण होता है। इसका उद्देश्य संसाधनों की अत्यधिक खपत को रोकना और पारिस्थितिकी तंत्र की सुरक्षा करना है।

**(b) पर्यावरणीय संरक्षण**

- डेली का मॉडल पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखने के लिए बनाया गया है। इससे वायु, जल, और मृदा प्रदूषण को कम करने में मदद मिलती है।

**(c) सामाजिक स्थिरता**

- इस मॉडल का उद्देश्य सामाजिक स्थिरता को भी बनाए रखना है। जब संसाधनों का सीमित उपयोग होता है, तो सामाजिक असमानता कम होती है और समाज में शांति का वातावरण बनता है।

### 6.2.6 स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था के कार्यान्वयन में चुनौतियाँ

डेली के विचारों का कार्यान्वयन कई चुनौतियों से भरा है। आधुनिक अर्थव्यवस्था, जो अधिक उत्पादन और उपभोग पर आधारित है, स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था के सिद्धांतों के अनुसार संचालित करना आसान नहीं है।

**(a) उच्च उपभोग प्रवृत्ति**

- आधुनिक समाज में उपभोग की अत्यधिक प्रवृत्ति है, जो स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था की सोच के विपरीत है। इससे संसाधनों का अत्यधिक दोहन होता है और पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

**(b) राजनीतिक और आर्थिक बाधाएँ**

- डेली के विचारों के कार्यान्वयन में राजनीतिक और आर्थिक बाधाएँ भी हैं। सरकारों के लिए तात्कालिक आर्थिक लाभ को त्यागकर दीर्घकालिक स्थिरता पर ध्यान केंद्रित करना कठिन हो सकता है।

**(c) प्रौद्योगिकी की सीमाएँ**

- डेली का मानना था कि तकनीकी नवाचार संसाधनों के उपयोग को कम कर सकते हैं, लेकिन इसकी भी अपनी सीमाएँ हैं। तकनीक हमेशा संसाधनों की समस्या का हल नहीं कर सकती है, खासकर जब अनव्यकरणीय संसाधनों का उपयोग होता है।

## 6.3 सोलो और आर्थिक विकास संबंधी विचार

रॉबर्ट सोलो, एक प्रमुख अमेरिकी अर्थशास्त्री और नोबेल पुरस्कार विजेता, ने आर्थिक विकास के सिद्धांतों में महत्वपूर्ण योगदान दिया। सोलो का विकास संबंधी विचार एक विशेष आर्थिक मॉडल के रूप में प्रस्तुत किया गया जिसे "सोलो विकास मॉडल" या "सोलो-सवान मॉडल" कहा जाता है। यह मॉडल आर्थिक वृद्धि और विकास के निर्धारकों को समझने में मदद करता है और पूँजी, श्रम, और तकनीकी प्रगति के बीच संबंध को स्पष्ट करता है।

### 6.3.1 सोलो विकास मॉडल की अवधारणा

सोलो विकास मॉडल का मुख्य उद्देश्य यह समझना था कि दीर्घकालिक आर्थिक विकास कैसे होता है और किन कारकों पर निर्भर करता है। पारंपरिक विकास मॉडल, जिसमें पूँजी और श्रम को प्रमुख घटकों के रूप में देखा गया, ने आर्थिक वृद्धि को संतुलित नहीं किया। सोलो ने इस समस्या का समाधान करते हुए अपने मॉडल में तकनीकी प्रगति को एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में शामिल किया। उनके अनुसार, पूँजी और श्रम की वृद्धि से विकास संभव है, लेकिन तकनीकी प्रगति के बिना यह स्थायी नहीं हो सकता।

**(a) पूँजी और श्रम का योगदान**

- सोलो का मानना था कि पूँजी और श्रम केवल प्रारंभिक चरणों में ही आर्थिक विकास में सहायक हो सकते हैं। जैसे-जैसे पूँजी और श्रम में वृद्धि होती है, विकास की दर धीमी पड़ जाती है, जिसे "घटती उपज का नियम" (Law of Diminishing Returns) कहा जाता है। इस स्थिति में, विकास की गति को बनाए रखने के लिए तकनीकी प्रगति आवश्यक होती है।

**(b) तकनीकी प्रगति का महत्व**

- सोलो मॉडल में तकनीकी प्रगति को दीर्घकालिक आर्थिक वृद्धि का प्रमुख कारक माना गया है। उनके अनुसार, तकनीकी प्रगति से उत्पादकता में वृद्धि होती है और सीमित पूँजी और श्रम के

बावजूद आर्थिक विकास संभव होता है। तकनीकी प्रगति से न केवल उत्पादन लागत में कमी आती है, बल्कि अधिक दक्षता से संसाधनों का उपयोग भी होता है।

### 6.3.2 सोलो मॉडल और सतत विकास

रॉबर्ट सोलो के अनुसार, केवल पूँजी और श्रम में वृद्धि से दीर्घकालिक आर्थिक विकास संभव नहीं है, क्योंकि "घटती उपज का नियम" के अनुसार, इन दोनों कारकों से विकास की दर समय के साथ घटती जाती है। सोलो ने दिखाया कि दीर्घकालिक विकास के लिए तकनीकी प्रगति महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह उत्पादकता में वृद्धि करती है और संसाधनों का अधिक कुशल उपयोग सुनिश्चित करती है।

सतत विकास के संदर्भ में, सोलो मॉडल की विशेष भूमिका है। यह सुझाव देता है कि विकास को बनाए रखने के लिए हमें ऐसे तकनीकी नवाचारों को अपनाना चाहिए जो पर्यावरण को क्षति पहुँचाए बिना संसाधनों का कुशलता से उपयोग करें। आधुनिक समय में, सोलो मॉडल का विस्तार पर्यावरणीय और सामाजिक कारकों को शामिल करते हुए किया गया है ताकि विकास को संतुलित और टिकाऊ बनाया जा सके। इस प्रकार, सोलो मॉडल सतत विकास के लक्ष्यों के प्रति जागरूकता बढ़ाता है और भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक स्थायी आर्थिक संरचना की आवश्यकता को दर्शाता है।

सोलो का मॉडल दीर्घकालिक आर्थिक विकास के लिए स्थिरता की ओर इशारा करता है। सोलो के अनुसार, केवल पूँजी और श्रम में वृद्धि से दीर्घकालिक विकास नहीं हो सकता; इसके लिए सतत और प्रगतिशील तकनीकी बदलाव आवश्यक हैं। इस सिद्धांत का संबंध पर्यावरणीय संसाधनों के सीमित उपयोग और पर्यावरण संरक्षण से भी जोड़ा जा सकता है। आधुनिक समय में, सोलो मॉडल का विस्तार करते हुए स्थायी और पर्यावरणीय अनुकूल विकास की अवधारणा को अपनाया गया है, जहाँ विकास और पर्यावरणीय संतुलन पर भी ध्यान दिया गया है।

### 6.3.3 सोलो के मॉडल की सीमाएँ

हालांकि सोलो मॉडल ने विकास सिद्धांत में महत्वपूर्ण योगदान दिया, लेकिन इसके कुछ सीमाएँ भी हैं। सबसे प्रमुख सीमा यह है कि यह मॉडल तकनीकी प्रगति को एक बाहरी कारक मानता है और इसे स्वयं में स्वतंत्र रूप से निर्धारित नहीं करता। इसके अलावा, यह मॉडल सामाजिक और पर्यावरणीय कारकों को अनदेखा करता है, जबकि आज के समय में सतत विकास के लिए इनका महत्व अत्यधिक है।

रॉबर्ट सोलो का विकास संबंधी विचार आधुनिक अर्थशास्त्र में एक मील का पत्थर माना जाता है। उनके मॉडल ने यह स्पष्ट किया कि केवल पूँजी और श्रम से दीर्घकालिक आर्थिक वृद्धि संभव नहीं है; इसके लिए तकनीकी प्रगति आवश्यक है। सोलो का मॉडल न केवल आर्थिक विकास के कारणों को समझने में सहायक है, बल्कि यह यह भी बताता है कि विकास की गति को स्थिर बनाए रखने के लिए किन तत्वों की आवश्यकता होती है। सोलो के विचारों ने आज के सतत विकास की दिशा में एक मजबूत आधार प्रदान किया है, जिसमें तकनीकी नवाचार, पर्यावरणीय संतुलन, और संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग शामिल है।

## 6.4 ई. एफ. शूमाकर और आर्थिक विकास संबंधी विचार

अर्न्स्ट फ्रेडरिक शूमाकर (ई. एफ. शूमाकर) एक प्रसिद्ध ब्रिटिश अर्थशास्त्री और विचारक थे, जिनका कार्य आधुनिक आर्थिक विकास के प्रतिमानों की गहन समीक्षा और वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करने में महत्वपूर्ण है। उनकी प्रमुख कृति **"स्मॉल इज़ ब्यूटीफुल: अ स्टडी ऑफ़ इकोनॉमिक्स एज़ इफ़ पीपल मैटरड"** (1973) ने वैश्विक अर्थव्यवस्था, विकास, और पर्यावरण के प्रति नई सोच को प्रेरित किया।

उनका सबसे प्रसिद्ध विचार उनकी पुस्तक *"स्मॉल इज़ ब्यूटीफुल"* (Small is Beautiful) में है, जिसमें उन्होंने यह तर्क दिया कि विकास का माप केवल आर्थिक वृद्धि नहीं होना चाहिए, बल्कि इसे मानवीय और पर्यावरणीय दृष्टिकोण से भी परखा जाना चाहिए। शूमाकर का मानना था कि विकास के पारंपरिक मॉडल, जो केवल आर्थिक वृद्धि पर केंद्रित हैं, संसाधनों के असीमित दोहन और पर्यावरणीय असंतुलन का कारण बन सकते हैं।

शूमाकर का दृष्टिकोण पारंपरिक आर्थिक विचारों से अलग था। उन्होंने यह तर्क दिया कि बड़े पैमाने पर औद्योगिकीकरण और वैश्वीकरण के स्थान पर हमें स्थानीय और मानवीय विकास पर ध्यान देना चाहिए। उनके अनुसार, बड़े पैमाने पर उत्पादन की तुलना में छोटे और स्थानीय स्तर पर उत्पादन अधिक सतत

और मानवीय है। शूमाकर ने अपने विचारों में "बौद्धिक अर्थशास्त्र" (Buddhist Economics) की अवधारणा को भी शामिल किया, जिसमें कहा गया कि मानव की भौतिक आवश्यकताएँ सीमित होनी चाहिए और आर्थिक गतिविधियाँ न केवल आर्थिक लाभ बल्कि सामाजिक और आध्यात्मिक संतुलन भी बनाए रखें।

### 6.4.1 शूमाकर के आर्थिक विचारों की मुख्य विशेषताएँ

#### 1. लघुता का महत्व (Small is Beautiful)

शूमाकर का सबसे प्रसिद्ध विचार **"Small is Beautiful"** है, जिसमें उन्होंने लघुता और स्थानीयता के महत्व पर जोर दिया। उनका मानना था कि बड़े पैमाने पर औद्योगिकरण और केंद्रीकृत अर्थव्यवस्था मानव और पर्यावरण के लिए हानिकारक हो सकती है। उन्होंने सुझाव दिया कि स्थानीय स्तर पर संसाधनों का उपयोग और उत्पादन अधिक सतत और मानव-केंद्रित विकास को प्रोत्साहित करता है।

*स्मॉल इज़ ब्यूटीफुल* में शूमाकर ने यह तर्क दिया कि आर्थिक गतिविधियों को छोटे स्तर पर, स्थानीय रूप से, और अधिक पर्यावरण-अनुकूल तरीके से संचालित किया जाना चाहिए। उनके अनुसार, बड़े पैमाने पर उत्पादन और औद्योगिकीकरण प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक उपयोग करते हैं, जिससे पारिस्थितिकीय असंतुलन पैदा होता है। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि आर्थिक विकास का लक्ष्य बड़े पैमाने पर उत्पादन नहीं, बल्कि मानवीय मूल्यों, पर्यावरणीय संरक्षण और सततता को बढ़ावा देना होना चाहिए।

### 6.4.2 बौद्धिक अर्थशास्त्र (Buddhist Economics)

शूमाकर का "बौद्धिक अर्थशास्त्र" का विचार, मानव की भौतिक आवश्यकताओं की सीमितता और आत्म-संतोष की अवधारणा पर आधारित है। उनके अनुसार, अर्थशास्त्र का उद्देश्य केवल लाभ कमाना नहीं होना चाहिए, बल्कि यह मानवीय और सामाजिक संतुलन को बनाए रखने का भी होना चाहिए। इस दृष्टिकोण के अनुसार, लोगों को अपनी आवश्यकताओं को सीमित करना चाहिए और अपनी ऊर्जा का उपयोग केवल अपने भौतिक लाभ के लिए नहीं, बल्कि सामूहिक और सामाजिक कल्याण के लिए भी करना चाहिए।

### 6.4.3 उपयुक्त प्रौद्योगिकी (Appropriate Technology)

शूमाकर ने **उपयुक्त प्रौद्योगिकी** के उपयोग पर बल दिया, जो स्थानीय परिस्थितियों, संसाधनों और आवश्यकताओं के अनुरूप हो। उनका मानना था कि उन्नत और जटिल प्रौद्योगिकियों का अंधाधुंध उपयोग विकासशील देशों के लिए अनुकूल नहीं है। इसके बजाय, सरल, सस्ती, और स्थानीय रूप से संचालित प्रौद्योगिकियों को अपनाना चाहिए जो रोजगार सृजन और सामुदायिक विकास में सहायक हों।

### 6.4.4 पर्यावरणीय स्थिरता

शूमाकर ने पर्यावरणीय संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग और **सतत विकास** की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने चेतावनी दी कि प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन और पर्यावरणीय क्षति दीर्घकालिक विकास के लिए विनाशकारी हो सकती है। उनके विचारों ने पर्यावरणीय अर्थशास्त्र और सतत विकास की अवधारणाओं को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

### 6.4.5 विकेन्द्रित विकास (Decentralized Development)

शूमाकर ने केंद्रीकृत आर्थिक प्रणालियों की आलोचना की और **विकेन्द्रित विकास** मॉडल का समर्थन किया। उनका मानना था कि स्थानीय समुदायों को अपनी आर्थिक गतिविधियों में अधिक स्वायत्तता होनी चाहिए, जिससे सामाजिक न्याय और आर्थिक समानता को बढ़ावा मिले।

### 6.4.6 शूमाकर के विचारों की आधुनिक प्रासंगिकता

आज, जब दुनिया पर्यावरणीय संकट, आर्थिक असमानता, और सामाजिक असंतोष का सामना कर रही है, शूमाकर के विचार अधिक प्रासंगिक हो गए हैं। स्थानीयकरण, सतत विकास, और मानव-केंद्रित अर्थव्यवस्था के उनके सिद्धांत नीतिगत निर्माण और सामाजिक आंदोलनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

**(a)हरित अर्थव्यवस्था और सतत विकास**

शूमाकर के विचार **हरित अर्थव्यवस्था** और सतत विकास की नीतियों में परिलक्षित होते हैं। उनके द्वारा समर्थित उपयुक्त प्रौद्योगिकियाँ और स्थानीय उत्पादन के मॉडल पर्यावरणीय संतुलन और आर्थिक स्थिरता को बढ़ावा देते हैं।

**(b)सामाजिक उद्यमिता और सामुदायिक विकास**

**सामाजिक उद्यमिता** और सामुदायिक विकास में शूमाकर के सिद्धांतों का प्रभाव देखा जा सकता है। स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजन, संसाधनों का संरक्षण, और सामाजिक कल्याण के उद्देश्यों के साथ आर्थिक गतिविधियों का संचालन उनके विचारों का प्रत्यक्ष परिणाम है।

ई. एफ. शूमाकर के आर्थिक विकास संबंधी विचार पारंपरिक आर्थिक मॉडलों के विकल्प प्रस्तुत करते हैं। उनका जोर मानव कल्याण, पर्यावरणीय संतुलन, और स्थानीय स्वायत्तता पर था। उनके सिद्धांत आज की चुनौतियों का समाधान प्रदान करते हैं और एक सतत, न्यायसंगत, और मानव-केंद्रित विकास मॉडल की दिशा में मार्गदर्शन करते हैं। शूमाकर का संदेश है कि आर्थिक विकास का सही अर्थ तभी पूर्ण होता है जब वह मानव और प्रकृति दोनों के हित में हो।

## 6.5 निष्कर्ष

नवीन पर्यावरण सचेतक और आर्थिक विकास संबंधी विचारों का उद्देश्य एक ऐसा संतुलित विकास मॉडल तैयार करना है जो पर्यावरणीय संरक्षण और आर्थिक प्रगति दोनों को साथ लेकर चले। यह विचार न केवल आर्थिक गतिविधियों को पर्यावरण के अनुकूल बनाता है, बल्कि दीर्घकालिक स्थिरता की दिशा में भी मार्ग प्रशस्त करता है।

भविष्य में आर्थिक विकास की दिशा में सफलताएँ प्राप्त करने के लिए पर्यावरण सचेतक मॉडल का प्रभावी कार्यान्वयन और जन जागरूकता अत्यंत आवश्यक है। इसके माध्यम से हम एक ऐसा समाज बना सकते हैं जो आने वाली पीढ़ियों के लिए भी एक स्वच्छ और सुरक्षित पर्यावरण सुनिश्चित करता है।

## 6.6 संदर्भ ग्रंथ सूची


1. **"Environmental and Natural Resource Economics"**
   लेखक: **Tom Tietenberg** और **Lynne Lewis**
   प्रकाशक: **Taylor & Francis, 13 March 2018, ISBN: 9781351803373**
2. **"Economics of the Environment: Selected Readings"**
   संपादक: **Robert N. Stavins**
   प्रकाशक: **Edward Elgar Publishing, 2019, ISBN: 9781788972079**
3. **विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: **Dr. Anupam Agarwal, Dr. Alok Gupta**
   प्रकाशक: **SBPD Publications, 6 July 2021, ISBN: 9789389585339**
4. **पर्यावरणीय अर्थशास्त्र**
   लेखक: डॉ. वी.सी. सिन्हा, डॉ. रितिका सिन्हा
   प्रकाशक: **SBPD Publishing House, 8 July 2024, ISBN: 9788119142392**
5. **"The Economics of Climate Change: The Stern Review"**
   लेखक: Nicholas Stern
   प्रकाशक: Cambridge University Press


## 6.7 सामान्य बोध प्रश्न :

1. **डेली का स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था (Steady-State Economy) का क्या उद्देश्य था?**
   (a) असीमित आर्थिक विकास करना
   (b) पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखना और संसाधनों का सीमित उपयोग करना
   (c) केवल उपभोग बढ़ाना

(d) केवल निर्यात बढ़ाना

**उत्तर:** (b) पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखना और संसाधनों का सीमित उपयोग करना

2. **सोलो मॉडल में दीर्घकालिक विकास का प्रमुख कारक कौन सा है?**
   (a) पूँजी
   (b) श्रम
   (c) तकनीकी प्रगति
   (d) उत्पादन
   **उत्तर:** (c) तकनीकी प्रगति
3. **ई. एफ़. शूमाकर का प्रसिद्ध सिद्धांत क्या था?**
   (a) असीमित उत्पादन
   (b) स्मॉल इज़ ब्यूटीफुल
   (c) विकास के असीमित अवसर
   (d) बड़ा ही बेहतर है
   **उत्तर:** (b) स्मॉल इज़ ब्यूटीफुल
4. **डेली के अनुसार संसाधनों के अत्यधिक दोहन से क्या होता है?**
   (a) विकास में बढ़ोतरी
   (b) पर्यावरणीय असंतुलन
   (c) रोजगार में वृद्धि
   (d) मूल्य में कमी
   **उत्तर:** (b) पर्यावरणीय असंतुलन
5. **सोलो मॉडल में विकास की कौन-सी सीमा बताई गई है?**
   (a) पूँजी और श्रम की सीमाएँ
   (b) उत्पादन की वृद्धि
   (c) विदेशी निवेश
   (d) मुद्रा आपूर्ति
   **उत्तर:** (a) पूँजी और श्रम की सीमाएँ
6. **शूमाकर के विचारों के अनुसार, सतत विकास के लिए क्या आवश्यक है?**
   (a) बड़े पैमाने पर उत्पादन
   (b) स्थानीय स्तर पर आत्मनिर्भरता और छोटे उत्पादन
   (c) विदेशी व्यापार
   (d) बड़े उद्योगों की स्थापना
   **उत्तर:** (b) स्थानीय स्तर पर आत्मनिर्भरता और छोटे उत्पादन
7. **सोलो के अनुसार तकनीकी प्रगति क्यों आवश्यक है?**
   (a) केवल लागत कम करने के लिए
   (b) दीर्घकालिक आर्थिक विकास बनाए रखने के लिए
   (c) श्रमिकों की संख्या बढ़ाने के लिए
   (d) केवल निर्यात के लिए
   **उत्तर:** (b) दीर्घकालिक आर्थिक विकास बनाए रखने के लिए
8. **डेली ने पर्यावरणीय कर का समर्थन क्यों किया?**
   (a) प्रदूषण को बढ़ावा देने के लिए
   (b) पर्यावरणीय क्षति को नियंत्रित करने के लिए
   (c) सरकारी राजस्व बढ़ाने के लिए

(d) केवल औद्योगिक विकास के लिए

**उत्तर:** (b) पर्यावरणीय क्षति को नियंत्रित करने के लिए

9. **"बौद्धिक अर्थशास्त्र" का उद्देश्य क्या है?**

(a) अधिक लाभ कमाना

(b) सीमित आवश्यकताओं और संतुलित जीवन के सिद्धांत का पालन करना

(c) केवल उत्पादन बढ़ाना

(d) निर्यात को बढ़ाना

**उत्तर:** (b) सीमित आवश्यकताओं और संतुलित जीवन के सिद्धांत का पालन करना

10. **स्मॉल इज़ ब्यूटीफुल का मुख्य उद्देश्य क्या है?**

(a) असीमित औद्योगिकीकरण

(b) बड़े पैमाने पर उत्पादन

(c) छोटे और स्थानीय स्तर पर उत्पादन

(d) केवल निर्यात बढ़ाना

**उत्तर:** (c) छोटे और स्थानीय स्तर पर उत्पादन

## 6.8 अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. नवीन पर्यावरण सचेतक आर्थिक विचारों की अवधारणा क्या है**?**
2. हरमन डेली के स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था (Steady-State Economy) की प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं**?**
3. सोलो मॉडल और तकनीकी प्रगति के संबंध का क्या महत्व है**?**
4. ई. एफ़. शूमाकर के **"**स्मॉल इज़ ब्यूटीफुल**"** सिद्धांत का पर्यावरणीय अर्थशास्त्र पर क्या प्रभाव है**?**
5. डेली और सोलो के विकास मॉडल में प्रमुख अंतर क्या हैं**?**
6. ई. एफ़. शूमाकर द्वारा प्रस्तुत **"**बौद्धिक अर्थशास्त्र**"** (Buddhist Economics) का सारांश प्रस्तुत करें।
7. ग्रीन इन्वेस्टमेंट और पर्यावरणीय करों का महत्व हरमन डेली के विचारों के अनुसार समझाएँ।
8. स्थानीय और आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था का समर्थन क्यों किया गया है**?**
9. सोलो के विचारों के अनुसार तकनीकी प्रगति को दीर्घकालिक विकास के लिए महत्वपूर्ण क्यों माना जाता है**?**
10. नवीन पर्यावरणीय चेतना के संदर्भ में सतत विकास की परिभाषा और उद्देश्य समझाएँ।
11. **"**स्मॉल इज़ ब्यूटीफुल**"** और **"**स्थिर अवस्था अर्थव्यवस्था**"** के बीच समानताओं और अंतर पर चर्चा करें।
12. पर्यावरणीय चेतना के विकास में डेली**,** सोलो और शूमाकर के योगदान का मूल्यांकन करें।

# खण्ड–04
# प्रदूषण एजेन्ट एवं पर्यावरण प्रबन्धन

## इकाई 1
## प्रदूषण के प्रकार– मृदा प्रदूषण , जल प्रदूषण , वायु प्रदूषण, नाभिकीय प्रदूषण , रोडियोधर्मिता एवं आणविक प्रदूषण

इकाई की रुपरेखा–


1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 प्रदूषण अर्थ
1.3 प्रदूषण के प्रकार
1.4 मृदा प्रदूषण
1.5 जल प्रदूषण
1.6 वायु प्रदूषण
1.7 नाभिकीय प्रदूषण
1.8 रोडियोधर्मिता
1.9 आणविक प्रदूषण
1.10 अन्य विविध प्रकार के प्रदूषण
1.11 सारांश
1.12 बोध प्रश्न एवं उनके उत्तर
1.13 संदर्भ ग्रन्थ एवं उपयोगी पुस्तकें


### 1.1 प्रस्तावना

प्रदूषण की समस्या ने विकासशील देशों में जनसंख्या वृद्धि के साथ औद्योगिक तथा रासायनिक कचरे ने जल, वायु तथा मृदा को प्रदूषित कर पृथ्वी को अपने चपेट में ले लिया है। पर्यावरणीय समस्याएं, मनुष्य के जीनव को लिए रकपा साबित होने के साथ–साथ आर्थिक हानि एवं जीवन की सुणवत्ता का ह्रास करने के साथ अनेक सकंट उत्पन्न कर रही है। पर्यावरणीय समस्याओँ को हम प्राकृतिक और मानवकृत पर्यावरण बाधाओं के रूप में विभक्त कर सकते है। प्राकृतिक पर्यावरणीय संकट प्रकृतिदत्त होता है जिसे हम लोग ईश्वरीय प्रकोप करते हैं। जबकि इनमें से वास्तव में मानवीय त्रुटियों का परिणाम है। जिसमें सुखा, बाढ़, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्प, बर्फ गिरना, तूफान आदि प्रमुख हैं। पर्यावरण विशेषज्ञों के अनुसार अधिक वनों की कटाई से बाढ़ और सुखा की घटनाओं में वृद्धि तथा भुगर्भीय जल के दोहन से रेगिस्तानी क्षेत्रों में वृद्ध और भूकम्पों की संख्या में बढोत्तरी हो रही है। मानवीय पर्यावरणीय बाधाएँ मुख्यतः वायु प्रदुषण. जल

प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, रासायनिक प्रदूषण, मृदा प्रदूषण एवं रेडियो धर्मी प्रदूषण मुख्य है। जब कोई वस्तु किसी अन्य अनचाहे पदार्थों से मिलकर अपने भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुणों में परिवर्तन ले आती है और वह प्रक्रिया और परिणाम दोनों ही प्रदूषण (Pollution) कहलाते हैं। वह पदार्थ अथवा वस्तुएँ जिनसे प्रदूषण होता है प्रदूषक (Pollutants) कहलाते हैं। प्रदूषण की ऐसी ही व्याख्या अनेक स्थानों पर मिलती है–

"प्रदूषण अनचाही वस्तुओँ के मिलने से होता है जिससे प्राकृतिक अथवा मानवकृत पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।"

"वायु, जल और भूमि में किसी भौतिक, रासायनिक अथवा जैविक अनचाहे परिवर्तन से, जिससे प्राणिमात्र के स्वास्थ्य, सुरक्षा और कल्याण को प्रभावी तौर से हानि पहुँचाती हो, प्रदूषण कहलाता है।"

इन परिभाषाओँ के आधार पर हम यह समझ सकते हैं कि मनुष्य की जीवन प्राथमिताओँ में वायु, जल और मूमि की भी यदि निरापदता नहीं है तो एक अच्छे जीवन प्राथमिकताओँ में वायु, जल और भूमि की भी यदि निरापदता नहीं है तो एक अच्छे जीवन की कल्पना भी कैसे की जा सकती है निःसन्देह पर्यावरण के प्रदूषण ने मानव जीवन को संकट में भी डाल दिया है और भयग्रस्त भी बना दिया है। इससे बचने के लिए जो भी आवश्यक जानकारी एक सामान्य व्यक्ति को होनी चाहिये वह इस इकाई में प्रस्तुत है।

## 1.1 पर्यावरण प्रदूषण

पर्यावरण प्रदूषण एक ऐसा शब्द है जिसका आशय मुख्यतः लोगों के आस दृ पास के क्षेत्र को प्रदूषित करता है। यह कार्य मुख्यतः लोगों द्वरा ही उनके गलत कार्यों से होता है। धुएँ और विभिन्न गैसों से वायु दूषित होती है जिससे साँस लेना भी कठिन हो जाता हैः पानी में अनेक रसानों तथा आपत्तिजनक स्बानों से बह दुषित हो जाता है जो पीने के पानी की कठिनाई के साथ ही समुद्री ररजीवों के जीनवव को भी नष्ट करता है तथी आधिक रासमयनिक खाद और कीटीणुनाशक दवाइयों से मिट्टी की उर्वरता रो हानि पहुँचती है जिससे अन्न उत्पादन में कमी की आश्का बनी रहती है। यह तीनों प्रकार के प्रदूषण (1) बायु प्रदूषण (2) जल प्रदूषण तथा (3) भूमि प्रदूषण मनुष्य तथा अन्य जीव धारियों के लिये अत्यनत हनानिप्रद है , जिन पर हम आगे चर्चा करेंगे।

इनके अतिरिक्त भी कई प्रकार के प्रदूषण है, जिनका प्राणी जीवन पर बहुत कुप्रभाव पड़ता है। इन सबकी एक समेकित सूची यहाँ जी जा सही है।

## 1.3 प्रदूषण के प्रकार

मुख्यतः निम्न प्रकार के प्रदूषणओं को पर्यावरण के क्षेत्र में सम्मिलित किया जाता है–

1. वायु प्रदूषण (Air Pollution)
2. जल प्रदूषण (Water Pollution)
3. भूमि प्रदूषण (Land or Soil Pollution)
4. ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution)
5. वाहन प्रदूषण (Vehicular Pollution)
6. तापीय प्रदूषण (Thermal Pollution)
7. विकिरणी. प्रदूषण (Pollution due to Radiation)
8. समुद्रीय प्रदूषण (Marine Pollution)

9. औद्योगिक प्रदूषण (Industrial Pollution)
10. कूड़े–कचरे प्रदूषण (Waste Disposal Pollution)
11. घर तथा उद्योगों से निकलने वाले जलस्राव से प्रदूषण (Domestic and Industrial Waste Water (effluent Pollution)
12. अन्य प्रकार से प्रदूषण (Pollution from Other Sources)

## वायु प्रदूषण (Air Pollution)

### (अ) कारण

वायु **प्रदूषण** में रप्रदषक मुखयता गैंसें हेती हैं तथा कुछ ठोस के सूक्ष्म कण होते रहैं, जो घरेलू ईधन के दहन, वाहन से निकलने वाले उत्सर्ग, सड़े–गले पदार्थों तथा
कूड़े–करकट से निकलने वाली गैसें तथा विभिन्न प्रकार के उद्योगों के संयन्त्रों की चिमनियों से निकलने वाले धुएँ के रूप में निकलते गहै,। इन विभिन्न प्रदूषको की संख्या अनगिनत है और यह अलग–अलग रप्रकार सेस्विस्थ्य को हानि पहुँचाते है। इनमें से कुछ मुख्य निम्नांकित सारणी में समेकित हैं–

**वायु प्रदूषण फैलाने वाले सामान्य प्रदूषक**

| प्रदूषण | स्त्रोत | हानि प्रभाव |
|---|---|---|
| एल्डीहाइट्स (Aldehydes): Al | वसा, तेल अथवा ग्लिसरोल की पृथक्कीरण क्रिया से | नाक तथा सांस लेने में जलन होती है, बदबू फैलती है। |
| अमोनिया (Ammonia): $NH_3$ | विस्फोटक पदार्थ, रोगन, उर्वरक तथा रंग बनाने की रासायनिक प्रक्रिया में, शोधक कारखाने तथा ईधन दहन से | श्वसन संस्थान में सूजन, आँख और त्वचा को हानि पहुँचती है। |
| आरसाइन्स (Arsines): As | आर्सेनिक युक्त तत्वों तथा अम्लों की प्रक्रिया से धातु जोड़ने वाले टाकों से | रक्त के लाल कणों को नष्ट करता है गुर्दों को प्रभावित करता है पीलिया हो सकता है। |
| कार्बन मोनोआक्साइड | वाहनों और उद्योगों में अधजले हाइड्रोकार्बन्स तथा ईंधन दहन से | रक्त में आक्सीजन की कमी करता है सिरदर्द, दृष्टि दोष तथा स्नायु सम्बन्धी रोग हो सकते है। |
| क्लोरीन (क्लोरीन): सीएल | कपास तथा आटे के ब्लीचिंग से क्लोरीन सिलेण्डर के रिसाव से और अनेक अन्य रासायनिक प्रक्रियाओं से | श्वासन संस्थान को प्रभावित करता है आँखों जलन, नाक में तकलीफ के कारण सांस लेने में कठिनाई |
| हाइड्रोजन साइनाइड (Hydrogen Cynide): | भट्टियों के दहन, धूर्मीकरण और रासायनिक पदार्थों के | गले में खुश्की, धुधली दृष्टि, सिरदर्द आदि |

| | | |
|---|---|---|
| HCN | निर्माण से | |
| हाइड्रोजन फ्लोराइड (Hydrogen Fluoride): HF | पेट्रोलियम शुध्दीकरण एल्युमिनियम और उर्वरक के उत्पाद से | साँस के साथ शरीर में प्रवेश कर सभी स्थानों पर क्षय करता है। |
| हाइड्रोजन सल्फाइड (Hydrogen Sulphide): | रिफाइनरीज तथा रासायनिक कारखानों से पेपर मिल्स तथा दूषित पानी के शुध्दीकरण संयंत्र से | गले और आँखों में मिचली लाता है। सिरदर्द और नींद न आने की बीमारी होती है। |
| नाइट्रोजन ऑक्साइड्स (Nitrogen Oxides): NOx | वाहनों के निष्कासन से साफ्ट कोयले के दहन से, पेट्रोलियम पदार्थों के उपयोगा से | फेफड़ों पर प्रभाव डालता है। |
| सल्फर डाइ ऑक्साइड (Sulpher dioxide): $SO_2$ | कोयला और तेल के दहन से | छाती में जकड़न, सिरदर्द उल्टी तथा श्वासन संस्थान की बीमारियों से मृत्यु तक, तेजाबी वर्षा से फसल और इमारतों को हानि |
| सस्पेन्डेड पार्टीकल्स | कारखाने की चिमनियों से | आँखों की जलन, छींकना कैन्सर का कारण |
| पारे की माप | पारे के शोदन संयन्त्र से, प्रयोगशाला में पारे के उपयोग से तथा पारेयुक्त कीटनाशक से | सूँघने पर बेहोशी, मिनीमाटा रोग होना |
| कैडमियम धातु | निकलने वाले संयन्त्र, इलेक्ट्रोप्लेटिंग कैडमियम पदार्थों के वेल्डिंग तथा तांबा, जस्ता और शीशे के शोधन में अतिरिक्त उत्पादन के रुप में कीटनाशक दवाइयों तथा खादों से | अधिक विषैला, गुर्दे को हानि पहुँचाता है, ब्रोन्काइटिस, हृदय, जिगर व मस्तिष्क के रोग आँतो में सूजन, कैन्सर की संभवाना |
| फॉस्फोरस | फास्फेट वाली खादें, मोटर वाहन तथा जहाजों में क्षय रोकने के उपयोग में | त्वचा में जलनविषैला असर तथा नाडी संस्थान को हानि पहुँचाता है। |
| बोरान | बोरोन शोधक संयन्त्र से, पेट्रोल में मिलाने पर कोयले के दहन से | चिड़चिड़ापन तथा सूजन आ जाती है नाड़ी संस्थान को प्रभावित करता है। |
| बेंजपाइरीन | यह तम्बाकू, धूम्रपान, धुएँ और गैसोलीन निस्सारण से निकलती है। | अत्यन्त विषैली तथा कैन्सर का कारण है। |
| स्मोग | यह पानी के कण तथा वायु मण्डल में कई अन्य प्रदूषक | दम घुटने से मृत्यु तक सम्भव है। |

(SPM) तथा NOx ओजोन ($0_3$) तथा आर्गेनिक आक्साइड से बनती है।

## (ब) सुरक्षा उपाय

1- घरेलु ईंधन दहन से छुटकारा पाना स्वयं ही अपने आप निरन्तर परम्परागत स्रोतों की कमी के कारण हो रहा हैं। उसके स्थान पर कुकिंग गैस, बायो गैस और सोलर उपकरणों का प्रयोग होने लगा है। पुरानी पति में भी निर्धूम चूल्हे तथा नवीन विकसित प्रणाली के चूल्हे और स्टोव से काफी परिवर्तन आया है।

2- वाहन से निकले वाले उत्सर्ग के लिए कुछ उपाय वाहन प्रदूषण वाले अध्याय में दिये गये हैं कृपया उनका अवलोकन करें।

3- विशेषतः वायु प्रदूषण औद्योगिक क्रान्ति के बाद बढ़ा है। विभिन्न प्रकार के संयन्त्र अनेक प्रकार के प्रदूषक बाहर निकालने वाले विभिन्न अन्य प्रदूषक तथा उनकी सहन सीमा में रुचि रखने वाले पाठक अपने राज्य के प्रदूषण निवारण्क एवं नियन्त्रण मण्डल से सम्पर्क कर सकते हैं।

## 1-4 जल प्रदूषण

जल प्रदूषण से तात्पर्य उस जल से है जिसमें कोई विजातीय (घुलनशील अथवा अघुलनशील) वस्तु मिल गई है और जिसमें वस्तुतः उसके भौतिक, रासायनिक एवं जैविक त्तवों में परिवर्तन आ जाने के कारण उसके मोलिक गुणओँ में करभी परिवरितन आ गाय हो।

यह जल अपनी गुणवत्ता खो देता है और मनुष्य, पशु–पक्षी, पेड़–पौधे और यहाँ तक कि कृषि और उद्योगों के लिए भी हानि पहुँचाता है। इसे प्रदूष्क अथवा अशुद्ध जल कहते हैं।

जो वस्तुएँ जल में मिलकर उसे प्रदूषित करती हैं, वह प्रदूषक कहलाती हैं।

(अ) जल के प्रदूषित होने के कई कारण हैं और उन कारणों के पीछे या तो मनुष्य द्वारा उसका अनुचित उपयोग होता है अथवा उसके कुछ अप्राकुतिक कृत्य इसका कारण बनते है। बढ़ती आबादीके साखथ अधिक अन्न की आवश्यकता ओर अने क अन्य आवश्य वस्तुओँ की पूर्त हेतु औद्योगिक क्षेत्र की बाहुल्यता ने अप्रत्यक्ष रूप से जल प्रदूषण में भारी वृद्धि की है। इसके अलावा भी दैनिक जीवन में मनुष्य के कार्य करने के साथ–साथ किसी न किसी प्रकार जल प्रदूषक होने की सम्भावना बनी रहती है। इनका समेकित विवरण निम्नांकित है–

1- **मनुष्य के दैनिक कृत्यों से गन्दगी**– हन प्रतिदिन नहाते हैं, कपड़े धोते हैं, भोजन पकातें हैं, बर्तन मँजते हैं। उस सब में पानी का ही प्रयोग होता है। लेकिन उस कार्य के बाद वह पानी प्रदूषित हो जाता है ओर पीन . अन्य किसी ऐसे कार्य में नहीं आ सकता जाँ शुध्द् जल का आवश्यकता हो। अनचाहे मल–मूत्र विर्सजन (विशेषतः पानी के स्रोतों के आस–पास) और सीवरेज लाइन सेगल्दा मल और पानी जब अन्य जल स्रोतों में मिल जाता है तब उन स्रोतों के समस्त जल अशुध्द अथवा प्रदूषित हो जाता है। यह जल प्रदूषण का मुख्य और सबसे बड़ा कारण है।

2- **औद्योगिक अपशिष्ट–** औद्योगिक इकाइयों द्वारा उपयोग में किये गए जल में अनेक प्रकार के लवण, लवण, अम्ल, क्षार, गैसें तथा रसायन घुले हैं। जल में घुले हुए ये औदोगिक अपशिषट अनेक प्रकार के लवण, अम्ल, क्षार, गैसें तथा रसायन घुले होते हैं। जल में घुले हुए ये औद्योगिक अपशिष्ट सीधे ही इकाइयों से निकलकर नदी, तालाब, झील अथवा अन्य जल स्रोतों में प्रवाहित कर दिये जाते हैं जिससे मनुष्य, जीव–जन्तु, वनस्पति, सभी जो उस जल का उपयोग करते हैं. प्रभावित होते हैं। बढ़ते औद्योगीकरण के साथ प्रदूषण की वृद्धि की सम्भावना बढ़ रही है।

3- **अपमार्जक (डिटर्जेन्ट)–** बढ़ती हुई औद्योगिक प्रगति के फलस्वरूप सफाई के लिए नये–नये अपमार्जक (डिटर्जेन्ट) बाजार में आ गये हैं। इनका उपयोग भी दिनों–दिन बढ़ता जा रहा है। जब अपमार्जक पानी में घुलकर जलाशयों में पहुँचते हैं तो पानी की सतह पर इनके ठोस कणों की पतली पर्ते बन जाती है। इन परतों के काण सूर्य का प्रकाश जल में प्रवेश नहीं कर पाता, जिसके परिणामस्वरूप जल में ऑक्सीजन पर्याप्त मात्रा में नहीं घुल पाती और जल प्रदूषित हो जाता है। ऑक्सीजन की कमी होने से जल जीवों तथा वनस्पति पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है।

4- **कृषि रसायन–** उत्पादन बढ़ाने के लिए खेतों में रासायनिक खादों का प्रयोग दिन–प्रतिदिन बढ़ रहा है। वर्षा के जल के साथ इनकी एक अच्छी मात्रा नदी, तालाबों एवं झीलों या अन्य जल स्रोतों में चली जाती है। इसके फलस्वरूप जल में शैवाल वनस्पति बढ़ जाती है। शैवाल द्वारा अपने विकास में जल की अधिकांश ऑक्सीजन के उपभोग कर लेने से जल में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है। इससे जल जीवों तथा मानव पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है।

5- **कीटनाशी रासायन**– फसलों को कीड़ों से बचाने तथा उनके संरक्षण के लिए अनेक प्रकार के कीटनाशक रसायनों का प्रयोग उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। खेती में उपयोग के बाद विषैले रसायन वर्षा के पानी में घुलकर नदियों एवं तालाबों तक पहुँचते हैं और जल को प्रदूषित कर देते हैं।

6- **औद्योगिक तापीय प्रदूषण–** विभिन्न प्रकार के उद्योगों में संयन्त्रों को ठण्डा करने के लिए जल का उपयोग किया जाता है तथा उपयोग के बाद उष्ण जल को नदी, तालाबों तथा अन्य जल स्रोतों में प्रवाहित कर दिया जाता है। इससे जल स्रोतों का तापमान बढ़ जाता है और प्राकृतिक सन्तुलन के बिगड़ने से जीवों की क्षति होती है।

7- **खनिज तेल–** समुद्रों के जल मार्ग में खनिज तेल ले जाने वाले जहाजों केदुर्घटनाग्रस्त होने अथवा उनके द्वारा भारी मात्रा में तेल के जल सतह पर छोड़ने से तो जल प्रदूषण होता ही है, लेकिन भूमि पर भी तेलों के बिखरने के कारण जल प्रदूषण होता है। भूमि पर बिखरने वाला तेल मिट्टी के साथ बहकर जलाशयों में पहुँचकर प्रदूषण फैलाता है।

8- **शवों के जल प्रवाह से प्रदूषण–** नदियों के किनारे बसे नगरों में शवों को जल में प्रवाहित किये जाने का प्रचलन है। जीवाणुओं सहित मानव एवं पशुओं के शव नदियों में प्रवाहित कर दिये जाते हैं। इससे नदियों का जल प्रदूषित हो जाता है। कई स्थानों पर जली– अधजली लाश, प्रज्वलित अग्नि और राख को नदी में प्रवाहित कर देते हैं जिससे जल के तापमान में वृद्धि होती है और जल प्रदूषित हो जाता है।

(ब) जल के मुख्य प्रदूषक तत्त्व (Main Pollutants in Water)

जल में मिश्रित प्रदूषक तत्त्व मानव, वनस्पति एवं जीव जन्तुओं पर दुष्प्रभाव छोड़ते हैं।

कुछ प्रदूषक तत्त्व तो तत्काल दुष्प्रभाव प्रदर्शित कर देते हैं और कुछ धीरे–धीरे अपना अत्तर दिखाते हैं। जल में मिले हुए प्रदूषक तत्त्वों के शीघ्र प्रभाव के रूप में अनेक बीमारियों जन्म लेती है। पानी में मिश्रित तत्त्व जब एक सीमा से अधिक मात्रा में पानी में घुल जाते हैं तो उनका मानवीय स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इनमें से कुछ निम्न हैं–

1- **फ्लोराइड (Fluoridè)–** अकार्बनिक फ्लोराइड बहुत ही जहरीला पदार्थ होता है। इसकी लगातार मात्रा लेने से वजन का कम होना, खून की कमी, दाँतों की बीमारियाँ, अंगों का असाधारण विस्तार, हड्डियों का मुड़ जाना, जोड़ों में दर्द आदि बीमारियाँ हो जाती हैं। फ्लोराइड पश्चिमी राजस्थान के भूमिगत जल में पाया जाता है। जल में फ्लोराइड की मात्रा 1 पीपीएम से अधिक होने पर बच्चों के दाँतों में छेद हो जाते हैं। 1.5 पीपीएम से अधिक होने पर दाँतों पर धब्बे पड़ जाते हैं तथा दाँतों की चमक समाप्त हो जाती है और वे पीले पड़ जाते है।

2- **सीसा (Lead)–** यह एक जहरीला तत्त्व है जो निर्धारित सीमा से अधिक मात्रा में घुलने पर स्वास्थ्य को प्रभावित करता है। इससे जिगर और गुर्दे प्रभावित हो जाते हैं, महिलाओं में गर्भपात तथा हीमोग्लोबिन की कमी और मानसिक ह्रास का कारण जैसी बीमारियाँ हो जाती है।

3- **पारा (Mercury**)– यह प्रोटोप्लाजमिक जहर है जो रक्त संचरण तन्त्र में अवशोषित होने के बाद लीवर, गुर्दा, स्पलीन एवं हड्डी में जमा हो जाता है। इससे मुँह एवं मसूड़ों पर बुरा असर पड़ता है। अम्लीय पारा बहुत जहरीला होता है। पारे के किसी भी यौगिक की मात्रा लगातार शरीर में जाने से मिनीमाटा रोग हो जाता है।

4- **फिनोल (Phenol)–** यह कार्बनिक एवं अत्यन्त जहरीला पदार्थ है। यह त्वचा एवं अन्तःझिल्ली को बहुत प्रभावित करता है। 60 इंच क्षेत्र त्वचा पर फिनोल के प्रभाव से ही मनुष्य की मृत्यु हो सकती है। यह गुर्दे लीवर, स्प्लीन एवं फेफड़ों पर बहुत बुरा असर डालता है। 15 से 20 मिनट तक त्वचा के सम्पर्क में रहने से सिरदर्द, मांसपेशियों में कमजोरी, कम दिखाई देना, कम सुनना तथा जल्दी–जल्दी श्वांस के कारण बेहोशी हो जाती है तथा कभी–कभी मृत्यु भी हो जाती है।

5- सोडियम (Sodium)– अत्यन्त सक्रिय तत्त्व होने के कारण यौगिक रूप में ही पाया जाता है । इन यौगिकों में जहरीलापन केवल धन–आयन के कारण ही होता है।

6- जस्ता (Zinc): जस्ता स्वयं जहरीला नहीं होता, परन्तु इसके यौगिक थोड़े जहरीले होते हैं। जब जस्ते को गर्म किया जाता है तो जिंक ऑक्साइड बनता है जिससे ब्रास फाउन्डर रोग एवं ब्रास चिलस नामक बीमारियों हो जाती है। जिंक क्लोराइड की अधिक मात्रा फेफड़ों को खराब कर सकती है। जिंक ऑक्साइड की अधिक मात्रा लेने से तेज उल्टियों होने लगती हैं।

**7- नाइट्राइड (Nitrides)–** बहुत खतरनाक पदार्थ है। इससे बच्चों में ब्लूबैबी नामक बीमारी हो जाती है। उल्टियों होना तथा त्वचा का रंग गहरा हो ताना इसके मुख्य प्रभाव है।

**8- पेथोसेनिक बैक्टीरिया अथवा आर्मेनिज्म (Pathosanic Bacteria or Armanism)–** स्वास्थ्य के लिए बहुत ही हानिकारक होते हैं। इनसे हैजा, मोतीझरा, इन्फेक्शन, हेपाटाइट आदि बीमारियों फैलती हैं। अधिक मात्रा होने पर महामारी भी फैल सकती है।

## (स) जल प्रदूषण के दुष्प्रभाव (Effect of Water Pollution)

प्रदूषित जल मानव जाति समुद्री जीवों तथा जलीय पादपों को हानि पहुँचाता है। इससे उनका जीवन खतरे में पड़ जाता है और वृद्धि भी रुक जाती है।

जल प्रदूषण से सबसे अधिक प्रभाव मानव के स्वास्थ्य पर पड़ता है जिसके अन्तर्गत वह विविध प्रकार के रोगों से ग्रसित हो सकता है जिनमें मुख्यतः 1- अतिसार, 2- पेंचिश, 3- जुकाम, 4- श्वास–कास, 5- लकवा, 6- हैजा, 7 मोतीझरा, 8- चर्मरोग, 9- अंधापन, 10- नारू, 11- कृमि, 12- पीलिया, 13- रति रोग, 14- शोध तथा अन्य पेट के रोग हैं।

आजकल सबसे अधिक प्रकोप पेय जल में फ्लोराइड की अधिक मात्रा के कारण हो रहा है। जिसमें रीढ़ की हड्डी टेढी हो जाती है. दाँत पीले होकर गिरने लगते हैं तथा हाथ व पैरों की हड्डियों में लचक आ जाती है और शरीर बेडौल हो जाता है। इसकी रोकथाम के लिए राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास चल रहे हैं और विदेशी सहायता से फ्लोराइड वाले क्षेत्रों के पानी में से फ्लोराइड वाले क्षेत्रों के पानी में से पलोराइड की मात्रा कम करने के उपाय किये जा रहे है।

### (द) जल शुद्ध करने के उपाय (Ways to Reclaim Pure Water)

जल शुद्ध करने के लिए विभिन्न उपाय जल में होने वाली अशुद्धियों तथा उसकी मात्रा पर निर्भर करता है फिर भी उनका एक संक्षिप्त विवरण, जिन विधियों से अशुद्ध जल को परिष्कृत किया जा सके, यहाँ दिया है–

1- प्राचीन उपाय (Traditional Methods)– (1) कपड़े से छानना, (2) लकड़ी के कोयला से छानना, (3) ताँबे के बर्तन में रखना, (4) उबालना (5) सूर्य के प्रकाश में रखना, (6) ईंट बुझाना आदि।

2- प्रचलित उपाय (Conventional Methods)– (1) नीचे से क्रमशः कंकड़, गुटिकाओं, मोटी बालू कोयला चूर्ण व महीन बालू से छानना (2) फिटकरी, गन्धक, मेंथी (बीज चूर्ण), निर्मली, कमल की जड से शुद्धि करना।

3- आधुनिक उपाय (Modern Methods)– (1) कुओं, बावड़ी में पोटेशियम परमैगनेट व फिटकरी डालना, निंयमित सफाई करना, (2) कुओं को नियमित साफ रखना, ढंक कर रखना (3) बावड़ी में सीढ़ियों हटाना, (4) कुओं और तालाबों से नियमित मिट्टी निकालना, (5) नालियों व गटर लाइनों को जल स्रोतों से दूर रखना, (6) तालाबों से नियमित मिट्टी निकालना, (7) फिल्टर प्रोसेसिंग पद्धति का प्रयोग करना (फिटकरी, क्लोरीन, मेथी चूर्ण का प्रयोग) आदि।

### 4- क्रिया/संक्रिया की दृष्टि से पीने के पानी को साफ करने की विधियाँ (Mechanical Methods for Purification of Water)–

### (क) भौतिक विधियों (Physical Methods)–

1- निथारकर– इस विधि में पानी को कुछ समय के लिए तालाब, टैंक या बर्तन आदि में ठहरने देते हैं। इससे अशुद्धियों भारी होने के कारण नीचे बैठ जाती हैं और ऊपर साफ पानी आ जाता है।

2- उबालकर– पानी को उबालने से उसमें विद्यमान कीटाणु भी नष्ट हो जाते हैं और घुली हुई अशुद्धियाँ दूर हो जाती हैं। उबला हुआ पानी पीने में स्वादरहित, फीका एवं अरुचिकर लगता है, परन्तु यह पानी पीने योग्य होता है। इस जल को स्वादिष्ट बनाने के लिए एक बर्तन से दूसरे बर्तन में कई बार उँडेलना चाहिए। इससे वायु मिश्रित हो जाएगी और पानी पीने में अच्छा लगेगा।

3- स्रावण विधि से– यह पानी को शुद्ध करने की सर्वोत्तम विधि है। इसमें पहले पानी को उबालकर भाप में परिवर्तित कर दिया जाता है और फिर उस भाप को शीतकों द्वारा द्रवीभूत कर देते हैं। यह पानी अत्यन्त स्वच्छ और गुणकारी होता है। इस विधि से विलेय– अविलेय दोनों प्रकार की अशुद्धियों दूर हो जाती हैं। इस पानी का उपयोग दवाओं तथा रासायनिक कार्यों में अधिक होता है।

(ख) रासायनिक विधियाँ (Chemical Methods)–

1- अवक्षेपण या स्कन्धन– कीचड़ वाले पानी को शुद्ध करने के लिए फिटकरी बड़ी उपयोगी है। पानी में फिटकरी घोल देने से मिट्टी आदि अघुलनशील अशुद्धियों नीचे बैठ जाती हैं। बैक्टीरिया तथा अन्य तैरने वाली मलिनताओं को फिटकरी दूर कर देती है। प्रायः । गैलन पानी के लिए 6 ग्रेन अथवा 1 लीटर पानी के लिए आधा ग्राम फिटकरी पर्याप्त होती है।

2- निष्संक्रमण– इस विधि के अन्तर्गत ऐसी वस्तुओं को पानी में मिलाया जाता है जिनसे बैक्टीरिया आदि कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। इस कार्य के लिए जो कीटाणुनाशक पदार्थ प्रायः प्रयुक्त किए जाते हैं– लाल दवा या पोटेशियम परमैगनेट, तूतिया या नीला थोथा, क्लोरीन गैस या टिकिया, ब्लीचिंग पाउडर या चिरंजक चूर्ण, चूना, आयोडीन, ब्रोमीन आदि।

(ग) यांत्रिक साधनों द्वारा (By Mechanical Methods)

रासायनिक विधियों से शुद्ध किए हुए जल को पूर्णतः शुद्ध करने के लिए यांत्रिक साधनों का उपयोग किया जाता है। इस विधि में प्रयुक्त होने वाले यन्त्रों को निस्मंदक यंत्र कहते हैं। ये यन्त्र दो प्रकार के होते हैं। इस विधि में पहले पानी को तालाबों में लाकर इकट्ठा किया जाता है जहाँ मिट्टी व गन्दगी बैठ जाती है, फिर चौबीस घंटे की धूप व हवा से कीटाणु मर जाते हैं। इसके बाद पानी को दूसरे तालाबों में ले जाते हैं। इन्हें 'फिल्टर बैड्स' कहते हैं। इन तालाबों में रेत व बजरी की मोटी तहें होती हैं। इन तहों में से होकर पानी छनता हुआ नली से होकर जल संग्रहालय में जाता है, जहाँ से सारे नगर को नलों द्वारा वितरित किया जाता है।

## 1.6 भूमि प्रदूषण (Land or Soil Pollution)

(अ) भूमि प्रदूषण (Land Pollution)

भूमि के भौतिक, रासायनिक या जैविक गुणों में ऐसा कोई भी अवांछित परिवर्तन, जिसका प्रभाव मनुष्य तथा अन्य जीवों पर पड़े तथा जिससे भूमि की प्राकृतिक गुणवत्ता तथा उपयोगिता नष्ट हो, भू–प्रदूषण कहलाता है।

(ब) भूमि प्रदूषण के स्रोत (Source of Land Pollution)

भू–प्रदूषण की समस्या ठोस अपशिष्ट पदार्थों के निक्षेपण की समस्या का ही दूसरा नाम है। पर वृहद दृष्टिकोण से इसके अन्तर्गत मृदाक्षरण, मृदा के विभिन्न स्रोतों से रासायनिक प्रदूषण, भू–उत्खनन, ज्वालामुखी उद्‌गार इत्यादि समस्त मानवकृत तथा प्राकृतिक प्रक्रियाओं के फलस्वरूप भूमि से आधारभूत गुणों में होने वाले परिवर्तनों का समावेश भी इस प्रदूषण का कारण बनता है।

सामान्यतया भू–प्रदूषण निम्न कारणों से होता है–

1- घरेलू अपशिष्ट (Domestic Wastes)

2- नगरपालिका अपशिष्ट (Municipal Wastes)

3- औद्योगिक अपशिष्ट (Industrial Wastes)

4- कृषि अपशिष्ट (Agricultural Wastes)

5- अन्य प्रकार के अपशिष्ट (Other Wastes)

(1) घरेलू अपशिष्ट रू घरेलू अपशिष्ट के अन्तर्गत मुख्यतः सूखा कचरा तथा रसोई का गीला जूठन सम्मिलित होते हैं। सूखे कचरे में झाड़ने बुहारन के फलस्वरूप एकत्रित धूल, रद्दी कागज, लकड़ी, पत्तियाँ, काँच या चीनी मिट्टी के टूटे बर्तन, शीशियों, टीन के डिब्बे, टायर, प्लास्टिक सामग्री आदि होते हैं।

रसोई से निकले पदार्थों में सब्जियाँ, दालों व फलों के छिलके, सड़े–गले फल, फलों की गुठलियाँ, चाय की पत्तियों, अण्डों के छिलके तथा खाने के उपरान्त बची जूठन सामग्री सम्मिलित होती है।

घरेलू कूड़ा–करकट लापरवाही व अज्ञानतावश बहुत से लोग अपने घरों से थोड़ी दूरी पर डालते हैं। गाँवों में तथा छोटे कस्बों में इस कचरे के ढेर देखे जा सकते हैं। इस प्रकार का अव्यवस्थित कचरा भी भू–प्रदूषण का कारण बनता है।

(2) नगरपालिका अपशिष्ट– नगरपालिका सम्पूर्ण प्रकार का शहरी कूड़ा–करकट, मानव मल, मरे जानवरों इत्यादि के अपशिष्ट पदार्थों को एक स्थान पर शहर के बाहर डालती रहती है। यह भी भू–प्रदूषण का कारण है।

(3) औद्योगिक अपशिष्ट– बढ़ते हुए औद्योगीकरण के कारण बहुत सारे अपशिष्ट होते हैं जो विषैले और हानिकारक होते हैं। जब ये सीधे या पानी के साथ बहकर भूमि पर गिरते हैं तो भूमि प्रदूषण करते हैं।

(4) कृषि अपशिष्ट– खेतों में अनावश्यक बचे पौधे के ढेर जब वर्षा के जल के साथ मिलते हैं तो वे सड़ने लगते हैं तथा प्रदूषण का कारण बनते हैं। खेतों में प्रयोग की जाने वाली खादें , कीटनाशियों तथा पेस्टीसाइड्स से भी भू–प्रदूषण होता है।

(स) भूमि प्रदूषण का नियन्त्रण (Control of Soil and Land Pollution)

भूमि पर अधिकांश प्रदूषण ठोस अपशिष्ट (Solid Waste) का होता है। जिसे हटाकर दूसरे स्थान पर ले जाने से समय, श्रम और धन तीनों का व्यय होता है, लेकिन इसका कोई विकल्प नहीं है। सामान्यतया इसके तीन चरण होते हैं–

1- अपशिष्ट का संग्रह (Collection of Wastes)

2- अपशिष्ट का निस्तारण (Disposal of Wastes) और

3- संसाधनों की पुनर्प्राप्ति (Recovery of Resources)

उपर्युक्त वर्णित तीसरे चरण के अनुसार कुछ अपशिष्ट का भाग पुनः चक्रांकित (recycle) किया जा सके तो यह सर्वोत्तम है, क्योंकि इससे प्राकृतिक साधनों के संरक्षण को बल मिलेगा।

ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution), वाहन प्रदूषण (Vehicular Pollution) तथा औद्योगिक प्रदूषण (Industrial Pollution) की चर्चा अलग–अलग अध्याय में की गई है।

## 1.7 तापीय प्रदूषण (Thermal Pollution)

(अ) कारण (Causes)

इस प्रदूषण का स्रोत मुख्यतः तापीय विद्युत गृह है। इस विद्युत गृह से दो प्रदूषक ही गणना योग्य है और यह दोनों ही बहुत भयानक और दूरगामी हानि पहुँचाने वाले है। इनमें से (1) सम्पूर्ण प्रक्रिया के बाद बहुत अधिक ताप वाले पानी कार निकलना और उसका उसी स्रोत में मिल जाना जहाँ से विद्युत गृह के संयन्त्र को चलाने और उसे ठण्डा करने के लिए जल लिया जा रहा है। इससे उस जल के जलीय जन्तुओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, अनेक जीवन समाप्त हो जाते हैं और मछलियों अथवा अन्य जानवरों के लिए वह शून्य स्थल बन जाते हैं और (2) उसकी चिमनी से निकलने वाली राख, जो अधिक ताप के कारण भी हानिकारक है और जहाँ बरसती है वहाँ की वनस्पति, पेड़–पौधे और फसलों को नष्ट कर देती है।

(ब) सुरक्षा उपाय (Safety Measures)

इसके उपाय निम्न प्रकार सुझाये गये हैं–

1- संयन्त्र से निकलने वाले उच्च ताप के जल को फव्वारे के रूप में अधिक क्षेत्र में फैलने दिया जाय। जब ताप सहन स्तर (tolerance level) तक आ जाय तब ही उसे पुनः स्रोत में मिलने दें।

2- राख का उपयोग अब इमारत बनाने के लिए ईंटों के लिए किया गया है, वह सफल प्रयोग हुआ है। इससे प्रदूषण की समस्या भी कम होगी और प्रदूषक का अच्छा उपयोग भी होगा। राख को अधिक क्षेत्र में बिखरने से रोकने के लिए कुछ कृत्रिम साधन अपनाने होंगे।

1.8 विकिरणीय प्रदूषण (Pollution Due to Radiation)

(अ) कारण (Causes)

विकिरणीय प्रदूषण के कई कारण हैं, जिनमें मुख्यतः (1) प्रकाश की किरणें (प्दतिं–तमक त्ंले) का पृथ्वी से टकराकर विकिरणीकरण होना, (2) आकाशीय विकिरण, (3) रेडियोधर्मी पदार्थों के उपयोग लेने पर (विशेषकर अणुशक्ति पर आधारित विद्युत गृह अथवा अन्य सस्थान), (4) अणु हथियारों का परीक्षण करने पर, (5) एक्सरे मशीनों का उपयोग, (6) रेडियो थेरेपी (कैंसर का इलाज) आदि है। इनसे विशेष हानि शरीर के किसी भी भाग पर अन्दर–बाहर जलने से होती है। यह भयानक परिणाम वाला प्रदूषण है और कई वर्षों बाद भी प्रभावी प्रतिक्रिया कर सकता है।

(ब) सुरक्षा उपाय (Safety Measures)

इसकी गिरफ्त में आने के बाद कोई बचाव अथवा सुरक्षा उपाय नहीं है। केवल बचाव हेतु इन रेडियोधर्मी तत्त्वों के सम्पर्क की सम्भावना से भी दूर रहना ही है। एक्सरे तथा रेडियो थेरेपी का उपयोग बहुत ही आवश्यक हो, तो करें।

## 1.9 समुद्रीय प्रदूषण (Marine Pollution)

(अ) कारण (Causes)

इस प्रकार के प्रदूषण का सम्बन्ध आम आदमी से नहीं होने के कारण इसका लोगों के ध्यान में अधिक महत्त्व नहीं है, लेकिन विश्व में तो अनेक देशों को समुद्री सीमा छूती ही है। भारत में भी लगभग तीन तरफ समुद्र ही है। अतः बहुत लम्बे समुद्री तट वाला अपना देश है।

(1)औद्योगीकरण, (2) समुद्री किनारे अधिक बसावट, (3) समुद्र से तेल का लाना–ले जाना, (4) अनेक विद्युत तथा अन्य आवश्यक संयंत्रों का समुद्री किनारे के क्षेत्र में रखरखाव, (5) बन्दरगाहों पर यातायात तथा आयात और निर्यात आदि अनेक कारण हैं जिससे समुद्री प्रदूषण होता है। एक बहुत विशेष कारण यह भी है कि जहाज, जो तेल वाहक होते हैं, उनसे तेल रिस–रिसकर समुद्री पानी को खराब कर देता है। इस सबका प्रभाव समुद्री जीवों पर पड़ता है, जो बहुत बड़ व्यापार का केन्द्र है। जल और वायु भी अप्रत्यक्ष रूप से प्रदूषित होते है।

(ब) सुरक्षा उपाय (Safety Measures)

यह सामान्य प्रक्रिया से रोका नहीं जा सकता। भारत सरकार ने भी इसे अति विशिष्ट क्षेत्र घोषित किया है तथा अलग से ही उसकी देखरेख तथा रखरखाव का नियन्त्रण होता है। व्यवस्थित कार्य प्रणाली जिससे समुद्री जल को प्रदूषण से बचाया जा सके, इसका एकमात्र निदान है।

## 1.10 कूड़े–कचरे से प्रदूषण (Waste Disposal Pollution)

### (अ) कारण (Causes)

यह प्रदूषण इस प्रकार की सामग्री से होता है जो घर में अथवा अन्य कार्यस्थल पर बेकार हो गई तथा उपयोग में ले ली गई वस्तुओं से शेष रही चीजों को कूड़े के रूप में फेंक दी जाती हैं। इनमें मुख्यतः शीशियों, क्राकरी के टुकड़े, प्लास्टिक के डिब्बे, पॉलीथीन के बैग्स आदि हैं। इसके अतिरिक्त कागज के टुकड़े, पैकिंग में आये पुढे के कार्टून्स, घरेलू साइकिल के स्पेयर्स वप अन्य लोहे–पत्तियों के टुकड़े, आदि भी इस प्रकार कूड़े का भाग बनते हैं। मकानों का मलवा, कृषि कार्यों से बचा अवशेष, किन्हीं फैक्ट्रियों से निकला कचरा व अपशिष्ट और न जाने कितनी प्रकार की चीजें होती हैं, जो किसी काम की नहीं मानकर कूड़े–कचरे का भाग बनती हैं। यह अब विश्वव्यापी समस्या हो गई है, जो किसी काम की नहीं मानकर कूड़े–कचरे का भाग बनती है। यह अब विश्वव्यापी समस्या हो गई है। अमेरिका जैसे धनाढ्यदेश तो अब मोटरकार जैसी चीज को भी खराब होने पर नष्ट करने के लिए कूड़े में डाल देता है। इससे स्थान की कमी होती है, गंदगी बढ़ती है तथा इनका कहीं ले जाकर पहुँचाना भी काफी व्यय वाला और सिरदर्द बन जाता है।

### (ब) सुरक्षा उपाय (Safety Measures)

इस प्रकार के प्रदूषक संग्रह से बचाव केवल इन सभी को या तो नष्ट करने से अथवा किसी प्रकार के उपयोग लेने से ही सम्भव है। कुछ वस्तुएँ जैसे कागज, शीशे के टुकड़े, पट्टे के टुकड़े आदि को पुन चक्रण कर वही चीजें बनाने में काम आ जाती हैं. पर यह कार्य वही देश कर पाते हैं जिनके पास इस प्रकार की उच्च तकनीकी सुविधा है। कुछ पदार्थ जैसे– पॉलीथीन, प्लास्टिक के टुकड़े जो आसानी से नष्ट नहीं होते, उनमें का कुछ भाग तो पुनः चक्रण (recycle) हो जाता है, शेष भाग को जमीन में दबाने का ही प्रयास करते हैं क्योंकि शायद आज विश्व में सबसे अधिक दुखदायी ठोस अपशिष्ट (Solid Waste) में यही प्लास्टिक अथवा पॉलीथीन की थैलियों होती हैं जिनका प्रयोग तो दिनों दिन बढ़ता जा रहा है. पर उनके नष्ट करने की कोई उचित व्यवस्था नहीं है।

कुछ कूड़े–कचरे का प्रयोग अब मकान बनाने में ब्लाक्स बनाने के लिए किया जा रहा है। दूसरे जलाकर इसको मकानों में गर्मी पहुँचाने के साधन के रूप में प्रयोग कई देशों ने किया है। कुछ कार्बनिक पदार्थों को खाद के रूप में भी काम में लिए जाने की सम्भावना है। इस

ओर पूरे विश्व में उच्च तकनीकी लोग पूरी निष्ठा से इसका अत्यन्त व्यवस्थित हल खोजने में लगे हैं।

## 1.11 घर तथा उद्योगों से निकलने वाले जलस्राव से प्रदूषण (Domestic and Industrial Waste Water Disposal Pollution)

### (अ) कारण (Causes)

बिना जल के न तो घर का न ही किसी उद्योग का काम चल सकता है। जल का जहाँ दोनों स्थानों पर कार्य में लिए जाने का उपयोग है, वहीं घर में इसका उपयोग बर्तन धोने, नहाने और सफाई कार्य में होता है। उद्योगों में मशीनों व संयंत्रों को ठण्डा करने में इनका बहुत योगदान है। दोनों ही स्थिति में जल प्रदूषित हो जाता है। इस प्रकार से जल में अनेक प्रदूषक तत्त्व जिनमें घरेलू डिटर्जेन्ट भी शामिल हैं अथवा उद्योगों के उत्पाद से सम्बन्धित कुछ पदार्थों के भाग मिले होते हैं, वहीं उद्योगों से उच्च ताप पर निष्कासित जल से भी कितनी ही हानियाँ हो सकती हैं, जिसका उल्लेख हमने तापीय प्रदूषण वाले बिन्दु में किया है।

### (ब) सुरक्षा उपाय (Safety Measures)

घरेलू पानी का उपयोग विशेषतः किचेन गार्डन में किया जाता है, जिससे पानी का सदुपयोग भी होता है। हाँ यहाँ डिटरजेन्ट जरूर एक समस्या है। एक ओर जहाँ इसके प्रयोग से अधिक पानी के इस्तेमाल की समस्या है वहीं इसका पानी साग सब्जी आदि उगाने में उपयोगी नहीं है। औद्योगिक संस्थानों के जल को उपचार संयंत्रों (Treatment Plants) की सहायता से उस स्तर तक ले जाया जाना बहुत आवश्यक है जहाँ वह मानव उपयोग हेतु हानिप्रद न हो। इस जल को सीधे पीने के पानी के स्रोतों से भी दूर रखने की आवश्यकता है, यद्यपि जमीन पर कहीं भी गिर जाने पर पानी आखिर भूजल का भाग बन जाता है और वृहद वृत्त (bigger circle) में इसे कहीं न कहीं उपयोग में लाना होता है। उच्च ताप वाले पानी को फव्वारे के रूप में निकाल कर ठण्डा करके ही कहीं निकाल कर मिलाना चाहिए।

## 1.12 अन्य प्रकार से प्रदूषण (Pollution from Other Sources)

यद्यपि हमने ऊपर विभिन्न अलग–अलग पदों में अनेक प्रकार के प्रदूषणों की चर्चा की है, पर फिर भी सभी प्रकार के प्रदूषणों को इसमें सम्मिलित कर पायें यह सम्भव नहीं। बिना कोई भूमिका के कुछ ऐसे ही अन्य प्रदूषणों को यहाँ देने का प्रयास कर रहे हैं–

### (i) जलकुम्भी (Eutrophication)

रुके हुए पानी में जलकुम्भी एक आम बात हो गई है। एक बार किसी जलाशय में प्रारम्भ होने के बाद वह इतनी तेजी से बढ़ती है कि लगभग सारे जलाशय की ऊपरी सतह को बैंक लेती है। अनेक बार मानव श्रम से इसे अनेक स्थानों से हटाने का प्रयास किया है, पर उसमें शत–प्रतिशत सफलता नहीं मिल पाती है। इसके पैदा होने का मुख्य कारण वह जल है जो अन्य स्थानों से बह कर किसी जलाशय में मिलता है। आने वाला अथवा बहने वाला जल अपने साथ कुछ पोषक तत्त्व साथ में लाता है जो इस प्रकार की घास को जन्म देता है। अब इसे भोजन श्रृंखला में कहीं स्थान देकर इसकी उपयोगिता में वृद्धि की ओर विशेषज्ञ लगे हैं। खाद के रूप में भी कहीं इसका उपयोग हो इस ओर भी ध्यान है।

### (ii) कृषि अपशिष्ट (Agricultural Waste)

मनुष्य की तीसरी जीवन प्राथमिकता, जल तथा वायु के बाद भोजन है। जैसे–जैसे जनसंख्या में वृद्धि होती जाती है, वैसे–वैसे अधिक अन्न की आवश्यकता होती है। अधिक अन्न उपजाने के प्रयोगों ने खेतों में विविध प्रकार की खादों के उपयोग प्रारम्भ किये हैं। इससे अधिक अन्न

तो उपजता ही है, लेकिन वर्षा जल के साथ जब इन खादों के अवशेष बाहर आ जाते हैं तो इनके अनेक घटक जमीन अथवा जलाशय, जहाँ पर यह आते हैं, को अनुपयोगी अथवा कम उपयोगी कर देते हैं। कुछ कृषि अपशिष्ट वह भी होता है जो फसल काटने के बाद बच जाता है अथवा फसल उगाते समय अपने आ उगता है। कीटनाशकों के उपयोग ने भी प्रदूषण फैलाया है।

भौतिक रूप से जो अपशिष्ट इस प्रकार है जिसे पशु चारे के रूप में खा सकें, उसके उपयोग हो जाने से तो कोई आगे समस्या ही नहीं। हाँ, खादों के प्रयोग पर अंकुश लगाकर उसे नियंत्रित करने की अवश्य आवश्यकता है। अधिक खादों का उपयोग बहुत अधिक दिनों तक जमीन के हित में भी नहीं है। इसी प्रकार कीटनाशी दवाइयों का भी उपयोग अत्यन्त नियंत्रित और व्यवस्थित ही होना चाहिए।

विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों की चर्चा करते हुए यह सोचते भी भय होने लगता है कि आखिर प्राणी इस पृथ्वी पर जीवित कैसे है? उसे खाने, पीने, सोने, सांस लेने अथवा कोई भी कार्य करने में निरापदता की तो बात ही नहीं आती। एक अनजाना भय, अनचाही आशंका ओर कभी भी अप्रिय घटना की सम्भावना ने मनुष्य का जीवन दूभर कर दिया है। इसका अधिक दोष बढ़ती आबादी है जिसने अधिक औद्योगिक प्रगति को बढ़ावा दिया और जिससे अधिक प्रदूषण फैला है। दूसरा दोष देश की आर्थिक व्यवस्था को दिया जा सकता है, क्योंकि भूतपूर्व प्रधान मंत्री स्व. श्रीमती इन्दिरा गांधी के शब्दों में–

"आबादी से गरीबी आती है और प्रदूषण गरीबी का आवश्यक परिणाम है।"

(जनसंख्या गरीबी की ओर ले जाती है और प्रदूषण इसका आवश्यक परिणाम है गरीबी।)

इसी कारण आर्थिक विपन्नता वाले देशें में प्रदूषण की समस्या अधिक है।

इससे भी अधिक उत्तरदायी हमारे देश की सामाजिक तथा नागरिक उत्तरदायित्व न वहन करने की आदत है। न तो वर्तमान पीढ़ी इस ओर स्वयं ध्यान देती है और न ही भावी पीढ़ी को सिखाने का प्रयास करती है वस्तुओं के ठीक से उपयोग न करने, जीवन की शैली को अव्यस्थित रूप से ही चलाये जाने तथा अपने स्वार्थ और सुविधा के लिए दूसरों की परेशानियों की और ध्यान न देने से ही कई समस्याओं ने जन्म लिया है जिसमें प्रदूषण भी एक मुख्य समस्या है।

प्रशासन चाहे जितनी भी योजनाएँ बनावे, कितनी भी व्यवस्थाएँ करे, प्रदूषण को रोका नहीं जा सकता। इसको नियन्त्रित अथवा कम अवश्य किया जा सकता है, पर उसमें निःसन्देह आम आदमी को प्रभावी भूमिका निभानी होगी।

**सन्दर्भ प्रश्नावली**

1. पर्यावरण प्रदूषण क्या है? किन प्रकार के प्रदूषणों को पर्यावरण के क्षेत्र में सम्मिलित किया जाता है?

2. वायु प्रदूषण फैलाने वाले सामान्य प्रदूषक तत्त्वयों का उल्लेख करें।

3. जल प्रदूषण के कारणों की विवेचना करें। जल प्रदूषण के क्या दुष्प्रभाव होते हैं ?

4. निम्नलिखित पर तथ्यपरक नोट्स लिखें–

(i) विकिरणीय प्रदूषण

(ii) समुद्रीय प्रदूषण

(iii) वॉटरक्रेस

# इकाई –02

# ध्वनि प्रदूषण, भीड़ एवं अनियोजित नगर फैलाव, स्लम्स (झुग्गी–झोपड़ी), सांस्कृतिक प्रदूषण

**इकाई की रुपरेखा–**

**2.0 उद्देश्य**

**2.1 प्रस्तावना**

**2.2 ध्वनि प्रदूषण अवधारणा**

**2.3 ध्वनि प्रदूषण मापन**

**2.4 ध्वनि प्रदूषण यंत्र**

**2.5 ध्वनि प्रदूषण**

**2.6 ध्वनि प्रदूषण की सीमा**

## 2.1 प्रस्तावना (Introduction)

ध्वनि (Sound) सदैव हमारे साथ रहती है। प्रातः उठते ही चिड़ियों की चहचहाहट अथवा अलार्म घड़ी की आवाज से हमारी दिनचर्या प्रारम्भ होती है, जो घूमने के समय कुत्तों के भौंकने, गाय के रंभाने, दिन में सड़कों पर के यातायात (कार, बस, ट्रक, मोटरसाइकिल आदि) और रात को घर पर मनोरंजन (रेडियो, टीवी, टेपरिकार्डर, डिस्क) के साथ समाप्त होती है। यही नहीं बल्कि खाना बनाते और खाते समय बर्तनों का खटकना टकराना, आपसी वार्तालाप, हँसी–मजाक में भी आवाज ही आवाज रहती है। इसे हम देख नहीं सकते और न ही इसमें कोई भार अथवा आयतन होता है। इस अहसास को ही, जिसे हम केवल सुन सकते हैं, ध्वनि कहते है।

कई वैज्ञानिकों ने 'ध्वनि' को निम्न प्रकार परिभाषित करने का प्रयास किया है–

1- 'A sound is something that you can hear'- (ध्वनि कुछ ऐसी चीज है जिसे हम सुनते हैं।)

2- 'Whenever you hear] it is sound-' (जब कभी हम सुनते हैं, वह ध्वनि होती है।)

शोर की परिभाषा स्वयं में खासी व्यक्तिपरक है। कुछ लोगों के लिए इंजन की गर्जना बड़ी सुखद और रोमांचकारी होती है, वहीं दूसरों के लिए बड़ी बेचौनी का सबब बन जाती है। तेज आवाज में संगीत किसी के लिए आनन्ददायक और दूसरों के लिए यंत्रणा बन सकता है.

जो व्यक्ति की प्रकृति और परिवेश पर निर्भर करता है।

मोटे तौर पर किसी भी प्रकार की अवांछित ध्वनि, ध्वनि प्रदूषण है। चाहे वह सिर के ऊपर से गुजरता हुआ जेट जहाज हो या फिर अगली गली में भौंकता हुआ कुत्ता। प्रदूषण मापन का एक मानक है स्वास्थ्य के प्रति उसका खतरा। शोर से तनाव उत्पन्न होता है और तनाव रोगों का एक प्रमुख कारण है। इसी कारण किसी भी प्रकार के शोर को यदि वह परेशानी का सबब बनता हो, नींद में बाधक हो भयोत्पादक हो या अन्य किसी भी प्रकार के तनाव को जन्म देता हो, तो उसे प्रदूषण मानना चाहिए।

किसी ध्वनि की वास्तविक प्रबलना मनुष्यों पर होने वाले उसके प्रभाव का केवल एक घटक है। अन्य कारक जिन पर ध्यान दिया जाना चाहिए वे है– समय और स्थान, शोर की अवधि, ध्वनि का स्रोत और यह भी कि क्या श्रोता का उस पर कोई नियंत्रण संभव है। अधिकांश लोगों के लिए खास अवसर पर दी जाने वाली 21 तोपो की सलामी किसी भी प्रकार का व्यवधान उत्पन्न नहीं करती। दूसरी ओर 2 बजे रात पड़ोसी के घर पर बजता–गूंजता संगीत चाहे कितना भी धीमा क्यों न हो तनाव पैदा कर सकता है।

## 2.2 ध्वनि प्रदूषण अवधारणा

(अ) उत्पत्ति (Origination)– अपने दिन–प्रतिदिन के अनुभव से हम यह जानते हैं कि शान्त वातावरण में कोई आवाज नहीं होती है। जब कभी कोई वस्तु गिरती है, किसी अन्य वस्तु से टकराती है, गति करती है. तभी आवाज सुनाई पड़ती है। बोलने, संगीत उपकरणों से निकलते स्वर, पशु–पक्षियों की आवाजें, बस–रेल–वायुयान से उत्पन्न कोलाहल से भी आवाजें आती हैं। पर यह आवाजें हमें तभी सुनाई पड़ती हैं जब वे वस्तु से हम तक किसी प्रकार पहुँच पाती हैं। यह आवाज (ध्वनि) का पहुँचना बहुत ही सामान्य लेकिन सम्पूर्ण वैज्ञानिक प्रक्रिया है।

जब किसी वस्तु से आवाज उत्पन्न होती है तब वह कम्पित होने लगती है। यह कम्पन उस वस्तु के आस–पास की वायु में कम्पन पैदा कर देती है जो वस्तु के केन्द्र से सभी दिशाओं में फैलने लगते हैं। यही कम्पन जब हमारे कानों तक पहुँचते हैं तो मस्तिष्क इन्हें 'ध्वनि की संज्ञा देकर प्रसारित कर देता है और हम उस आवाज को कानों की सहायता से सुन लेते हैं। इसीलिये ध्वनि उत्पत्ति के लिए कहा जाता है कि 'कम्पन से ही ध्वनि उत्पन्न होती है' (Every Sound is generated by only vibrations of some objects) I इसी आधार पर ही श्ध्वनिश को निम्न प्रकार भी परिभाषित किया गया है–

'Sounds are the vibrations that are propagated from the object to reach ने." (ध्वनि वस्तु से प्रसारित होने वाले कम्पन हैं, जो हम तक पहुँचते हैं।)

(ब) महत्त्व (Importance)– प्राणी मात्र के लिये सुखी जीवन जीने के लिए अनेक चीजों तथा सहायताओं की आवश्यकता होती है। उनमें से सुनना भी ऐसा एक महत्त्वपूर्ण साधन है जिसकी अनुपस्थिति की सामान्यतया कोई कल्पना नहीं करता है। इसके महत्त्व को हम क्रमबद्ध करने का प्रयास ही कर सकते हैं–

1- ध्वनि बोलने की क्रिया से अन्य व्यक्तियों या प्राणियों से सम्पर्क बनाये रखती है। अन्य व्यक्तियों को भी ध्वनि ही हमसे जोडे रखती है।

2- ध्वनियों, जो किसी संगीत उपकरण अथवा मधुरभाषी पक्षियों से सुनने को मिलती हैं, हमें प्रसन्नता और आनन्द प्रदान करती है।

3 रेडियो, दूरदर्शन के प्रसारण ध्वनि के द्वारा ही हमें पूरे विश्व की गतिविधियों से परिचित कराते हैं।

4- ध्वनि अपनी अलग पहचान से विभिन्न आवाजों के आधार पर विभिन्न प्राणियों की आवाज अथवा वस्तुओं की उपस्थिति से अवगत करा देते हैं।

5- अनेक भयानक आवाजें जैसे कार, बस, ट्रक के हार्न, बिजली की कड़क, अग्निशमन, वाहन की घंटियाँ, शेर की दहाड़ हमें किन्हीं अनजाने अंदेशों से अवगत कराते हैं। दूरी का भी पता अनुमान से लग सकता है।

6- ध्वनि से किसी भी वस्तु (Object) की दूरी का भी पता अनुमान से लग सकता है।

7- आज वर्तमान में तो अनेक चिकित्सकीय क्रियाकलापों में ध्वनि की तीव्रता का उपयोग होने लगा है।

8- ध्वनि ही पुरुष और स्त्री स्वर को पहचान कर व्यक्ति विशेष की पहचान कर सकता है. आदि।

इससे स्पष्ट है कि ध्वनि हमारी दिनचर्या का एक आवश्यक साधन है जिससे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से अनेक गतिविधियों परस्पर समन्वित होती हैं।

(स) गति (Movement of Speed) –दैनिक जीवन में हम देखते हैं कि आवाज का स्रोत कहीं होता है और उसे सुनने वाला प्राणी (मनुष्य व पशु) कहीं अलग स्थान पर होता है। निश्चित है कि वह आवाज स्रोत से कम्पन द्वारा आगे बढ़ती है, अतः कम्पन से ही ध्वनि एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचती है।

कम्पन को जानने के लिए एक बड़ा कंकड़ अथवा पत्थर का टुकड़ा स्थिर पानी में डालें। हम देखेंगे कि उस बिन्दु से. जहाँ पर कोई वस्तु डाली गई थी, लहरें उठना प्रारम्भ होती है और वह केन्द्रबिन्दु से निरन्तर आगे बढ़ती जाती है। ध्वनि का लहरों के माध्यम से बढना उसकी गति (speed) कहलाती है। इसी आधार पर ध्वनि को भी नई परिभाषा मिल गई है–

A sound is something that we can hear which is propagated through waves produced from some object'- (ध्वनि एक ऐसी वस्तु है जो किसी स्रोत से उत्पन्न होकर लहरों द्वारा प्रसारित होती है, जिसे हम सुन सकते हैं।)

यह उदाहरण पानी में पत्थर फेंकने से उत्पन्न लहरों (तरंगों) पर आधारित था, अतः यहाँ ध्वनि प्रसारण का माध्यम पानी रहा, लेकिन जब हम परस्पर बातें करते हैं अथवा धरातल पर कोई आवाज सुनते हैं तब ध्वनि का माध्यम वायुश ही रहता है। इसी प्रकार अलग–अलग माध्यम में ध्वनि को सुना जा सकता है, लेकिन इन अलग–अलग माध्यमों में ध्वनि की गति भी अलग–अलग होती है।

विभिन्न माध्यमों में ध्वनि की गति (Speed of Sound in Different Medium) (मीटर/सेकेण्ड)

एल्यूमीनियम 5,000

| **माध्यम** | **गति** |
|---|---|
| वायु | 332 |
| जल | 1,496 |
| लकड़ी | 4,100 |
| लोहा | 5,200 |
| शीशा | 4,500 |
| इंट | 3,650 |
| एल्यूमीनियम | 5,000 |

ध्वनि केवल विभिन्न माध्यमों में ही प्रसारित होती है, इसलिए निर्वात या बाह्य अंतरिक्ष में कोई ध्वनि नहीं होती है।

(द) विशेषताएँ (Characteristics): ध्वनि की विशेषताओं को निम्न प्रकार जाना जा सकता है–

1- बारंबारता (Frequency) किसी वस्तु या स्रोत से उत्पन्न प्रति सेकण्ड कम्पनों की संख्या बारंबारता कहलाती है। (The number of vibrations produced by an object per second is known as frequency-)। वस्तुतः कम्पन तरंगों का निर्माण करती है। प्रत्येक एक तरंग से दूसरी तरंग तक की दूरी तरंगदैर्ध्य (Wavelength) के नाम से जानी जाती है। यह कितनी तरंगे प्रति सेकण्ड में बन रही है, इसे ध्वनि की बारंबारता कहते हैं।

यह हर्ट्ज में मापी जाती है। एक कम्पन प्रति सेकण्ड को एक हर्ट्ज के माप से पुकारते है। सामान्यतया मनुष्य 20 से 20,000 हर्ट्ज तक की ध्वनि सुन सकता है, लेकिन कुछ पशु जैसे कुत्ता, पक्षी जैसे चमगादड़ इससे कहीं अधिक ध्वनि सुन सकते हैं। 15,000 हर्ट्ज से अधिक स्तर की ध्वनि मनुष्य के श्रवण यन्त्र को हानि पहुँचा सकते हैं।

2- तारत्व (Pitch)– ध्वनि की बारम्बारता ही ध्वनि के उतार–चढ़ाव (lowness or highness) को निर्धारित करती है। इसे तारत्व (Pitch) कहते हैं बारम्बारता अधिक होगी तो तारत्व भी अधिक होगा जबकि इसके विपरीत नीचे स्तर की ध्वनि (कम तारत्व) की बारम्बारता भी कम होगी।

3- तीव्रता (Intensity): ध्वनि तरंगों के साथ कितनी शक्ति प्रवाहित हो रही है, यह ध्वनि की तीव्रता कहलाता है। (The intensity of a sound is related to the amount of energy flowing through the sound waves-)। यह तीव्रता कम्पन के उस उच्चतम स्तर पर निर्भर करती है. जिससे ध्वनि तरंगें उत्पन्न होती हैं। इसे प्रचुरता या विस्तीर्णता (Amplitude) कहा जाता है।

4- प्रबलता (Loudness)- यह ध्वनि के उस स्तर का ज्ञान कराती है शक्ति (तीव्रता या Intensity) से वह हमारे कानों को सुनाई पड़ती है। यह तीव्र (high) और मंद (low) हो सकती है। इसे डेसीबल (dB) में मापा जाता है जिसे अलेक्जेण्डर ग्राहम बेल ने अपने शोध से निर्मित ध्वनि मापन यंत्र के आधार पर प्रस्तुत किया।

एक बेल (एक डेसीबेल का दसौं भाग) उस आवाज की तीव्रता का न्यूनतम माप है जो एक मनुष्य के द्वारा सुना जा सकता है। 'डेसीबल मापी' लघुगुणक सिद्धान्त पर आधारित है जिसके अनुसार 10dB बढ़ने पर 10 गुना, 20dB बढ़ने पर सौ गुना और 30dB बढ़ने पर 1000 गुना हो जाती है। उदाहरण के लिए फुसफुसाहट (whisper) 10dB, ध्यानमग्न दो व्यक्तियों की बातचीत 20dB तथा सामान्य समूह में वार्तालाप 30dB होता है। एक सामान्य मनुष्य के लिए 70-80dB के मध्य की ध्वनि उचित एवं उपयुक्त होती है। इसे मनुष्य की सहन सीमा (Tolerance Level) भी माना गया है।

विभिन्न स्रोतों से उत्पन्न ध्वनि की तीव्रता या प्रबलता (Intensity or Loudness) को यहाँ नीचे की सारणी में समेकित किया गया है–

ध्वनि माप सारणी

| क्र.सं. | | ध्वनि प्रबलता (dB में) |
|---|---|---|
| 1. | शान्त | 00 |
| 2. | साँस लेना | 10 |
| 3. | पत्तियों की खड़खड़ाहट | 20 |
| 4. | धीमी बातचीत | 20-30 |
| 5. | सामान्य बातचीत | 30 |
| 6. | घडी की टिकटिक | 30 |
| 7. | रेडियो से संगीत | 50-60 |
| 8. | ऊँचे स्वर से बातचीत | 60 |
| 9. | ऑफिस की आवाज | 50-60 |
| 10. | पुस्तकालय | 35-40 |
| 11. | टेलीफोन की घंटी | 70 |
| 12. | टेलीविजन परिवार के साथ | 70 |
| 13. | वैक्यूम क्लीनर | 80 |
| 14. | प्रिन्टिंग प्रेस | 80 |
| 15. | बच्चों का खेल | 60-80 |
| 16. | रोड ट्रेफिक | 60-90 |
| 17. | घास काटने की मशीन | 90-100 |
| 18. | भारी ट्रक यातायात | 90-100 |
| 19. | मोटर साइकिल | 105 |
| 20. | रेलगाड़ी की सीटी | 110 |
| 21. | डैक संगीत | 110-115 |
| 22. | वायुयान | 90-130 |
| 23. | बिजली की गड़गड़ाहट | 120 |
| 24 | जैट वायुयान | 140 |
| 25. | चेतावनी का सायरन | 150 |
| 26. | पटाखे और बम्ब | 120-170 |
| 27. | खान विस्फोट | 120-140 |

| | | |
|---|---|---|
| 28. | गैस कुकर विस्फोट | 120-140 |
| 29. | आमने–सामने वाहन की टक्कर | 140-170 |
| 30. | फैक्ट्री वायलर का फटना | सीमा से परे |

* एक मनुष्य सामान्यतः 80 डीबी तक की ध्वनि सहन कर सकता है। 120 डेसीबल से अधिक आवाज मनुष्य को कई शारीरिक कष्ट दे सकती है।

5. गुणवत्ता (Quality)– हर ध्वनि की अपनी अलग पहचान होती है, जिससे तत्काल यह जाना जा सकता है कि यह ध्वनि किसकी है? कमरे या किसी विशेष स्थान पर बैठे–बैठे मनुष्य, पशु, रेलगाड़ी, भूकम्प, बिजली की कड़क, वस्तु के गिरने टूटने, संगीत उपकरण आदि की आवाजें पहचाना जाना सामान्य बात है। यही नहीं बल्कि दो व्यक्तियों में भी आवाज के आध् द्वार पर किसी व्यक्ति विशेष को पहचाना जा सकता है। संगीत ध्वनियों में तो उपकरणों की जानकारी तथा विशेष राग रागनियों की पहचान इसी विशेषता पर आधारित है।

(इ) वर्गीकरण (Classification) –ध्वनि को सुने जाने के आधार पर दो वर्गों में विभाजित किया गया है– (1) संगीतात्मक ध्वनियों (Musical Sounds) और (2) शोर अथवा कोलाहल (Noises)। यह ध्वनियों किसी भी प्रबलता की हो सकती हैं। कभी कम प्रबलता की ध्वनि अप्रिय लगने लगती है तो कभी तीव्र प्रबलता की ध्वनि आनन्ददायक और प्रियकर। इनको संक्षिप्त रूप से निम्न प्रकार से व्यक्त कर सकते हैं–

1. संगीतात्मक ध्वनियों (Musical Sounds) यह वह ध्वनियों हैं जो आनन्ददायक और मनलुभावनी (pleasant and interesting) होती हैं। गायन (Singing), वादन (Instruments Playing) और नृत्य (Dance) इसके अन्तर्गत आते हैं। रेडियो, टीवी, डैस्क म्यूजिक से निकलने वाला संगीत और कुछ कोयल, मोर जैसे पक्षियों की आवाजें इसी प्रकार की ध्वनियो में सम्मिलित की जा सकती है। पर इसमें भी आवाज की प्रबलता (Loudness and Pitch) की बहुत प्रभावी भूमिका रहती है। उदाहरण के लिए ऊँचे स्वर का पॉप संगीत (Pop Music) सिरदर्द बन जाता है, वहीं धीमे आवाज की गजलें मन मोह लेती हैं।

2. शोर अथवा कोलाहल (Noises) यह ध्वनियाँ अप्रिय परेशानी और बेचौन करने वाली आवाजें (unpleasant] annoying and distracting sounds) हैं जिनसे मन व्याकुल हो उठता है। इन ध्वनियों को निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है–A harsh disagreeable sound- (एक अप्रिय अरुचिकर ध्वनि)

विशेषतः ऐसी ध्वनि जो तेज, अप्रिय या परेशान करने वाली हो। (एक सुन्दर जो विशेषतः अप्रिय और बेचौनी वाली हो) A sound that ने undesired by recipient- (एक ध्वनि जो प्रापक द्वारा अनचाही हो)

ध्वनि माप की भाषाओं में सामान्यतया 80dB से अधिक तीव्रता की ध्वनियों शोर के दायरे में आती हैं।

## 2.3 ध्वनि प्रदूषण मापन

ध्वनि तीव्रता मापन डेसिबेल ध्वनि की तीव्रता का मापक है. अर्थात् ध्वनि तरंगों द्वारा उत्पन्न वायु के दबाव की घट–बढ़ का परिमाण। डेसिबल स्केल लघुगणकीय है, अंकगणितीय नहीं। इसका अर्थ यह है कि ध्वनि की तीव्रता का द्विगुणन डेसिबेल स्तर का द्विगुणन नहीं कहा जा सकता। वस्तुतः सिर्फ 3 डेसिबेल की अधिकता का मतलब है ध्वनि की दुगुनी तीव्रता और 10 डेसिबेल की अधिकता का अर्थ है दस गुनी ध्वनि तीव्रताA'0' डेसिबेल ध्वनि दबाव का अर्थ है एक युवा स्वस्थ श्रवणेन्द्रिय के लिए सर्वाधिक संवेदनशील आवृत्ति। दूसरी ओर काम में तकलीफ देह और पर्दे को चीरने वाले संवेदन 120 डेसिबेल स्तर के होते हैं जो शून्य डेसिबेल से 10 गुना अधिक होते हैं।

डेसिबेल मापन सामान्यतः एक फिल्टर की सहायता से किया जाता है जो कतिपय आवृत्तियों को रेखांकित करता है। श्एश फिल्टर अधिकांशतः प्रयुक्त होता है। सी फिल्टर कम तीव्रता की आवृत्ति पर बल देता है, जैसे कि एम्प्लिाइड संगीत का मंद्र स्वर। मानव श्रवणेन्द्रिय के लिए ध्वनि की तीव्रता सीधे डेसिबेल स्तर के अनुपात में नहीं होती। उदाहरण के लिए 10 डेसिबेल तीव्रता वाली एक ध्वनि दूसरी ध्वनि से दस गुनी तीव्र प्रतीत न होकर लगभग तीन–गुनी प्रतीत होती है। दूरी के अनुपात में ध्वनि की तीव्रता कम होने लगती है। घर के बाहर और किसी निकटवर्ती परावर्तक सतह के अभाव में प्रभावी डेसिबल स्तर, दूरी में प्रत्येक दो वृद्धि कारको के लिए 6 डेसिबेल की दर से से घटने लगता है। उदाहरण के लए दस मीटर पर 100 डेसिवेल माप वाली ध्वनि, 20 मीटर पर 94 डेसिबेल और 40 मीटर पर 88 डेसिबल होगी तथा इसी तरह आगे तीव्रता घटती जाएगी।

## 2.4 ध्वनि प्रदूषण यंत्र

शोर संगीत और अन्य आवाजों का साउंड लेवल मीटर से मापा जाता है। ऐसे एक सामान्य मीटर में ध्वनि पकड़ने और उसे विद्युत सिंगनल में बदलने के लिए माइक्रोफोन लगा होता है साथ ही विद्युत परिपथ (इलेक्ट्रानिक सरकिट्री) होती है जिस पर इस संकेत का परिचालन कर वांछित विशिष्टताओं का मापन किया जाता है। निर्देशक उपकरण सामान्यतः ऐसा मीटर होता है जिसमें ध्वनि स्तर की तीव्रता को डेसिबेल में जानने की सुविधा होती है। 1970 दशक के शुरुआती दौर में जब ध्वनि प्रदूषण के बारे में चिंता होने लगी तब सटीक विविधता युक्त साथ ले जा सकने लायक शोर मापक उपकरण विकसित किए गए। मापित की जाने वाली ध्वनि की सभी आवृत्तियों समाकलित स्तर को अथवा आवृत्तियों के चयनित बंध को अंकित करने के लिए सामान्यतः एक बाहरी स्विच द्वारा, विद्युतीय परिपथ (इलेक्ट्रॉनिक सरकिट्री) का समायोजित (एडजस्ट) करना संभव होता है। मीटर की अनुक्रिया को मंद करने के लिए एक समय अंतराल की भी व्यवस्था की जाती है ताकि तेजी से बदलती हुई ध्वनियों को आनुपातिक स्तर पर लाया जा सके। विभिन्न उपकरणों में उनके उपयोग की भिन्नता के कारण समय अंतराल कम–ज्यादा हो सकता है। ध्वनि स्तर मीटरों की सहायता से यह सुनिश्चित करना संभव हो गया है कि फुसफुसाहट का ध्वनि स्तर 20 से 30 डेसिबेल तक होता है, सामान्यतः बातचीत का 60 डेसिबेल तक, पत्तों की खड़खड़ाहट का 45 डेसिबेल सामान्य रेडियों और वैक्यूम क्लीनर का 75 डेसिबेल तक, खेती के उपकरण और बिजली से चलने वाले, आरे की 100 डेसिबेल तक, बाहरी मोटर, जंजीरी आरे और जैक हथौड़े का 120 डेसिबेल, जेट विमान की उड़ान और एम्पलीफाइड संगीत का 135 डेसिबेल, तथा बंदूक से छूटी गोली और 30 मीटर दूरी तक के साइरन का ध्वनि स्तर 140 डेसिबेल तक होता है।

## 2.5 ध्वनि प्रदूषण

विज्ञान की निरन्तर प्रगति के साथ ही मनुष्य को जीवन के हर क्षेत्र में अनेक उपलब्धियाँ मिली हैं। पर वहीं उसे अनेक कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ा है तथा अनेक परेशानियों भी विरासत में मिली हैं। सुनने के लिए आवश्यक ध्वनि यंत्रों ने जहाँ जीवन को प्रसन्नचित, आनन्दमय और सुख से जीने के साधन दिये हैं, वहीं उनके गलत प्रयोग से मन को व्याकुलता, शरीर को कष्ट और अनचाहे क्षणों में जीने की विवशता भी मिली है। तेज आवाज में संगीत, आवागमन के साधनों की असह्य आवाज, कारखानों की लगातार चलती मशीनों की तीव्र ध्वनि, भीड़भाड़ का कोलाहल, सभी ने तो मनुष्य को अत्यधिक व्यथित कर दिया है। इन सबका सीधा प्रभाव कानों की श्रवण शक्ति पर पड़ा है। ऊँचे सुनने से जहाँ मनुष्य की मानसिकता में हीन भावना का प्रवेश होने लगता है वहीं तेज ध्वनि से उच्च रक्तचाप, अल्सर, हृदयाघात, मानसिक विकार और ऐसे ही अनेक रोग होना पाये जाते हैं। वस्तुतः यह ध्वनि [12:07 चउ, 8/6/2024, Vishal Kesharwani] विकार हैं जो अदृश्य हैं और अत्यधिक प्रभावी हैं। इसे ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution) का नाम दिया गया है, जिस पर हम यहाँ बिन्दुवार चर्चा करेंगे।

(अ) ध्वनि प्रदूषण के मुख्य स्रोत (Chief Sources of Noise Pollution)

सुविधा की दृष्टि से ध्वनि प्रदूषण के स्रोतों को दो भागों में बाँटा जा सकता है– 1) प्राकृतिक (Natural) और (2) मनुष्य द्वारा उत्पादित (Man Generated) 1

1. प्राकृतिक स्रोत (Natural Sources) इस श्रेणी में प्राकृतिक प्रकोप जैसे आँधी, तेज वर्षा, तूफान, भूकम्प, बिजली की कड़कड़ाहट आदि आते हैं। 2. मनुष्य द्वारा उत्पादित स्रोत (Man Generated Sources) इस संवर्ग के कारको संख्या अनगिनत है जिन्हें हम कुछ मोटे शीर्षकों में समेकित कर सकते हैं– में (i) परिवहन के साधन (Means of Transport) ट्रक, कारें, स्कूटर, मोटर साइकिल, मोपेड, बसें एवं अन्य स्वचालित वाहन जैसे हवाई जहाज, रेलगाड़ी आदि।

(ii) कारखाने और उद्योग (Factories and Industries) मशीनें, साइरन, जेनरेटर्स एवं अनेक यांत्रिक उपकरण।

(iii) मनोरंजन के साधन (Means of Amusement) रेडियो, टीवी, टेपरिकार्डर, ट्रांजिस्टर आदि, नृत्य व डिस्को संगीत।

(iv) घरेलू उपकरण (Domestic Appliances): वाशिंग मशीन, कूलर्स, लानमूवर्स, मिक्सी, प्रेशर कुकुर, वेक्यूम क्लीनर, एअरकंडीशनर्स आदि।

(v) पूजास्थल पर के उपकरण (Prayer Instruments) हारमोनियम, ढोलक, तबला, घुँघरू, लाउडस्पीकर्स आदि।

(vi) सैनिक अभ्यास की वस्तुएँ (Material of Infantry Exercise) टैंक, मशीनगनें, हथगोले, अभ्यास में विस्फोटक सामग्री।

इसके अलावा भी आटे की चक्की, माकनों का निर्माण (आर.सी.सी. डालना) आदि अनेक और भी स्रोत हैं। शहरी भीड़, चहल–पहल भरे बाजार, सिनेमागृह, बड़े–बड़े भाषणों के आयोजन भी ध्वनि प्रदूषण फैलाते हैं।

(c) ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव (Effect of Noise Pollution)

ध्वनि प्रदूषण से मनुष्य पर शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकार का प्रभाव पड़ता है जो ध्वनि की तीव्रता के आधार पर कम और अधिक भी होता है और अलग–अलग प्रकार का भी। साथ ही प्रभाव का परिणाम निम्नलिखित बातों पर भी निर्भर करता है–

1. अवधि (अन्तराल)
2. दिन में या रात में किस–किस समय,
3. स्थान का सम्पूर्ण शोर–स्तर
4. ध्वनि की तीव्रता, आवृत्ति स्तर,
5. नियमित जीवन की कार्यशैली,
6. व्यक्ति की संवेदनशीलता (सहने की क्षमता)
7 व्यक्ति की आयु और
8. सुरक्षा के उपकरणों की क्षमता एवं विश्वसनीयता।

कुछ और भी बिन्दु इमसें शामिल किये जा सकते हैं जिनके आधार पर ध्वनि प्रदूषण काप्रभाव सम्भव है। विश्व स्वास्थ्य संगठन और स्वास्थ्य संबंधी अन्य निकायी तथा समितियों के तत्वावधान में किए गए अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि शोर मानव के स्वास्थ्य तथा खुशहाली को कई प्रकार से प्रभावित करता है। इसके दुष्प्रभाव अनेक स्तरों पर होते हैं जैसे क्रियात्मक, मनोवैज्ञानिक एवं भौतिक जिसमें श्रवण क्षमता की तीक्ष्णता का ह्रास भी शामिल है।

## 2.6 ध्वनि प्रदूषण की सीमा

स्थायी रूप से सुनाई देना बंद हो जाने में लंबा समय लगता है, इसलिए यह पता कर पाना कठिन होता है कि असल में किस बिंदु पर जाकर शोर कानों के लिए हानिकारक बन जाता है।

अमेरिका की पर्यावरण संरक्षण एजेंसी ने निष्कर्ष दिया है कि दिन के चौबीस घंटों में 70 डी. बी.ए. को सुरक्षित औसत ध्वनि स्तर माना जा सकता है। यह आंकड़ा केवल श्रवणेंद्रिय को होने वाली हानि के विषय में हैं, इसमें अन्य स्वास्थ्य संबंधी नुकसान जैसे अनिद्रा शामिल नहीं है। ध्वनि तीव्रता प्रति 3 डेसिबेल की वृद्धि के साथ दुगुनी हो जाती है इसलिए प्रत्येक ऐसी वृद्धि के साथ ही सुरक्षित रूप से ध्वनिग्रहण आधा रह जाता है। इसी कारण यदि काई कार्मिक आठ घंटों तक लगातार 75 डी.बी.ए. और 4 घंटों तक 78 डी.बी.ए. स्तर पर काम कर रहा हो तो उसे कानों को सुरक्षित रखने वाले उपकरण इस्तेमाल करने चाहिए। थोड़े समय के लिए 100 डी.बी.ए.का शोर कानों को बर्दाश्त करना भी पड़े तो वह खतरे का कारण नहीं बनता बशर्ते औसत स्तर निर्दिष्ट स्तरों के भीतर हो।

वास्तविकता यह है कि कार्मिकों के लिए वास्तविक अनुमत सीमा अधिक है। अधिकांश न्याय व्यवस्थाओं में कार्मिकों के लिए 85 और यहां तक कि 90 डी.बी.ए. तक के ध्वनि स्तर पर आठ घंटों तक लगातार काम को उचित ठहराया गया है। अगर इन आंकड़ों की अधिकता को देखें तो एक आम नाइट क्लब का ध्वनि स्तर जो 110 डी.बी.ए. तक होता है, सिर्फ चार मिनट के एक्सपोजर में भी स्थायी रूप से सुनने की क्षमता को नष्ट कर सकता है। यह और बात है कि शोर कई और तरह से भी नुकसान पहुंचाता है। एकाग्रता न हो पाने के कारण शोर उत्पादकता को घटाता है। पर्याप्त विश्राम न मिल पाने के कारण बातचीत करने में कठिनाई या थकान हो जाती है। व्यक्ति मानसिक तौर पर अस्वस्थ अनुभव करता है। इस कारण तनाव, बीमारी, आत्मघाती विचार, आक्रामकता और हिंसक व्यवहार पैदा होता है। अनिद्रा, श्रवणेंद्रिय

संबंधी समस्याओं और तनाव के कारण स्वास्थ्य सेवाओं पर खर्च में भी बढ़ोतरी हो जाती है।

1- शारीरिक प्रभाव (Physical Effects): ध्वनि प्रदूषण का सबसे हानिप्रद प्रभाव श्रवण–यंत्र (श्रवणेन्द्रिय) अथवा कानों पर पड़ता है। बहुत तेज आवाज से अथवा ऐसी जगह काम करने या रहने से जहाँ निरन्तर अधिक शेर रहता है, कान का पर्दा फट जाता है या फट जाने का भय रहता है। अतः कम सुनाई देना, कानों में सीटी की आवाजें आना, कान का सुन्न हो जाना प्रायः हो जाता है। ऐसी भी स्थिति सम्भव है कि बिल्कुल ही सुनाई न देने लगे।

शोर की अनुमत सीमाओं से अधिक होने पर शरीर में अनेक अस्थायी शारीरिक परिवर्तन होते हैं। स्वेद ग्रंथियां अधिक सक्रिय हो जाती हैं, श्वास क्रिया तेज हो जाती है, हृदय गति बढ़

जाती है, रक्तदाब भी बढ़ जाता है और अंतरकपालीय दबाव भी।

उच्च डेसिबेल शोर नींद में भी बाधा डालता है। इसके कारण आंखों की पुतलियां

सिकुड़ जाती है, जिससे रंगों को देखने की क्षमता तथा रात में देखने की क्षमता का भी हास हो जाता है। ऐसे लोग जो देर रात तक चलने वाली पार्टियों में तीव्र संगीत पर झूमते हैं और फिर गाडी चला कर घर लौटते हैं, उन्हें इस बात पर खास ध्यान देना चाहिए।

अन्य शारीरिक प्रभावों में यह पता लगाया गया है कि शोर हृदय, पाचन तंत्र तथा तान्त्रिक–तन्त्र पर भी प्रभाव डालता है। अधिक शोर में रहने वाले व्यक्ति में रक्तचाप का बढ़ना, हृदयगति का तेज होना और दिल के दोरे के पड़ने की सम्भावना रहती है। पाचन तन्त्र के गड़बड़ा जाने से अल्सर हो जाते हैं। स्नायुतन्त्र विशेषज्ञों के अनुसार शोर पीड़ितों में सिरदर्द, बेचौनी, चक्कर आना, जी मितलाना और थकान के अलावा एक खास प्रकार की मिर्गी भी आ सकती है। इस प्रकार के रोगी को चर्च की घंटियों, पाप संगत और पियानो की आवाज से दौरे पड़ने लगते हैं।

तेज शोर से वार्तालाप करने में जोर लगाने से स्वर यन्त्र में सूजन आ जाती है, गले में खराश हो जाती है जो बआद में स्थायी रोग बन जाता है। ध्वनि प्रदूषण से आँखें पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। आँखों की पुतली का आकार छोटा हो जाता है। रंग पहचानने की क्षमता में कमी आ जाती है तथा रात्रि में दृष्टि क्षमता कम हो जाती है। शरीर की बाहरी त्वचा में रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होना तथा बारीक चर्म पर्त उतरने की आशंकाएँ भी बनी रही हैं।

शोर के बीच रहने से अनेक प्रकार के दुष्प्रभाव पड़ सकते है जैसे सर्दी–जुकाम, रक्तदाब में बदलाव, अनय हृदयवाहिका संबंधी परिवर्तन, जठारांत्र विकार तथा सामान्य थकान। अत्यधिक शोर पाचनतंत्र को भी प्रभावित कर सकता है और छाती की जलन, अपच और अल्सर पैदा कर सकता है। शोर के कारण सिर भी घूम सकता है और मतली भी आ सकती है।

कान बहरे हो सकते हैं। शोर से प्रभावित व्यक्ति सुनने की क्षमता में बढ़त भी अनुभव कर सकता है साथ ही कानों में घंटियां बजने और भनभनाहट की भी शिकायत करता है। इन चेतावनियों पर ध्यान न देने से सुनने की क्षमता कम होने लगती हैं। इस बारे में अनेक प्रमाण उपलब्ध है कि 80 डी.बी.ए.या इससे अधिक ध्वनि स्तर के शोर के बीच लगातार मौजूदगी से बहरापन पैदा हो सकता है। श्रवण क्षमता के ह्रास की सीमा व्यक्ति की शोर के बीच उपस्थिति पर निर्भर करती है। 80 डेसिबेल या उससे अधिक ध्वनि स्तर के बीच लगातार या बार–बार मौजूदगी से आंतरिक कान में स्थित अंग नष्ट हो सकता है।

2- मानसिक प्रभाव (Mental Effects): अधिक शोर से व्यक्ति में सहन शक्ति की कमी, चिड़चिड़ापन, बात–बात पर चीखना, अनिद्रा, भ्रम, एकाग्रता में कमी तथा कार्य क्षमता में कमी आ जाती है। बौद्धिक क्षमता का ह्रास होता है।

शोर मस्तिष्क की एकाग्रता में बाधक होता है, पारस्परिक बातचीत में अक्षम बनाता है और कार्य कुशलता का हास करता है। शोर की वजह से लोग अपना संयम खोने लगते हैं और उसका प्रभाव सामाजिक आचरण पर भी पड़ता है। शोर के व्यवधान, अवरोध और भटकाव के कारण आक्रोश और कुंठा बढ़ जाती है। समुदाय पर पड़ने वाले शोर के असर का एक प्रमुख लक्षण कामकाज में होने वाला अवरोध माना गया है।

शोर के कारण उपजने वाला तनाव रोजमर्रा की दिनचर्या में गंभीर तनाव को जन्म दे सकता है और व्यक्ति को मनोरोगी भी बना सकता है। इसीलिए बेहतर इसी में है कि अपने कार्यस्थल और गली–कूचों को ध्वनि के स्तर के लिहाज से अनुकूल बनाया जाए।) ध्वनि प्रदूषण से बचने के उपाय (Precautionary Measures of Noise Pollution)

ध्वनि प्रदूषण से मनुष्य को कितनी और किस–किस प्रकार की हानि हो सकती है इसकी जानकारी के बाद यह तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि पर्यावरण के क्षेत्र में यह दिखाई न देने वाला वह मीठा जहर है जो अनजाने ही लोगों को धीरे–धीरे मृत्यु तक पहुँचा सकता है। इस पर बहुत गहराई से चिन्तन करना चाहिए तथा इससे बचने के व्यापक उपाय किये जाने चाहिए–

1- शोर का ध्वनि स्रोत पर ही नियन्त्रण शोर जिस यन्त्र या उपकरण से हो रहा है उन यन्त्र/ उपकरण/ मशीनों को इस प्रकार डिजाइन किया जाना चाहिए जिससे शोर उत्पन्न करने वाले उपकरणों जैसे ट्रक, बस, स्कूर, मोटरसाइकिल, मोपेड, मशीनें, वायुयान आदि के इंजनों को या तो शोर नियंत्रण कवचरों से बँका जा सके जिससे शोर कम हो जाय या फिर शोर न करने वाले इंजन तैयार किये जायें। मोटरसाइकिल, स्कूटर, गाड़ियों के साइलेंसरों की नियमित चेकिंग हो, जिससे शेर कम हो। साइरन, हार्न आदि का प्रयोग आबादी क्षेत्र में प्रतिबन्धित हो।

वृक्षों की गहरी मोटी पट्टी शोर को कम करती है। उद्योगों के निकट तथा सड़क के दोनों आर वृक्ष लगाये जाने चाहिए। थोर, तेंदू, बेलपत्र, जामुन, ग्वारपाठा, केवड़ा, आम, कनेर, पीपल, करन्ज, यूकेलेप्टिस, आसापाला, नीम, पापड़ी, रोहणी, इमली और गुलमोहर आदि अच्छे ध्वनि चूषक हैं।

2- शोर को फैलने से रोकना कमरों, कारखानों की दीवारों में ध्वनि अवशोषक पदार्थों का उपयोग करके शोर को फैलने से रोका जा सकता है। जो व्यक्ति अधिक शोर वाले स्थानों (फैक्ट्री, औद्योगिक संस्थान, एयरपोर्ट, एक्सप्लोजन कार्य आदि पर कार्य करते हो, उन्हें कानों के ईयर प्लग्सश की सुविधा दी जानी चाहिए। ऐसी व्यवस्था भी शोर के प्रभाव को कम कर सकती है जिसमें कर्मचारी को एक साथ बहुत लम्बे समय तक शोर के स्थान पर न रहना पड़े या कार्य न करना पड़े।

3- शोर की अभिशंषित सीमाओं का पालन करना हम यह पहले बता चुके हैं कि एक औसत व्यक्ति के ध्वनि की श्रवण क्षमता, जिसे वह दिन–प्रतिदिन के काम में स्वीकार करता है, 80 डीबी होती है। ध्वनि की आवृत्ति 1000 हर्ट्ज स्वीकारी गई है, लेकिन यह भी हर स्थिति में समान नहीं होती है। स्थान (होटल, सोने का कमरा, पुस्तकालय, अस्पताल आदि), समय (प्रातः, दोपहर, सायं, रात्रि, अर्द्धरात्रि आदि), आयु (बालक, जवान व वृद्ध) और मानसिक स्थिति का भी आवश्यक असर होता है। कभी कम ध्वनि भी प्रदूषण का माध्यम बन जाती है और कभी अधिक आवाज भी टाल दी जाती है।

विभिन्न स्थानों पर अभिशंषित और स्वीकार किये जाने योग्य ध्वनि सीमा निम्नांकित तालिका में दर्शायी गई है–

अभिशंषित एवं स्वीकार किये जाने योग्य ध्वनि सीमा

| क्षेत्र | विशिष्ट स्थल | ध्वनि सीमा (डीबी में) |
|---|---|---|
| स्टूडियो | रेडियो, टीवी, अन्य संगीत | 30–38 |
| सभा भवन | संगीत सभाएँ, चलचित्र, प्रतियोगी खेल | 34–38 |
| विद्यालय व्याख्यान कक्ष | अध्ययन कक्ष, पुस्तकालय, प्रयोगशालाएँ | 38–42 |
| प्रार्थना का स्थान | पूजागृह, बाहरी बरामदा | 38–42 |
| चिकित्सालय | प्राइवेट कक्ष, आपरेशन कक्ष, कोरीडोर, वार्ड्स | 38–42 |
| आवास | ग्रामीण क्षेत्र, शहरी क्षेत्र, कालोनीज | 34–42 |
| रेस्टोरेन्ट्स | भोजन कक्ष, अल्पाहार गृह, बार (शराब घर) | 50 |
| स्टोर्स | विभागीय, खुदरा, सुपर मार्केट | 50–54 |
| कार्यालय | प्राइवेट, बैंक, लेखा सम्बन्धी | 46–50 |
| वर्कशाप्स | मशीन शॉप, कारपेन्टर शॉप, इलेक्ट्रिक शॉप | 70 |
| होटल | नृत्यगृह, निवास कक्ष, प्रतीक्षा कक्ष | 42–46 |
| स्पोर्ट्स | जिमनेजियम, स्विमिंग पूल | 46–50 |

(स्रोत: एनवायरमेन्टल क्वालिटी मैनेजमेन्ट बिन्दु एन. लोहानी, पृ. 112)

कोई भी ध्वनि स्रोत कितने समय तक आवाज करता है यह भी बहुत महत्वपूर्ण है। अधि एक तीव्रता वाली ध्वनि यदि अधिक देर तक सुनी जाय तो उसे हानिप्रद की श्रेणी में रखेंगे। लोहानी ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार्य योग्य शोर सीमा की अवधि का निम्न प्रकार प्रस्तुत किया है–

स्वीकार्य योग्य शोर सीमा की अवधि

| प्रतिदिन अधिकतम समय | ध्वनि तीव्रता (डीबी में) |
|---|---|
| 120 मिनट से अधिक | 85 डीबी |
| 120 मिनट से कम | 90 डीबी |
| 50 मिनट से कम | 95 डीबी |
| 25 मिनट से कम | 100 डीबी |

| | |
|---|---|
| 16 मिनट से कम | 105 डीबी |
| 12 मिनट से कम | 110 डीबी |
| 8 मिनट से कम | 115 डीबी |
| 5 मिनट से कम | 120 डीबी |

इससे यह स्वतः ही स्पष्ट है कि अधिक देर तक आवाज में चलने वाला डिस्को, जो सामान्यतया रुचिअनुकूल भी है, से भी श्रोता क्यों परेशान हो जाते हैं? 140 डीबी के आसपास ध्वनि वाले जैट हवाई जहाज की आवाज का असह्य होते हुए भी इसलिए सहन कर लेते हैं क्योंकि उसके उतरने व चढ़ने की कुल समयावधि 1 मिनट से भी कम होती है।

4- व्यवस्थाओं में अपेक्षित परिवर्तन करना शोर से होने वाला परिणाम (ध्वनि प्रदूषण का हानिकारक असर) तो उन पर पड़ता ही है, जो वहाँ रहते हैं, अतः जहाँ व्यक्तिगत सम्भव हो वहाँ स्वयं और जहाँ सरकार अथवा संस्थान के अधिकारी प्रभारी हों उन्हें उन व्यवस्थाओं में परिवर्तन कर लेनाध्देना चाहिए जिससे शोर का न्यूनतम असर पड़े।

कुछ बातें यहाँ सुझाई गई हैं:–

1- अपने घरों में रेडियो, टीवी, टेपरिकार्डर अथवा अन्य मनोरंजन के साधनों को धीमी आवाज में बजायें, सामूहिक कीर्तन, भजन व अखण्ड पाठ जैसे कार्यक्रमों में ऊँची आवाज में लाउडस्पीकरों का उपयोग न करें। स्वयं घर में धीमे बोलें तथा परिवार के सभी सदस्यों को धीमे बोलने के लिए कहें।

2- ट्रकों व अन्य भारी वाहनों को यथासम्भव आबादी वाले भागों से निकलने पर रोक लगे। वाहनों के हार्न भी तेज आवाज वाले (एयर हार्न्स) न हों। दुपहिया स्वचालित वाहन एवं अन्य कारें, बसें आदि के साइलेन्सरों की नियमित जाँच हो जिससे तेज आवाजों से बचा जा सके। अधिक आवाज वाले कारखानों व उद्योगों को शहर से काफी दूर स्थानान्तरित कर दिया जाना चाहिए।

3- संवेदनशील स्थान जैसे अस्पताल, विद्यालय, अधिक आबादी वाले क्षेत्रों को श्साइलैन्सा जोन्सश बना दिया जावे।

4- वृक्ष भी ध्वनि का अवशोषण करते हैं। बड़ी–बड़ी फैक्ट्रियों, कारखानों के बाहर वृक्षों की मोटी परतों का रोपण करना चाहिए। वृक्ष ध्वनि की तीव्रता भी कम करते हैं। अनेक प्रकार की जहरीली गैसों को अवशोषित कर लेते हैं तथा मनभावन वातावरण भी बनाये रखते हैं।

5- ध्वनि प्रदूषण के बारे में शिक्षित करना सभी स्तर व सभी आयु वर्ग के लोगों को ध्वनि प्रदूषण के कारण और उससे होने वाले दुष्परिणामों के बारे में यथेष्ट जानकारी दी जानी चाहिए। समाचार–पत्र, पत्रिकाएँ, रेडियो कार्यक्रम, टीवी सीरियल, फिल्म डाकूमेन्टरीज, पोस्टर्स आदि कई प्रभावी विधाओं को अपनाया जा सकता है। जैसे–जैसे लोगों को इस अदृश्य प्रदूषण की जानकारी मिलेगी वैसे–वैसे उनमें शोर से बचने का मानस बनेगा और ध्वनि प्रदूषण से उन्हें राहत मिलेगी।

विद्यालयों में बच्चों को ध्वनि प्रदूषण के बारे में जानकारी देनी चाहिए तथा उन्हें व्यवहार में ढालने को प्रेरित करना चाहिए। वह कक्षा–कक्षों में, पुस्तकालय में कम बोलें, धीमे स्वर में बोलें। यह प्रभाव उन्हें घर पर भी धीमे बोलने को प्रेरित करेगा।

6- ध्वनि प्रदूषण और कानून जैसे किसी भी समस्या को ठीक से व्यवस्थित करने के लिए कानूनी प्रावधान रखे गये हैं और अन्य में इस प्रदूषण को अत्यन्त हानिकारक मानकर बनाये जा रहे हैं। इंग्लैण्ड में शोर रोकथाम अधिनियम, 1960 (नॉइज एबेटमैन्ट एक्ट, 1960) बना है जिसमें रात्रि को 9 बजे से प्रातः 8 बजे तक ध्वनि विस्तारक यन्त्रों पर रोक है। अमेरिका में ध्वनि प्रदूषण की रोकथाम के लिए शोर नियन्त्रण अधिनियम, 1972 (नॉइज कन्ट्रोल एक्ट, 1972) बनाया है। जापान में मूल कानून में प्रदूषण नियन्त्रण के सन्दर्भ में पर्यावरणीय जागृति व नियन्त्रण हेतु यथेष्ट प्रावधान है।

लेकिन भारत में शोर नियन्त्रण के सन्दर्भ में कोई अलग से स्पष्ट केन्द्रीय कानून नहीं है। अभी हाल में ही पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 (एनवायरमेन्टल प्रोटेक्शन एक्ट, 1986) में ऐसी व्यवस्था रखी गई है जिसमें किसी भी प्रकार के प्रदूषण के सन्दर्भ में नियम बनाये जा सकते हैं और उन पर विधि संगत कठोरता से पालन किया जा सकता है। इस अधिनियम के तहत इसके सेक्शन 15 में नियमों के पालन न करने पर कड़ी सजायें प्रस्तावित हैं। कानून की अवहेलना पर दोषी व्यक्ति को 5 वर्ष तक की सजा या एक लाख रुपये तक का आर्थिक दण्ड या दोनों दी जा सकती हैं। पहली सजा के बाद भी यदि प्रदूषण जारी रहता है तो दोषी व्यक्ति को और आर्थिक दण्ड दिया जा सकता है, जो पाँच हजार रुपये प्रतिदिन तक हो सकता है। यदि प्रदूषण एक वर्ष तक की अवधि से आगे भी चलता है तो दोषी को सात वर्ष तक की कैद दी जा सकती है। पर आज इस अधिनियम के तहत ध्वनि प्रदूषण के सन्दर्भ में नियम बनाकर उन्हें संसद में पारित कराने की महती आवश्यकता है।

इससे पूर्व शोर के सन्दर्भ में जन–उपद्रव को रोकने के लिए सुझये इण्डियन पेनल कोड के सेक्शन 268 अथवा क्रिमिनल प्रोसीजर कोड, 1973 के दसवें अध्याय के सेक्शन 133 तथा ग्यारहवें अध्याय के सेक्शन 144 को काम में लिया जाता था। इनकी सजायें इतनी कम थी कि

इनका कोई महत्व ही नहीं था। राज्य स्तर पर मध्य प्रदेश ने संगीत और शोर अधिनियम, 1950 (कन्ट्रोल आफ म्यूजिक एण्ड नॉइजेज एक्ट, 1950), बिहार सरकार ने ध्वनि विस्तारक यन्त्र को बजाने पर नियन्त्रण अधिनियम, 1955 (कन्ट्रोल आफ दी यूज ऑफ लाउडस्पीकर एक्ट, 1955) और राजस्थान सरकार ने शोर नियन्त्रण अधिनियम, 1963 (नॉइज कन्ट्रोल एक्ट, 1963) बनाये थे, पर उनकी

व्यापक यथार्थता सिद्ध नहीं हो सकी ओर किसी न किसी प्रकार यह प्रभावहीन रहे हैं।

ध्वनि प्रदूषण को कम करने और उससे बचने के लिए हर स्तर पर बहुत चिन्तन की आवश्यकता है, क्योंकि प्रदूषण के क्षेत्र में धीमे–धीमे जन साधारण की उपेक्षा पाकर इसमें जाने–अनजाने निरन्तर वृद्धि हो रही है। मानव को स्वस्थ, सन्तुलित और समाज में समायोजित होने के लिए उसे इस समस्या से छुटकारा पाना होगा।

**सन्दर्भ प्रश्नावली**

1- ध्वनि प्रदूषण के शारीरिक तथा मानसिक प्रभावों की व्याख्या करें।

2- ध्वनि प्रदूषण के मुख्य स्रोत क्या हैं? इन्हें कैसे नियंत्रित किया जा सकता है?

3- अनियोजित नगर फैलाव कई तरह की पर्यावरणीय समस्याओं को जन्म देता है। इसकी विवेचना करें।

4- सांस्कृतिक प्रदूषण पर टिप्पणी लिखें।

# इकाई –03
# प्रदूषण स्रोत– उद्योग, परिवहन, उपभोग, तापीय प्रदूषण आदि

**इकाई की रुपरेखा–**

**3.0 उद्देश्य**
**3.1 प्रस्तावना**
**3.2 पर्यावरण प्रदूषण**
**3.3 प्रदूषण का वर्गीकरण**
**3.4 उद्योग, परिवहन, तापीय प्रदूषण के कारक एवं स्रोत**
**3.5 उपभोग तापीय प्रदूषण का प्रभाव**
**3.6 हरितगृह प्रभाव**
**3.7 हरितगृह गैसें**
**3.8 औद्योगिक प्रदूषण के प्रभाव**
**3.9 ओजोन पर्त की क्षीणता**
**3.10 परिवहन प्रदूषण के प्रभाव**
**3.11 निष्कर्ष**
**3.12 बोध प्रश्न एवं उनके उत्तर**
**3.13 अभ्यासार्थ प्रश्न**
**3.14 संदर्भ ग्रंथ एवं उपयोगी पुस्तकें**

**3.0 उद्देश्य–**

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप निम्न बिन्दुओं को समझने में सक्षम होगें:

- हम पर्यावरण प्रदूषण के वर्गीकरण का अध्ययन करेंगे
- हम उद्योग परिवहन एवं उपभोग तापीय प्रदूषण के कारको एवं स्रोतों का अध्ययन करेंगे
- हम उपभोग तापीय प्रदूषण के प्रभाव का अध्ययन करेंगे
- हम औद्योगिक प्रदूषण प्रदूषण के प्रभाव का अध्ययन करेंगे
- हम परिवहन प्रदूषण के प्रभाव का अध्ययन करेंगे

**3.1 प्रस्तावना (Introduction)**

वर्तमान समय में विकास के इस दौर में अपनी प्रकृति को ही सबसे बड़ा नुकसान पहुंचा रहे हैं। आज वैज्ञानिक तौर–तरीकों के विकास में अनेक रसायनिक पदार्थों और मशीनों आदि का प्रयोग हो रहा है आज ग्लोबल वार्मिंग विश्व की सबसे बड़ी समस्या है जो कि पर्यावरण प्रदषण के कारण ही उत्पन्न हुई है।

पर्यावरण प्रदूषण विभिन्न प्रकार के होते हैं जैसे जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण आदि। कल कारखानों और विद्युत गृहों द्वारा वायु में सल्फर, ऑक्साइड, कार्बन डाई ऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड, आर्सेनिक, नाइट्रस ऑक्साइड आदि रसायनिक तत्वों के छोड़े जाने से वायु प्रदूषण बढ़ रहा है। घरेलू सीवेज, औद्योगिक अपशिष्ट, रसायनिक खाद, बढ़ते तापमान आदि के कारण जल प्रदूषण बढ़ रहा है। कैल्शियम, मैग्नीशियम, सल्फर, आयरन, तांबा, जिंक आदि तत्वों के कारण मृदा प्रदूषण और ऊर्जा के लिए रेडियो आइसोटॉप का प्रयोग शोध, औषधि विनिर्माण और उद्योग के कारण रेडियोधर्मी प्रदूषण बढ़ता ही जा रहा है। जनसंख्या वृद्धि और शहरीकरण भी प्रदूषण के मुख्य कारण हैं।

प्रदूषण के कारण ही सूर्य के हानिकारक, पराबैंगनी प्रकाश को पृथ्वी पर आने से रोकने वाली ओजोन परत में आज छिद्र हो गया है। ओजोन वायुमण्डल की एक सूक्ष्म परत है जो समुद्री सतह से 60 कि.मी. की ऊँचाई तक विविध सांद्रता में पाई जाती है। पराबैंगीन प्रकाश और क्लोरोफ्लोरो कार्बन अणु के बीच होने वाली श्रृंखला प्रतिक्रिया के कारण विश्व के समक्ष ओजोन रिक्तीकरण जैसी गंभीर समस्या उत्पन्न हुई है।

## 3.2 पर्यावरण प्रदूषण

पर्यावरण प्रदूषण का तात्पर्य ऐसी मानवीय गतिविधियों से है जिससे पर्यावरण में किसी भी वांछित तत्वों के शामिल होने से पर्यावरण और पारिस्थितिकी में असंतुलन उत्पन्न होता है जो कि प्रदूषण का कारण बनते हैं जैसे की स्वच्छ जल स्रोतों, टैंको, नदियों आदि में सीवर का जल शामिल हो जाने से जल प्रदूषण उत्पन्न होता है इसी प्रकार पर्यावरण प्रदूषण के विभिन्न कारकों को प्रदूषण कहा जाता है जैसे कि प्रदूषण के रसायन, जैविक या भौतिक कारक हो सकते हैं जो की दुर्घटनाबस पर्यावरण में शामिल हो जाते हैं जो अन्य जीवित प्राणियों के लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से हानिकारक सिद्ध होते हैं।

## 3.3 प्रदूषण का वर्गीकरण–

### स्थिरता के आधार पर प्राथमिक प्रदूषक –

प्राथमिक प्रदूषक वह प्रदूषक है जो पर्यावरण में जिस रूप में शामिल होते हैं उनके रूपों में किसी प्रकार का कोई परिवर्तन नहीं होता है जैसे कि डीटीटी प्लास्टिक आदि

**द्वितीय प्रदूषक–** यह प्रदूषक प्राथमिक प्रदूषकों से परस्पर क्रिया द्वारा निर्मित होते हैं जैसा की पेरोएसीएसिटिलनाइट्रेट, नाइट्रोजन ऑक्साइड और हाइड्रोकार्बन की परस्पर क्रिया से बनते हैं

**प्रकृति में अस्तित्व के आधार पर मात्रात्मक प्रदूषक–** यह प्रदूषक प्रकृति में पाए जाते हैं जो कि अधिक गंभीर रूप धारण करते हैं जब इनकी सांद्रता एक निश्चित सीमा से अधिक हो जाती है जैसे कि कार्बन डाईऑक्साइड नाइट्रोजन ऑक्साइड यह मात्रात्मक प्रदूषक है

**गुणात्मक प्रदूषक**– यह प्रदूषक मानव निर्मित होते हैं और प्रकृति में स्वतंत्र रूप से नहीं पाए जाते जैसे कवक नाशक शाकनाशी डीडीटी,

### जैव निम्नीकरण के आधार पर जैव निम्नीकरणीय प्रदूषक

अपशिष्ट उत्पाद या प्रदूषक जो प्राकृतिक प्रक्रिया में माइक्रोबॉयल क्रिया द्वारा विघटित या अवक्रमित होते हैं जैसे सीवेज

### गैर निम्नीकरण प्रदूषक

वह प्रदूषक जो प्राकृतिक रूप से विघटित नहीं होते हैं यह धीरे–धीरे विघटित होते हैं जैसे डीडीटी, एल्युमिनियम के डिब्बे इत्यादि

**उत्पत्ति के आधार पर प्राकृतिक प्रदूषक–**

यह प्रदूषक प्राकृतिक क्रियाओं के दौरान उत्सर्जित होते हैं जैसे ज्वालामुखी विस्फोट वनों की आग उदाहरण के लिए ज्वालामुखी विस्फोट में सल्फर डाइऑक्साइड और कार्बन डाइऑक्साइड गैसे निकलतती हैं जबकि जंगलों की आग में कार्बन मोनोऑक्साइड और धूल के कारण निकलते हैं

**मानव जनित प्रदूषक –**

यह प्रदूषण मानवीय गतिविधियों के दौरान उत्सर्जित होते हैं जैसे जीवाश्म इंधनों के जलने दहन से कार्बन डाइऑक्साइड का उत्सर्जन उदाहरण के लिए औद्योगिक गतिविधियों से निकलने वाले नाइट्रोजन ऑक्साइड और वाहनों से निकलने वाले कार्बन मोनोऑक्साइड मानव जनित प्रदूषण है

## 3.4 उद्योग, परिवहन, तापीय प्रदूषण के कारक एवं स्रोत

वायु मनुष्य के लिए एक आवश्यक जीवन रक्षा तत्व है। बिना इसके वह कुछ मिनट ही जीवित रह सकता है। वह सामान्य स्थिति में प्रतिदिन 22,000 बार साँस लेकर 16 किग्रा प्राणवायु (आक्सीजन) का उपयोग करता है जो उसे वायुमण्डल से प्राप्त होती है। वायुमण्डल में ऑक्सीजन के असीमित भण्डार हैं। स्पष्ट है कि अपेक्षित मात्रा में वायु ही उसके जीवन को सामान्य रूप से चलाती है। इसके साथ ही वायु की स्वच्छता भी आवश्यक है, जिससे मनुष्य का जीवन बिना किसी हानि (अस्वस्थता) के चलता रहे।

वायुमण्डल केवल वायु का भण्डार ही नहीं है जिससे हमारी श्वसन क्रिया चलती रहती है वरन् यह एक विभिन्न गैसीय पदार्थों का ऐसा आवरण है जो पृथ्वी को चारों ओर से घेरे रहती है और विशेषतः सूर्य से आने वाली अत्यधिक ताप की किरणों से उसकी रक्षा करती है। यही आवरण पृथ्वी तथा पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्य, पशु तथा पौधों को सौर (Solar) और अन्तरिक्षीय विकिरण (Cosmetic Radiation) से होने वाली हानि से भी रक्षा करता है। यह एक ऐसा सुरक्षा कवच है जिसमें बन्द रही पृथ्वी की सभी क्रियाएँ और उस पर निवास करने वाले जीवधारी के सभी क्रियाकलाप अत्यन्त स्वतन्त्रता और स्वच्छन्दता से निष्पादित होते हैं। यह प्राकृतिक संसाधन हमें विरासत में मिला है और इसकी मात्रा भी इतनी अधिक है कि जब तक पृथ्वी पर सृष्टि रहेगी तब तक सभी जीवधारियों के कितने भी उपयोग किये जाने पर भी इसके समाप्त होने की सम्भावना नहीं है। भौतिक वेत्ताओं ने यह अनुमान लगाया है कि पृथ्वी के सभी ओर की वायु की मात्रा लगभग 5,200X102 मैट्रिक टन है (एक घनमीटर वायु का मोल समुद्री सतह पर 1.170 ग्राम होता है) और यह मात्रा लगभग स्थिर ही रहती है।

## 3.5 तापीय प्रदूषण का प्रभाव

### (अ) विश्वतापन (Global Warming)

1- समस्या (Problem) विश्वतापन बढ़ते हरितगृह प्रभाव (Greenhouse Effect) का परिणाम है, जिसमें पृथ्वी पर के तापक्रम में निरन्तर वृद्धि हो रही है। इस बढ़ते तापमान का असर विश्वभर के मौसम तंत्र पर पड़ना अवश्यम्भावी है, जिससे कई समस्याओं की उत्पत्ति सम्भव है। विश्व के अनेक क्षेत्रों में पानी (वर्षा) आधिक्य होगा तो कहीं–कहीं क्षेत्र सूखे (कम वर्षा वाले अथवा रेगिस्तानी) हो जायेंगे। इसके परिणामस्वरूप खाद्यान्न उपज गड़बड़ा जायेगी और भोजन की कमी की आशंका बन सकती है। इस बात की भी सम्भावना है कि ध्रुवों पर की बर्फ पिघलने लगे जिससे समुद्री जल सतह की ऊँचाई में वृद्धि हो और अनेक निचले भू–भाग जलमग्न हो

जायें। यह अनुमान है कि वर्तमान तापमान की वृद्धि गति से अगले 100 वर्षों में पृथ्वी पर का तापमान 3°C तक बढ़ जायेगा और फलस्वरूप 10 से 15 सेमी तक की जल सतह की वृद्धि से विश्व स्थिति बहुत अस्त व्यस्त हो जायेगी।

अनेक देशों के महत्त्वपूर्ण नमभूमि क्षेत्र, कच्छ वनस्पति और प्रबवाल भित्तिक्षेत्र समाप्त हो जायेंगे, जिससे सम्पूर्ण विश्व की जैविक विविधता और उससे प्राप्त होने वाले आर्थिक लाभ से वंचित होना पड़ेगा। निचले परितंत्र नष्ट हो जायेंगे, नवीन परितंत्र जन्म लेंगे और प्राणियों की जीवन शैली पर भी शनैः शनैः प्रभाव पड़ेगा।

**3.6 हरितगृत प्रभाव** (Greenhouse Effect)– ग्रीनहाउस' एक बहुत पुराना शब्द है जिसका आशय किसी बगीचे अथवा पार्क में उस भवन से है जिसमें शैली की दीवारें और छत होती हो तथा जिसमें आप उन पौधों को उगाते हों जिन्हें अधिक ताप की आवश्यकता होती हो। इसी शब्द को पर्यावरण के एक सिद्धान्त को प्रतिपादित करने हेतु श्ग्रीन हाउस प्रभाव के रूप में काम में लिया गया है। "ग्रीन हाउस प्रभाव पृथ्वी पर के तापमान में निरन्तर वृद्धि होने की की समस्या है क्योंकि सूर्य से आने वाले ताप को पृथ्वी पर रोक तो लिया जाता है पर उसे वायुमण्डल से बाहर नहीं निकाला जा सकता है।"

वस्तुतः ग्रीनहाउस प्रभाव का कारण मुख्यतः ग्रीनहाउस गैसें (कार्बन डाइऑक्साइड, स्मोग गैसे– मीथेन सहित) जलवाष्म और बर्फ कण होते हैं, जो वायुमण्डल में अपनी एक पर्त का आवरण बना लेते हैं।

सूर्य से आने वाली किरणों इस पर्त में से गुजर कर पृथ्वी पर टकराती है पर वहाँ से वापस लौटते तापीय विकिरण को अपने आप में अवशोषित कर लेती हैं और उसे वायुमण्डल से बाहर नहीं निकलने देतीं। इसमें वायुमण्डल का ताप बढ़ जाता है। इसे ही 'ग्रीनहाउस प्रभाव का नाम दिया है। A- Ryabchikov ने अपनी पुस्तक 'The Changing Face of Earth में इसको 'Hothouse Effect' (पृष्ठ 162) नाम दिया है, क्योंकि उनके अनुसार कार्बन डाइऑक्साइड मुख्यतः पृथ्वी की सतह तथा अपने बीच एक ऐसा संभाग (घर) तैयार कर लेती है. जिसमें तापमान की वृद्धि होती है।

3- हरितगृत गैसें (Greenhouse Gases)रू वैज्ञानिकों ने अब तक लगभग 30 हरितगृह गैसों की शिनाख्त की है। जिनमें से कुछ गैसें लाखों वर्ष से हैं। प्रमुख गैसों में (1) कार्बन डाइऑक्साइड (2) मीथेन (3) जलवाष्प (4) नाइट्रस ऑक्साइड और (5) ओजोन हैं। अब इनमें प्रमुखता से क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स और जुड़ी है। इन विभिन्न गैसों की वायुमण्डल में निम्न मात्रा आंकी गई है-

- कार्बन डाइऑक्साइड 49%
- मीथेन 18%
- क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स 14%
- नाइट्रस ऑक्साइड 6%
- अन्य गैसे 13%

4- मानव क्रियाकलापों का योगदान (Contribution of Human Activities)– विश्वतापन में मानव के अनेक कार्यकलाप भागीदार हैं, जो समय के साथ विकास से भी जुड़े हैं और उसके अदूरदर्शितापूर्ण प्रक्रियाओं से भी।

5- सम्भावित समाधान (Possible Solutions) कारणों को दृष्टिगत करते हुए अनेक समाधान विशेषज्ञों ने सुझाये हैं, उनमें से कुछ महत्त्वपूण सुझाव यहाँ दिये जा रहे हैं–

- जीवाश्म ईंधन, जैसे– कोयला, तेल (पेट्रोल सहित) आदि का उपयोग कम किया जाय।
- व्यक्तिगत ऊर्जा व्यय में खपत कम करने की आदत डालें, उदाहरणार्थ करो के बजाय बसों का अधिक उपयोग करें।
- आम जन भागीदारी को ऊर्जा का महत्त्व और उससे होने वाले दुष्परिणामों से परिचित कराया जाय। बाइसिकिल का उपयोग बहुत उत्तम व श्रेष्ठ है।
- अधिक वृक्षारोपण हो ओर वर्तमान में लगे वृक्षों की सुरक्षा की जाये। यह वृक्ष कार्बन डाइआक्साइड को अवशोषित कर हरितगृह प्रभाव की समस्या को कम करेंगे।
- CFC's के प्रयोग वाले साधनों का इस्तेमाल रोका जाये।

## 3.7 हरितगृह गैसें (Greenhouse Gases)

- कार्बन डाइऑक्साइड (Carbon dioxide: $CO_2$)– इस गैस की हरितगृह प्रभा में सर्वाधिक प्रमुखता है। जीवाश्म ईंधन के जलन से (80%) और अवन्यीकरण से (20%) इस गैस के मुख्य कारण हैं।
- मीथेन (Methane: CH) वायुमण्डल की एक तिहाई मीथेन दलदल और कीचड से स्वतः उत्पन्न होती है। अन्य कारणों में (1) पशु–गोबर (2) मृत पशु (3) चावल के खेत (4) अवन्यीकरण और (5) मनुष्य के मल–मूत्र हैं
- क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स (Chlorofluoro-carbons: CFCs)– यह गैस रेफ्रिजरेटर्स, एयर कन्डीशनर्स के निर्माण, प्लास्टि उद्योग, एरोसोल्स के रूप में काम आती है। एक बार वायुमण्डल में रिसने पर अनेक वर्षों तक नष्ट नहीं होती है। भारत सरकार ने इसे समयबद्ध तरीके से बन्द करने का प्रोग्राम निश्चित किया है।
- नाइट्रस ऑक्साइड (Nitrous dioxide: $N_2O$)– इस गैस के निर्माण के (1) नाइट्रोजन खाद के उत्सर्जन (2) ऍजिन्स के आन्तरिक दहन तथा (3) जीवाश्म ईंधन के दहन प्रमुख कारण है।
- ओजोन (Ozone : $0_2$) ओजोन स्ट्रेटेसफीयर (समताप मण्डल) में पृथ्वी का सुरक्षा कवच है, पर यही अल्ट्रावायलेट किरणों द्वारा विघटित कर दी जाती है। पृथ्वी की ऑक्सीजन के भाग में ओजोन से निकली अणु आक्सीजन पृथ्वी सतह पर ओजोन की सान्द्रता में वृद्धि करती है और ग्रीनहाउस गैस के रूप में कार्यरत हो जाती है।
- जलवाष्प (Water Vapour: $H_2O$)– जल के कण भाप के रूप में सभी गैसों को बाँधने में सहायक होते हैं। वायुमण्डल में इसकी उपस्थिति जल वाष्पीकरण से होती है।

## 3.8 औद्योगिक प्रदूषण के प्रभाव

### (ब) अम्लीय वर्षा (Acid Rains)

1- समस्या और कारण (Problem and Causes) वायु प्रदूषण के प्रभाव के फलस्वरूप अम्लीय वर्षा एक ही पर्यावरणीय समस्या है जिसका असर बहुत लम्बे क्षेत्र तक पड़ता है और दूसरे देश अनजाने ही किसी एक देश की गलतियों का नुकसान उठाते हैं। वस्तुतः विभिन्न उद्योगों की विविध उत्पादन प्रक्रियाओं से निकली कार्बन डाइऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड तथा

नाइट्रिक ऑक्साइड गैसे जब चिमनियों से निकलकर वायुमण्डल में जाती है. तो वहाँ वह जलवाष्प से मिलकर क्रमशः कार्बोनिक अम्ल, सल्फ्यूरिक अम्ल तथा नाइट्रिक अम्ल बनाते हैं। यह गैसें परम्परागत ईंधन के दहन के फलस्वरूप तथा वाहनों से निकलने वाले exhaust से भी निकलकर वायुमण्डल में जाकर मिलती है। वर्षा के साथ यह अम्ल पृथ्वी पर आ जाते हैं और इसे ही अम्लीय वर्षा कहते हैं।

इस वर्षा से जमीन की मिट्टी में अम्लीयता बढ़ जाती है और pH मान में कमी होने के कारण मिट्टी के उपजाऊपन पर इसका प्रभाव पड़ता है। इससे जंगल नष्ट हो जाते हैं. बड़े–बड़े भवन इमारतें–स्मारक आदि का क्षय होने लगता है। पानी के दूषित होने पर जलीय जानवर तथा वहाँ की वनस्पति को भी यह नुकसान पहुँचाती है। इसका अप्रत्यक्ष प्रभाव सीधा मानव स्वास्थ्य पर इस रूप में पड़ता है कि प्राण वायु और जल में ही प्रदूषण नहीं हो जाता है बल्कि अन्न तथा अन्य उगने वाले अनाज आदि भी दूषित हो जाते हैं।

ऐसे विश्व में अनेक उदाहरण है जिनमें विश्वविख्यात इमारतें इस प्रकार की वर्षा के कारण प्रभावित हुई हैं। इग्लैण्ड का प्रख्यात सें पाल गिरजाघर, ब्रिटिश का संसद भवन, न्यूयार्क (अमेरिका) शहर की भव्य अट्टालिकाएँ, एथेन्स (यूनान) का शहर, स्विट्जरलैण्ड की झीलें, नार्वे और स्वीडन के वन–प्रदेश आदि का उल्लेख कई लेखकों ने अलग–अलग जगह किया है। कनाडा में 2000 से 4000 झीलें इस प्रकार की हो गई हैं, जिनमें जल जीवन सम्भव ही नहीं है। यह सब अम्लीय वर्षा के दुष्प्रभाव के कारण है।

इससे भी अधिक विडम्बना यह है कि जैसे हमने प्रारम्भ में वर्णन किया है, दोषी कोई होता है और नुकसान किसी और को उठाना पड़ता है। उद्योग कारखानों की ऊँची चिमनियों से निकले सल्फर और नाइट्रोजन के ऑक्साइडस वायु के वेग के साथ वायु की दिशा में हजारों किमी दूर तक बह जाते हैं और फिर आर्द्रता पाकर कहीं अम्लीय वर्षा के रूप में जा बरसते हैं। उत्तरी अमरीका की फैक्टरियों से निकले $SO_2$, NO, का असर कनाडा पर देखा गया है जबकि ब्रिटेन और फ्रांन्स से निकले ऑक्साइड्स बहुत दूर नार्वे और स्वीडन तक पहुँचकर अम्लीय वर्षा से नुकसान पहुँचाते हैं।

भारत में अभी इसका प्रभाव बहुत अधिक नहीं है। (शायद सर्वे की कमी रही हो) लेकिन बढ़ते उद्योग इकाइयों के समूह से निश्चित ही यह खतरा बहुत दूर नहीं है। हमें अपने देश की उन उद्योग इकाइयों को तो नियंत्रित करना ही है, जो अम्लीय वर्षा का कारण बन सकती हैं, बल्कि अन्य देशों से पड़ सकने वाले कुप्रभावों से बचने के लिए भी कुछ उपाय सोचने होंगे।

**अम्लीय सान्द्रता** (Concentration of Acidity) किसी भी रसायन अथवा वस्तु की अम्लीयता (Acidity) और क्षारीयता (Alkalinty) pH पैमाने पर मापी जाती है। यह पैमाना 0 से 14 तक अंकित होता है तथा लघुगुणक पद्धति पर आधारित है। एक उदासीन (छमनजतंस) विलयन का घोल (Solution) का pH मान 7 से कम तथा क्षारीय घोल का मान 7 से अधिक रहता है। लघुगुणक सिद्धान्त पर आधारित पैमाने के कारण चभ, अम्लीय pH, अम्लीयता से 10 गुनी अधिक होती है। इसी प्रकार pH, क्षारीयता pH, क्षारीयता से 10 गुनी अधिक होती है।

मुख्यतया 3 प्रकार के अम्ल श्अम्लीय वर्षा' में होते हैं–

- सल्फर डाइऑक्साइड से गंधक का तेजाब (Sulphuric Acid).
- नाइट्रोजन डाइऑक्साइड से शोरे का तेजाब (Nitric Acid) और
- कार्बन डाइऑक्साइड से कार्बोनिक एसिड (Carbonic Acid)

कार्बन डाइऑक्साइड गैस के उत्पन्न होने का मुख्य स्रोत जीवाश्म ईंधन का दहन है, जबकि सल्फर डाइऑक्साइड तथा नाइट्रोजन डाइऑक्साइड गैसों का अधिक भाग स्वचालित वाहनों के उत्सर्जन तथा उद्योगों की चिमनियों से निकलने वाले धुएँ से होता है।

अम्लीय वर्षा से हानि (Damage due to Acid Rains)– अम्लीय वर्षा से होने वाली हानियों को निम्न बिन्दुओं में समेकित किया जा सकता है–

(क) वृक्ष और मिट्टी (Trees and Soil)- अम्लीय वर्षा से पेड़ों की पत्तियां जल जाती है, ऊपरी सिरे नष्ट होने लगते हैं और तने कमजोर होते जाते हैं, जिससे पेड़ जल्दी गिर भी जाते हैं और नष्ट भी होने लगते हैं। सबसे अधिक असर मिट्टी पर पड़ता है। मिट्टी के विद्यमान अघुलनशील अल्यूमीनियम अम्लीय वर्षा से घुलनशीन बन जाता है तथा मैगनीशियम को भी नष्ट कर देता है जिनसे वृक्षों की शक्ति कम हो जाती है। अनेक देश इस समस्या के शिकार हुये हैं. जिनका हल सहज नहीं सूझता।

(ख) नदियाँ और झीलें (Rivers and Lakes) अम्लीय वर्षा अपने साथ लाई मिट्टी को जब नदियों और झीलों में डाल देती है तो उनके जल की अम्लीयता बढ़ जाती है। घुले अल्यूमीनियम से जल में विषैलापन आ जाता है। परिणामस्वरूप जल के जानवरों की अकाल मृत्यु भारी मात्रा में होती है जिसका असर भोजन की उपलब्धता में कमी स्वाभाविक है। इन क्षेत्रों का परितंत्र वस्तुतः आशंका के घेरे में आ जाता है।

(ग) इमारतें (Building)– जब अम्लीय वर्षा का अम्ल भवनों व इमारतों पर गिरता है तो सामान्यतया वह बिल्डिंग सामग्री से संक्रिया करता है। विश्व के अनेक ऊँचे–ऊँचे स्मारक, भवन आलीशान इमारतें इसका शिकार बनती हैं। स्थायी समाधान न हो सकने के कारण यह चिन्ता का विषय बना हुआ है।

(घ) बिना दोष के सजा (Punishment without Fault) वायु के लिये कोई देश–विदेशीय सीमाएँ नहीं हैं। अम्मलीय गैसों को ले जाने वाली वायु हजारों किलोमीटर उड़कर चली जाती हैं और जहाँ कहीं भी उसे आर्द्रता मिलती है वहीं जल के साथ संक्रिया करके अम्लीय वर्षा के रूप में बरस पड़ती हैं। इस प्रकार कहीं की गैसें कहीं पहुँच जाती हैं। इसके कुछ उदाहरण समस्या (अ) में दिये हैं।

4- सम्भावित समाधान (Possible Solutions)– यद्यपि इस समस्या को पूरी तरह से हल तो नहीं किया जा सकता. पर फिर भी कुछ उपाय इसे कम करने के किये जा सकते हैं–

- ऐसे ऊर्जा के स्रोतों का उपयोग कम करें जिससे $SO_2$ या, NO, का उत्सर्जन अधिक हो।
- उद्योगों में स्क्रबर्स (Scrubbers) के उपयोग से उत्त्सर्जित होने वाली SO, गेस को स्रोत पर ही रोक लिया जाय।
- द्विपहिया वाहनों का उपयोग कम किया जाय।
- कारों में Catalytic Converter लगाये जायें।
- पानी और मिट्टी में चूने का उपयोग करें, जिससे उनकी अम्लीयता कम हो सके।

## 3.9 ओजोन पर्त की क्षीणता (Ozone Layer Depletion)

1- समस्या और कारण (Problem and Cause) – वायुमण्डल में ओजोन का निर्माण एक स्वाभाविक प्राकृतिक क्रिया है। जब सूर्य की किरणें वायुमण्डल की ऊपरी सतह से टकराती हैं, तो उच्च ऊर्जा विकिरण से ऑक्सीजन ($SO_2$) का कुछ भाग अणु ऑक्सीजन (O) से मिलकर ओजोन (0,) में बदल जाता है। ऐसा वायुण्मण्डल में विद्युत अपघटन तथा मोटर वाहनों के विद्युत स्पार्क से भी होता है।

यह ओजोन एक पर्त रूप में स्ट्रेटोफीयर (समताप मण्डल) में पृथ्वी से लगभग 30 कि मी. की ऊँचाई पर रहती है। यह वस्तुतः एक रक्षा कवच के रूप में कार्य करती है और सूर्य के प्रकाश से पराबैगनी (Ultra Violet) किरणों को पृथ्वी पर आने से रोकती है। पराबैंगनी किरणें बहुत ही हानिप्रद हैं और इससे त्वचा कैन्सर का खतरा रहता है।

ओजोन की मात्रा लगभग 10 चचउ अर्थात् 10 लाख वायु परिमाण में 10 भाग है और सम्पूर्ण पृथ्वी पर हानिप्रद किरणों को वायुमण्डल से ऊपर ही रोके रखने का कार्य एक निश्चित क्रिया के अनुसार करती रहती है। पर अभी पिछले कुछ वर्षों में सुख–साधन की दिशा में 'क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स' का निर्माण कर हमने स्वयं आत्मघाती हथियार चला दिया है। क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स का उपयोग शीत उपकरण जैसे एअर कण्डीशनर्स, रेफ्रीजरेटर्स तथा अन्य उपकरणों में कूलेन्ट्स (ठण्डा करने का पदार्थ) के रूप में किया जाता है, जिसका एक गुणध् ार्म यह भी है कि एक बार वायुमण्डल में छोड़े जाने पर यह नष्ट नहीं हो सकते और सीधे वायुमण्डल की ओजोन पर्त पर हमला कर उसे नष्ट करते हैं। क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स में उपस्थित क्लोरीन ओजोन को ऑक्सीजन में विघटित कर देती है। इससे सूर्य में आने वाली पराबैंगनी किरणों (Ultra Violet Rays) को वायुमण्डल में से प्रवेश का अवसर मिल जाता है।

अमेरिका द्वारा पूर्व में चलाये जाने वाले 'कान्कोर्ड' वायुयान की अत्यन्त तेज चाल और तेज ध्वनि से ओजोन पर्त के विघटन की आशंका हो गई थी, जिसे मानव हित में प्रतिबन्धित कर दिया गया था। अब इसी सन्दर्भ में यह प्रयास किये जा रहे हैं कि CFC (क्लोरोफ्लोरो कार्बन्स) का कोई ऐसा विकल्प बनाया जाय जिससे वर्तमान में हो रहे ओजोन पर्त के विघटन को रोका जा सके।

**ओजोन पर्त की वर्तमान स्थिति** (Present Status of Ozone Layer) – ओजोन

सूर्य की अधिक गर्मी से भूमध्य रेखा पर अधिक बनती है। स्ट्रेटेस्फीयर (समताप मण्डल) में चलने वाली हवायें इस गैस को फिर पूरी पृथ्वी पर फैला देती हैं और इस तरह ओजोन पर्त की तह विरल हो जाती है। इससे पूर्व हम यह बता चुके हैं कि सूर्य से आने वाली अल्ट्रावाइलेट किरणें ओजोन पर्त को लगातार छेदन कर पृथ्वी तक पहुँचने में लगी रहती हैं। इन दोनों कारणों से पृथ्वी के उस भाग में जहाँ पर सामान्यतया ओजोन रहती है, ओजोन पर्त की मोटाई कम होती जाती है। यह अंटाकर्टिका ध्रुव पर अधिक है। भूवेत्ता इसे छेद (Whole) के नाम से पुकारने लगे हैं। यह तो प्रकृति की कृपा है कि येन केन प्रकारेण वह इस पर्त को पुनः ठीक से स्थापित करती रहती है।

1- ओजोप पर्त के विघटन से सम्भावित दुष्परिणाम (Possible Illeffects due to Ozone Layer Depletion) ओजोन पर्त के विघटन से या न होने से कितने ही प्रकार के दुष्प्रभाव मनुष्य जीवन तथा उससे सम्बन्धित क्रियाकलापों पर हो सकते हैं–

- कई प्रकार की फसलों की मात्रा और गुणवत्ता में कमी,
- समुद्रीय परितंत्र का विघटनय अनेक वनस्पतियों और जलचरों के समाप्त होने की आशंका,

- मनुष्य पर कई जानलेवा रोगों का आक्रमण जैसे त्वचा कैन्सर, आँखों का मोतियाबिन्दु इम्यून सिस्टम बिगड़ना आदि,
- भवनों की सामग्री का क्षय,
- स्मोग बनने में योगदान आदि।

ओजोन पर्त को बचाने हेतु प्रयास (Efforts to save the Ozone Layer)– यह बहुत बड़ी जनसाधारण से जुडी जनसाधारण से सम्बन्धित विश्वस्तरीय ऐसी समस्या है, जिसके भविष्य में बहुत गम्भीर परिणाम हो सकते हैं। अतः जनसाधारण से तो यही अपील है कि वे शनैः शनैः उन उपकरणों का प्रयोग कम कर दें, जिनमें क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स का उपयोग होता है। घर में विशेषतः ऐसे उपकरण रेफ्रीजरेटर तथा एअर कन्डीशनर्स हैं। वैसे परफ्यूम में काम आने वाले ऐरोसोल्स (Aerosoles) खेतों में छिड़काव की दवाइयों आदि भी प्रतिबन्धित होती हैं, क्योंकि एक बार इनमें की CFC जब वायुमण्डल में पहुँच जाती है तब वह कालान्तर तक नष्ट नहीं होती।

इस समस्या से जूझने के लिए विश्व स्तर पर प्रयास सन् 1985 से ही वियना समारोह, आस्ट्रिया (Vienna Convention, Austria) से प्रारम्भ हो गये थे, जहाँ पर इस बात पर विषद चर्चा हुई कि ओजोन पर्त के विघटन को रोकने के लिए विश्व के सभी देशों को मिलकर प्रयास करना चाहिये। सन् 1987 में मान्ट्रियल कनाडा में एक पुनः बैठक (सम्मेलन) में दस्तावेज तैयार किया गया। जिसे मान्ट्रियल प्रोटोकॉल (Montreal Protocol) के नाम से प्रसारित किया गया। भारत ने उस समय इस सम्मेलन में केवल प्रेक्षक (Observer) की भूमिका निभायी थी. पर बाद में उसने इस प्रोटोकाल पर हस्ताक्षर कर दिये। यह प्रोटोकॉल जून 1990 से स्वीकृत माना गया।

सन् 1989 में हेलेसिंकी डेनमार्क में एक सभी यूरोपियन देशों तथा 82 अन्य देशों ने एक सम्मेलन आयोजित कर ओजोन पर्त के बचाने और सुरक्षित रखने के लिए समयबद्ध कार्यक्रम तैयार किया, जिससे CFCs के उत्पादन को और प्रयोग को रोका जा सके। भारत ने इस प्रोटोकॉल पर नवम्बर 1992 में हस्ताक्षर किये और 17-9-92 से इसको अपने देश में लागू माना गया।

भारत में ओजोन विघटन करने वाले पदार्थों के उत्पादन हेतु नियम (Regulation and Control Rules, 2000) बनाये हैं जिन पर कार्य चल रहा है। उन्हीं नियमों में एक समयबद्ध सारणी का भी समावेश किया गया है–

अन्तर्राष्ट्रीय ओजोन पर्त सुरक्षा दिवस (The International Day for Protection of Ozone Layer) को प्रतिवर्ष 16 सितम्बर को राष्ट्रीय तथा राज्य स्तर पर मनाया जाता है। जनसाधारण को इस समस्या से अवगत कराने हेतु अन्य कई सेमिनारें, कार्यगोष्ठियों, सिम्पोजियम आदि आयोजित किये जाते हैं। एक द्विमाही (Bimonthly) पत्रिका (वातिस, VATIS) का प्रकाशन भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मंत्रालय स्तर पर नियमित रूप से किया जाता है।

## 3.10परिवहन प्रदूषण के प्रभाव

### स्मोग (Smog)

1- समस्या और कारण (Problem and Cause) यह शब्द वस्तुतः SMOGUE का अपभ्रंश है: SMOKE + FOGUE (धुआँ कुहरा) या यों कहें कि स्मोग एक धुएँ, विषैली गैसें, वायु में तैरते

अनेक तत्त्व व कार्बन के कण और पानी की भाव की मिली–जुली वह एक पर्त है जो पृथ्वी से कुछ ऊँचाई पर वायुमण्डल में एक आवरण सा बनाकर कुछ आवासीय भागों को बैंक लेती है। कुछ देर बाद ही ऑक्सीजन की कमी के कारण लोगों को सॉस की कठिनाई शुरू होती है और दम घुटने लगता है। निष्कर्ष सैकड़ों–हजारों प्राणियों का जीवन अन्त। कितनी भयावह स्थिति है, कल्पना करें। इसका मुख्य कारण उद्योगों की चिमनियों से निकलने वाले धुएँ व उनसे ही निकलने वाले विभिन्न तत्त्वों के सूक्ष्म कण (Suspended particulate matter) हैं जिसकी कुछ भयावहता उद्योगों में लगाये जाने वाले नियंत्रण उपकरणों (Treatment Plants) तथा चिमनियों की ऊँचाई में वृद्धि करके कम तो किया जा सकता है, पर एकदम रोका नहीं जा सकता। सर्वप्रथम इस प्रकार की घटना का उल्लेख 1940 में लास ऐंजिल्स (अमेरिका) का मिलता है, जबकि SMOG के कारण कई हजार मौतें हुई। 1952 की लंदन की घटना का तो अब नाम ही लंदन घटना (London Episode) पड़ गया है। जिसमें 4–5 हजार लोगों की सॉस लेने की कठिनाई के कारण दम घुटने से हुई मृत्यु का विवरण मिलता है। इन प्रकरणों के आधार पर ही अब बड़े–बड़े उद्योगों के बहुत निकट आवासीय कॉलोनी के निर्माणों को कम किया जा रहा है जिससे उपर्युक्त प्रकार की दुर्घटनाओं से बचा जा सके।

2- हानिकारक परिणाम (III Effects) स्मोग, यह विषैला धुआँ, श्वसन क्रिया को बुरी तरह प्रभावित करता है। दम घुटने लगता है, और यदि व्यक्ति काफी लम्बी अवधि तक इसमें फँस जाय तो वह मर भी सकता है। अस्थमा के रोगी को तो यह कुछ मिनट भी सहन नहीं है।

3- सम्भावित समाधान (Possible Solutions): स्मोग कम–से–कम बने या बिल्कुल न बने यही इसका एक उत्तम और अन्तिम उपाय है। पर फिर भी वह स्थिति कैसे आवे इस हेतु कुछ सुझाव प्रस्तुत हैं:–

- कम धुएँ वाले ईंधन का प्रयोग करें। खाना बनाने के लिए LPG या CNG गैस का उपयोग हो तो उत्तम है।
- स्वचालित वाहनों के कम उपयोग से उत्सर्जित धुएँ की मात्रा में कमी आयेगी। सामूहिक बस अथवा बाइसिकिल काम में लें।
- द्विपहिया वाहन में ट्यूनिंग ठीक रखें, इससे उत्सर्जन की मात्रा कम होगी तथा धुओं कम निकलेगा।
- कारों में Catalytic Converters का उपयोग करें, वैसे अब नये माडल्स में इस उपकरण की आवश्यकता नहीं है।

4- केन्द्रीय सरकार द्वारा किये जा रहे उपाय (Measures taken by Central Government) भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने परिवहन विभाग तथा केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण मण्डल के सहयोग से वायु में विभिन्न प्रकार के प्रदूषकों की जानकारी प्राप्त करने हेतु अनेक निगरानी केन्द्र स्थापित किये हैं लेकिन उनकी उपयोगिता केवल जानकारी प्राप्त करने तक सीमित है। कोई व्यावहारिक लाभ दिखाई नहीं देता। लाभ तो तभी होगा जब कि जनसाधारण में चेतना जाग्रत हो।

वायु प्राकृतिक संसाधन का एक प्रमुख अंग है, जिसका जीवन पर्यन्त आवश्यकता होती है। साथ ही वह स्वच्छ भी हो और निरापद भी। अतः यदि बहुत सारे कार्यों के सम्पन्न करने में आलस्य व कठिनाई हो तो एक बात अवश्य करें। भरपूर वृक्षारोपण करें, उनकी सुरक्षा करें। कम से कम आपके घर के तथा उसके आसपास के क्षेत्र की हरियाली से आप और आपका परिवार तो सुखी, प्रसन्नचित और रोगरहित रहेगा।

## 3.13 बोध प्रश्न

पर्यावरण प्रदुषण से आप क्या समझते है
प्रदूषण वर्गीकरण का उल्लेख कीजिये
प्रदुषण के कारक एवं स्रोत का वर्णन कीजिये
तापीय प्रदूषण के प्रभावों की व्याख्या कीजिये
हरितगृह गैसे किसे कहते है
ओजोन परत की क्षीणता के कारणों की व्याख्या कीजिये
परिवहन प्रदुषण के प्रभाव की व्याख्या कीजिये
निम्नलिखित को परिभाषित करें–
(i) अम्लीय वर्षा
(ii) वैश्विक ऊष्मीकरण
(iii) हरितग्रह प्रभाव
(iv) स्मोग
(v) उत्सर्जित मानदण्ड

## कुछ उपयोगी पुस्तकें

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र विविध आयाम अरुण कुमार सिंह
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र एम्,एल.झिंगन
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र वी.सी. सिन्हा
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र आर.एन भटाचार्या

# इकाई –04
# प्रदूषण एवं उनके प्रभाव : बीमारियाँ

**4.0 उद्देश्य**
**4.1 प्रस्तावना**
**4.2 वायु प्रदूषण के प्रभाव**
**4.3 ग्रीनहाउस प्रभाव**
**4.4 वायु प्रदूषण से होने वाली बीमारियाँ**
**4.5 जल प्रदूषण**
**4.6 जल प्रदूषण से होने वाली बीमारियाँ**
**4.7 जल प्रदूषण से होने वाली हानियाँ**
**4.8 औद्योगिक प्रदूषण**
**4.9 ध्वनि प्रदूषण**
**4.10 मृदा प्रदूषण**
**4.11 अन्य अपशिष्ट के प्रभाव**
**4.12 पर्यावरण संरक्षण एवं स्वास्थ्य के प्रति स्वयं का दायित्व**
**4.13 निष्कर्ष**
**4.14 बोध प्रश्न एवं उनके उत्तर**
**4.15 अभ्यासार्थ प्रश्न**
**4.16 संदर्भ ग्रन्थ एवं उपयोगी पुस्तकें**

## 4.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप निम्न विषयों को समझने में सक्षम हो जायेंगे।

- हम वायु प्रदूषण के बारे में जानेंगे
- हम वायु प्रदूषण से होने वाली बीमारियों की जानकारी प्राप्त करेंगे
- ग्रीनहाउस प्रभाव के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे
- जल प्रदूषण की जानकारी प्राप्त करेंगे
- जल प्रदूषण से होने वाली बीमारियों के बारे में जानेंगे
- औद्योगिक प्रदूषण के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे
- हम औद्योगिक प्रदूषण से होने वाली बीमारियों के बारे में जानेंगे
- हम ध्वनि प्रदूषण के प्रभाव के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे
- मृदा प्रदूषण के जानकारी प्राप्त करेंगे

## 4.1 प्रस्तावना (Introduction)

पर्यावरण प्रदूषण पृथ्वी पर जीवन को बनाए रखने के मूल कारकों को प्रभावित करती है यह मानव जीवन के लिए आवश्यक वायु, जल तथा अन्य पारिस्थितिक तंत्र जिस पर मानव जीवन निर्भर करता है को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है जो कि मनुष्यों और अन्य जीवित प्राणियों के स्वास्थ्य के लिए सबसे बड़ी चुनौती है यह समाज के समग्र कल्याण को प्रभावित करते हैं लेकिन निर्धन बच्चों महिलाओं आदि जैसे कमजोर वर्गों पर इसका आधिक गंभीर प्रभाव होता है पर्यावरण प्रदूषण का अर्थव्यवस्था पर भी नकारात्मक प्रभाव होता है एक अध्ययन के अनुसार जल प्रदूषण से मछली पकड़ने कृषि उद्योगों आदि क्षेत्रों में होने वाले नुकसान के कारण भारत को अधिक नुकसान उठाना पड़ रहा है जो की अन्य सामाजिक आर्थिक प्रभाव में कृषि उपज के कम उत्पादन के कारण खाद्य सुरक्षा, जल संकट, प्रवासन आदि शामिल है

हमारे चारों ओर प्रकृति में अनेकों प्रकार के रोगजनक सूक्ष्म जीव, रोगाणु तथा प्रतिजन हैं जो वायु, भोजन, जल आदि के माध्यम से हमारे शरीर में प्रवेश करते हैं। इसके अलावा प्रदूषक तत्व हमारे शरीर पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं जिससे अनेक प्रकार की बीमारियों जैसे– डायरिया, टाइफाइड, मलेरिया, डेंगू, कैंसर आदि रोग हो जाते हैं।

## 4.2 वायु प्रदूषण के प्रभाव

वायुमण्डल में विभिन्न गैसें वायु के रूप में एक निश्चित अनुपात में उपस्थित हैं जिनमें ऑक्सीजन 20-95% नाइट्रोजन 78-0%, आर्गन 0-93% तथा कार्बन डाई ऑक्साइड 0-04% एवं अन्य पदार्थ व गैसें 0-08% प्रमुख है। जीवधारी अपनी क्रियाओं द्वारा वायुमण्डल में ऑक्सीजन और कार्बन डाई ऑक्साइड छोडते रहते हैं। हरे पौधे प्रकाश संश्लेषण के द्वारा सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में $CO_2$ ग्रहण करते हैं तथा ऑक्सीजन छोड़ते हैं। इस तरह ऑक्सीजन और कार्बनडाई ऑक्साइड का संतुलन बना रहता है किन्तु भौतिक आवश्यकता एवं विकास की लालसा ने जैविक घटक का यह संतुलन बिगाड़ दिया है। जीवाश्म ईंधन का अंधाधुंध प्रयोग, वनों की कटाई, औद्योगीकरण तथा क्लोरोफ्लोरो कार्बन्स की अधिकता ने वायुमण्डल में ग्रीन हाउस प्रभाव, स्मोग, ओजोन पर्त का क्षय तथा तेजाबी वर्षा को जन्म दिया है। पेट्रोल तथा डीजल से निकलने वाले मुख्य प्रदूषक सूक्ष्म कण, धुओं, कार्बन डाई ऑक्साइड, काब्रन मोनो ऑक्साइड, सल्फर डाई ऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड, लेड यौगिक, अधजले हाइड्रोकार्बन्स तथा सिलिकॉन टेट्रा फ्लोराइड आदि हवा में मिलकर उसे विषैली कर देते हैं और वायु में सस्पेण्डेड पार्टीक्यूलेट्स मैटर जो तैरते पदार्थ के कण के रूप में होते हैं। स्वास्थ्य के लिए हानिकारक प्रभाव डालकर चिड़चिड़ापन, मानसिक तनाव, बेचौनी तथा घबराहट उत्पन्न करती है। कोयले और तेल के जलने से सल्फर डाई ऑक्साइड ($SO_2$) गैस पैदा होती है जो वर्षा या नमी में घुलकर गंधक का अम्ल बनाती है जो नासिका में जलन उत्पन्न करने के साथ–साथ फेफड़ों को प्रभावित करती है। इसके अतिरिक्त $SO_2$ वस्त्र, धातु एवं प्राचीन इमारतों को भी क्षति पहुँचाती है। $SO_2$ की अधिक मात्रा वायु की गुणवत्ता को कम करती है और उसे विषैला बनाती है, आँखों में जलन उत्पन्न करती है दुष्प्रभाव से गर्भवती माताओं के अपंग बच्चे पैदा होते हैं। तथा $SO_2$ के लेड के कारण मस्तिष्क, जनन सम्बन्धी और रक्त तंत्रों को प्रभावित करते हैं। बच्चों को मंद बुद्धि बना देते हैं तथा उच्च रक्त चाप के अतिरिक्त श्वसन क्रिया को भी प्रभावित करते हैं। गुर्दे, जिगर तथा आँतों की कार्यकुशलता को नष्ट करता है। कैडिमियम श्वसन विष का कार्य करता है। ओजोन सीने का दर्द, खाँसी, बेचौनी तथा आँख के रोग उत्पन्न करती है। जबकि नाइट्रोजन ऑक्साइड से फेफड़ों, हृदय तथा आँखों के रोग हो जाते हैं। कार्बन मोनो

ऑक्साइड (CO) रक्त के हीमोग्लोबिन से क्रिया करके कार्बोक्सी हीमोग्लोबिन बनाती है। जो रक्त में ऑक्सीजन की मात्रा को कम कर शारीरिक क्रियाएं मंद कर देती है, जिससे व्यक्ति उद्योगों से होने वाले बृहत प्रदूषण।

- दहन प्रणाली से होने वाला प्रदूषण।
- कृषि कार्य में डी.डी. टी. यूरिया एवं अन्य रासायनिक तत्वों का प्रयोग।
- विलायकों के प्रयोग से उत्पन्न प्रदूषण।
- परमाणु परीक्षण व मिसाइल परिक्षण के पश्चात् उत्पन्न वायु प्रदूषण।

वातावरण में वातावरण में $CO_2$ गेस व कार्बन मोनोआक्साइड गैसों के अत्यधिक सान्द्रण से भी वायु प्रदूषण फैलता है। वातावरण में गर्मी आती है। ओजोन परत में बढ़ते छिद्र से सूर्य का प्रकाश अवशोषित नहीं होता और तापमान गर्म हो जाता है जो जलवायु को प्रभावित करता है जिसे हम ग्लोबल वार्मिंग के रूप में देखते हैं।

### सल्फर वर्षा

ताप शक्ति गृह व खनिज तेल शोध संयंत्र व स्वचालित वाहन से $SO_2$ का सान्द्रण बढ़ जाता है जो वातावरण को 50% तक प्रभावित करता है। यह रासायनिक अभिक्रिया करके सल्फ्यूरिक एसिड का निर्माण करता है। $H_2SO_4$ जल वर्षा के साथ धरती पर गिरती है तो यह अम्लीय वर्षा का रूप धारण करती है। जो पादप जीव जंतु व इमारतों को भी नुकसान पहुंचाती है जिसका उदाहरण हमें मथुरा रिफाइनरी के धुएं से ताजमहल को प्रभावित होते दिखता है। अम्ल वर्षा से पत्थर कंक्रीट, संगमरमर को क्षति पहुँचाती है।

### 4.3 ग्रीन हाउस इफेक्ट

वायुमण्डल में गैसों के असंतुलन से पृथ्वी द्वारा सूर्य की किरणों का अवशोषण अधिक मात्रा में होने लगता है जिसके चलते पृथ्वी तेजी से गर्म लगती है। $CO_2$ मिथेन, CFC, नाइट्रस आक्साइड गैसे वातावरण को प्रभावित करती हैं। इस प्रकार उपर्युक्त सभी अवयवों से वायु प्रदूषण फैलता है। वायु प्रदूषण फैलाने वाले इन सभी स्रोतों से प्रदूषण की मात्रा बढ़ती है। साथ ही हम प्रदूषण का प्रभाव जीव जन्तु, पादप व मनुष्य पर सर्वाधिक हानिकारक रूप में हमें देखने को मिलता है।

### 4.4 वायु प्रदूषण से होने वाली बीमारियाँ

वायु प्रदूषण पूरे ग्लोबल वर्ल्ड में हानिकारक समस्याएं उत्पन्न कर रहा है यह रोगों को जन्म देता है। आसमायिक मृत्यु का कारण भी बनता है।

- वायु प्रदूषण के फैलने से कई प्रकार के रोगों जैसे त्वचा, कैंसर एवं सांस की बीमारी उत्पन्न होती है जो लोगों के जीवन के लिए हानिकरक है। $SO_2$ व अम्ल वर्षा पादप व जलीय जन्तुओं को भी प्रभावित करते हैं पौधे झुलस जाते हैं और मछलियों आदि मर जाती है।
- रेडियो धर्मी विकरण प्रभावित क्षेत्रों के निवासियों को कैंसर व अन्य बीमारी फैलाते हैं।
- ओजोन के क्षरण से वातावरण में असंतुलन ग्लोबल वार्मिंग व जलवायु परिवत्रन होता है कभी अधिक गर्मी व कभी अत्यधिक शीत होती है। ग्लेशियर पिघल रहे हैं नदियाँ व जल स्रोत सूख रहे हैं।

- खानों खदानों व मिलों से निकलने वाले रासायनिक तत्व विभिन्न सांस व दमे की बीमारी बढ़ाते हैं। अंधता की स्थिति आ जाती है।
- मोटर वाहनों से निकलने वाले धुएं में लेड, मीथेन व कार्बन मोनोआक्साइड गैसें सांस रोग व नेत्रों के लिए हानिकारक होते हैं। फेफड़े व हृदय रोगों को बढ़ाते हैं। प्रमुख रूप से वायु प्रदूषण से एलर्जी अस्थमा, त्वचा कैंसर, आंख व गले के रोग फैलते हैं।
- वायु प्रदूषण से धूम, कोहरा, $SO_2$ नाइर्टस आक्साइड, $CO_2$ आर्सेनिक निकल, क्रोमियम मिलकर धूम, कोहने को बढ़ावा देते हैं। जो मनुष्य के लिए हानिकारक होते हैं। 1952 में लंदन में विषाक्त धूम कोहरे से लगभग 4000 व्यक्ति मर गए थे। दिल्ली व मुम्बई में धूम कोहरा बहुत होता है। वायु प्रदूषण का गैस चौम्बर भी कहते हैं।
- वनस्पतियों पर वायु प्रदूषण का असर होता है। हरी पत्तियों झड़ जाती है। फलों को नुकसान होता है।
- अत्यधिक कोहरे से यातायात प्रभावित होता है रेल, कार आदि एक्सीडेंट होते हैं। इस प्रकार वायु प्रदूषण से पूरा पर्यावरण प्रदूषित हो जाता है जो मनुष्य को प्राकृतिक व सामाजिक दोनों रूप से प्रभावित करता है। भारत में जहाँ गरीबी की अधिक मात्रा है वहीं प्रदूषण से होने वाले रोगों से उत्पन्न लोगों व उपचार न होने से लाखों लोग प्रतिवर्ष रोगग्रस्त होते हैं व मरते हैं।

### 4.5 जल प्रदूषण

जिस तरह से जीवन के लिए वायु आवश्यक है वैसे ही मनुष्य के लिये जल भी अनिवार्य है। स्वच्छ पेयजल से मनुष्य को जीवन मिलता है। जल ही जीवन है यह न केवल मनुष्य वरन् इस सृष्टि में पाए जाने वाले सभी प्राणियों, पादन, जीव–जन्तु के लिए आवश्यक है। बहुत से जलीय जलचर तो पानी के बिना एक पल भी जीवित नहीं रह सकते। जल में बहुत से खनिज तत्व, कार्बनिक अकार्बनिक पदार्थ तथा गैसें घुली रहती हैं। यदि जल में घुले पदार्थों की मात्रा आवश्यकता से अधिक एकत्रित हो जाती तो जल में अन्य रासायनिक तत्व मिल जाते हैं तब यह हानिकारक हो जाती हैं व जल में अन्य रासायनिक तत्व मिल जाते है तो यह हानिकारक होते हैं ओर इसे प्रदूषित जल कहा जाता है। जल का प्रदूषण मुख्यतः घरेलू सीवेज, औद्योगिक अपशिष्ट रासायनिक खाद महासागरीय दुर्घटनाएं भी जल दूषित करते हैं। वैज्ञानिकों के मतानुसार विश्व के 5% बच्चे को प्रदूषित जल के कारण स्वास्थ्य सम्बन्धी खतरे हैजा, पेचिस, टाइफाइड आदि का सामना करना पड़ता है।

डब्ल्यू एच ओ द्वारा परिभाषित किया गया है प्राकृतिक अथवा अन्य स्रोतों से उत्पन्न अवांछित बाह्य पदार्थों के कारण जल दूषित हो जाता है तथा वह विषाक्तता एवं सामान्य स्तर से कम आक्सीजन के कारण जीवों के लिए हानिकारक हो जाता है तथा संक्रामक रोगों को फैलाने में सहायक होता है।

अतः हम कह सकते हैं कि जल प्रदूषण का अभिप्राय जल के प्राकृतिक गुणों में गिरावट से है। जल प्रदूषण वह क्रिया है जिसके अन्तर्गत जल में विभिन्न बाह्य स्रोतों से आकर मिलने से हानिकारक पदार्थ जो जल को मानवीय उपयोग की दृष्टि से अनुपुयक्त बना देते हैं जल प्रदूषण कहलाते हैं।

जल, ठोस, द्रव तथा गेस तीनों रूप में पाया जाता है। मनुष्य इन तीनों रूप में जल का उपभोग करता है पृथ्वी पर 1/3 भाग जल पाया जाता है पर सिर्फ 3% ही स्वच्छ पेयजल है

वृभी आज दूषित होता जा रहा है। 1% जल ही स्वच्छ पाया जाता है जो झीलों नदियों वर्षा के जल व भूमिगत जल के रूप में है। जल का दूषित होना ही जल प्रदूषण है।

## 4.6 जल प्रदूषण से होने वाली बीमारियाँ

घरेलू व्यर्थ पदार्थ व मल–जल–जल में कार्बनिक व आकार्बनिक तत्वों से मुक्त मल व ठोस अपशिष्ट मिलकर जल को प्रदूषित बनाते हैं।

कीटनाशक व रासायनिक पदार्थों का जी में मिलना लगभग 1 टन से अधि एक प्रतिवर्ष ये जल में घुलकर उसे दूषित करते हैं और ये जल को विषैला बना कर उसे पीने के योग्य नहीं रहने देते हैं। साथ ही डी.डी.टी आदि बायो मैग्निफिकेशन के साथ वनस्पतियों से मानव रक्त में पहुंच जाते हैं।

कारखानों, मिलों व चमड़े से युक्त जल का नदियों में मिलना कारखाने से व तेल शोधन संयंत्र, चमड़े के वेस्ट पदार्थ नदियों से मिलकर जल को प्रदूषित कर देते हैं।

1- टेनरियों व नालों के गंदे पानी नदियों में मिलकर उसे दूषित करते हैं।

2- सीवेज ट्रीटमेंट के बिना प्रयुक्त जल सीधे नदियों में मिलना

3- तालाब व कुओं में प्रदूषण युक्त जलों का फैलना, झीलों में जलकुम्भी आदि वनस्पतियों से प्रदूषण फैलना। पंजाब में बेड नदी की साईथस नामक वनस्पति ने पूर्णतः प्रदूषित कर डाला था। नदियों में बी ओ डी की मात्रा काफी असंतुलित हो गई है।

4- जल में पारा व लेड के तत्व पाए जाते हैं जो पेयजल को दूषित करते हैं।

5- आर्सेनिक की मात्रा औद्योगिक प्रदूषण से फैलती है।

6- शैवालों की अधिकता व मृत शैवाल जल में घुली आक्सीजन को अवशोषित करते हैं जो मछलियों व अन्य जलीय जन्तुओं में आक्सीजन की कमी करते हैं और वो मर जाते हैं।

7- अपमार्जकों का प्रयोग ये जीवाणुओं द्वारा सूक्ष्म एवं सरल रासायनिक पदार्थों में परिवर्तित नहीं किए जा सकते। ये घरेलू मंदे पानी, सीवरों से नदी व नहरों में पहुंचकर झाग के रूप में अपमार्जक बनाते हैं।

8- तेल शोधन व खनन की महासागरीय प्रदूषण फैलाने का काम करते हैं। समुद्री तल टैंकर में रिसाव से प्रदूषण फैलाता है जिससे मछलियों व पक्षियों की मृत्यु होती है।

9- वृद्ध के समय प्रयुक्त रासायनिक हथियार भी जलीय प्रदूषण फैलाते हैं। वियतनाम युद्ध व खाड़ी युद्ध के बाद बड़ी संख्या में समुद्री जलचर प्रदूषण से मर गए।

10- संश्लेषित रसायनों के प्रयोग से पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न होती है। बहुत सारे संश्लेषित पदार्थ (प्लास्टिक आदि) बायो डीग्रेडेबल नहीं है उनका पुर्नचक्रण नहीं हो सकता। जो समुद्री कछुओं, मछिलयों आदि के लिए खतरनाक हैं।

11- पॉलीथिन व अन्य कचड़े जो नष्ट नहीं होते नालों व नदियों में जाकर सड़ते हैं व भूमिगत जल को नष्ट करते हैं।

12- घरेलू डिटरजेन्ट्स व साबुन का प्रयोग भी जल को दूषित करता है। जल में कालीफार्म बैक्टीरिया की सुरक्षित संख्या 100 ली. में 50 होनी चाहिए पर इसकी माप गंगा में करने या 100 ली. में 900 से 1500 तक पाई गई।

## 4.7 जल प्रदूषण से होने वाली हानियाँ

- प्रदूषित जल पीने से वीसर की बीमारी होती है।
- बहुत से जलीय जीव–जन्तु जलीय प्रदूषण से या तो मर गए हैं या विलुप्त हो गए।
- सागरीय जल में प्रदूषण से आक्सीजन की कमी से खारापन बढ़ जाता है जिससे - लाखों संख्या में मछलियों मर जाती हैं।
- रेडियोधर्मी पदार्थ जल में मिलकर जलीय प्रदूषण फैलाते हैं जो मानव में ल्यूकोमिया तथा कैंसर जैसे रोग उत्पन्न करते हैं व अपंग सन्तान को जन्म देते हैं।
- घरेलू कूलर, नालों व एकत्रित जल में मच्छर पनपते है जो मलेरिया, डेंगू, चिकन गुनिया आदि रोग फैलाते हैं।
- रासायनिक पदार्थों से युक्त सब्जियाँ प्रदूषित हो जाती है जिसे खाने से कई बीमारियों फैलती है। साथ ही उसमें पाए जाने वाले विटामिन व प्रोटीन का क्षय होता है।
- अत्यधिक प्रदूषित जल मिट्टी को भी प्रदूषित कर देते हैं जो उर्वरता को खत्म कर देते हैं।
- प्लास्टिक व पॉलीथिन नदियों के प्रवाह व भूमिगत जल को प्रदूषित करते हैं। प्लास्टिक का कचरा वर्षा जल को भूमिगत जल में जाने से रोकता है।

प्रदूषित जल पीने से मानव स्वस्थ नहीं रहता उसे अनेकों बीमारियों का सामना करना पड़ता है। उसकी कार्य क्षमता प्रभावित होती है। भारत के कई राज्यों में लोगों को स्वच्छ पेयजल नहीं मिलता व पानी के लिए दूर–दूर तक जाना पड़ता है। बड़े शहरों, कोलकाता. नई दिल्ली, मुम्बई, इंदौर, लखनऊ आदि जगह पर भी स्वच्छ पेयजल की समस्या है। हमारी प्रमुख नदियाँ गंगा, यमुना, गोदावरी का जल भी पूर्णतः प्रदूषित हो गया है और पेययुक्त नहीं है। जल को संशोधित करने की प्रणाली सीमित है। घरों में एक्वागार्ड व फिल्टर के प्रयोग से कुछ मात्रा में इस पर रोक लगाई जाती है। बड़े व सम्पन्न लोग बिसलरी का प्रयोग करते हैं पर आम लोग जो इसे नहीं पा सकते हैं। उनका मानवीय जीवन दूषित जल के सेवन से हानिकारक अवस्था में है। राजस्थान में दूषित जल के सेवन से नारू नाम का भयंकर रोग होता है।

## 4.8 औद्योगिक प्रदूषण के प्रभाव

औद्योगीकरण से जहाँ किसी भी देश की अर्थव्यवस्था सुदृढ़ होती है एवं आत्मनिर्भरता एवं समृद्धि व्यापक होती है वहीं इनके पर्यावरणीय दुष्प्रभाव भी है। भारत एक विकासशील देश है। जहाँ औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप 'प्रदूषण सामान्य से अधिक भयावह है। किसी भी उद्योग में मशीनों को चलाने के लिए ऊर्जा उत्पादन तथा कच्चे माल की निर्धारित क्रियाविधि के फलस्वरूप जो भी उत्सर्जन होता है उसका गैसीय भाग चिमनियों से निकलता है। इन चिमनियों से हानिकारक पदार्थ वायुमंडल में विसर्जित होते हैं तो प्रदूषण फैलाते हैं।

तेल शोध, खदान, खाद, कॉपर, जिंक व लेड स्मेल्टिंग, चीनी, सीमेण्ट, चमड़ा, आयरन और स्टील तथा सूती वस्त्र उद्योग आदि प्रमुख उद्योग है जिनसे उत्सर्जित प्रदूषक तत्व SO, NOX, HC, CO, $NH_3$, सूक्ष्मकण, सिलिकॉन, टेट्राफ्लोराइड्स, मैंगनीज ऑक्साइड, एल्डीहाइड्स, धुओं और रेत तथा गैसीय क्लोराइड मनुष्यों में विभिन्न रोग उत्पन्न करते हैं। जिनमें सिलीकोसिस (पत्थर खदान), न्यूमोकोनिओसिस (कोयले खदान सम्बन्धी), बायकोसिनोसिस पीठ दर्द, त्वचा रोग, श्रवण शक्ति का ह्रास, मरकरी पॉइजनिंग, लेड पॉइजनिंग के अतिरिक्त खून की कमी

(अनीमिया), आँखों के रोग, हड्डियों के रोग, वायु जनित रोग, श्वसन सम्बन्धी रोगों के कारण बनते हैं।

वस्तुतः विभिन्न उद्योगों से प्रदूषण को कम करने के लिए उद्योगों के स्थान का चयन बहुत सोच–समझ कर करना चाहिए। उद्योगों में कार्य कर रहे ऊर्जा संयंत्र (बॉयलर्स) तथा गैसों व सूक्ष्म कणों को उत्सर्जित करने वाली चिमनियों से प्रदूषकों की मात्रा कम करने हेतु स्क्रबर्स, साइक्लोन्स, इलैक्ट्रोस्टेटिक प्रेसीपिटेटर्स और वैग फिल्टर्स का प्रयोग करना चाहिए। ठोस, द्रव्य और गैसीय अपशिष्टों की पुनः चक्रण प्रक्रिया से अपशिष्टों की मात्रा में कमी होती है तथा उद्योगों को भी इन अतिरिक्त उत्पादनों से आर्थिक लाभ होता है।

### (क) जल प्रदूषण के प्रभाव

प्राकृतिक प्रदूषण के कारणों में जल में मिश्रित होने वाली विभिन्न मृदा, खनिज तत्व, मल–मूत्र तथा गैस आदि होते हैं। जल में प्राकृतिक रूप से शुद्ध होने की क्रिया होती है। प्राकृतिक अशुद्धियां निलम्बित कोलॉइडी अथवा घुलित रूप में होती है। मुख्यतः इसमें कैल्शियम, मैग्नीशियम, लौह, मैगनीज, धूल के कण, सोडियम, पोटैशियम तथा मृतिका आदि होते हैं किन्तु इनकी अधिक मात्रा ही प्रदूषण का कारण बनती है।

### (ख) मानवीय कारक

विश्व की बढ़ती जनसंख्या, औद्योगीकरण, रासायनिक एवं तैलीय पदार्थों का उपयोग आदि सम्पूर्ण विश्व को जल प्रदूषण से त्रस्त किए हुए हैं। परिणामस्वरूप जल के प्रमुख स्रोत झीलें, नदियाँ, समुद्र, कुएँ, बावड़ियाँ, तालाब तथा भूमि जल भी प्रदूषण की चपेट में आ चुके हैं। मानवीय कारकों के अन्तर्गत नगरीय गंदगी, वाहित मल, तापीय प्रदूषण, खनिज तेल, र रेडियो धर्मी अपशिष्ट, वायुयानों से जल प्रदूषण, अपमार्जक (डिटरजेंट) कीटनाशक रसायनों, औद्योगिक अपशिष्ट तथा शवों एवं मूर्तियों के जल प्रवाह से जल प्रदूषण होता है।

जल में मिश्रित प्रदूषक तत्व मानव, वनस्पति एवं जीव–जन्तुओं पर दुष्प्रभाव छोड़ते हैं। कुछ प्रदूषक तत्व तत्काल दुष्प्रभाव प्रदर्शित करते हैं और कुछ धीरे–धीरे अपना असर दिखाते हैं जिनसे अनेक बीमारियों जन्म लेती है। प्रमुख प्रदूषकों में अकार्बनिक फ्लोराइड अत्यंत ही जहरीला पदार्थ है। मानव के लिए हमारी सह्य सीमा 0.9 से 1.5 पी.पी.एम. होती है। इसके लगातार मात्रा लेने से वजन का कम होना, जोड़ों का दर्द, हड्डियों का मुड़ जाना तथा बच्चों के दाँत में छेद हो जाना प्रमुख है। इसके ज्यादा सेवन से अथवा पानी में फ्लोराइड की ज्यादा मात्रा होने से रीढ़ की हड्डी टेढ़ी हो जाती है।

लेट (सीसा)–0.05 पी.पी.एम. निर्धारित सह्य सीसा से अधिक मात्रा में घुलने पर जिगर और गुर्दे प्रभावित करता है तथा महिलाओं में गर्भपात तथा हीमोग्लोबिन की कमी और मानसिक ह्रास का कारण बनता है।

मरकरी (पारा)–प्रोटोप्लाज्मिक जहर है जो रक्त संचरण तंत्र में अवशोषित होने के बाद लीवर, गुर्दा, स्पलीन तथा हड्डी में जमा हो जाता है। अम्लीय पारा बहुत ही जहरीला होता है तथा इससे मिनीमाटा रोग हो जाता है।

फिनोल एक कार्बनिक तथा अत्यंत जहरीला पदार्थ है जो त्वचा एवं अन्तः झिल्ली को बहुत प्रभावित करता है। 15–20 मिनट तक त्वचा के सम्पर्क में रहने से सिरदर्द, मॉसपेशियों में कमजोरी तथा कम दिखाई व सुनाई पड़ना आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

सोडियम अत्यंत जहरीला एवं सक्रिय यौगिक के रूप में पाया जाता है। इसकी ज्यादा मात्रा हाई ब्लड प्रेशर उत्पन्न करती है। जिंग (जस्ता) यौगिक के रूप में जहरीला होता है तथा जब

यह गर्म किया जाता है तो जिंक ऑक्साइड बनाता है जो ब्रास फाउंडर एवं ब्रास चिलस रोग को उत्पन्न करता है। जिंक क्लोराइड की अधिक मात्रा फेफड़ों के लिए हानिप्रद है तथा सेवन में जिंक ऑक्साइड अधिक होने से उसके सेवन से उलटियों होने लगती है। नाइट्राइट बच्चों में ब्लू बेबी नामक बीमारी का कारक बनता हैं। इससे त्वचा का रंग गहरा हो जाता है तथा उलटियां होने लगती है। पैथोजेनिक वैक्टीरिया स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक है। इनसे हैजा, मोतीझरा, संक्रमण, हेपिटाइटिस, डायरिया, टाइफाइड, पीलिया आदि बीमारियों हो जाती हैं जिनकी अधिक मात्रा होने पर महामारी का रूप ले लेती हैं। मनुष्यों में होने वाली लगभग 80% बीमारियाँ अशुद्ध अथवा प्रदूषित पेयजल के कारण होती हैं जिनमें डायरिया या अतिसार, हैजा, पीलिया, टाइफाइड, पेचिश आदि जीवाणु जन्य रोग विषाणु यकृत शोथ, पोलियो आदि विषाणु जन्य रोग, अमीबी रुग्णता, जियार्डिया रुग्णता प्रोटोजोआन जन्य रोग गोलकृमि, कुशाकृमि, सूत्र कृमि आदि कृमिजन्य रोग, हाइडेटि, प्लेटोम्स्चाइरा रुग्णता बेल्स रोग प्रमुख हैं।

पेयजल को शुद्ध करने के लिए फिटकरी, कोयला तथा बालू के परम्परागत विधि के अलावा उसे उबाल कर ठंडा कर पीना ही श्रेयस्कर है। आधुनिकतम फिल्टर इसके कारगर उपाय है। पेयजल में कोई भी दूषित वस्तु अथवा हाथ न डालें। पानी भण्डारण करने वाला बर्तन साफ–सुधरा हो। पेयजल के स्रोत के पास कूड़ा–करकट एवं गंदगी न डाले।

शुद्ध पेय जल की सुलभता विश्वव्यापी समस्या हो चुकी है। वस्तुतः इसके समाधान के लिए न केवल कानून की आवश्यकता है वरन् सामान्य जन साधारण को पेयजल व्यवस्था तथा जल प्रदूषण की रोकथाम हेतु जागरुक करने की भी आवश्यकता है। औद्योगिक जल प्रदूषण को रोकने के लिए जलकुंभी (एकोरिया क्रासिपेस) का पौधा बहुत कारगर उपाय है। यह जल में विद्यमान प्रदूषक तत्वों का अवशोषण कर लेता है। उद्योग तथा कागज उद्योग से निकले अपशिष्ट तथा कैडियम, लेड, पारद तथा निकेल की मात्रा जलकुंभी अवशोषित कर लेती है। आजकल जलकुंभी का प्रयोग खाद बनाने में, बायोगैस निर्माण तथा पशु खाद्य के रूप में होने लगा है।

आमतौर पर बरसात के दिनों में पानी जगह–जगह इकट्ठा होने से मच्छर अधिक होते हैं जिसके कारण मलेरिया एवं डेंगू आदि पाँव पसार सकते हैं तथा महामारी का रूप ले सकते हैं। वस्तुतः हमें जल के अस्थाई स्रोतों यथा गढ्ढ़ों तथा कूलर एवं पुराने पड़े टायरों में एकत्रित पानी में मिट्टी का तेल डाल देना चाहिए जिससे मच्छर के लार्वा पनप न सके अन्यथा हाथी पाँव (फाइलेरिया), मलेरिया व डेंगू होने की संभावना बनी रहती है।

### 4.9 ध्वनि प्रदूषण के प्रभाव

ध्वनि वस्तु से प्रसारित होने वाला ऐसा कम्पन है, जो हम तक पहुँचते हैं। ध्वनि यंत्रों ने जहाँ जीवन को प्रसन्नचित व आनन्दमय और सुख से जीने के साधन दिए है, वहीं उनके गलत उपयोग से मन की व्याकुलता भी बढ़ जाती है। ध्वनि प्रदूषण के मुख्य स्रोत प्राकृतिक रूप से आँधी, तेज वर्षा, तूफान, भूकम्प तथा बिजली की कड़कड़ाहट है जबकि मनुष्य द्वारा उत्पादित स्रोतों में ट्रक, मोटर, कारें, स्कूटर, मोटर साइकिल, बसें एवं अन्य स्वचालित वाहन जैसे रेलगाड़ी तथा हवाई जहाज आदि की ध्वनि प्रमुख है। कारखाने उद्योग में मशीने, सायरन, जेनेरेटर्स एवं अन्य यांत्रिक उपकरण। मनोरंजन के साधन में टी.वी. रेडियो, टेपरिकार्डर, ट्रांजिस्टर, नृत्य व डिस्को। घरेलू उपकरण में वाशिंग मशीने, कूलर्स, मिक्सी, प्रेशर कूकर, वैक्यूम, क्लीनर, एयर कंडीशनर्स आदि। इसके अलावा लाउडस्पीकर्स, टैग, मशीन गर्ने, हथगोले एवं अन्य विस्फोटक सामग्री ध्वनि प्रदूषण के कारण है।

तेज ध्वनि से उच्च रक्त चाप, अल्सर, हृदयघात, मानसिक विकार जैसे रोग ध्वनि विकार के रूप में हो जाते हैं।

शोर का ध्वनि स्रोत पर नियंत्रण, शोर को फैलाने वाले यत्रों एवं कारकों पर नियंत्रण तथा शोर की अभिशंसित सीमाओं का पालन करके ध्वनि प्रदूषण से बचा जा सकता है। वनि प्रदूषण को कम करने और उससे बचने के लिए हर स्तर पर बहुत चिन्तन की आवश्यकता है. क्योंकि प्रदूषण के क्षेत्र में धीमे–धीमे जनसाधारण की उपेक्षा पाकर इसमें जाने–अनजाने निरन्तर वृद्धि हो रही है। मानव को स्वस्थ, संतुलित और समाज में समायोजित होने के लिए उसे इस समस्या से छुटकारा पाना ही होगा।

## 4.10 मृदा प्रदूषण एवं प्रभाव

मृदा के भौतिक, रासायनिक या जैविक गुणों में ऐसा कोई भी अवांछित परिवर्तन जिससे उसकी गुणवत्ता अथवा उत्पादकता क्षीण होती है जिसका प्रभाव मनुष्य तथा अन्य जीवों पर पड़ता है. मृदा प्रदूषण कहलाता है। सामान्यतया मृदा प्रदूषण घरेलू अपशिष्ट, शहरी कूड़ा, करकट, मानव मल, मरे जानवरी इत्यादि के अपशिष्ट, औद्योगिक अपशिष्ट एवं रसायन, खेतों में प्रयोग की जाने वाली खादें, कीटनाशक, भट्टों की राख तथा पेस्टीसाइड्स प्रमुख है। मृदा प्रदूषण के नियंत्रण के लिए अपशिष्टों को संग्रह करके उचित निस्तारण करना चाहिए तथा संसाधनों की पुनः प्राप्ति कर प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित किया जा सकता है।

## 4.11 अन्य अपशिष्ट के प्रभाव

1- प्लास्टिक अपशिष्ट पॉलीथीन की थैलियों ने जब पूरे देश में एक साथ अनेक समस्याएँ पैदा कर दी तब ही इस प्लास्टिक उद्योग व इसमें निर्मित विविध प्रकार की वस्तुओं ने लोगों का ध्यान आकृष्ट किया। प्लास्टिक मुख्यतः पॉलीथिन तथा पॉलीएथिलीन टेरीध्थलेट जैसे रासायनिक पदार्थों का बना होता है। पॉलीथिन की थैलियों को रंगीन बनाने के लिए कैडमियम एवं सीसे (लेड) का प्रयोग होता है, जो निश्चित ही घातक है। थैलियां शीघ ज्वलनशील होने के कारण जलाने पर जलती है किन्तु वातावरण में डाइऑक्सीजन, फॉस्जीन जैसी घातक विषैली गैस निकालती है। फिर भी ये थैलियों पूरी तरह नष्ट नहीं होती। पशु इन्हें खा लेते हैं तो उनके पेट में जमा होकर उनकी मृत्यु का कारक बनती है।

2- रेडियोधर्मी अपशिष्ट जिसे आणविक अपशिष्ट भी कहते हैं। मुख्यतः ये पदार्थ आणविक ऊर्जा संयंत्र से निकलने से वायुमण्डल में फैल जाते है तथा मानव को उनकी दैनिक क्रिया के मध्य ही शरीर में पहुँच कर हानि पहुँचाते हैं। इन रेडियोधर्मी तत्वों से त्वचा रोग, श्वसन सम्बंधी बीमारियां, पक्षाघात, कैंसर, आँखों से कम दिखना, कम सुनना जैसी घातक बीमारियों हो सकती है। हिरोशिमा तथा नागासाकी पर आणविक बम्बों की विनाश लीला अभी किसी को भूली नहीं है।

3- चिकित्सकीय अपशिष्ट–वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने प्रथम बार 1 अगस्त 1998 को एक चिकित्सकीय अपशिष्ट निस्तारण विज्ञप्ति प्रसारित की। जिसमें ग्लूकोज की बोतले, रबड़ अथवा प्लास्टिक के दस्ताने, रबर ट्यबिंग्स, सिरेंज, माँस के लोथड़े, रक्त रंजित चादरें व शल्य क्रिया में प्रयोग किए जाने वाली वस्तुओं का चिकित्सकीय अपशिष्ट निस्तारण के साथ–साथ उपयोग में ली जाने वाली तकनीकियों के बारे में बताया। इनका उचित निस्तारण न होने से इनके पुनः प्रयोग होने की संभावना बनी रहती है। जिनका परिणाम संक्रामक रोगों एड्स आदि के रूप में होता है।

4- संकटमय अपशिष्ट–ये वस्तुएँ, पदार्थ, यौगिक है जो किसी उद्योग से निकलकर प्राणि जगत को हानि पहुँचाते हैं तथा कभी–कभी जान लेवा साबित होते हैं। पूरे विश्व में 400 मिलियन टन संकटमय अपशिष्ट प्रतिवर्ष एकत्र होता है। जिनमें मुख्यतः लेड, जिंक, आर्सेनिक, सायनाड, कैडमियम, क्लोरोफार्म, कार्बन मोनो ऑक्साइड, नाइट्रोजन, सल्फर डाई ऑक्साइड, डाइऑक्सीन, पॉली विनायल क्लोराइड, एस्बेस्टोस तथा कार्बन टेट्रा क्लोराइड प्रमुख हैं। सितम्बर 1995 में इसे बैसल वेन ने संकटमय अपशिष्टों के निस्तारण की व्यवस्था को व्यवहारिक बनाने का लक्ष्य रखा तथा यह संदेश दिया कि ऐसे संकटमय अपशिष्ट जिन्हें पुन चक्रित किया जा सके, उन्हें पुनः चक्रित किया जाए और शेष अपशिष्टों को उपचारात्मक प्रणाली से नष्ट कर दिया जाए।

पर्यावरणीय कानून का परिपालन पर्यावरण प्रदूषण को रोकने हेतु अनेकों कानून उपलब्ध हैं, जिनका सामयिक एवं उचित उपयोग वांछनीय है। जिनमें जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1974 तथा उसका संशोधन अधिनियम, 1978 वायु प्रदूष्ण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981 तथा उसका संशोधन अधिनियम 1981 वन (संरक्षण) अधिनियम 1980 तथा पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम 1986 आदि। तथा विद्वान न्यायाधीश भारतीय संविधान के कुछ अनुच्छेद (21) 48 ए तथा 51 ए (जी) आदि का सहारा लेकर पर्यावरण को प्रदूषण से रोकने का प्रयास कर सकते हैं।

पर्यावरण विभाग (भारत सरकार) पर्यावरण के क्षेत्र में देश की शीर्षस्थ संस्था है। जो प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड्स के समन्वय से दोषी व्यक्तियों तथा संस्थान के मालिकों को प्रदूषण के लिए उत्तरदायी ठहरा कर सजा निर्धारित कर सकती है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के आह्वान पर सभी देशों को मानव पर्यावरण पर आयोजित 1972 में स्टॉकहोम में हुए अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में लिए निर्णय के अनुसार भारत ने नेशनल कमेटी

ऑन एनवायरनमेण्टल प्लानिंग एण्ड कोर्डनिशन का गठन केन्द्रीय सरकार द्वारा किया गया है। जिसकी अनुशंसा पर प्रदूषण निवारण और नियंत्रण मण्डल बने जो पर्यावरण की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए पर्यावरण नीति बना कर जल, वायु, मृदा, औद्योगिक तथा कृषि उत्पादन के परिप्रेक्ष्य में होने वाले प्रदूषणों पर राष्ट्रीय नीति बनाकर कार्य कर रही है। फिर भी इस दिशा में गहन मंथन एवं सकारात्मक प्रयास की आवश्यकता है।

**दूषित पेयजल के कारण मानव में होने वाली सामान्य बीमारियां**

| जीवाणु | रोग | लक्षण |
|---|---|---|
| जीवाणु (बैक्टीरिया) | टाइफायड | डायरिया, अत्यधिक उल्टियां, प्लीहा का बढ़ना, आंतों में सूजन, जलन, उपचार न होने पर प्राणधाती |
| | कालरा (हैजा) | डायरिया, अत्यधिक उल्टियां जल की कमी, उपचार न होने पर प्राणघाती |
| | जीवाणु पेचिश एंटेराइटिस | पेचिश, शिशुओं में उपचार न होने पर प्राणघाती तेज पेट दर्द, उल्टिया, जी मिचलाना, कभी–कभी प्राणाघाती |

| | | |
|---|---|---|
| विषाणु | संक्रामक हेपेटाइटिस | बुखार, सिरदर्द, भूख न लगना, पेट में दर्द, पीलिया, यकृत का बढ़ना, शायद ही प्राणघाती पर यकृत को स्थायी क्षति। |
| परजीवी प्रोटोजोआ | अमीबिक पेचिश | भीषण डायरिया, सरदर्द, पेट दर्द, बुखार, कंपकपी उपचार न होने पर यकृत तथा आंतों में क्षति एवं मृत्यु |
| | जियारडिया | डायरिया, पेट में ऐंठन, पेट फूलना, डकारिया आना, थकान रहना |
| परजीवी कीडे | शिस्टोसोमियासिस | पेट दर्द, त्वचा पर चकते, रक्ताल्पता, कमजोर स्वस्थ्य |

स्रोत :– मिलर (1994), लिविंग इन इन्वायरनमेंट वैड्वर्थ पब्लिशिंग कं० कैलीफोर्निया (1994)

## 4.12 पर्यावरण संरक्षण एवं स्वास्थ्य के प्रति स्वयं का दायित्व

- जीवाश्म ईंधन का कम से कम प्रयोग करना चाहिए क्योंकि इसमें $CO_2$ की मात्रा में वृद्धि हो रही है जो वनों की कमी से उपयुक्त $CO_2$ का अवशोषण नहीं हो पा रहा है। जिसके फलस्वरूप ग्रीन हाउस प्रभाव से पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है तथा ध्रुवों की बर्फ पिघलकर महासागरों के जलस्तर में वृद्धि करके पृथ्वी के अनेक भागों को जलमग्न कर सकती हैं।
- क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स व ऐरोसोल ओजोन पर्त के क्षरण का कारण बन त्वचा रोग व कैंसर का कारक बन रहे हैं।
- बढ़ती जनसंख्या ने पृथ्वी के प्राकृतिक संसाधनों का अधिकाधिक दोहन किया है तथा भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति ने पृथ्वी के अस्तित्व पर प्रश्न चिह्न लगा दिया है। वस्तुत जनसंख्या नियंत्रण हमारी पहली प्राथमिकता होनी चाहिए।
- औद्योगिक संस्थान जल, वायु व मृदा को बेरहमी से प्रदूषित कर रहे हैं। इनसे निकली विषैली गैसें व अपशिष्ट स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रहे हैं। वस्तुतः इन पर कानूनी शिकंजा कसने की आवश्यकता है।
- विलुप्त होती प्रजातियों एवं जैव विविधता के संरक्षण से पर्यावरण को संतुलित रखा जा सकता है।
- प्राकृतिक संसाधनों का उचित एवं विवेकपूर्ण उपयोग करें। ऊर्जा की कम से कम खपत करें। सौर ऊर्जा के उपयोग से प्रदूषण को रोका जा सकता है।
- वनों की कटाई से मृदा क्षरण तथा जल चक्र में परिवर्तन हो रहा है। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन काल से दो वृक्ष अवश्य लगाएं। क्योंकि वृक्ष अनेक पर्यावरणीय समस्याओं का समुचित समाधान है।
- विभिन्न प्रकार के अपशिष्टों का समुचित निस्तारण पर्यावरण हित में आवश्यक है।

- प्रकृति से अनावश्यक छेड़–छाड़ पर रोक लगाकर पर्यावरण प्रदूषण से बचा जा सकता है।
- सरकार के साथ–साथ हमें व्यक्तिगत स्तर पर पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम हेतु निरन्तर प्रयास करते रहना चाहिए। पर्यावरण के प्रति जागरुकता से ही हम भविष्य में और अधिक अच्छा स्वास्थ्य तथा जीवन जी सकेंगे तथा भविष्य में आने वाली पीढ़ी को प्रदूषण के अभिशाप से मुक्ति दिला सकेंगे।
- धूम्रपान, तम्बाकू व शराब से बचें, मद्यपान सामाजिक, नैतिक व आर्थिक संकट है जिसका स्वास्थ्य पर असर पड़ता है।
- नियमित योग व व्यायाम करें, प्रौढ व्यक्ति 6–8 घंटे नींद लें।

## 4.14 बोध प्रश्न एवं उनके उत्तर

## 4.15 अभ्यासार्थ प्रश्नबोध प्रश्न

वायु प्रदूषण से आप क्या समझते हैं
वायु प्रदूषण से होने वाली बीमारियों का उल्लेख कीजिए
पर्यावरण पर ग्रीन हाउस के प्रभाव की विवेचना कीजिए
जलवायु प्रदूषण से आप क्या समझते हैं
जलवायु प्रदूषण से होने वाली बीमारियों की विवेचना कीजिए
औद्योगिक प्रदूषण क्या है
औद्योगिक प्रदूषण के प्रभाव की विवेचना कीजिए
ध्वनि प्रदूषण से आप क्या समझते है
ध्वनि प्रदूषण के प्रभाव की विवेचना कीजिए
मृदा प्रदूषण क्या है
अम्ल वर्षा से आप क्या समझते हैं

## 4.16 संदर्भ ग्रन्थ एवं उपयोगी पुस्तकें

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र विविध आयाम अरुण कुमार सिंह
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र एम्,एल.झिंगन
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र वी.सी. सिन्हा
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र आर.एन भटाचार्या

# इकाई – 05
# जनसंख्या वृद्धि एवं प्रदूषण, भार एवं वहन क्षमता

## इकाई की रुपरेखा


5.0 उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 माल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त
5.3 अनुकूलतम जनसंख्या का सिद्धान्त
5.4 मार्क्स का जनसंख्या सिद्धान्त
5.5 जनांकिकीय संक्रमण का सिद्धान्त
5.6 भारत की जनसंख्या एक विस्फोटक स्थिति
5.7 जनसंख्या वृद्धि की दर
5.8 भारत में जनसंख्या वृद्धि की दर
5.9 जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न समास्याएं
5.10 जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण
5.11 भारत की जनगणना 2001 आँकड़ों में
5.12 विश्व जनसंख्या
5.13 मानव विकास रिपोर्ट, 2005
5.14 मानव विकास रिपोर्ट 2009
5.15 सारांश
5.16 बोध प्रश्न
5.17 उपयोगी पुस्तकें


### 5.1 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जनसंख्या के विभिन्न सिद्धान्तों के साथ भारत की जनसंख्या एवं निम्न बिन्दुओं को समझने में सक्षम हो जायेंगे।

- जनसंख्या वृद्धि के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रस्तुत इकाई में जनसंख्या वृद्धि की हानियाँ से भी अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण से अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई भारत की जनगणना 2001 आँकड़ों के बारे में जानेंगे।
- प्रस्तुत इकाई में विश्व जनसंख्या से अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में मानव विकास रिपोर्ट, 2005 से अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में मानव विकास रिपोर्ट,2009 से अवगत होंगे।

## 5.2 प्रस्तावना

जनसंख्या या आबादी में समूह का बोध होता है। "Population" शब्द लैटिन भाषा के च्वचनसने शब्द से बना है, जिसका अर्थ है–लोग या जनता अर्थात् जनसंख्या या आबादी शब्द किसी क्षेत्र में रहने वाले जन्तुओं, पेड़–पौधों अथवा मानव के लिये प्रयुक्त होता है। मानव जीवन शास्त्रियों का विश्वास है कि पृथ्वी पर मानव का उद्‌भव तीस लाख वर्ष पूर्व प्लामोसीन युग में हुआ। मानव सभ्यता के इतिहास में अधिकांश काल में मानव एक शिकारी एवं संगहणकर्ता की भूमिका में ही रहा। इस भूमिका ने मानव को संख्या को सीमित रखा। कृषि युग के प्रारम्भ से ही मानव संख्या में बढ़ोत्तरी होने लगी, क्योंकि कृषि कर्म द्वारा मानव को खाद्यान्न की आपूर्ति सुनिश्चित हुई।

जनसंख्या वृद्धि और पर्यावरणीय स्थिरता एक दूसरे से जुड़ी हुई है, वैश्विक जनसंख्या में वृद्धि और प्राकृतिक संसाधनों और पारिस्थितिकी तंत्रों पर दबाव, जिससे प्रदूषण के स्तर में वृद्धि और पारिस्थितिक चुनौतियों में वृद्धि होती है। यह वहन क्षमता की अवधारणा के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ है, जो कि अधिकतम व्यक्तियों की संख्या को संदर्भित करता है, जो पर्यावरण लंबे समय तक बिना किसी गिरावट के समर्थन कर सकता है। जनसंख्या वृद्धि से संसाधनों की खपत बढ़ जाती है, जिससे उच्च स्तर का अपशिष्ट और प्रदूषण उत्पन्न होता है, जो पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य और सेवाओं के लिए जोखिम पैदा करता है। औद्योगिक गतिविधियों, कृषि और मानव प्रयासों से होने वाले प्रदूषण से आवास विनाश, जैव विविधता की हानि और पारिस्थितिक प्रक्रियाओं में व्यवधान हो सकता है, जिससे पर्यावरण की वहन क्षमता कम हो सकती है। पर्यावरणीय स्थिरता की सीमाओं को समझने के लिए वहन क्षमता महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें प्राकृतिक प्रणालियों की संसाधन प्रदान करने और प्रदूषकों को अवशोषित करने और संसाधित करने की क्षमता शामिल है। इन मुद्दों को संबोधित करने के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है, जिसमें संधारणीय अभ्यास, तकनीकी नवाचार और नीति हस्तक्षेप शामिल हैं, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि जनसंख्या की गतिशीलता ग्रह की वहन क्षमता से अधिक न हो और प्रदूषण के प्रतिकूल प्रभावों को कम किया जा सके।

## 5.3 माल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त

इस सिद्धान्त को इंग्लैण्ड के अर्थास्त्री सर थॉमस राबर्ट माल्थस ने 1798 ई में अपने लेख An essay on the Principles of population में प्रकाशित किया। यह सिद्धान्त जनसंख्या में वृद्धि तथा खाद्यान्न आपूर्ति में वृद्धि के मध्य संबन्ध की व्याख्या करता है। माल्थस के अनुसार किसी भी क्षेत्र में जनसंख्या की वृद्धि गणोत्तर श्रेणी अर्थात् अधिक तीव्र (1-2-4-8-18-32) दर से होती है. जबकि जीविकोपार्जन के साधन में वृद्धि समानान्तर श्रेणी (1-2-3,4,5,6---) से होती है।

## 5.4 अनुकूलतम जनसंख्या का सिद्धान्त

इस सिद्धान्त का प्रतिपादन प्रो. हेनरी सिजविक ने किया है। यह सिद्धान्त जनसंख्या का सम्बन्ध अधिकतम उत्पादन के साथ जोड़ता है। इस सिद्धान्त के अनुसार "जनसंख्या के बढ़ने से देश में कार्यशील जनसंख्या में वृद्धि होने लगती है। इसके फलस्वरूव उत्पत्ति वृद्धि नियम लागू होने लगता है, परन्तु एक बिन्दु के पश्चात् जब उपलब्ध संसाधनों का पूर्ण उपयोग हो चुका होता है, तब श्रम की औसत उत्पादकता अर्थात् प्रति व्यक्ति आय अधिकतम हो जाती है। यही बिन्दु जनसंख्या का अनुकूलतम बिन्दु हैं।"

## 5.5 मार्क्स का जनसंख्या सिद्धान्त

1867 में कर्नल हेनरी मोक्स ने जनसंख्या सिद्धांत प्रस्तुत किया, जिसमें समाज को दो वर्गों में विभाजित किया गया: गरीब और अमीर। अमीर लोग उत्पादन के साधनों का उपयोग करते हैं और धन संचय पर ध्यान केंद्रित करते हैं, जबकि गरीब लोग तेजी से जनसंख्या वृद्धि के माध्यम से श्रम संचय करना चाहते हैं। अमीर लोग श्रम शक्ति को सस्ता रखना चाहते हैं, जिससे श्रमिक वर्ग के लिए बेरोजगारी, दुख, कुपोषण और गरीबी बढ़ती है। यह सामाजिक अवधारणा जैविक जनसांख्यिकीय सोच के विपरीत है।

## 5.6 जनांकिकीय संक्रमण का सिद्धान्त

जनसांख्यिकी संक्रमण सिद्धांत एक महत्वपूर्ण सामाजिक और जनसंख्या सिद्धांत है जो बताता है कि जनसंख्या वृद्धि और मृत्यु दर में परिवर्तन के साथ समाज विभिन्न चरणों से कैसे गुजरता है। यह औद्योगिक और विकासशील देशों में जनसंख्या गतिशीलता को समझने के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। सिद्धांत को चार या पाँच चरणों में विभाजित किया गया है, जिनमें से प्रत्येक में जनसंख्या वृद्धि, जन्म दर और मृत्यु दर में विभिन्न प्रकार के परिवर्तन होते हैं।

पहला चरण उच्च जन्म दर और उच्च मृत्यु दर है, जहाँ रहने की स्थितियाँ कठिन होती हैं और चिकित्सा सुविधाओं की कमी के कारण मृत्यु दर अधिक होती है। जनसंख्या वृद्धि धीमी या स्थिर होती है, जैसा कि प्राचीन समाजों और गरीब विकासशील देशों में देखा गया है।

दूसरा चरण उच्च जन्म दर और घटती मृत्यु दर है, जहाँ बेहतर चिकित्सा सेवाएँ, स्वच्छता और पोषण मृत्यु दर में गिरावट का कारण बनते हैं, जिससे जनसंख्या में तेजी से वृद्धि होती है।

तीसरा चरण घटती जन्म दर और कम मृत्यु दर है, जहाँ जन्म दर धीरे–धीरे कम होती है जबकि मृत्यु दर कम रहती है। शिक्षा, गर्भनिरोधक उपाय और सामाजिक परिवर्तन जन्म दर में कमी का कारण बनते हैं और जनसंख्या वृद्धि धीमी हो जाती है।

चौथा चरण निम्न जन्म दर और कम मृत्यु दर है, जहाँ जन्म और मृत्यु दर दोनों स्थिर रहती हैं और जनसंख्या वृद्धि धीमी हो जाती है। यह चरण अमेरिका, यूरोप के अधिकांश भाग और जापान जैसे विकसित देशों में देखा जाता है।

जनसंख्या में गिरावट का पांचवां चरण, जो बहुत कम जन्म दर और संभावित वृद्धि में कमी की विशेषता रखता है, अक्सर सामाजिक और आर्थिक कारकों से जुड़ा होता है, जैसा कि जापान और इटली जैसे विकसित देशों में देखा गया है।

हालाँकि, यह सिद्धांत सभी समाजों पर समान रूप से लागू नहीं होता है, क्योंकि कुछ देशों में संक्रमण की गति और पैटर्न अलग–अलग हो सकते हैं और प्रवासन और वैश्वीकरण जैसे वैश्विक परिवर्तन भी इन चरणों को प्रभावित कर सकते हैं। इसे समझने से नीति निर्माताओं और योजनाकारों को जनसंख्या प्रबंधन और संसाधन आवंटन में मदद मिल सकती है।

## 5.7 भारत की जनसंख्याः एक विस्फोटक स्थिति

हमारे देश की जनसंख्या सन् 1981 में लगभग 70 करोड़ थी और आज 1 अरब (100 करोड़) से भी अधिक हो गयी है। विश्व में चीन के बाद भारत का जनसंख्या में दूसरा स्थान है। जनसंख्या की इस वृद्धि से अनेक समस्यायें उत्पन्न हो रही हैं, जैसे–पेट भरने के लिए भोजन की कमी, तन ढकने के लिए कपड़े की आवश्यकता, भूमि पर रहने के लिए स्थान की कमी, सड़कों पर बढ़ती भीड़, विद्यालयों में समिति स्थान, सबको रोजगार, देश की आर्थिक

स्थिति का विगड़ना, अस्पतालों में सीमित स्थान तथा बढ़ती भीड़ के कारण रोगियों की उचित देख–भाल न होना आदि।

1 मार्च 2001 को भारत की जनसख्या 1,02,70,15,247 ओर उत्तर प्रदेश की जनसंख्या 16,60,52,869 थी।

| भारत की जनसंख्या | | | |
|---|---|---|---|
| **वर्ष** | **जनसंख्या** | **वर्ष** | **जनसंख्या** |
| 1921 | 25.12 करोड़ | 1971 | 54.79 करोड़ |
| 1931 | 27.89 करोड़ | 1981 | 68.31 करोड़ |
| 1941 | 31.85 करोड़ | 1991 | 84.00 करोड़ |
| 1951 | 36.10 करोड़ | 2001 | 1 अरब से अधिक |
| 1961 | 40.91 करोड़ | 2011 | जनगणना कार्य प्रारम्भ |

आज जनसंख्या वृद्धि देश के आर्थिक विकास में हर तरफ अवरोध उत्पन्न कर रही है। जनसंख्या की वृद्धि से हमारा देश आज विस्फोटक स्थिति में हो गया है। इस वृद्धि पर रोक लगाना हमारे लिये नितान्त आवश्यक है।

## 5.8 जनसंख्या वृद्धि की दर

जनसंख्या वृद्धि की दर एक महत्वपूर्ण जनसंख्या संकेतक है जो किसी विशेष क्षेत्र या देश की जनसंख्या में समय के साथ होने वाली वृद्धि की गति को मापता है। यह दर एक राष्ट्र की सामाजिक और आर्थिक नीतियों, स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली, शिक्षा, और अन्य महत्वपूर्ण कारकों पर निर्भर करती है। जनसंख्या वृद्धि की दर को सामान्यत: प्रतिशत में व्यक्त किया जाता है और इसे गणना के लिए कई मानदंडों का उपयोग किया जाता है।

### जनसंख्या वृद्धि की दर की गणना:

जनसंख्या वृद्धि की दर की गणना करने के लिए निम्नलिखित सूत्र का उपयोग किया जाता है:

$$\text{जनसंख्या वृद्धि की दर} = \frac{\text{आबादी का परिवर्तन}}{\text{आरंभिक आबादी}} \times 100$$

जहाँ:

- आबादी का परिवर्तन: एक निश्चित समय अवधि (जैसे, एक वर्ष) में जनसंख्या में हुई वृद्धि।
- आरंभिक आबादी: वह जनसंख्या संख्या जिस पर गणना की जाती है।

प्रकार:

- प्राकृतिक वृद्धि की दर यह जन्म दर और मृत्यु दर के बीच के अंतर को दर्शाती है। इसे निम्नलिखित सूत्र से गणना की जाती है:

**प्राकृतिक वृद्धि की दर=जन्म दर– मृत्यु दर**

- संवर्द्धन (नेट) वृद्धि की दर इसमें प्रवासन के प्रभाव को भी शामिल किया जाता है। इसे गणना करने के लिए, प्रवासन दर को प्राकृतिक वृद्धि की दर में जोड़ा या घटाया जाता है:

**संवर्द्धन वृद्धि की दर=(जन्म दर– मृत्यु दर)प्रवासन दर**

जनसंख्या वृद्धि की दर के प्रभाव:

- आर्थिक प्रभाव: उच्च जनसंख्या वृद्धि दर अक्सर संसाधनों की अधिक मांग, बुनियादी ढाँचे पर दबाव, और सार्वजनिक सेवाओं की मांग को बढ़ाती है। इससे गरीबी, बेरोजगारी, और सामाजिक असमानता में वृद्धि हो सकती है।
- पर्यावरणीय प्रभाव: उच्च जनसंख्या वृद्धि का पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, जैसे कि अधिक जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, और प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक उपयोग।
- सामाजिक प्रभाव: जनसंख्या वृद्धि का सामाजिक संरचनाओं पर प्रभाव पड़ता है, जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, और सामाजिक सेवाओं की उपलब्धता पर दबाव बढ़ता है।

## 5.9 भारत में जनसंख्या वृद्धि की दर:

भारत में जनसंख्या वृद्धि की दर पिछले कुछ दशकों में काफी परिवर्तनशील रही है। 1950 और 1960 के दशक में, भारत की जनसंख्या वृद्धि दर अत्यधिक उच्च थी। लेकिन, 1990 के दशक से लेकर अब तक, वृद्धि की दर में धीरे–धीरे कमी आई है, हालांकि यह अब भी काफी ऊँची है।

- 1950–1960: लगभग 2.2% प्रति वर्ष
- 2000–2010: लगभग 1.7% प्रति वर्ष
- 2010–2020: लगभग 1.1% प्रति वर्ष (वर्तमान में)

जहाँ:

- आबादी का परिवर्तन: एक निश्चित समय अवधि (जैसे, एक वर्ष) में जनसंख्या में हुई वृद्धि।
- आरंभिक आबादी: वह जनसंख्या संख्या जिस पर गणना की जाती है।

प्रकार:

- प्राकृतिक वृद्धि की दर: यह जन्म दर और मृत्यु दर के बीच के अंतर को दर्शाती है। इसे निम्नलिखित सूत्र से गणना की जाती है:

प्राकृतिक वृद्धि की दर=जन्म दर− मृत्यु दर

- संवर्द्धन (नेट) वृद्धि की दर: इसमें प्रवासन के प्रभाव को भी शामिल किया जाता है। इसे गणना करने के लिए, प्रवासन दर को प्राकृतिक वृद्धि की दर में जोड़ा या घटाया जाता है:

संवर्द्धन वृद्धि की दर=(जन्म दर−मृत्यु दर)प्रवासन दर

जनसंख्या वृद्धि की दर के प्रभाव:

- आर्थिक प्रभाव: उच्च जनसंख्या वृद्धि दर अक्सर संसाधनों की अधिक मांग, बुनियादी ढाँचे पर दबाव, और सार्वजनिक सेवाओं की मांग को बढ़ाती है। इससे गरीबी, बेरोजगारी, और सामाजिक असमानता में वृद्धि हो सकती है।
- पर्यावरणीय प्रभाव: उच्च जनसंख्या वृद्धि का पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, जैसे कि अधिक जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, और प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक उपयोग।
- सामाजिक प्रभाव: जनसंख्या वृद्धि का सामाजिक संरचनाओं पर प्रभाव पड़ता है, जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, और सामाजिक सेवाओं की उपलब्धता पर दबाव बढ़ता है।

## भारत में जनसंख्या वृद्धि की दर:

भारत में जनसंख्या वृद्धि की दर पिछले कुछ दशकों में काफी परिवर्तनशील रही है। 1950 और 1960 के दशक में, भारत की जनसंख्या वृद्धि दर अत्यधिक उच्च थी। लेकिन, 1990 के दशक से लेकर अब तक, वृद्धि की दर में धीरे–धीरे कमी आई है, हालांकि यह अब भी काफी ऊँची है।

- 1950–1960: लगभग 2.2% प्रति वर्ष
- 2000–2010: लगभग 1.7% प्रति वर्ष
- 2010–2020: लगभग 1.1% प्रति वर्ष (वर्तमान में)

भारत की जनसंख्या वृद्धि की दर में कमी का एक मुख्य कारण परिवार नियोजन कार्यक्रम, चिकित्सा सेवाओं में सुधार, और शिक्षा के स्तर में वृद्धि है।

जनसंख्या वृद्धि की दर किसी भी देश की सामाजिक और आर्थिक स्थिति का एक महत्वपूर्ण संकेतक है। यह आर्थिक विकास, संसाधनों की प्रबंधन, और सामाजिक सेवाओं की योजना बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत की जनसंख्या वृद्धि की दर ने देश के विकास की दिशा को प्रभावित किया है और आगे भी यह एक महत्वपूर्ण मुद्दा बनेगा जिसे उचित नीतियों और योजनाओं के माध्यम से संबोधित किया जाना आवश्यक है।

## जनसंख्या वृद्धि के कारण

जनसंख्या वृद्धि एक जटिल प्रक्रिया है जो सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय कारकों से प्रभावित होती है। प्रमुख कारणों में उच्च जन्म दर, धार्मिक और पारंपरिक मान्यताएँ, विवाह की

कम आयु, बेहतर स्वास्थ्य सेवा, स्वच्छता और पोषण के कारण कम मृत्यु दर और शिक्षा और जागरूकता की कमी के कारण प्रजनन दर में असामयिक कमी शामिल हैं। गरीबी और बेरोजगारी जैसी आर्थिक स्थितियाँ परिवार नियोजन उपायों को अपनाने में बाधा डाल सकती हैं। आर्थिक और सामाजिक विकास भी जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित कर सकते हैं, क्योंकि लोग अपने जीवन स्तर को बेहतर बनाने के लिए छोटे परिवारों को प्राथमिकता देते हैं। महिला सशक्तिकरण शिक्षा और रोजगार के अवसरों को बढ़ाकर प्रजनन दर को कम कर सकता है। विकासशील क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में प्रवासन जनसंख्या में अस्थायी या स्थायी वृद्धि का कारण बन सकता है। देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय प्रवासन भी जनसंख्या वितरण और वृद्धि को प्रभावित करता है। सामाजिक नीति और कानून, जैसे परिवार नियोजन नीतियाँ और प्रोत्साहन योजनाएँ, जनसंख्या वृद्धि को भी प्रभावित कर सकती हैं। प्राकृतिक और पर्यावरणीय कारक, जैसे प्राकृतिक आपदाएँ और युद्ध, प्रभावित क्षेत्रों में जनसंख्या वृद्धि पर अस्थायी या दीर्घकालिक प्रभाव डाल सकते हैं। प्रौद्योगिकी और विज्ञान में प्रगति, जैसे प्रजनन तकनीक, जन्म दर को भी प्रभावित कर सकती है। नीति निर्माताओं और योजनाकारों के लिए जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने और दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए इन कारणों को समझना और उनका विश्लेषण करना महत्वपूर्ण है।

## 5.10 जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न समस्याएं

बढ़ते परिवारों को खाद्य उत्पादन और मानवीय सुविधाओं को बनाए रखने में चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, क्योंकि प्राकृतिक संपदा और मानव निर्मित सुविधाओं की सीमाएँ होती हैं। एक खुशहाल और स्वस्थ जीवन के लिए, सभी आवश्यक सुविधाएँ तभी उपलब्ध होती हैं जब परिवार सीमित होते हैं। जनसंख्या वृद्धि एक अभिशाप बन सकती है जब यह किसी देश के लोगों को प्रभावित करती है, विकास योजनाओं को धीमा करती है और आर्थिक और सामाजिक विकास को कम करती है। इस वृद्धि ने कई समस्याओं को जन्म दिया है। बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण हमारे सामने अनेक समस्याएँ खड़ी हो गई हैं। ये समस्याएँ निम्नलिखित हैं–

- खाद्य आपूर्ति की समस्या जनसंख्या वृद्धि के कारण हमारे देश के समझ खाद्य आपूर्ति की समस्या उत्पन्न हो गई हैं। जनसंख्या की वृद्धि के अनुपात में खाद्यान्नों का उत्पादन कम हो रहा है, जिससे लोगों को खाद्य सामग्री कम मात्रा में उपलब्ध हो पा रही है। बच्चे कुपोषण का शिकार हो रहे हैं। शिशुओं के शारीरिक तथा मानसिक विकास पर इसका बुरा प्रभाव पड़ रहा है।
- शिक्षा व्यवस्था की समस्या शिक्षण संस्थाएँ कम होने से बढ़ती हुए आबादी के कारण बच्चों की पढ़ाई के लिए प्रवेश पाना कठिन हो रहा है। विद्यालयों के कमरे, फर्नीचर और तेल के मैदान इतने अधिक बच्चों के लिए नहीं होते हैं। इनके ठीक प्रकार न बैठने के कारण अनेक बच्चे शारीरिक विकलांग्ता एवं कम दिखाई देने के शिकार हो रहे हैं।
- रोजगार की समस्या जनसंख्या वृद्धि से बेरोजगारी की समस्या बढ़ती जा रही है। बेरोजगार व्यक्ति के परिवार में सभी भूखा रहना पड़ता है।
- स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सेवा समस्या–परिवार में अधिक बच्चे होने से माँ का स्वास्थ्य खराब हो जाता है। बच्चों की उचित देखभाल न होने से वे बीमार और दुर्बल हो

जाते हैं। हमारे देश में अस्पतालों की कम संख्या के साथ–साथ उनमें पर्याप्त औषधियाँ भी नहीं हैं।

- आवास की समस्या बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण कितने ही व्यक्तियों को फुटपाथों, गन्दी व अन्धेरी झुग्गी–झोपड़ियों में रहना पड़ता है। गन्दे स्थानों पर रहने से अनेक बीमारियाँ फैलती हैं।

## 5.11 जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण

जनसंख्या वृद्धि सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय स्थिरता को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण वैश्विक मुद्दा है। इसे प्रबंधित करने के लिए, परिवार नियोजन कार्यक्रम, शिक्षा, महिला सशक्तिकरण, आर्थिक और सामाजिक सुधार, प्रजनन स्वास्थ्य सेवाएँ, परिवार नियोजन नीतियाँ, शहरीकरण और प्रवास नीतियाँ, प्रौद्योगिकी और नवाचार, और डेटा संग्रह और विश्लेषण सहित विभिन्न उपाय किए जा सकते हैं।

परिवार नियोजन कार्यक्रम गर्भनिरोधक विधियों को बढ़ावा देते हैं, गर्भनिरोधक विधियों के बारे में जागरूकता और उपलब्धता बढ़ाते हैं, और विशेष रूप से गरीब और ग्रामीण क्षेत्रों में मुफ्त या सस्ती गर्भनिरोधक सेवाएँ सुनिश्चित करते हैं। शिक्षा और जागरूकता लड़कियों और महिलाओं पर ध्यान केंद्रित करती है, प्रजनन दर को कम करती है और महिलाओं के लिए आर्थिक स्वतंत्रता को बढ़ावा देती है। आर्थिक और सामाजिक सुधारों का उद्देश्य गरीबी को कम करना, स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार करना और मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार करना है।

प्रजनन स्वास्थ्य सेवाएँ मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार करती हैं और प्रजनन स्वास्थ्य के बारे में जागरूकता और शिक्षा प्रदान करती हैं, विशेष रूप से किशोरों को। नीति और कानून में परिवार नियोजन नीतियाँ, प्रोत्साहन योजनाएँ और प्रवास प्रबंधन नीतियाँ शामिल होनी चाहिए। शहरीकरण और प्रवास नीतियाँ शहरी क्षेत्रों में अत्यधिक प्रवास को नियंत्रित करती हैं और ग्रामीण क्षेत्रों में विकास को प्रोत्साहित करती हैं। आवास और रोजगार के अवसरों के आधार पर प्रवास एकीकरण के लिए निवासी नियोजन योजनाएँ।

प्रौद्योगिकी और नवाचार नवाचारों और प्रौद्योगिकी के माध्यम से गर्भनिरोधक उपायों की प्रभावशीलता और पहुंच में सुधार कर सकते हैं। डेटा संग्रह और विश्लेषण जनसंख्या वृद्धि के रुझानों और प्रभावों की निगरानी करने में मदद कर सकते हैं। निष्कर्ष रूप में, जनसंख्या वृद्धि को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने और सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए परिवार नियोजन, शिक्षा, महिला सशक्तिकरण और प्रभावी नीतियों को मिलाकर एक बहुआयामी दृष्टिकोण आवश्यक है।

## 5.12 भारत की जनगणना 2001 आँकड़ों में

जनगणना–2001 का जनगणना काल 9 फरवरी, 2001 से 28 फरवरी, 2001 तक था।

जनगणना 2001 की सन्दर्भ तिथि मार्च, 2001 की मध्यरात्रि (शून्य घण्टा–00.00 बजे) निर्धारित की गयी थी। इसके पूर्व जनगणना को सन्दर्भ तिथि 1 मार्च का सूर्योदय निर्धारित था।

जनगणना–2001 का आयोजन भारत के महारजिस्ट्रार एवं जनगणना आयुक्त जयन्त कुमार भाटिया के निर्देशन में सम्पन्न हुआ। 1991 की जनगणना का कार्य ए. आर. नन्द के कार्यकाल में हुआ था।

जनगणना–2001 में किन्हीं कारणों से मणिपुर के सेनापति जिले के तीन उपखण्डों में जनगणना नहीं हो सकी थी। इन तीन उपखण्डों की अनुमानित जनसंख्या 1,27.108 को भारत की जनसंख्या में जोड़ देने पर भारत की कुल जनसंख्या 1 मार्च 2001 में 1,02,87,37,436 थी।

जनगणना 2001 में गुजरात के राजकोट, बीकानेर, जामनगर के कुछ क्षेत्रों तथा हिमाचल प्रदेश के किन्नौन जिले की प्राकृतिक आपदाओं के कारण जनगणना नहीं हो सकी। इन क्षेत्रों की अनुमानित जनसंख्या को भारत की कुल जनसंख्या में सम्मिलित किया गया है। इन दोनों राज्यों की साक्षरता दर प्राप्त करने में उपरोक्त क्षेत्रों की जनसंख्या के अनुमानित ऑकड़ों का प्रयोग किया गया है।

1991 में जम्मू–कश्मीर की जनगणना आतंकवाद के कारण सम्पन्न नहीं हुई थी। 1991 तथा 2001 की जनगणना के तुलनात्मक अध्ययन के लिए 1991 के अनुमानित ऑकड़ों को सम्मिलित किया गया है।

उल्लेखनीय है कि जनगणना 2001 की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि इसमें पहली बार विकलांगों की गणना की गयी और महिलाओं के क्रिया–कलाप तथा उनकी आर्थिक गतिविधियों के आंकड़े संग्रहित किये गये।

| **जनगणना–2001 के महत्वपूर्ण सारणी बद्ध आँकड़े अग्रलिखित हैं।** | |
|---|---|
| जनसंख्या 2001 महत्वपूर्ण आंकड़े | |
| व्यक्तित्व | 1,02,87,37,436 |
| पुरुष | 53.22,33,090 (51.73%) |
| महिलाएँ | 49,65,14,346 (48.27%) |
| नगरीय प्रतिशत | 27.81 |
| दशक में प्रतिशत वृध्दि दर | 21.54 |
| वार्षिक वृध्दि दर प्रतिशत में | 1.95 |
| लिंगानुपात (महिला पुरुष) | 933 1000 |
| साक्षरता प्रतिशत | 64.8 |
| पुरुष साक्षरता प्रतिशत | 75.3 |
| महिला साक्षरता प्रतिशत | 53.7 |
| जन घनत्व (व्यक्ति/वर्ग कि.मी) | 325 |

| **विकलांग जनसंख्या 2001** | |
|---|---|
| कुल विकलांग | 2.19,06,869 |
| प्रतिशत में | 2.1% |
| अनुपात (एक लाख पर) | 2130 |
| दृष्टि विकलांगता | 48.5% |

| | |
|---|---|
| वाणी विकलांगता | 7.50% |
| श्रवण बाधित | 5.80% |
| चल विकलांगता | 27.90% |
| मानसिक विकलांगता | 10.32% |

## अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या

| | अनु. जाति | अनु जनजाति |
|---|---|---|
| व्यक्ति | 16635700 | 8436240 |
| पुरुष | 86088760 | 42640929 |
| महिलाएँ | 80546940 | 41685411 |
| कुल जनसंख्या में अनुपात (%) में | 16.2 | 8.2 जनसंख्या |

## 2001: प्रशासकीय आँकड़े तथा आर्थिक आयाम

| प्रशासनिक | आँकडे | आर्थिक आयाम | |
|---|---|---|---|
| ग्रामों की संख्या | 6,38,58,85,161 | कार्य सहभागी लोग | 40,22,34,724 |
| शहरों की संख्या | 5,161 | कार्य सहभागी दर | 39.1% |
| उपजिलों की संख्य | 5,463 | पुरुष प्रतिभागी दर | 51.69% |
| जिलों का संख्या | 593 | महिला भागीदारी दर | 25.60% |
| कुल क्षेत्रफल (वर्ग किमी में) | 32.87.263 | किसान | 31.7% |
| प्रदेश | 28 | कृषि मजदूर | 26.5% |
| केन्द्र शासित प्रदेश | 7 | | |

## धर्म आधारित जनसंख्या 2001 तथा क्षेत्रफल की दृष्टि से राज्य

| धर्म आधारित जनगणना 2001 | | क्षेत्रफल की दृष्टि से | |
|---|---|---|---|
| धर्म | कुल जनसंख्या (%) | राज्य | |
| हिन्दू | 80.5 | सबसे बड़ा राज्य | राजस्थान |
| मुस्लिम | 13.4 | सबसे छोटा राज्य | गोवा |
| ईसाई | 2.33 | केन्द्रशासित प्रदेश | |
| सिख | 1.9 | सबसे बड़ा केन्द्र शासित प्रदेश | अण्डमान |
| बौद्ध | 0.8 | सबसे छोटा केन्द्रशासित प्रदेश | लक्ष्यदीप |
| जैन | 0.4 | | |
| अन्य | 0.7 | | |

## जनसंख्या तथा लिंगानुपात

| जनसंख्या की दृष्टि से | | लिंगानुपात की दृष्टि से महिलाएँ / 1000 पुरुष | |
|---|---|---|---|
| राज्य | | राज्य | |
| सबसे बडा राज्य | उत्तर प्रदेश | सर्वाधिक लिंगानुपात | केरल (1058) |
| सबसे छोटा राज्य | सिक्किम | सबसे कम लिंगानुपात | हरियाणा (861) |
| **केन्द्रशासित प्रदेश** | | **केन्द्रशासित प्रदेश** | |
| सबसे बड़ा केन्द्र शासित प्रदेश | दिल्ली | सर्वाधिक लिंगानुपात | पांडिचेरी (1001) |
| सबसे छोटा केन्द्रशासित प्रदेश | लक्षदीप | सबसे कम लिंगानुपात | दमन एवं दिव (710) |

| जनघनत्व तथा साक्षरता | | | |
|---|---|---|---|
| जनसंख्या की दृष्टि से | | साक्षरता की दृष्टि से | |
| राज्य | राज्य | | |
| सर्वाधिक जनघनत्व | प.बंगाल (903) | सर्वाधिक साक्षरता | केरल (90.9%) |
| सबसे कम जनसंख्या घनत्व | अरुणाचल (13) | सबसे कम साक्षरता | बिहार (47%) |
| केन्द्रशासित प्रदेश | | केन्द्रशासित प्रदेश | |
| सर्वाधिक जनघनत्व | दिल्ली (9340) | सर्वाधिक साक्षरता | लक्षदीप (86.7%) |
| सबसे कम जनसंख्या घनत्व | अण्डमान एण्ड निकोबार (43) | न्यूनतम साक्षरता | दादरा व नगरहवेली (57.6%) |

प्रति वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल में रहने वालों की संख्या जनघनत्व कहलाती हैं।

## 5.13 विश्व जनसंख्या

विश्व की जनसंख्या 1800 में 1 बिलियन तक पहुँच गई, जो सामान्य गति से बढ़कर 1750 में 76 करोड़ हो गई। औद्योगिक क्रांति के कारण जीवन स्तर में वृद्धि हुई और जनसंख्या वृद्धि हुई, हालाँकि कुछ क्षेत्रों में बीमारियों और अकाल के कारण जनसंख्या में कमी आई। 1850 और 1900 के बीच वार्षिक वृद्धि दर 0.5% थी, जो 1965 में बढ़कर 2% हो गई। हालाँकि, यह दर 1985 में घटकर 1.7% और 2004 में 1.14% हो गई। जनसंख्या की धीमी वृद्धि पिछली शताब्दी में विस्फोटक हो गई, 1960 और 1975 के बीच 1 बिलियन की वृद्धि हुई और 1975 और 1987 के बीच 12 साल की वृद्धि हुई। दुनिया ने बीसवीं सदी में 1.8 बिलियन की आबादी के साथ प्रवेश किया, लेकिन इक्कीसवीं सदी में 6.1 बिलियन की आबादी के साथ प्रवेश किया।

**विश्व जनसंख्या में वृद्धि तथा विश्व जनसंख्या वितरण**

| विश्व जनसंख्या में वृद्धि (1650-2000) | | | विश्व जनसंख्या वितरण (%) | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| वर्ष | जनसंख्या (अरब) | महाद्विप | 1950 | 2000 | 2005 | क्षेत्र (%) |
| 1650 | 0.5 | एशिया | 56.2 | 60.7 | 58.2 | 30 |
| 1750 | 0.71 | अफ्रीका | 8.9 | 13.1 | 11.5 | 20 |
| 1800 | 0.97 | उ.अमेरिका | 8.6 | 7.9 | 05.4 | 16 |
| 1850 | 1.26 | यूरोप | 21.4 | 12.0 | 10.2 | 7 |
| 1900 | 1.65 | द.अमेरिका एवं | | | | |
| 1950 | 2.55 | कैरेबियन देश | 6.5 | 8.6 | 8.4 | 12 |
| 2000 | 6.07 | ओसानिया | 0.5 | 0.5 | 0.5 | 5 |
| 2050 | 9.10 (अनुमानि) | | | | | |

वैश्विक जनसंख्या वितरण एक महत्वपूर्ण मुद्दा है, जिसमें दुनिया की 80 प्रतिशत आबादी 20% भूमि क्षेत्र में रहती है। यह असमानता उत्तरी और दक्षिणी गोलार्ध के बीच भी मौजूद है, जहाँ उत्तरी गोलार्ध में 90% से अधिक आबादी है और प्रति वर्ग किमी 100 से अधिक व्यक्ति हैं। अधिकांश आबादी इन क्षेत्रों में रहती है, जबकि दक्षिण–पूर्व एशिया, यूरोप और उत्तर–पूर्व अमेरिका के अटलांटिक तटीय क्षेत्र में इसका प्रतिशत कम है।

1 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी से कम जनसंख्या घनत्व वाले विरल आबादी वाले क्षेत्र उच्च अक्षांश क्षेत्रों, अंटार्कटिका, उष्णकटिबंधीय रेगिस्तानी क्षेत्रों, उच्च पर्वत और पठारी क्षेत्रों और भूमध्यरेखीय वर्षा वन क्षेत्रों में पाए जाते हैं। जनसंख्या के आकार में परिवर्तन जन्म दर, मृत्यु दर और प्रवास से संबंधित हैं। जनसंख्या परिवर्तन को समझने के लिए सूत्र का उपयोग किया जा सकता है: (जन्म दर–मृत्यु दर) (प्रवास–निवास)। दुनिया की जनसंख्या में वृद्धि उच्च जन्म दर और कम मृत्यु दर से प्रभावित होती है, और प्रवास भी इसे प्रभावित करता है। अफ्रीका में जन्म दर तथा मृत्यु दर दोनों सर्वाधिक है यही कारण है कि अफ्रीका में जनसंख्या वृद्धि दर अन्य सभी महाद्वीपों से अधिक है। यूरोप में जन्म दर मृत्यु दर से कम होने के कारण यहाँ जनसंख्या की प्राकृतिक वृद्धि दर ऋणात्मक है।

# विश्व जनसंख्या 2004

| क्षेत्र | जन्म दर (प्रति हजार) | मृत्यु-दर (प्रति हजार) | प्राकृतिक वृद्धिदर विकास दर (%) | | लिंगानुपात | जनघनत्व / वर्ग किमी (%) |
|---|---|---|---|---|---|---|
| विश्व | 20.24 | 8.86 | 1.13 | 1.14 | 993:1000 | 35 |
| अफ्रीका | 35.90 | 14.20 | 2.17 | 2.14 | 1017:1000 | 18 |
| उत्तरी अमेरिका | 17.20 | 7.60 | 0.97 | 1.11 | 1050:1000 | 16 |
| दक्षिणी अमेरिका | 19.70 | 7.70 | 1.20 | 1.19 | ------ | ----- |
| एशिया | 20.70 | 7.60 | 1.31 | 1.28 | 960:1000 | 101 |
| यूरोप | 10:211.4 | -0.12 | 0.001051:1000 | | 99 (CIS कोछोड़कर) | |
| ओसीनिया | 17.10 | 7.20 | 0.99 | 1.29 | 983:1000 | 2.8 |

## जनसंख्या की दृष्टि से विश्व के 10 सबसे बड़े देश (2004)

| देश | जनसंख्या | महाद्वीप |
|---|---|---|
| 1. चीन | 1,2988,47,624 | एशिया |
| 2. भारत | 1,06,50,70,607 | एशिया |
| 3. सं.रा. अमेरिका | 29,30,27,571 | उ. अमेरिका |
| 4. एण्डोनेशिया | 23,84,52,952 | एशिया |
| 5. ब्राजील | 18,41,01,109 | द. अमेरिका |
| 6. पाकिस्तान | 15,91,96,336 | एशिया |
| 7. रूस | 14,37,82,338 | यूरोप |
| 8. बांग्लादेश | 14,13,40,476 | एशिया |
| 9. नाइजीरिया | 13,72,53,133 | अफ्रीका |
| 10. जापान | 12,73,33,002 | एशिया |

## जनसंख्या की दृष्टि से विश्व में सबसे छोटे 10 देश

| देश का नाम | जनसंख्या (मई. 2004 अनुमानित) |
|---|---|
| 1. पिटकैन्स द्वीप समूह | 47 |
| 2. क्रिसमस द्वीप | 433 |
| 3. कोकोस (कीलिंग) द्वीप समूह | 630 |
| 4. वेटिकल सिटी | 770 |
| 5. टोकेलाउ | 1,418 |
| 6. नॉरफाक द्वीप | 1,853 |
| 7. नियू | 2,145 |
| 8. स्वालबोर्ड | 2,811 |
| 9. फाकलैण्ड द्वीप समूह | 2,967 |
| 10. सेण्ट पियरे और माइक्वलोन | 6,976 |

### 5.14 मानव विकास रिपोर्ट, 2005

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यूएनडीपी) द्वारा प्रकाशित मानव विकास रिपोर्ट 2005 का उद्देश्य मानव विकास के वैश्विक परिदृश्य को समझना और असमानताओं के प्रभाव को उजागर करना था। रिपोर्ट ने मानव विकास सूचकांक (एचडीआई) की गणना में असमानताओं को शामिल करने की एक नई विधि शुरू की, जो शिक्षा, जीवन प्रत्याशा और प्रति व्यक्ति आय के आधार पर देशों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को मापता है। एचडीआई में सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को ध्यान में रखते हुए असमानता–समायोजित मानव विकास सूचकांक (आईएचडीआई) पेश किया गया था।

सामाजिक और आर्थिक असमानताओं, विशेष रूप से धन और आय में बढ़ते अंतर के साथ वैश्विक असमानताओं को प्रमुखता से उजागर किया गया। रिपोर्ट ने असमानता के कारणों और प्रभावों पर प्रकाश डाला, जैसे कि शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं और आर्थिक अवसरों की असमान उपलब्धता, जिससे सामाजिक और आर्थिक असंतुलन, गरीबी में वृद्धि, स्वास्थ्य समस्याएं और सामाजिक तनाव पैदा हुए।

धन और संसाधनों का वितरण अत्यधिक असमान था, जिससे गरीब और अमीर देशों के बीच की खाई और चौड़ी हो गई। रिपोर्ट में असमानताओं को कम करने, सामाजिक सुरक्षा, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा में निवेश को बढ़ावा देने के लिए नीतिगत सुधारों की सिफारिश की गई है। इसमें गरीबी उन्मूलन और विकास में समानता की आवश्यकता और विकसित और विकासशील देशों के बीच सहयोग को बढ़ावा देने पर जोर दिया गया। मानवाधिकारों और विकास को भी रेखांकित किया गया, जिसमें मानवाधिकारों की रक्षा और सभी लोगों के लिए समान अवसर सुनिश्चित करने के महत्व पर जोर दिया गया। रिपोर्ट ने वैश्विक नीति निर्माताओं, विकास संगठनों और शोधकर्ताओं को असमानता और मानव विकास के मुद्दों पर अधिक ध्यान देने और समावेशी नीतियां बनाने के लिए प्रेरित किया।

### इस रिपोर्ट की कुछ

मुख्य तथ्य निम्नलिखित है–

- विश्व के सर्वाधिक धनी 500 लोगों की कुल आय विश्व के 41.6 करोड़ गरीबों से अधिक है।
- विश्व के सर्वाधिक धनी 20 प्रतिशत लोगों के पास विश्व की तीन चौथाई आय है जबकि सर्वाधिक गरीब 20 प्रतिशत लोगों के पास मात्र 1.5 प्रतिशत आय है।
- 3 शिशु मृत्यु दर में कमी लाने का लक्ष्य पूरा न हो पाने से 2015 तक 44 लाख बच्चों को मौत से नहीं बचाया जा सकेगा।
- भारत में पाँच वर्ष तक की आयु वाले शिशुओं में बालिकाओं की मौत के मामले, बालकों की तुलना में 50 प्रतिशत अधिक है।
- भारत के प्रति वर्ष 1.30 लाख युवा इस कारण से मौत के ग्रास बनते हैं कि वे दो वाई (Y) क्रोमोसोम के संयोग से पैदा हुए।

## 5.15 मानव विकास रिपोर्ट 2009

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम की ओर से 5 अक्टूबर, 2009 को जारी मानव विकास की नवीनतम् रिपोर्ट के अनुसार 122 देशों की सूची में भारत 134वें पायदान पर दूसरे वर्ष भी बना हुआ है। किन्तु जन्म के समय पर जीवनदर में लगभग 8 वर्ष की वृद्धि, वयस्क शिक्षा में 25% और कुल सकल नामांकन में 20% की वृद्धि देखने को मिली है। प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद में 1.99% की वृद्धि हुई है।

## संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष

संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष दुनिया भर में जनसंख्या गतिविधियों पर डेटा का आकलन और संग्रह करने के लिए जिम्मेदार है। यह डेटा संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम द्वारा प्रस्तुत मानव विकास रिपोर्ट और विश्व विकास रिपोर्ट का आधार बनता है। वार्षिक विश्व जनसंख्या स्थिति रिपोर्ट भी कोष द्वारा प्रस्तुत की जाती है। यह विकसित और विकासशील देशों को जनसंख्या समस्याओं और समाधानों में सहायता करता है, विकासशील देशों को दी जाने वाली 25% से अधिक सहायता इसी कोष से आती है।

## 5.16 सारांश

जनसंख्या वृद्धि और प्रदूषण आपस में जुड़े हुए हैं और पर्यावरणीय स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण हैं। जैसे–जैसे आबादी बढ़ती है, वे वहन करने की क्षमता पर दबाव डालते हैं, जिससे प्रदूषण का स्तर बढ़ता है और पारिस्थितिक स्वास्थ्य कम होता है। हालाँकि, संधारणीय प्रबंधन अभ्यास, तकनीकी प्रगति और सक्रिय नीति उपाय इन प्रभावों को कम करने में मदद कर सकते हैं। संसाधन दक्षता में सुधार, स्वच्छ तकनीकों को अपनाना और प्रभावी अपशिष्ट प्रबंधन प्रणालियों को लागू करना जैसी रणनीतियाँ पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में मदद कर सकती हैं। एक समग्र दृष्टिकोण जो जनसंख्या प्रबंधन को पर्यावरण संरक्षण प्रयासों के साथ एकीकृत करता है, दीर्घकालिक स्थिरता के लिए आवश्यक है। विकास लक्ष्यों को पारिस्थितिक सीमाओं के साथ जोड़कर, समाज जनसंख्या की जरूरतों को पूरा करते हुए प्राकृतिक प्रणालियों के स्वास्थ्य और उत्पादकता को बनाए रख सकते हैं। यह संतुलित दृष्टिकोण न केवल पर्यावरण की सुरक्षा करता है बल्कि वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए जीवन की गुणवत्ता को भी बढ़ाता है। इन चुनौतियों का समाधान करने और एक संधारणीय और लचीले भविष्य की ओर बढ़ने के लिए सामूहिक कार्रवाई और सूचित निर्णय लेना आवश्यक है।

## 5.17 बोध प्रश्न

1. जनसंख्या वृद्धि से आप क्या समझते हैं ?
2. जनसंख्या वृद्धि से हानियाँ से आप क्या समझते हैं ?

- जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण की विवेचना कीजिए।
- भारत की जनगणना 2001 आँकड़ों की विवेचना कीजिए।
- मानव विकास रिपोर्ट, 2005 की विवेचना कीजिए।
- मानव विकास रिपोर्ट,2009 की विवेचना कीजिए।

## 5.18 उपयोगी पुस्तकें


- L. R. Brown and H. Kane, Full House: Reassessing the Earth's Population Carrying Gapacity (Norton, New York, 1994)
- https://www.ignfa.gov.in/publications/landscape-carrying-capacity-assessment-framework-for-sustain-dev.pdf
- Bilsborrow, R. E., and M. Geores (1994). "Population Change and Agricultural Intensification in Developing Countries." In L. Arizpe, D. Major, and P. Stone, eds. Population and the Environment: Rethinking the Debate. New York: Westview Press, pp. 171-207.
- Lele, U. and Stone W. (1989): Population pressure, the environment and agricultural intensification: variations on the Boserup hypothesis. MADIA Discussion Paper No 4. Washington: The World Bank.
- Donella H. Meadows, Dennis L. Meadows, Jorgen Randers, William W. Behrens III "The Limits to Growth: A Report for the Club of Rome's Project on the Predicament of Mankind", Publisher: Universe Books 1972 ISBN: 978-0876631652
- L. A. Hovorka, C. D. Scott, and B. R. McPherson, "Population and Environment: A Complex Relationship", Publisher: Routledge 2004, ISBN: 978-0415327442
- A. G. Adger, N. W. Arnell, and E. L. Tompkins, "Population Growth and Environmental Degradation: The Role of Technology and Policy", Journal: Global Environmental Change 2005, Volume: 15, Issue 4, Pages 213-222
- Sarbapriya, Ray & Corresponding, & Aditya, Ishita. (2011). Impact of Population Growth on Environmental Degradation: Case of India. Journal of Economics. 2. https://www.researchgate.net/publication/228839080_Impact_of_Population_Growth_on_En vironmental_Degradation_Case_of_India assessed on 10.05.2023
- Nagdeve Dewaram (2022) Environment and Health in India by International Institute for Population Sciences, Mumbai-88, INDIA Paper will be presented at the IUSSP Regional Population Conference on 'Southeast Asia's Population in a Changing Asian Context at Bangkok, Thailand, 10-13 June 2002. https://www.academia.edu/64178715/Population_Growth_and_Environmental_Degradation_ in_India assessed on 08.05.2023

# इकाई – 06

# पर्यावरण प्रबन्धन

## इकाई की रुपरेखा

6.0 उद्देश्य
6.1 प्रस्तावना
6.2 जल प्रबन्धन
6.3 बाढ़ के कारण
6.4 बाढ़ प्रबन्धन
6.5 सामाजिक वानिकी
6.7 भूमि प्रबन्ध
6.8 भूमि के प्रकार
6.9 भूमि का अनुचित उपयोग अथवा दुरुपयोग
6.10 बिगड़ी भूमि के पुनः सुधारने अथवा कृषि योग्य बनाने हेतु उपाय
6.11 जल संरक्षण
6.12 जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरण प्रबन्धन
6.13 सारांश
6.14 बोध प्रश्न
6.15 उपयोगी पुस्तके

### 6.0 उद्देश्य

- प्रस्तुत इकाई में जल प्रबन्धन के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रस्तुत इकाई में बाढ़ प्रबन्धन से भी अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में भूमि प्रबन्धन से अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई भूमि का अनुचित उपयोग अथवा दुरुपयोग के बारे में जानेंगे।
- प्रस्तुत इकाई में जल संरक्षण से अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरण प्रबन्धन से अवगत होंगे।

### 6.1 प्रस्तावना

आधुनिक युग में औद्योगिक विकास और शहरी विस्तार के अभूतपूर्व स्तर देखे गए हैं, जिसने आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के साथ–साथ महत्वपूर्ण पर्यावरणीय चुनौतियों को भी जन्म दिया है। प्रदूषण, अपने विभिन्न रूपों में, पारिस्थितिकी तंत्र, मानव स्वास्थ्य और जलवायु स्थिरता को प्रभावित करने वाले एक महत्वपूर्ण मुद्दे के रूप में उभरा है। प्रदूषण के स्रोत विविध हैं, जिनमें औद्योगिक प्रक्रियाओं, वाहनों से निकलने वाले धुएं, कृषि अपवाह और खतरनाक कचरे के निपटान से होने वाले उत्सर्जन शामिल हैं। इन प्रदूषकों में कण पदार्थ, कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड और वाष्पशील कार्बनिक यौगिक शामिल हैं, जिनमें से प्रत्येक वायु और जल की गुणवत्ता, मिट्टी के प्रदूषण और समग्र पारिस्थितिकी तंत्र असंतुलन को खराब करने में योगदान देता है। औद्योगिक रसायनों और

भारी धातुओं से लेकर जैविक संदूषकों और माइक्रोप्लास्टिक तक प्रदूषण के लिए जिम्मेदार कारकों को समझना प्रभावी पर्यावरण प्रबंधन रणनीतियों को विकसित करने के लिए आवश्यक है। ज्वालामुखी विस्फोट और जंगल की आग जैसे प्राकृतिक कारक भी प्रदूषण में योगदान करते हैं, हालांकि उनका प्रभाव प्रायः मानवजनित स्रोतों की तुलना में कम नियंत्रणीय होता है। प्रदूषण की बहुआयामी चुनौती का समाधान करने के लिए प्रभावी पर्यावरण प्रबंधन महत्वपूर्ण है। इसमें नियामक उपायों, तकनीकी प्रगति और सामुदायिक भागीदारी का संयोजन शामिल है। उत्सर्जन पर सीमाएँ निर्धारित करने और अपशिष्ट प्रबंधन के लिए मानकों को लागू करने में नीतियाँ और विनियमन महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उन्नत निस्पंदन प्रणाली और स्वच्छ उत्पादन तकनीक जैसे तकनीकी नवाचार, प्रदूषक उत्सर्जन को कम करने के लिए व्यावहारिक समाधान प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त, समुदाय द्वारा संचालित पहल और जन जागरूकता अभियान संधारणीय प्रथाओं को बढ़ावा देने और सामूहिक जिम्मेदारी को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण हैं। यह अध्ययन प्रदूषण की गतिशीलता में गहराई से जाएगा, इसमें शामिल एजेंटों और पर्यावरण प्रबंधन में नियोजित रणनीतियों की जाँच करेगा। प्रदूषण स्रोतों और प्रबंधन प्रथाओं के बीच परस्पर क्रिया की खोज करके, अध्ययन का उद्देश्य वर्तमान दृष्टिकोणों का एक व्यापक अवलोकन प्रदान करना और दीर्घकालिक पर्यावरणीय स्थिरता प्राप्त करने के लिए एकीकृत समाधानों के महत्व को उजागर करना है।

पर्यावरण प्रबंधन एक गुणवत्तापूर्ण पर्यावरण और बेहतर जीवन स्तर सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण है। हालाँकि, हमारे कार्यों ने हमारे युग में एक महत्वपूर्ण मोड़ ला दिया है। विकास ने प्रकृति और उसके चक्र को बिगाड़ दिया है, मानव निर्मित सुविधाओं के कारण इसकी उपेक्षा की है। एक अच्छा प्राकृतिक वातावरण एक खुशहाल वर्तमान और एक शांतिपूर्ण भविष्य के लिए आवश्यक है। जबकि हर देश की प्रगति की जिम्मेदारी है, पर्यावरण विनाश के नाम पर विकास को मापना सही नहीं है। विकासशील देशों पर ध्यान केंद्रित करना और एक टिकाऊ भविष्य सुनिश्चित करने के लिए टिकाऊ प्रथाओं को बढ़ावा देना आवश्यक है। विनाश रहित विकास (Development without destruction) हमारा ध्येय और हमारा नारा होना चाहिए। पर्यावरण प्रबन्धन को हम निम्नलिखित इकाइयों में बॉटेंगे–

.1जल प्रबन्धन
.2भूमि प्रबन्धन
.3सामाजिक वानिकी
.4जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरण प्रबन्धन

## 6.2 जल प्रबन्धन

नदी के उद्‌गम या जलग्रहण क्षेत्र से निकलने वाली नदियों में अतिरिक्त पानी को बाढ़ के रूप में जाना जाता है। यह अतिरिक्त पानी जल स्तर को बढ़ाता है, जिससे नदी की जलधारा में अधिक बल पैदा होता है। जब अतिरिक्त पानी नदी के किनारों से बहकर आस–पास के क्षेत्र में फैल जाता है, तो इसे बाढ़ माना जाता है। कुछ मामलों में, अत्यधिक वर्षा और उचित जल निकासी व्यवस्था की कमी से जलभराव हो सकता है, जो अप्रत्याशित क्षेत्रों में भूमि को कवर करता है। इसके अतिरिक्त, नहर के किनारों को काटने या काटने से पानी आस–पास के क्षेत्र में फैल सकता है, जिससे बाढ़ आ सकती है। बाढ़ नदी में अपेक्षाकृत उच्च प्रवाह या जल स्तर, या पानी के अचानक बढ़ने, फैलने या प्रवाह के कारण निचली भूमि में पानी भरने का परिणाम है, जिसके परिणामस्वरूप आसपास के क्षेत्र में बाढ़ या जलभराव होता है।

### बाढ़ की प्रकृति

(अ) पानी टिकने की अवधि के आधार पर बाढ़ के तीन प्रकार हैं–

- अल्प अवधि वाली बाढ़ 24 घंटे से कम अवधि, ज्यादा विनाशकारी, पहाड़ी क्षेत्रों में।
- मध्यम अवधि वाली बाढ़–दो से सात दिन की अवधि, कम विनाशकारी, मैदानी क्षेत्रों में।
- लम्बी अवधी की बाढ़–30 दिन या उससे अधिक अवधि, नुकसान सर्वाधिक, बहुत कम ढलान वाले क्षेत्र में।

(ब.) जल स्तर के आधार पर भी बाढ़ को तीन प्रकार में विभाजित किया जा सकता है–

- निम्न जल स्तर वाली बाढ़–जलस्तर, .2फुट या घुटने तक
- मध्यम जल स्तर वाली बाढ़ जलस्तर 4 फुट से ऊपर

## 6.3 बाढ़ के कारण

भारत की मानसून जलवायु, जो जून से सितंबर तक होती है, अत्यधिक वर्षा और जलभराव का कारण बनती है, जिससे बाढ़ और जलभराव होता है। बाढ़ का मुख्य कारण अत्यधिक वर्षा है, जिसके कारण नदियाँ अतिरिक्त पानी को ले जाने में विफल हो जाती हैं, जिससे पानी किनारों से बाहर बह जाता है और बाढ़ आ जाती है। उचित जल निकासी व्यवस्था का अभाव बाढ़ का एक और प्रमुख कारण है। मिट्टी का कटाव और जमाव नदी के तल को ढक देता है, जिससे पानी बाहर नहीं निकल पाता और फैल नहीं पाता। तालाब, झील और पोखर जैसे जल भंडारण स्रोत कभी गांवों में प्रचुर मात्रा में थे, लेकिन जनसंख्या वृद्धि के कारण, वे घर बनाने या खेती करने के कारण भर रहे हैं। जल भंडारण स्रोतों के इस ह्रास के परिणामस्वरूप वर्षा का पानी नदियों और नालों में बह जाता है, जिससे बाढ़ की स्थिति पैदा होती है। शहरीकरण और परिवहन के कारण, क्षेत्रीय ढलानों और प्राकृतिक प्रवाह पर विचार किए बिना घने परिवहन नेटवर्क बनाए गए हैं, जो प्रवाह चौनलों को अवरुद्ध करते हैं और बाढ़ का मुख्य कारण बनते हैं। मानवीय गतिविधियाँ भी बाढ़ में योगदान देती हैं, जिससे देश के विभिन्न क्षेत्रों में विनाश होता है। बाढ़ पानी, जंगल, मिट्टी, पेड़, पौधे और जानवरों को प्रभावित करती है, जिससे फसल नष्ट हो जाती है, घर गिर जाते हैं, सड़कें टूट जाती हैं और संचार सुविधाएँ खराब हो जाती हैं। यात्रा, औद्योगिक कार्य, रोजगार और आर्थिक गतिविधियाँ बाधित होती हैं, जिससे खाद्यान्नों और पेयजल की कमी हो जाती है। दूषित पानी से हैजा, मलेरिया, गैस्ट्रोएंटेराइटिस, मेनिनजाइटिस और आंखों की बीमारियों जैसी बीमारियाँ फैल सकती हैं। बाढ़ खत्म होने के बाद भी इसका असर कई दिनों तक बना रहता है।

## 6.4 बाढ़ प्रबन्धन

बाढ़, एक प्राकृतिक आपदा, जो अत्यधिक वर्षा, नदी की जलवृद्धि, या समुद्री तूफानों के कारण उत्पन्न होती है, समाज और पर्यावरण पर गंभीर प्रभाव डालती है। इससे मानव जीवन, कृषि, इन्फ्रास्ट्रक्चर, और पारिस्थितिकी तंत्र को व्यापक नुकसान होता है। बाढ़ प्रबंधन का उद्देश्य बाढ़ के प्रभावों को कम करना, जोखिम को कम करना, और आपदा की स्थिति में त्वरित और प्रभावी प्रतिक्रिया सुनिश्चित करना है।

### बाढ़ प्रबंधन के प्रमुख घटक

.1 पूर्वानुमान और चेतावनी प्रणाली:

बाढ़ पूर्वानुमान के लिए मौसम संबंधी डेटा और जलवायु मॉडलिंग का उपयोग किया जाता है। प्रभावी चेतावनी प्रणाली, जैसे कि सैटेलाइट और रडार तकनीक, बाढ़ आने से पहले लोगों को सूचित करती है, जिससे वे सुरक्षा उपाय कर सकते हैं।

.2 रोकथाम और कम करने के उपाय:

बाढ़ के प्रभाव को कम करने के लिए विभिन्न संरचनात्मक उपाय जैसे कि बाँध, नहरें, और जल निकासी प्रणालियाँ बनायी जाती हैं। साथ ही, गैर–संरचनात्मक उपाय, जैसे कि जलवायु

परिवर्तन के प्रति सतर्कता, भूमि उपयोग योजना, और वृक्षारोपण, बाढ़ के जोखिम को कम करने में सहायक होते हैं।

.3 आपातकालीन प्रबंधन और प्रतिक्रिया:

आपातकालीन प्रबंधन योजनाओं में बाढ़ के समय त्वरित सहायता, राहत कार्य, और पुनर्वास के उपाय शामिल होते हैं। स्थानीय प्रशासन और एनजीओ की भूमिका इस समय बहुत महत्वपूर्ण होती है।

.4 पुनर्वास और पुनर्निर्माण:

बाढ़ के बाद पुनर्वास की प्रक्रिया में प्रभावित क्षेत्रों की मरम्मत, क्षतिग्रस्त इन्फ्रास्ट्रक्चर की पुनर्निर्माण, और प्रभावित लोगों को पुनर्वास सहायता प्रदान की जाती है।

.5 जन जागरूकता और शिक्षा:

बाढ़ प्रबंधन में समुदाय की भागीदारी महत्वपूर्ण है। लोगों को बाढ़ से संबंधित जोखिम, सुरक्षा उपायों, और आपातकालीन प्रतिक्रिया की जानकारी देने के लिए जन जागरूकता अभियानों का आयोजन किया जाता है।

## 6.5 सामाजिक वानिकी

1976 में, भारत में राष्ट्रीय कृषि आयोग ने सामाजिक वानिकी कार्यक्रमों के कार्यान्वयन की सिफारिश की। सामाजिक वानिकी के मुख्य उद्देश्यों में जलाऊ लकड़ी की जरूरतों को पूरा करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में वन लगाना, कम्पोस्ट खाद विकसित करना, फलों और खाद्य आपूर्ति को बढ़ाना, मृदा संरक्षण को बढ़ावा देना, गर्म क्षेत्रों में फसलों के लिए छाया प्रदान करना, पशुओं के लिए चारा उपलब्ध कराना और पीने के पानी और सिंचाई के लिए भूमिगत जल स्तर में सुधार करना शामिल है। इस दृष्टिकोण का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में फलों और खाद्य पदार्थों की आपूर्ति बढ़ाना, वाष्पीकरण को कम करना और कृषि उद्देश्यों के लिए मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार करना भी है।

## 6.6 भूमि प्रबन्धन

भूमि का संरक्षण इसके दीर्घकालिक उपयोग और रासायनिक तथा जैविक विकारों को दूर करने के लिए महत्वपूर्ण है। कृषि प्रणाली को मिट्टी में आवश्यक पोषक तत्वों का दोहन करना चाहिए और फिर से उसी मात्रा में आपूर्ति करनी चाहिए। भूमि, पृथ्वी का 10/3वाँ भाग है, वह भाग है जहाँ हम रहते हैं, पशु, पक्षी और सभी जीवित प्राणी रहते हैं, और प्राकृतिक संसाधनों (खनिजों) से भरपूर है। क्रस्ट, पृथ्वी के स्थलमंडल की ऊपरी परत, पृथ्वी की पपड़ी की सतह है, लेकिन यह सभी गतिविधियों का केवल अंतिम परिणाम दर्शाती है। पृथ्वी के खनिज, जो हमारी कई जरूरतों को पूरा करते हैं, पृथ्वी की पपड़ी के बहुत नीचे स्थित हैं। जिस मिट्टी पर कृषि की जाती है और खाद्यान्न पैदा होते हैं, वह भी पृथ्वी की पपड़ी के नीचे स्थित है। भूमिगत जल और बड़े जलाशयों के निचले सिरे वाले हिस्से भूमि में मिल जाते हैं, जिससे भूमि कई चट्टानों से बनी एक ठोस पिंड बन जाती है। मिट्टी का निर्माण विभिन्न भौतिक, रासायनिक और जैविक गतिविधियों के माध्यम से चट्टानों को तोड़कर और चकनाचूर करके होता है। मिट्टी को रंग, लवण या खनिज, बनावट और गुणों के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। संक्षेप में, भूमि का संरक्षण उसके दीर्घकालिक उपयोग और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए आवश्यक है।

### भूमि एवं मृदा

भूमि पृथ्वी की सतर के पानी रहित ठोस भाग को, जिस पर किसी भी कार्य का निष्पादन किया जा सकता है, कहते हैं, जबकि मिट्टी (मृदा) भूमि की वह ऊपरी सतह है जिसमें खनिज

व अन्य आर्गेनिक पदार्थ मिले होते हैं और जिस पर पेड़ पौधे उग सकते हैं या उगाये जा सकते हैं।

मिट्टी की अम्लीयता अथवा क्षारीयता का मान, जिसकी पैदावार और उत्पादन में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका होती है, उसके pH से किया जा सकता है।

अम्लीयता -7उदासीन उदासीन और क्षारीयता > 7

मिट्टी के गुण अलग–अलग होते हैं और अलग–अलग फसलों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। ऊपरी 6 इंच (15 सेमी) में लवण होते हैं जो सीधे उपज को प्रभावित करते हैं। कई वर्षों में बनी मिट्टी की ऊपरी परत सभी फसलों के लिए सबसे अच्छी मानी जाती है। हालाँकि, प्राकृतिक आपदाओं, दोषपूर्ण कार्यों या देखभाल की कमी के कारण यह जल्दी नष्ट हो सकती है। इससे अनाज का उत्पादन कम हो जाता है और लोगों की आजीविका दूसरे देशों पर निर्भर हो जाती है। भूमि एक केंद्र बिंदु के रूप में कार्य करती है, जो आश्रय, भोजन, फसलें, स्वच्छ जल और घने पेड़ प्रदान करती है। भारत, जिसके पास दुनिया की केवल 5.2 प्रतिशत भूमि है, में %7.16 आबादी और दुनिया की आधी से अधिक भैंसें, गाय और बकरियाँ हैं। भारत में भूमि की उपयोगिता केवल भोजन उगाने में ही नहीं है, बल्कि इन जानवरों के लिए चारा इकट्ठा करने में भी है। अधिक भोजन उगाने की मजबूरी ने चरागाहों पर खेती को बढ़ावा दिया है, जिससे मवेशी जंगलों की ओर चले गए हैं, जिससे पर्यावरण असंतुलन और प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास हुआ है। भूमि आश्रय, भोजन, स्वच्छ जल और घने वृक्ष उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक है, लेकिन विडंबना यह है कि इसका उपयोग विश्व की केवल %5.2 आबादी और विश्व की %7.16 भैंसें ही करती हैं।

## 6.7 भूमि के प्रकार

भूमि का उसके उपलब्ध प्रकार तथा उसके उपभोग के आधार पर हम निम्न वर्गीकरण कर सकते हैं–

**.1सामान्य भूमि (Natural Land)** कृषि हमारे जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जिसमें खाद्य उत्पादन और आवश्यक वस्तुओं के लिए भूमि का उपयोग किया जाता है। यह भूमि एक मूल्यवान विरासत है और इसे संरक्षित करने की आवश्यकता है। यह विभिन्न प्रकार के पेड़ों, पौधों, वनस्पतियों और घने जंगलों का घर है। नवीनतम आंकड़ों के अनुसार, कृषि भारत की सामान्य भूमि के %25 हिस्से को कवर करती है, जो इसे हमारे समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बनाती है।

**.2नम भूमि (Wetlands)** भारत में कृत्रिम नहरों द्वारा निर्मित वेटलैंड एक दलदली भूमि है जो अपने अत्यधिक जल अवशोषण के कारण कृषि या अन्य उद्देश्यों के लिए अनुपयुक्त है। इस मुद्दे ने खाद्य उत्पादन के लिए पानी की आपूर्ति को लेकर चिंताएँ पैदा कर दी हैं। जल स्रोतों से लगातार पानी के रिसाव को रोकने और पानी को अवशोषित करने के लिए किनारों पर घने पेड़ लगाने के प्रयास किए जा रहे हैं। वेटलैंड्स को राष्ट्रीय स्तर पर लाभकारी माना जाता है क्योंकि वे भोजन की उपलब्धता, पशु चारा, सहायक पक्षी, सरीसृप, मछली और अन्य पशु प्रजातियों को सुनिश्चित करते हैं, बाढ़ नियंत्रण, जलभृत पुनर्भरण, जल गुणवत्ता विनियमन, जलीय कृषि और संभावित मुर्गी पालन स्थलों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रदूषण निवारण के लिए भी उनका महत्व है। राष्ट्रीय वेटलैंड प्रबंधन समिति ने देश में 22 वेटलैंड क्षेत्रों को प्राथमिकता के आधार पर चुना है, और भारत ने वेटलैंड्स पर रामसर कन्वेंशन पर हस्ताक्षर किए हैं

**.3बंजर भूमि (Waste Land)** बंजर भूमि वह भूमि होती है जो कृषि या अन्य उपयोग के लिए उपयुक्त नहीं होती। यह भूमि अक्सर सूखी, पत्थरीली, या अत्यधिक क्षारीय हो सकती है, और

इसमें उर्वरक तत्वों की कमी होती है। बंजर भूमि को उपजाऊ बनाने के लिए विशेष उपाय किए जा सकते हैं, जैसे कि भूमि सुधार, सिंचाई, और उर्वरक का उपयोग।
भारत में, बंजर भूमि सुधार पर कई योजनाएं और कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं, जिनमें वृक्षारोपण, जल संचयन, और मिट्टी संरक्षण जैसी तकनीकें शामिल हैं। इन प्रयासों से बंजर भूमि को उपजाऊ बनाया जा सकता है और कृषि योग्य बनाया जा सकता है।

**राष्ट्रीय बंजर भूमि विकास बोर्ड** (National Wasteland Development Board] NWDB) भारत सरकार द्वारा स्थापित एक संस्था है, जिसका उद्देश्य बंजर और अनुपजाऊ भूमि के पुनर्विकास और सुधार के लिए योजनाएँ बनाना और उनका कार्यान्वयन करना है। इसका गठन 1985 में हुआ था, और इसका मुख्यालय नई दिल्ली में स्थित है।

**मुख्य उद्देश्य और कार्य:**

- भूमि सुधार: बंजर और अनुपजाऊ भूमि को कृषि योग्य और उपयोगी बनाने के लिए विभिन्न तकनीकी और प्रबंधकीय उपायों को लागू करना।
- वृक्षारोपण और हरित विकास: बंजर भूमि पर वृक्षारोपण और वन क्षेत्र के विस्तार के लिए योजनाएँ बनाना।
- जल संचयन: जल संसाधनों का संरक्षण और उपयोग के लिए योजनाएँ और उपाय करना, जैसे कि तालाबों का निर्माण और पुनर्जीवित करना।
- समुदाय की भागीदारी: स्थानीय समुदायों को भूमि सुधार की गतिविधियों में शामिल करना और उन्हें भूमि प्रबंधन के महत्व के बारे में जागरूक करना।
- प्रशिक्षण और जागरूकता: किसानों और अन्य लाभार्थियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना और बंजर भूमि सुधार के लिए नवीनतम तकनीकों और विधियों की जानकारी प्रदान करना।
- वित्तीय सहायता और समर्थन: बंजर भूमि विकास के लिए वित्तीय सहायता और प्रोत्साहन प्रदान करना।

**प्रमुख योजनाए :**

.1 राष्ट्रीय बंजर भूमि विकास कार्यक्रम (National Wasteland Development Programme, NWDP): इस कार्यक्रम के तहत बंजर भूमि के विकास के लिए परियोजनाएँ शुरू की जाती हैं, जिनमें भूमि सुधार, वृक्षारोपण, और जल संचयन शामिल हैं।

.2 वृक्षारोपण अभियान: बंजर भूमि पर वृक्षारोपण के लिए विशेष अभियान चलाए जाते हैं ताकि पर्यावरणीय लाभ सुनिश्चित किया जा सके।

राष्ट्रीय बंजर भूमि विकास बोर्ड का उद्देश्य बंजर भूमि का पुनर्विकास करके उसे उत्पादक बनाना और देश की कृषि और पर्यावरणीय स्थिति को बेहतर बनाना है।

.4रेगिस्तानी भूमि (Desert Land) बड़े मिट्टी के कणों और सीमित जल अवशोषण क्षमता वाले मोटे रेतीले क्षेत्र अनुत्पादक हैं और पानी की कमी से ग्रस्त हैं। आस–पास के जंगलों की अनुपस्थिति और जंगलों की कमी नमी संग्रह को रोकती है, जिसके परिणामस्वरूप बारिश की कमी होती है, जिससे रेगिस्तान बनते हैं। भारत का थार रेगिस्तान, जो पंजाब, राजस्थान और गुजरात में 7.31 मिलियन हेक्टेयर में फैला हुआ है, इसका एक प्रमुख उदाहरण है, जिसकी विशेषता अत्यधिक पशु चराई, पानी की कमी और पानी और हवा के कारण भूमि का कटाव है।

.5कच्छ वनस्पति वाली भूमि (Mangroves Land) उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय अंतर–ज्वारीय क्षेत्रों में पाए जाने वाले मैंग्रोव भूमि की विशेषता नमक को अवशोषित करने और स्थिर समुद्र तटों को बनाए रखने की इसकी क्षमता है। भारत में 740ख6 वर्ग किलोमीटर समुद्र तट पर उगाई जाने वाली मैंग्रोव वनस्पति दुनिया के कुल मैंग्रोव क्षेत्र का लगभग %7 हिस्सा बनाती है, जो इसे समुद्र तटों की स्थिरता बनाए रखने में एक अनूठा और मूल्यवान संसाधन बनाती है।

भारत में इस क्षेत्र की भूमि के उत्पादन पर भी भारी जैव हस्तक्षेप है तथा कई कारणों से अंधाधुंध और बेरहमी से इसका शोषण हो रहा है। इस शोषण को रोकने तथा इस भूमि की वनस्पतियों के संरक्षण और प्रबन्ध के लिए भारत सरकार ने एक राष्ट्रीय कच्छ वनस्पति समिति (A National Mangrove Committee) गठित की है जिसके निम्न लक्ष्य रखे हैं :–

.1प्राकृतिक पुनः उत्पादन (National Regeneration).

2 नर्सरी बनाना (Raising of Nurseries).

.3वनीकरण (Afforestation), और

.4शिक्षा एवं जागरूकता (Education & Awareness)

## 6.8 भूमि का अनुचित उपयोग अथवा दुरुपयोग

भारत का भूमि क्षेत्र, जो 329 मिलियन हेक्टेयर में फैला है, जनसंख्या वृद्धि के कारण घट रहा है। 1941 में स्वतंत्रता से पहले, प्रति व्यक्ति भूमि क्षेत्र 03.1 हेक्टेयर था, जो 2002 तक बढ़कर 31.0 हेक्टेयर हो गया है। यह कमी मिट्टी के कटाव, रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों से प्रदूषण और मवेशियों के चरने के लिए चारागाहों के विकास जैसे कारकों के कारण है। इसके अतिरिक्त, सड़कों, आवासीय कॉलोनियों, अस्पतालों, डाकघरों और अन्य विभागों के लिए भवनों के निर्माण से कृषि के लिए उपयुक्त भूमि क्षेत्र में कमी आई है। इस मुद्दे को हल करने के लिए, अनावश्यक भूमि उपयोग को रोकना और खेती योग्य भूमि की उपज बढ़ाने के तरीके खोजना महत्वपूर्ण है। इसमें वन क्षेत्रों या आर्द्रभूमि के लिए आरक्षित भूमि को हटाना, साथ ही घरों और ईंट बनाने जैसे अन्य उद्देश्यों के लिए मिट्टी के उपयोग को कम करना शामिल है। इसके अतिरिक्त, हवाई अड्डों, बस स्टैंड और खनन कार्य के लिए भूमि आवंटन पर विचार किया जाना चाहिए। इन मुद्दों को संबोधित करके, भारत अपनी आबादी के लिए एक टिकाऊ और स्थायी भविष्य सुनिश्चित कर सकता है।

### भूमि के नष्ट अथवा दूषित होने का कारण (Causes of Destruction or Pollution of Land)

भूमि का ठीक से उपयोग न हो पाने के कई कारणों को मोटे तौर से दो बिन्दुओं में विभाजित किया जा सकता है। जिस पर विस्तृत रूप से चर्चा करेंगे, वे है:–

(अ) भूमि–क्षरण (Soil Erosion)

भूमि क्षरण एक ऐसा अभिशाप है जिसके द्वारा चाहे अनचाहे, जान–अनजाने जाने कितनी भूमि यूँ ही नष्ट हो जाती है। पिछले 100 से 200 वर्षों की अवधि में बनी मिट्टी की ऊपरी सतह (top soil) कुछ ही दिनों में तेज वर्षा अथवा आँधी और तूफान से बह जाती है अथवा उड़ जाती है। मिट्टी नष्ट तो बहुत कम समय में ही हो जाती है, जबकि उसके बनने में बहुत समय लगता है। अतः मिट्टी की रक्षा करना बहुत आवश्यक और महत्त्वपूर्ण है।

यह भूमि–क्षरण जल और हवा दोनों से होता है–

.1जल द्वारा भूमि–क्षरण (Soil Erosion by Water) जहाँ वनस्पति क्षेत्र

मिट्टी का कटाव उन क्षेत्रों में एक आम समस्या है, जहाँ भूमि विरल और अपर्याप्त है, जहाँ घने पेड़ नहीं हैं। बारिश की बूँदें मिट्टी को धीरे–धीरे काटती हैं, और भारी बारिश से कटाव की दर बढ़ जाती है। इसे रोकने के लिए, जल निकासी प्रणाली के लंबवत भूमि की जुताई करके

मिट्टी के क्षरण को कम किया जा सकता है। घने पेड़ भारी वर्षा की बूंदों को अवशोषित कर सकते हैं, जिससे पानी मिट्टी के माध्यम से धीरे–धीरे बह सकता है। पानी के प्रवाह को रोकने और धीमी, कम गति से उपयोग करने की अनुमति देने के लिए खेतों या भूमि के ऊपरी हिस्सों में छोटे एनीकट बनाए जा सकते हैं। ये उपाय मिट्टी के क्षरण को रोकने और भूमि की समग्र गुणवत्ता में सुधार करने में मदद कर सकते हैं।

.2वायु द्वारा भूमि–क्षरण (Soil Erosion by Wind) मिट्टी का कटाव तेज हवा के कारण होने वाली एक आम समस्या है, जहाँ मिट्टी के कण हवा द्वारा उठाए जाते हैं और दूर ले जाते हैं। ये कण फिर एक तूफान का रूप ले लेते हैं, जिससे पिछली भूमि का क्षेत्र वैसा ही रह जाता है। मिट्टी के कटाव को रोकने के लिए, खेतों को हवा की दिशा से बचाने और मिट्टी को आसानी से उड़ने से रोकने के लिए हवा में नमी बनाए रखने की सलाह दी जाती है। दोनों प्रकार के कटाव के कारण मिट्टी के नुकसान को रोकने के लिए, पानी या हवा के प्रवाह के खिलाफ आश्रय बेल्ट स्थापित किए जाने चाहिए, और मिट्टी के कटाव को कम करने के लिए खेतों के चारों ओर घने पेड़ लगाए जाने चाहिए।

(ब) भूमि–प्रदूषण (Soil Pollution)

भूमि के भौतिक, रासायनिक या जैविक गुणों में ऐसा कोई भी अवांछित परिवर्तन जिसका प्रभाव मनुष्य तथा अन्य जीवों पर पड़े या जिससे भूमि की प्राकृतिक गुणवत्ता तथा उपयोगिता नष्ट हो. भू–प्रदूषण कहलाता है। इसे और ध्यान से देखें–

.1मिट्टी की अम्लीयता (Soil Acidity) अम्लीय विकार मिट्टी में हाइड्रोजन आयनों की उच्च आणविक तीव्रता के कारण होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप pH मान 7 से नीचे हो जाता है। यह विकार एल्युमिनियम और आयरन को अधिक घुलनशील बनाता है, जिससे पौधे में जहर पैदा होता है। मैंगनीज यौगिक में वृद्धि से पौधे की कमी की प्रक्रिया भी धीमी हो जाती है। मिट्टी के बैक्टीरिया की गतिविधि भी धीमी हो जाती है। कैल्शियम, मैग्नीशियम, मोलिब्डेनम और फास्फोरस की कम उपलब्धता के कारण फसल उत्पादन में गिरावट आती है। सिलिका और क्वार्ट्ज की अधिकता, कार्बनिक पदार्थों का अपघटन, क्षार का रिसाव और अमोनियम सल्फेट जैसे उर्वरकों के निरंतर उपयोग से मिट्टी में एसिड की मात्रा बढ़ जाती है। इस विकार का समाधान चूना, क्षारीय उर्वरकों, उचित जल निकासी प्रणालियों, पोटाश युक्त उर्वरकों और एसिड–सहिष्णु फसलों को उगाने से प्राप्त किया जा सकता है।

.2मिट्टी की क्षारीयता (Soil Alkalinity) शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में अत्यधिक वाष्पीकरण से मिट्टी में विकार उत्पन्न होते हैं, जिसकी विशेषता मिट्टी की ऊपरी सतह पर सोडियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटाश, कार्बोनेट, बाइकार्बोनेट और नाइट्रेट जैसे क्लोराइड की उपस्थिति है। इन मिट्टी में हाइड्रोजन आयनों की तुलना में हाइड्रॉक्सिल आयनों की सांद्रता अधिक होती है और इनका pH मान 7 से अधिक होता है। क्षारीय लवणों का वाष्पीकरण, उचित जल निकासी की कमी, नहर के पानी से निरंतर सिंचाई और सोडियम नाइट्रेट के उपयोग से मिट्टी पर विषाक्त प्रभाव पड़ता है, जिससे पौधों की वृद्धि रुक जाती है और मिट्टी की भौतिक, रासायनिक और जैविक स्थिति खराब हो जाती है। इन विकारों को दूर करने के लिए, लवणों को खुरचने, निक्षालन, फ्लशिंग, जिप्सम, जैविक उर्वरकों और क्षार–सहिष्णु फसलों के माध्यम से हटाया जा सकता है।

.3रासायनिक और कीटनाशक दवाओं का भूमि पर प्रभाव (Effect of Pesticides and Chemical Fertilizers) खेती में रासायनिक खादों, कीटनाशकों, खरपतवार नाशकों और फफूंदनाशकों के बढ़ते प्रयोग से मृदा प्रदूषण हो रहा है और हानिकारक तत्व बढ़ रहे हैं। खेतों में अमोनियम सल्फेट खाद के लगातार प्रयोग से मृदा अम्लीयता बढ़ती है, जबकि सोडियम नाइट्रेट से

क्षारीयता विकार उत्पन्न होता है। कीटों को नष्ट करने के लिए डीडीटी और बीएचसी जैसे विषाक्त पदार्थों का अत्यधिक प्रयोग मिट्टी में वर्षों तक अवशेष छोड़ता है, जिससे मनुष्यों में नई–नई बीमारियाँ और व्याधियाँ फैलती हैं। भारत सरकार ने अनाज और सब्जियों में इन रसायनों के प्रयोग के विरुद्ध संस्तुति की है। इन रसायनों के लगातार प्रयोग से मृदा उत्पादन क्षमता कम होगी और मानव स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। उत्पादन बढ़ाने के लिए सरकार को इन रसायनों का प्रयोग कम करना चाहिए और रासायनिक खादों और कीटनाशकों के स्थान पर जैविक खाद, भूमि शोधन और यांत्रिक गतिविधियों को प्राथमिकता देनी चाहिए। इससे मृदा प्रदूषण से मानव स्वास्थ्य की रक्षा होगी और टिकाऊ कृषि सुनिश्चित होगी।

## 6.9 बिगड़ी भूमि के पुनः सुधारने अथवा कृषि योग्य बनाने हेतु उपाय

प्रदूषण या खनन गतिविधियों से दूषित कृषि भूमि को पुनः प्राप्त करने के लिए, विशेषज्ञ इसे कृत्रिम रूप से मिट्टी और खाद से ढकने, उन्नत फसलें लगाने और घने वृक्षारोपण, जल संग्रह केंद्र और मनोरंजन क्षेत्र स्थापित करने का सुझाव देते हैं। असमान रूप से क्षतिग्रस्त क्षेत्रों के लिए, स्विमिंग पूल, खेल के मैदान और उद्यान जैसे परिदृश्य स्थापित किए जा सकते हैं। भूमि एक महत्वपूर्ण संसाधन है जिसका उपयोग विशेष घरों, बांधों, स्टेडियमों और मनोरंजन स्थलों के निर्माण या नई कॉलोनियों के विकास के लिए किया जा सकता है। इन उद्देश्यों के लिए खराब भूमि का उपयोग करके, हम दोनों समस्याओं को एक साथ हल कर सकते हैं। भूमि का उचित उपयोग समृद्धि की ओर ले जा सकता है और असहनीय परिस्थितियों को कम कर सकता है। देश के भविष्य में योगदान देकर अच्छी संभावनाएं पैदा की जा सकती हैं। जैसा कि कहा जाता है, अच्छी भूमि से अच्छा भोजन मिलता है, और अच्छा भोजन बेहतर दिमाग की ओर ले जाता है।

### फसलों का हेर–फेर

भूमि पर लगातार एक ही फसल उगाने से मिट्टी के विशिष्ट तत्वों का दोहन हो सकता है, जिससे संतुलन बिगड़ सकता है। व्यवस्थित रूप से फसलों को घुमाने से मिट्टी के विभिन्न तत्वों का एक के बाद एक दोहन होता है, जिससे मिट्टी और किसानों दोनों को लाभ होता है। सावधानीपूर्वक फसल चक्रण से कार्बनिक पदार्थ और नाइट्रोजन की आपूर्ति सुनिश्चित होती है, जिससे मिट्टी का स्वास्थ्य बना रहता है और उत्पादन बढ़ता है। जहरीले पदार्थों को रोका जाता है, और पौधों की जड़ें व्यापक रूप से फैलती हैं, उर्वरकों को अवशोषित करती हैं और कीटाणुओं और बीमारियों को नियंत्रित करती हैं। उचित उर्वरक का उपयोग और निराई भी संभव है। मिट्टी के संरक्षण के लिए फसलों का चक्रण महत्वपूर्ण है, विशेष रूप से समृद्ध घास, फलीदार फसलों और भांग के लिए, क्योंकि वे मिट्टी को नाइट्रोजन प्रदान करते हैं। इसलिए, मिट्टी के संरक्षण के लिए फसलों का चक्रण आवश्यक है।

### आवरण फसलों का उपयोग

जिस भूमि को परती छोड़ना हो उसमें आवरण फसलों को लगा देना अधिक उपयोगी होता है। कई पौधे इस प्रकार के होते हैं जो भूमि के कटाव के साथ ही साथ मिट्टी को जैव पदार्थ तथा हरी खाद प्रदान करते हैं।

### जैविक अपशिष्ट पदार्थों का उपयोग

विविध प्रकार के जैविक अपशिष्ट पदार्थ, पत्तियां, डण्ठल, बीज, छिलके आदि मिट्टी को महत्वपूर्ण उर्वरक प्रदान करते हैं। इनका समुचित उपयोग मित्री को उर्वरा शक्ति प्रदान करने के लिए किया जाना चाहिए।

### उर्वरक तथा खाद का उपयोग

मिट्टी से शोषित खनिजों की पुनः आपूर्ति करने के लिए विविध रासायनिक जैविक उर्वरक खादों का उपयोग करना चाहिए। परन्तु उर्वरकों के उपयोग के पहले मिट्टी का विश्लेषण करना तथा यह आवश्यक है कि किस खनिज तत्व की मिट्टी में कमी है।

## 6.10 जल संरक्षण

जल जीवन के लिए आवश्यक है, यह पोषक तत्व प्रदान करता है और पौधों और जानवरों को जीवित रखता है। हालाँकि, यह अक्सर प्रदूषित होता है, जिससे स्वच्छ पेयजल दुर्लभ हो जाता है। जल संरक्षण तब शुरू होता है जब बारिश की बूँदें सतह पर गिरती हैं। यदि वर्षा जल को भूमिगत प्रवाहित करने के लिए परिस्थितियाँ निर्धारित की जाती हैं, तो यह वायुमंडल में कम घुलता है, भूमिगत जलाशयों में बढ़ता है, और मिट्टी की नमी को बढ़ाता है। जल संरक्षण में जल चक्र के उस हिस्से को नियंत्रित करना शामिल है जहाँ वर्षा जल सतह पर बहता है और समुद्र तक पहुँचता है, यह सुनिश्चित करता है कि स्वच्छ पेयजल सभी को उपलब्ध हो।

## 6.11 जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरण प्रबन्धन

पृथ्वी जल, ऑक्सीजन और पेड़ जैसे आवश्यक तत्व प्रदान करके जीवन का समर्थन करती है। ये तत्व सामंजस्य बनाए रखते हैं और मनुष्यों के लिए एक आरामदायक जलवायु प्रदान करते हैं। पृथ्वी के वायुमंडल में नाइट्रोजन (%78), ऑक्सीजन (%21), और अन्य गैसें (%1.0) जैसे कार्बन डाइऑक्साइड, ग्रीनहाउस गैसें, मीथेन, ओजोन, जल वाष्प और नाइट्रस ऑक्साइड शामिल हैं। ग्रीनहाउस गैसें एक आवरण के रूप में कार्य करती हैं, जो सूर्य की पराबैंगनी किरणों को पृथ्वी तक पहुँचने से रोकती हैं और इसके तापमान तंत्र को नियंत्रित करती हैं। पृथ्वी हमारे सौर मंडल का एकमात्र ग्रह है जहाँ सूर्य की %30 किरणें परावर्तित होती हैं, जबकि %70 इन गैसों द्वारा एकत्र की जाती हैं।

बुध, शुक्र और शनि जैसे अन्य ग्रहों पर जलवायु जीवन की उत्पत्ति के लिए उपयुक्त नहीं है। बुध पर दिन के समय अत्यधिक गर्मी होती है और एक मोटी परत होती है जो जीवन की उत्पत्ति के लिए प्रतिकूल है। मनुष्यों ने अपने जीवन को आरामदायक बनाने के लिए कोयला और पेट्रोल जैसे जीवाश्म ईंधन का दोहन किया है, जिससे वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड का स्तर बढ़ गया है। इससे ग्लोबल वार्मिंग हुई है, वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा बढ़ गई है और निचले क्षेत्रों में बर्फ पिघल रही है और बाढ़ आ रही है। जलवायु परिवर्तन के कारण मानव निर्मित हैं, औद्योगीकरण और उपभोक्तावादी विकास पर्यावरण विनाश में योगदान दे रहे हैं। इस महान विनाश को रोकने के लिए, हमें मानवता के हित में पूर्वाग्रह और भेदभाव को पीछे छोड़ने का संकल्प लेना चाहिए। जलवायु परिवर्तन के कारणों को संबोधित करके, हम सभी के लिए अधिक टिकाऊ भविष्य की दिशा में काम कर सकते हैं।

जलवायु परिवर्तन के कारण कृषि को भारी नुकसान हो रहा है, क्योंकि तापमान में वृद्धि, वर्षा का पुनर्वितरण, ओजोन परत का क्षरण और पराबैंगनी विकिरण में वृद्धि हो रही है। औद्योगिकीकरण, प्राकृतिक गैस और तेल के दोहन, वनों की कटाई और सीमेंट और खनिज उद्योगों में भूमि परिवर्तन के कारण ग्रीनहाउस गैसों की सांद्रता में वृद्धि हुई है। इससे कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरोकार्बन, हाइड्रोफ्लोरोकार्बन, पर–क्लोरोकार्बन और सल्फर हेक्साफ्लोराइड जैसी हानिकारक गैसों में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। विकसित और विकासशील दोनों ही देश जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से बच नहीं पाएंगे, मालदीव और बांग्लादेश में बाढ़, चीन और ऑस्ट्रेलिया में जल संकट और मच्छर जनित बीमारियों में वृद्धि होगी। अध्ययनों से पता चलता है कि आने वाले समय में, कृषि को प्रभावित करने वाले जलवायु परिवर्तन के कारण भारत में खाद्य समस्या होगी। मौसम में देरी होगी या

कम समय लगेगा, वर्षा जल में कमी आएगी और सिंचाई की समस्याएँ पैदा होंगी। जलवायु परिवर्तन को अब तक का सबसे बड़ा पर्यावरणीय संकट माना जा रहा है और वैज्ञानिक, अर्थशास्त्री, विचारक और सरकारी हलके दुनिया को इससे बचाने के तरीकों पर चर्चा कर रहे हैं। कई देशों ने कार्बन क्रेडिट प्रणाली का पालन करना शुरू कर दिया है, जिससे प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों को प्रदूषण कम करने और उत्पादन के दौरान कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन को नियंत्रित करने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है।

मानव निर्मित प्रदूषण से निपटने के लिए, निजी, सरकारी और गैर–सरकारी संगठनों को जागरूकता अभियान चलाना चाहिए और जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों के अनुकूल होना चाहिए। जलवायु परिवर्तन अब बौद्धिक विलासिता नहीं बल्कि एक कड़वी सच्चाई है और सवाल यह है कि क्या हमें इससे भागना चाहिए या इसका सामना करने के लिए कदम उठाने चाहिए।

## 6.12 सारांश

प्रदूषण का व्यापक मुद्दा व्यापक और एकीकृत पर्यावरण प्रबंधन रणनीतियों की तत्काल आवश्यकता को रेखांकित करता है। औद्योगिक उत्सर्जन से लेकर कृषि अपवाह तक प्रदूषकों की विविधता, तेजी से विकास के युग में पर्यावरण की गुणवत्ता के प्रबंधन की जटिलता को दर्शाती है। इस चुनौती का समाधान करने के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो कड़े विनियामक ढांचे, तकनीकी नवाचार और सक्रिय सामुदायिक भागीदारी को जोड़ती है। प्रदूषण को नियंत्रित करने और पर्यावरण मानकों के अनुपालन को सुनिश्चित करने में विनियामक उपाय आधारभूत हैं। प्रभावी नीतियाँ और कानून अनुमेय प्रदूषक स्तरों की सीमाएँ निर्धारित करते हैं और उद्योगों को स्वच्छ प्रथाओं को अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। तकनीकी प्रगति प्रदूषण को कम करने की हमारी क्षमता को और बढ़ाती है, ऐसे उपकरण और समाधान प्रदान करती है जो उत्सर्जन को कम करते हैं, अपशिष्ट का प्रबंधन करते हैं और संसाधन दक्षता में सुधार करते हैं। इसके अलावा, सामुदायिक भागीदारी और सार्वजनिक जागरूकता पर्यावरण प्रबंधन प्रयासों की सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। प्रदूषण नियंत्रण पहलों में भाग लेने के लिए व्यक्तियों और समुदायों को सशक्त बनाना जिम्मेदारी की सामूहिक भावना को बढ़ावा देता है और स्थायी व्यवहार परिवर्तनों को प्रेरित करता है। जैसे–जैसे हम आगे बढ़ते हैं, प्रदूषण को व्यापक रूप से संबोधित करने के लिए सरकारों, उद्योगों और जनता के बीच अधिक सहयोग को बढ़ावा देना अनिवार्य है। विविध रणनीतियों को एकीकृत करके और अभिनव समाधानों को अपनाकर, हम पारिस्थितिकी तंत्र और मानव स्वास्थ्य पर प्रदूषकों के प्रभाव को कम करने की दिशा में काम कर सकते हैं, जिससे अंततः एक अधिक टिकाऊ और लचीला वातावरण प्राप्त हो सकता है। प्रदूषण से उत्पन्न चुनौतियाँ बहुत बड़ी हैं, लेकिन निरंतर समर्पण और ठोस प्रयास से, हम एक ऐसे भविष्य की ओर बढ़ सकते हैं जहाँ पर्यावरण की गुणवत्ता सुरक्षित रहे और विकास के लाभों को पारिस्थितिकी प्रबंधन की अनिवार्यता के साथ संतुलित किया जाए।

## 6.13 बोध प्रश्न

- जल प्रबन्धन से आप क्या समझते हैं ?
- बाढ़ प्रबन्धन से आप क्या समझते हैं ?
- भूमि प्रबन्धन से आप क्या समझते हैं ?
- जल संरक्षण की विवेचना कीजिए।
- जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरण प्रबन्धन की विवेचना कीजिए।

## 6.15 उपयोगी पुस्तकें


- Asit K. Biswas and Cecilia Tortajada. 2004 Water as Focus for Regional Development, Oxford University Press.
- Rabindranath Bhattacharya. 2002. Environmental Economics, Oxford University Press.
- Ramprasad Sengupta. 2002. Ecology andEconomics, Oxford University Press. May 2002.
- U.sankar. 2001. Enivronmental Economics, Oxford University press.
- Ramchandra Guha. 1998. Social Ecology, Oxfrord University Press.
- B Field and M Field. 1997. Environmental Economics: an Introduction. 3rd edition. New York: McGraw Hill.
- Zutshi, A., & Sohal, A. (2004). A study of the environmental management system (EMS) adoption process within Australasian organisations—2. Role of stakeholders. Technovation, 24(5), 371-386.
- Watson, K., Klingenberg, B., Polito, T., & Geurts, T. G. (2004). Impact of environmental management system implementation on financial performance: A comparison of two corporate strategies. Management of Environmental Quality: An International Journal, 15(6), 622-628.
- Radonjič, G., & Tominc, P. (2007). The role of environmental management system on introduction of new technologies in the metal and chemical/paper/plastics industries. Journal of Cleaner Production, 15(15), 1482-1493. http://dx.doi.org/10.1016/j.jclepro.2006.03.010
- Psomas, E. L., Fotopoulos, C. V., & Kafetzopoulos, D. P. (2011). Motives, difficulties and benefits in implementing the ISO 14001 Environmental Management System. Management of Environmental Quality: An International Journal, 22(4), 502-521.
- B. A. Revich. Environmental pollution and public health. Introduction to environmental epidemiology. Tutorial (2001).
- A. G. Bannikov, Fundamentals of ecology and environmental protection, 304 (1996).

# खण्ड–05
# पर्यावरणीय वैश्विक चेतना एवं प्रयास
# इकाई 1
# स्टॉकहोम सम्मेलन 1972, विश्व संरक्षण रणनीति 1980, माण्ट्रियल प्रोटोकाल 1987, पृथ्वी सम्मेलन 1992, 2002, कोपेनहेगेन सम्मेलन 2010

## 1.1 प्रस्तावना (Introduction)

आज तेजी से परिवर्तित होते हुए विश्व में पर्यावरण चेतना पहले से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण हो गई है। पर्यावरण पर मानवीय क्रियाओं के बारे में जागरूकता को बढ़ावा देने की प्रतिवद्धता के रूप में परिभाषित पर्यावरण चेतना जिम्मेदार नागरिकता की अधारशिला है। जैसे–जैसे जलवायु परितर्वन तेज होता है। प्रदूषण हमारी हवा, पानी मिट्टी में व्याप्त होता जाता है। पर्यावणिय मुद्दों की गंभीरता को समझना सबसे जरूरी हो जाता है। पर्यावरण एवं विकास आयोग (World Commission on Environment and Sustainable Development Developmentt1987) परिभाषित किया था जिसे हम ब्रलैंटड रिपोर्ट के नाम से जानते हैं। इसके पहले अर्थशास्त्री शोलो ने (1974) नव–क्लासिकी विकास सिद्धान्त की प्रतिपादित किया था जिसके अनुसार प्राकृतिक संसधानो को ध्यान में रखकर ही आर्थिक विकास की परिकल्पना की जा सकती है जो समय के साथ बिना घटे हुए उपभोग के बराबर है। विकास का निर्वहनीय (नेजंपदंइसम) ही है जिसने भावी पीड़ियों की जरूरतों को प्रभावित किए आवश्यकताओं को पूरा कर पाएँ। संयुक्त राष्ट्र महासिचव ने 2011 में दावोस जितश्विक (World Economic Forum) में कहा है विश्व का वर्तमान कि मॉडल पर्यावरणीय आत्महत्या है। वैश्विक अर्थव्यवस्था को निर्वहनीय बनाने के लिए क्रान्ति की जरुरत है। द. एनर्जी एंड रिसोर्सेज इंस्टीट्यूट के डायरेक्टर जनरल डा. आर के पचौरी के अनुसार प्राकृतिक संसाधनों के सवर्द्धन के साथ–साथ विकास भी जरूरी है क्योंकि समग्र आर्थिक विकास सभी को बेहतर जीवन उपलब्ध कराया जा सकता है।

उपभोग और विलासिता की प्रवृति के कारण धरती और उस पर उपलब्ध संसाधनो का अधाधुंध दोहन एवं शोषण जीवन का मूल मन्त्र बन चूका है। विश्व के समक्ष जब इसके आधार धरती के ही अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लगने लगा तो मानव समुदाय इनका निदान ढूढने निकल पड़ा और धरती के पर्यावरण के प्रति चेतना जागत हुई।

## 1.2 पर्यावरण संरक्षण हेतु अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास

पर्यावरण प्रदूषण के अंतर्राष्ट्रीय चिन्ता 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में बढ़ गयी। 30 जुलाई 1968 को मानव पर्यावरण की समस्या पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाने के लिए की आर्थिक तथा सामाजिक परिषद ने एक प्रस्ताव पारित किया। सामान्य सभा ने इस बात पर संज्ञानता प्रकट की कि वैज्ञानिक तथा तकनीकी विकास से मानव कों अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप अपनी आवश्यकताओं को आकार देने के उद्देश्य से अप्रत्याशित अवसरों कों जन्म दिया है। यदि इन अवसरों का नियंत्रित ढंग से उपयोग नहीं किया गया तो अनेक गंभीर समस्याएँ उत्पन्न होगी। मानव पर्यावरण की कुछ समस्याओं पर संयुक्त राष्ट्र संघ तथा उनकी अन्य एजेंसिया कार्य कर कर रही है।

पर्यावरण सम्बन्ध में विश्वस्तर पर सम्पत्र प्रमुख सम्मेलन निम्नवत है।

### 1.3 स्टॉकहोम सम्मेलन 1972–

संयुक्त राष्ट्र संघ के मानव पर्यावरण सम्मेलन का आयोजन 5 जून 1972 से 16 जून 1972 कस्टम (स्वीडन) में सम्पन्न हुआ इसका प्रमुख उदेश्य अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण संरक्षण तथा सुधार की विश्वव्यापी समस्या का निदान करना था। पर्यावरण संरक्षण के सम्बन्ध पर यह पहला प्रयास था। इस सम्मेलन में 119 देशों ने पहली बार एक ही पृथ्वी का सिद्धान्त स्वीकार किया। इसी सम्मेलन में सयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (न्छम्च्) उदय हुआ। सम्मेलन में मानवीय पर्यावरण का सरक्षण करने तथा उसमें सुधार लाने के लिए राज्यों तथा अन्तर्राष्ट्रीय सस्थाओं को दिशा–निर्देश दिये स्टाकहोम घोषणा–पत्र में 26 सिद्धातं स्वीकार किए गए। इनमें से एक सिद्धान्त मानवीय पर्यावरण पर घोषणा के अन्तर्गत यह उपबन्ध हैं कि मनुष्य को अच्छे पर्यावरण में जीवन की समुचित स्थिति का मौलिक अधिकार प्राप्त है जो उसे गौरवमयी एवं समृद्ध जीवन की अनुमति देता है और वर्तमान तथा भावी पीढ़ी के लिए पर्यावरण की रक्षा करने एवं उसमे सुधार करने का उत्तरदायित्व अधिरोपित करता है।

पृथ्वी के सभी सघटक जिनमें वायु जल भूनि बनस्पति और विशेषतया पारिस्थितिक सम्मिलित है की वर्तमान तथा भावी पीढ़ियों के लिए समुचित योजना एवं प्रबन्ध के माध्यम से संरक्षित किया जाना चाहिए।

इस सम्मेलन में सर्वसम्मति से प्रत्येक वर्ष जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाने का प्रस्ताव पारित किया गया तथा पर्यावरण कार्यक्रम के लिए शासी परिषद (Goveming Council for Environment Programme] (UNEP) पर्यावरण सचिवालय पर्यावरणीय समन्वय परिषद (Environmental Co&ordination Board) सस्थाएँ स्थापित करने की संस्तुति की गयी।

वर्ष 1974 में बाल्टिक सागर क्षेत्र के समुद्री पर्यावरण की रक्षा कर हेलसिंकी में एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया गया। वस्तुतः यह प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय समझौता था जिसमें प्रदूषण के सभी स्रोतों पर विचार किया गया चाहे वे पृथ्वी सागर अथवा वायु के हो। इस सम्मेलन ने तेल तथा अन्य प्रदूषणकारी पदार्थों द्वारा जलीय प्रदूषण को नियन्त्रित करने के सहयोग के नियमन पर बल दिया गया।

तदुपरान्त वर्ष 1992 में इसी विषय पर एक अन्य सम्मेलन Convention on the protection of the marine environment of the Baltic sea area आयोजित किया गया जिसे बाल्टिक सागर क्षेत्र के देशो तथा यूरोपीय आर्थिक संघ के सदस्यों द्वारा स्वीकृति प्रदान की गई। वर्ष 1992 में पुनः आयोजित हेलसिंकी सम्मेलन के 17 जनवरी 2000 से प्रभावी हो जाने के कारण सन् 1974 सम्मेलन के प्रावधानों को निरस्त कर दिया गया।

समुद्रीय प्रदूषण तथा अपशिष्ट एवं अन्य पदार्थ क्षेपण निरोधक सम्मेलन जिसे लन्दन सम्मेलन भी कहतें हैं का आयोजन 1975 में किया गया। सम्मेलन के प्रावधानों की 30अगस्त, 1975 से प्रभावी बनाया गया। सम्मेलन का उद्देश्य जलयानों या भष्मीकरण द्वारा अपशिष्टों के ऐच्छिक क्षेपण पर नियन्त्रण रखना है।

वनीय वनस्पतियाँ और जीव, जैविक तथा प्राकृतिक सन्तुलन बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। इन वनीय संसाधनों के ह्रास के सम्बन्ध में सितम्बर 1979 में एक सम्मेलन का आयोजन किया गया। इसके प्रावधानों को 1 जून 1982 से प्रभावी बनाया गया।

### 1.4 विएना सम्मेलन 1985

विएना सम्मेलन का आयोजन 1985 ई. में किया गया। इसका उद्देश्य मानवजनित गतिविधियों से उत्सर्जित होने वाले हानिकारक पदार्थों से ओजोन संस्तर की सुरक्षा करना था।

### 1.5 माण्ट्रियल प्रोटोकॉल 1987

माण्ट्रियल (कनाडा) में 16 सितम्बर 1987 को एक अन्तर्राष्ट्रीय समझौते पर हस्ताक्षर हुए। इस पर कुल 47 देशों में से 33 ने हस्ताक्षर किये। ओजोन की परत को बचाने के लिए यह पहला अन्तर्राष्ट्रीय समझौता था, जो 16 सितम्बर को हस्ताक्षरित हुआ, इसी कारण प्रतिवर्ष 16 सितम्बर को शविश्व ओजोन दिवसश के रूप में मनाया जाता है। माण्ट्रियल समझौता 1 जनवरी 1989 को प्रभावी हुआ। इस समझौते में सभी हस्ताक्षरकारी देश क्लोरोफ्लोरोकार्बन के उत्पादन को आरम्भ में 1986 के स्तर पर लाने तथ 1998 तक इसे आधा करने पर सहमत हुए थे।

### मॉण्ट्रियल समझौते में निम्नलिखित संशोधन हुए–

क– लंदन संशोधन (1990)– यह संशोधन सन् 1990 में किया गया। इस समझौते से ओजोनभक्षी पदार्थों पर अधिक कठोर प्रतिबन्ध लगाये गये तथा कार्बन टेट्राक्लोराइड, ट्राइक्लोरोमीथेन तथा मिथाइल क्लोरोफार्म का उपयोग समाप्त करने का समझौता हुआ।

### ख–कोपेनहेगन संशोधन (1994)–

इस संशोधन द्वारा पहली बार ओजोनभक्षी रसायनों का उपयोग समाप्त करने हेतु विकसित और विकासशील देशों के लिए अलग–अलग समयावधि निर्धारित की गयी। ऐसे विकासशील देशों, जहाँ ओजोनभक्षी पदार्थों की प्रति व्यक्ति खपत 0.3 किग्रा प्रतिवर्ष से कम है. को विकसित देशों की अपेक्षा इन रसायनों का प्रयोग समाप्त करने के लिए दस वर्ष का अधिक समय दिया गया।

टोरण्टो (कनाडा) में जून 1988 में आयोजित सम्मेलन में सन् 2005 तक कार्बनडाईआक्साइड के उत्सर्जन में स्वेच्छा से 20ः कटौती करने के लिए सभी देशों से आग्रह किया गया, जिससे हरित गृह प्रभाव को कम किया जा सके या इसके प्रभाव को अधिक होने से रोका जा सके। विश्व में उपयोग किए जाने वाले सकल खनिज तेल के 50ः भाग का उपयोग, औद्योगिक स्तर पर विकसित देशों में किया जाता है. जबकि खनिज तेल के समस्त विश्व भण्डार का मात्र 10ः भाग ही विकासशील देशों में पाया जाता है। सिकसित देशों ने टोरण्टो विश्व सम्मेलन के प्रस्तावों का अनुपालन शायद ही किया हो क्योंकि इन देशों का अपना हित अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय (जिसमें अधिकांश विकासशील देश हैं) के हितों से कही अधिक है।

### 1.6 पृथ्वी शिखर सम्मेलन रियो घोषणा–पत्र (Rio Declaration)

रियो दि जेनेरो में 1992 में पर्यवरण तथा विकास पर हुए संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में इस दिशा में एक अन्तर्राष्ट्रीय पहल हुई। इस सम्मेलन में एजेण्डा–21' तय हुआ। यह एजेण्डा टिकाऊ समाज के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक कार्यक्रमों को निर्दिष्ट करता है।

एजेण्डा–21 के 40 अध्यायों में पर्यावरण तथा विकास सम्बन्धी जिन विषयों का उल्लेख किया गया है उनमें है

अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग
गरीबी उन्मूलन
उपभोग पद्धति में परिवर्तन
जनसंख्या और टिकाऊपन
मानव स्वास्थ्य की रक्षा और प्रोत्साहन

टिकाऊ मानव आवास
वायु मंडल की रक्षा
भूमि के टिकाऊपन की रक्षा
वनों के विनाश की रोकथाम
मरूस्थलीकरण एवं सूखे की रोकथाम
टिकाऊ पर्वतीय विकास
टिकाऊ कृषि एवं ग्राम्य विकास
जैव विविधता का संरक्षण
समुद्रों की रक्षा एवं प्रबंधन
जल संरक्षण एवं प्रबंधन
विषाक्त रसायनों का सुरक्षित उपयोग
खतरनाक अपशिष्टों का प्रबंधन
ठोस अपशिष्टों का प्रबंधन
ठोस अपशिष्टों एवं सीवेज का प्रबंधन
रेडियोधर्मी अपशिष्टों का प्रबंधन

एजेंडा–21 में प्रमुख समूहों जैसे महिलाओं, बच्चों, युवाओं आदिवासियों, गैरसरकारी संगठनों, स्थानीय प्राधिकारियों, मजदूरों और ट्रेड यूनियनों, व्यापार और उद्योग, विज्ञान और तकनीकी की भागीदारी को मजबूत करने के उपायों पर जोर दिया गया है। इसमें कार्यान्वयन के साधनों जैसे वित्तीय संसाधन, तकनीकी हस्तांरण, विज्ञान, शिक्षा, कानूनी उपायों आदि की भी व्याख्या की गई है।

रियो सम्मेलन के पाँच वर्ष बाद 1997 में एजेंडा 21 के कार्यान्वयन में हुई प्रगति की समीक्षा के लिए विश्व के देशों की एक बैठक हुई। बैठक में यह महसूस किया गया कि यद्यपि कईदेशों ने इस दिशा में कदम उठाये हैं, परंतु एजेंडा को व्यवहार में लाने तथा टिकाऊ विकास को प्राप्त करने की दिशा में और प्रयास करने होंगे।

विश्व के विभिन्न भागों में लोग टिकाऊ विकास को समझने के लिए प्रयासरत है। वेयह भी जानना चाहते हैं कि वे इसे कैसे संभव बना सकते हैं? जब सभी लोग टिकाऊपन के साझा चिंतन में भागीदार होंगे और इसके लिए कार्य करेंगे तभी टिकाऊ विकास का सपना सच हो सकेगा।

वर्ष 1992 में ब्राजील के रियो डि जेनेरियो नगर में पृथ्वी बचाओ सम्मेलन के नाम से विख्यात संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण एवं विकास सम्मेलन (United Nations Conference on Environment and Development] UNCED) का आयोजन किया गया। इसमें अन्य बातो के अतिरिक्त उष्णायन (तउपदह) पर प्रमुख रूप से विचार किया गया।
इसमें सम्मिलित देशों में टिकाऊ विकास के लिए व्यापक कार्यवाही योजना श्एजेण्डा 21श स्वीकृत किया। इस सम्मेलन में सहमति के महत्वपूर्ण बिन्दु निम्नलिखित है–
1. विश्व के देश पृथ्वी के वायुमण्डल के स्वास्थ्य और अखण्डता को संरक्षित, सुरक्षित और पुनः स्थापित करने के लिए विश्वव्यापी साझेदारी की भावना से सहयोग करेंगे।
2. राष्ट्रों के प्रभावी पर्यावरण विधानों को कार्यान्वित करेंगे।
3. एक देश दूसरे देश को किसी भी प्राकृतिक दुर्घटना या आपातकालीन स्थितियों की सूचना तुरन्त देगा।

4. सभी लोगों के लिए सतत विकास और जीवन की गुणवत्ता को प्राप्ति के सरकारों को उत्पादन और उपभोग के निःसाध्य तारतम्य को कम करना और हटा देना। हरितगृह प्रभाव को कम करने वाले प्रयासों को बढ़ावा देना और निर्देशन प्रदान करना।

5.संयुक्त राज्य अमेरिका सहित 153 देशों ने घोषणा–पत्र के उपर्युक्त बिन्दुओं को स्वीकार किया और आश्वासन दिया कि कार्बनडाईआक्साइड, मीथेन, क्लोरोफ्लोरोकार्बन आदि गैसें जो पृथ्वी के वातावरण को गरम करती हैं और विश्व स्तर पर तापमान प्रभावित करती हैं, की उत्सर्जन वृद्धि को कम करेंगे।

## 1.7 नैरोबी घोषणा–पत्र

वर्ष 1997 के नैरोबी घोषणा–पत्र द्वारा संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की पर्यावरण के क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र के सदस्य देशों द्वारा सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्था के रूप में मान्यता प्रदान की गई। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य विगत पाँच वर्षों (1992–97) तक के ग्रीन हाउस गैसों का मूल्यांकन करना तथा उसे रोकने का प्रयास करना है।

## 1.8 विश्व मौसम परिवर्तन सम्मेलनों की श्रृंखला

पृथ्वी बचाओ सम्मेलनश के पश्चात् संयुक्त राष्ट्रसंघ के तत्वावधन में विश्व मौसम परिवर्तन सम्मेलनों की श्रृंखला चलती रही है, जिनमें विभिन्न देशों के, हरित गृह गैसों से सम्बद्ध उत्सर्जन दायित्व निश्चित करने पर आम सहमति बनाने का प्रयास होता रहता है। इस क्रम में प्रथम सम्मेलन अप्रैल 1995 में बर्लिन (जर्मनी) में आयोजित किया गया। विश्च मौसम परिवर्तन पर क्योटो (जापान) में 1 से 11 दिसम्बर, 1997 तक आयोजित सम्मेलन (COP&3) विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

## क्योटो प्रोटोकाल

क्योटो प्रोटोकाल संयुक्त राष्ट्र के पर्यावरण परिवर्तन पर फ्रेमवर्क में संसाधन हैं तो वैश्विक तापदृद्धि पर एक अन्तर्राष्ट्रीय सन्धि है। इस पर समझौता जापान के क्योटो नगर में दिसम्बर 1997 में हुआ थे। इस सम्मेलन में 149 देशों ने भाग लिया। 16 मार्च 1998 तक यह हस्ताक्षर के लए खुला थ और 15 मार्च 1999 को हस्ताक्षर बन्द कर दिया। 141 देशों ने इस पर हस्ताक्षर किए। रूस की पुष्टि (18 नवम्बर 2004 के नब्बे दिन पश्चात् अर्थात् 16 फरवरी 2008 से यह प्रोटोकाल लागू हो गया है। सदस्य देशों ने सन्धि के दायरे से अमेरिका के अलग रहने पर चिन्ता जताते हुये कहा, दुनिया के औद्योगिककृत देशों में से सिर्फ अमेरिका, आस्ट्रेलिया और मोनाकों ने सन्धि का अनुमोदन नहीं किया है।

इस सम्मेलन के अन्त में क्योटो प्रोटोकॉल के रूप में एक घोषण जारी हुई। इसमें छः गैसों कार्बनडाईटॉक्साइड ($CO_2$), नाइट्रस ऑक्साइड ($NO_2$) मीथेन ($CH_1$). हाइड्रोफ्लोरोकार्बन (HFC) परफ्लोरोकार्बन (PFC) तथा सल्फरहेक्साफ्लोराइड (SF) की डलिया दृष्टिकोण के अन्तर्गत हरित गृह गैसों के अन्तर्गत चिह्नित किया गया तथा इनके उत्सर्जन में 1990 के सतर पर मात्र 5.2ः कटौती पर आम सहमति हुई।

क्योटो प्रोटोकाल एक कानूनी बाध्यकारी समझौता है, जिसके तहत एनेक्स–1 में शामिल 38 विकसित देशों (औद्योगिक देश) द्वारा सामूहिक रूप में ग्रीन हाऊस गैस उत्सर्जन को 1990 के सतर से 5.2ः की कमी लाने के लिए 2012 तक कटौती करने का प्रावधान है। इसके लक्ष्य छः ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में सन् 2008–2012 के मध्य कमी करना है। सन्धि में राष्ट्रीय लक्ष्य निर्धारित किये गये हैं जिसके अनुसार यूरोपीय संघ तथा कुछ अन्य देश

यथा अमेरिका 8ः, जापान 7ः, कटौती करेंगे, वहीं आस्ट्रेलया 8ः, और आइसलैण्ड 10ः उत्सर्जन स्तर में बढ़ोत्तरी कर सकते हैं।

प्रोटोकॉल में यह भी उल्लेखनीय है कि इसे लागू करने हेतु सम्मेलन में सम्मिलित 55 देशे में जिसमें एनेक्स के ओद्यौगिक देश सम्मिलित है, द्वारा इसकी पुष्टि होनी चाहिए तथा देशों का उत्सर्जन स्तर कुल ग्रीन हाउस उत्सर्जन का 55ः हो। उपरोक्त दो शर्तों में से प्रथम यानि 55 देशे के हस्ताक्षर की शर्त 23 मई 2004 को ही पूरी हो गयी थी, किन्तु 55ः ग्रीन हाउस गैस का सर्वाधिक उत्सर्जन (23.7ः) वहीं करता है।

## क्योटो ताप सन्धि अनुसूची–1

विकसित व औद्योगिक के देशों के लिए बाध्यकारी है, जबकि ष्अनुसूची–प्प् विकासशील देशों के लिए कानूनी बन्धन नहीं है। (हरितगृह, गैसों के लिए औद्योगिक राष्ट्र सर्वाधिक उत्तरदायी हैं और कुल गैसीय उत्सर्जन के 55ः अंश के लिए वे ही जिम्मेदार हैं, इसमे अमेरिका की हिस्सेदारी 25ः है।

## इसके मुख्य प्रावधान निम्न है–

क. वित्तीय वचन बद्धता इस प्रावधान के अनुसार विकसित देशों को पर्यावरण से सम्बन्धित अध्ययन और परियोजना पर होने वाले व्यय का भुगतान करेंगे साथ ही उन क्षेत्रों को तकनीक की भी आपूर्ति करेंगे।

ख. उत्सर्जन व्यापार–एनेक्स के प्रत्येक देश प्रोटोकॉल में वर्णित उत्सर्जन स्तर को प्राप्त करने हेतु अपनी सहमति दी है। ये देश अपने पास अधिशेष ग्रीन हाउस का अन्य देश को निर्यात करने का अधिकार है।

ग. क्लीन डेवलपमेण्ट मेकेनिज्म इसके अनुसार एनेक्स के देश अन्य देशों में पर्यावरण से सम्बन्धित वैसी परियोजनाएँ प्रारम्भ कर सकते हैं जो उत्सर्जन स्तर को कम कर सकते हैं।

16 फरवरी, 2005 में क्योटो ताप सन्धि उन 141 देशों में लागू हो गई जिन्होंने इसका समर्थन किया, इसमें 34 औद्योगिक राष्ट्र भी सम्मिलित हैं। (पहले अमेरिका की तरह रूप ने भी इस सन्धि से हटने की मन्शा बनायी थी। किन्तु अक्टूबर, 2004 में रूसी निम्न सदन ने सन्धि का अनुसमर्थन करके इसको त्वरा प्रदान की और 16 फरवरी, 2005 से सन्धि प्रभावी हो गयी।

## 1.9 कोपनहेगन जलवायु परिवर्तन सम्मेलन, 2009 एवं 2010

डेनमार्क की राजधानी कोपेनहेगन में 7 से 19 दिसम्बर, 2009 तक आयोजित इस सम्मेलन में विश्व भर से आये 15 हजार अधिकारी, पर्यावरणविद् और पत्रकारों ने भाग लिया। दो वर्षों में जारी प्रयासों के बाद इस बैठक में सम्मिलित हुए 193 देशों ने जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों को रोकने के लिए किसी ठोस नतीजे पर पहुँचने का असफल प्रयास किया। जलवायु परिवर्तन पर गठित संयुक्त राष्ट्र पैनल के प्रमुख आर के पचौरी ने कहा कि दुनिया में तूफानों, गर्म हवाओं और बाढ़ के अत्यधिक प्रभाव को कम करने के प्रयास करने होंगे अन्यभा आने वाली शताब्दियों में समुद्र का जलस्तर सात मीटर बढ़ सकता है, जिससे कई छोटे द्वीप और बांग्लादेश के डूबने का खतरा है। पचौरी ने कहा कि जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर शीघ्र कार्यवाही की आवश्यकता है और यदि इसमें देर की गयी तो अर्थव्यवस्था और मानव जाति को इसका मूल्य चुकाना पड़ेगा।

## समझौते का प्रारूप – मुख्य बातें

1. दीर्घावधि लक्ष्य–विज्ञान के अनुसार वैश्विक उत्सर्जन में बड़े पैमाने पर कटौती आवश्यक है। यह कटौती वैश्विक तापमान में दो डिग्री सेल्सियस से कम की बढ़ोत्तरी को ध्यान में रखते हुए की जानी चाहिए।

2. गरीब देशों की वित्तीय सहायता प्रारूप के अनुसार विकसित देश विकासशील देशों को पर्याप्त वित्तीय और तकनीकी मदद मुहैया कराते रहेंगे। इसमें कम विकसित देशों, छोटे महाद्वीप वाले विकासशील देशों और अफ्रीकी देशों को मुख्य रूप से सहायता देने का उल्लेख किया गया है। विकसित देश, विकासशील देशों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वर्ष 2020 तक प्रतिवर्ष 100 अरब डॉलर की राशि उपलब्ध कराते रहेंगे। वर्ष 2010–12 के लिए विकसित देशों की ओर से अल्पावधि वित्तीय मदद भी दी जायेगी जिसमें जापान 11 अरब डॉलर, यूरोपीय संघ 10.6 अबर डॉलर और अमेरिका तीन अरब डॉलर की सहायता देगा।

3. उत्सर्जन में कटौती प्रारूप में कार्बन उत्सर्जन में कटौती सम्बन्धी दो सलग्नक हैं। एक में विकसित देशों के लिए कटौती का लक्ष्य निर्धारित किया गया है. जबकि दूसरे में बड़े विकासशील देशों के लिए स्वैच्छिक प्रतिबद्धता का उल्लेख है। ये कानूनी रूप से बाध् यकारी नहीं हैं और इसमें प्रतिबद्धता की वर्तमान स्थिति का उल्लेख है जो अमेरिका के लिए विचाराधीन से लेकर यूरोपीय संघ के लिए कानून द्वारा परित किये जाने तक है।

4. निगरानी अथवा जाँच–चीन ने कार्बन उत्सर्जन में कटौती कर अन्तर्राष्ट्रीय नियन्त्रण की मानने से इन्कार कर दिया है. इसलिए विकासशील देशों पर निगरानी या कटौती की जाँच से जुड़ा यह भाग प्रारूप में सबसे बड़ा है। इसके अनुसार उभरती अर्थव्यवस्था वाले देशों को अपने प्रयासों पर नजर रखनी होगी और हर दो वर्ष में इसकी रिपोर्ट संयुक्त राष्ट्र की देनी होगी। कुछ अन्तर्राष्ट्रीय समूह भी इसकी जाँच कर सकते हैं।

5. वन संरक्षण प्रारूप में घने जंगलों से होने वाले ग्रीन हाउस उत्सजन में कटौती के लिए इनकी कटाई नहीं करने की आवश्यकता पर भी बल दिया गया है। विकसित देश ऐसी कार्यवाहियों के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध करायेंगे।

6. कार्बन बाजार–इस प्रारूप में कार्बन बाजार का उल्लेख भर किया गया। प्ररूप के अनुसार, हम कार्बन के स्तर में कटौती को बढ़ावा देने के लिए और उसकी कीमतों में कटौती को बढ़ावा देने के लिए बाजार का प्रयोग करने के अवसरों समेत कई तरह के दृष्टिकोणों को सम्मिलित करने का फैसला करते हैं।

7. अन्तर्राष्ट्रीय पैनल प्रारूप पर काम करेन के लिए एक उच्चस्तरीय पैनल गठित किया जायेगा। विकासशील देशों को ग्रीन टेक्नालॉजी उपलब्ध कराने के लिए एक व्यवस्था बनाए जाने पर भी सहमति हुई है। सन् 2015 में इन बिन्दुओं पर प्रगति की समीक्षा होगी।

क्या कुछ बदलेगा–

ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन पिछले 40 वर्षों में 70ः बढ़ा है। गति यही रही तो अगले 25 वर्षों में यह 90ः तक बढ़ सकता है।

विश्व भर में करीब 1.2 करोड़ लोग तटीय क्षेत्र में रहते हैं। समुद्र के बढ़ते स्तर से इन लोगों के जीवन को भारी खतरा है।

जंगलों के कटान के कारण ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में 20ः की बढ़ोत्तरी होती है। यह सम्पूर्ण विश्व में कारों, ट्रकों और हवाई जहाजों से होने वाले कुल जमा उत्सर्जन से अधिक है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, ग्लोबल वार्मिंग की वजह से हर वर्ष 15 लाख लोग कुपोषण का शिकार होंगे। 95 हजार लोग डायरिया और 55 हजार लोग मलेरिया से जान गंवा सकते हैं।

मौसम में आये परिवर्तन ने कृषि उत्पादन पर भी भारी प्रभाव डाला है। आईपीसीसी के अनुसार कई देशों में वर्षा पर निर्भर खेती में उत्पादन के स्तर में 50ः की कमी आ सकती है।

सभी क्षेत्रों में स्थित गैर–ध्रुवीय ग्लेशियर अपने स्थान से पीछे खिसक रहे हैं। स्विट्जरलैण्ड में तो ग्लेशियरों में दो–तिहाई की कमी देखी गयी है।

आशंका है कि ग्लोबल वार्मिंग से जीवों की 420 प्रजातियों या समुदाय की शारीरिक और जैविक प्रक्रिया में परिवर्तन आ सकता है।

**भारत पर प्रभाव–**

उत्तर भारत में तापमान बढ़ रहा है। हर वर्ष यह नए रिकार्ड स्तर को छू रहा है।

इस उप–महाद्वीप में वर्षा के रूप में भी बदलाव देखा गया है। वैज्ञानिकों ने बताया है कि 2050 तक बरसात काफी कम हो जाएगी।

भारत में हिमालयी ग्लेशियर लुप्त हो जायेंगे। इस क्षेत्र में पिछले तीस वर्षों में पारा 0.6 डिग्री चढ़ा है। कुछ ग्लेशियर 10 से 15 मीटर प्रतिवर्ष की गति से घट रहे हैं।

ग्लेशियर पिघले तो पहले उत्तर भारत में उभार आएगा और फिर भयानक सूखा पड़ेगा। बाद में यहाँ रेगिस्तान जैसे हालात पैदा हो सकते हैं।

गंगोत्री ग्लेशियर सिकुड़ रहा है। इसका अर्थ यह हुआ कि जल्द ही गंगा नदी सूख जायेगी।

बंगाल की खाड़ी में समुद्र का स्तर वार्षिक 314 मिमी की दर से ऊपर आ रहा है। यह ग्लोबल स्तर 2 मि.मी से भी अधिक है। यदि समुद्र का बढ़ना जारी रहा तो भारत के तटीय क्षेत्रों में रहने वाले 40 लाख लोगों को जानमाल का खतरा हो सकता है।

तटीय क्षेत्रों में श्आलिया और फयान जैसे चक्रवाती तूफान आने वाले समय में तबाही मचा सकते हैं।

## 1.10 पर्यावरण संरक्षण हेतु राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास–

भारत सरकार ने भी केन्द्र में (1 नवम्बर, 1980) पर्यावरण सम्बन्धी अलग विभाग की स्थापना की जो अब पर्यावरण एवं वन मन्त्रालय का रूप ले चुका है। सन् 1972 में सरकार ने श्राष्ट्रीय पर्यावरण योजना समिति (National Committee on Environmental Planning- NCEP) नीतियों और प्राथमिकताओं के सम्बन्ध में पर्यावरण विभाग को परामर्श देती है। इसके अतिरिक्त विभाग ने कई विशेषज्ञ समितियों का गठन किया है। इनमें पश्चिमी घाट, हिमालय क्षेत्र और गंगा के कछार में अनुसंधान कार्यक्रमों के समन्वय हेतु कार्यकारी दल सम्मिलित है।

पर्यावरण सम्बन्धी शोध कार्यों के प्रोत्साहन और पर्यावरण शोधन हेतु सुविधाओं की उपलब्धता के लिए विभाग ने श्मानव और जीवमण्डल (Man and Biosphere) तथा श्पर्यावरण अनुसन्धान समिति (Environment Research Committee) गठित की हैं। ये समितियाँ देश भर की प्रयोगशालाओं, संस्थानों में आयी शोध परियोजनाओं के प्रस्तावों पर विचार करती है, उनका मूल्यांकन करती हैं ओर उनका अनुमोदन करके अनुपालन हेतु सरकार को प्रेषित करती है।

पारिस्थितिक विकास हेतु विभाग के दायित्व– पारिस्थितिक विकास हेतु विभाग का दायित्व है–

1. बिगड़ हुए पारितन्त्रों का जीर्णोद्धार,
2. पारितन्त्रों को और विकृत होने देने से रोकना, तथा एक ऐसी विकास नीति का विकास करना जो देश की पर्यावरणीय अपेक्षाओं के अनुरूप हो।

इन्हीं उद्देश्यों की सम्पूर्ति के लिए अगस्त, 1981 में पारिस्थितिक विकास बोर्डश (Eco& Development Board) की स्थापना की गयी है। यह एक उच्च स्तरीय परामर्शदात्री समिति है, जिसका गठन ही पारिस्थितिक सुधार कार्यक्रम के पथ प्रदर्शन हेतु किया गया है। प्राकृतिक संसाधनों के व्यापक सर्वेक्षण हेतु दो सरकारी संगठन सक्रिय है भारतीयवानस्पतिक सर्वेक्षण (ठवजंदपबंस ैनतअमल वि प्दकपं) और भारतीय प्राणि सर्वेक्षण (Zoological Survey of India)। इसी क्रम में विभाग से सम्बद्ध राष्ट्रीय प्राकृतिक विज्ञान संग्रहालय (National Museum on Natural History) पर्यावरणीय जन–शिक्षा और जागरूकता के लिए सतत् प्रयत्नशील है।

भारतीय वन्य जीवन बोर्डश भी पर्यावरणीय संरक्षण सम्बन्धी गतिविधियों में पर्यावरण विभाग की सहायता करता है। पर्यावरण नियमन के लिए राष्ट्रीय पर्यावरण संगठन (National Environment Monitoring Organzation) की स्थापना का प्रावधान किया गया है।

**1.11 कोपेनहेगन सम्मेलन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में–**

कोपेनहेगन के ब्लास सेंटर में जलवायु परिवर्तन पर 192 देशों का शिखर सम्मेलन आयोजित हुआ। इस सम्मेलन का उद्देश्य जलवायु परिवर्तन से होने वाले खतरे से अवगत होना था। इस सम्मेलन की अध्यक्षता कोनी हेडेगार्ड ने की उन्होंने लोगों के उत्साह जगाने के लिए लोगों को हरित समृद्धि और सुरक्षित भविष्य का सन्देश दिया। सम्मेलन के बीच में ही चीन व भारत ने इस आपत्ति जताई तो सम्मेलन खटाई में पडता दिखा पर अन्नतः सम्मेलन पूर्ण हुआ इसमें जी–7 के सभी देशों अमेरिका, फ्रांस, जापान, ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया एवं चीन, भारत आदि देशों ने भागीदारी की। भारत की तरफ से प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह एवं पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश शामिल हुए। वहीं बराक ओबामा अमेरिकी राष्ट्रपति, चीन के राष्ट्रपति हू जिन्ताओ, रूस के दिमिजी मेदवदेव, ब्रिटेन के गार्डन ब्राउन, निकोलस सकोंची (फ्रांस) आस्टेलिया के कविन रड शामिल हुए। वैसे तो इस सम्मेलन से कोई बड़ा निष्कर्ष या एकजुटता तो नहीं दिखी परन्तु कुछ मुद्दे इस सम्मेलन में अवश्य उठे क्योंकि कोपेनहेगन सम्मेलन का मकसद यह तय करना था कि अमीर देश अपने यहां उत्सर्जन में भारी कटौती करे तथा गरीब देशों को पैसा व प्रौद्योगिकी दे।

अमरीका के नेतृत्व में जलवायु परिवर्तन पर अमरीका, भारत, चीन, ब्राजील व द. अफ्रीका ने 11 बिंदु पर सहमति जताई है पर ये बाध्यकारी नहीं है।

सहमति पर हस्ताक्षर करने वाले देश पृथ्वी के तापमान में 2 डिग्री सेल्सियस से अधिक की बढ़ोत्तरी नहीं करेंगे। अन्य देशों को भी सहमति के लिए मनाया जाएगा।

ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में की की जाए। गरीब देशों को होने वाली क्षति से बचाने के लिए विशेष प्रयास होने चाहिए। विकासशील देशों को ग्रीन टेक्नोलॉजी उपलब्ध कराने पर सहमति हुई हैं। 2020 तक विकसित देश आर्थिक कोष के एि धन जुटाए। कम ग्रीन हाऊस गैस उत्सर्जित करने वाले देशों का आर्थिक प्रोत्साहन दिया जाए।

यह सम्मेलन अपने प्रारम्भ से ही विवाद के घेरे में आ गया और 100 से अधिक देशों ने इस सम्मेलन के मसविदे पर अपनी असहमति जाहिर की। जिससे यह सम्मेलन पूर्णता नही पा सका।

कोपनहेगन जलवायु सम्मेलन की सफलता और असफलता का आकलन तो होता रहेगा परंतु इस सम्मेलन में यह तय हो गया है कि 21वीं शताब्दी अब एशिया की शताब्दीनहीं होगी। दुनिया की तकरीबन आधी से अधिक आबादी वाले एशिया महाद्वीप के चीन और भारत, अफ्रीका महाद्वीप का सबसे अधिक विकसित देश दक्षिण अफ्रीका व लैटिन अमेरिका को सबसे मजबूत अर्थव्यवस्था ब्राजील जिन्हें बेसिक देश कहा जाता है। (बेसिक, जिसके समनार्थी शब्द है मौलिक, आधारभूत मूल व बुनियादी) ने जिस तरह अमेरिका व विकसित राष्ट्रों के सामने घुटने टेके उसने इस शताब्दी को भी अमेरिकी शताब्दी बनने में आ रहे आखिरी रोड़े को हटा दिया है।

कोपनहेगन से लौटने के बाद हमारे तथाकथित पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश ने राज्यसभा में जो वक्तव्य दिया है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत इस सम्मेलन में किस मन्तव्य से गया था और जी–77 व अन्य कमजोर और गरीब देश जो भारत से यह उम्मीद लगाए बैठे थे कि वह उनका तारणहार बनेगा कितनी गलतफहमी मेंगी। जयराम रमेश ने कहा कि हम कोपनहेगन सम्मेलन में भारत के राष्ट्रीय हितों की रक्षा करने में सफल रहे हैं। इसी सांस में उन्होंने यह भी कहा, ष्मैं कोपनहेगन में विश्व या मानवता को बचाने का फरमान लेकर नहीं गया था। मैं तो वहां भारत के तेज विकास के अधिकार की रक्षा करने हेतु गया था। पश्चिमी देशों के लिए यह एक पर्यावरणीय मसला है. हमारे लिए तो यह विकास का मुद्दा है।ष तो अपनी कमजोरी या असफलता या दब्बूपन आप इसे जो भी कहना चाहे उसे हमारे पर्यावरण मंत्री राष्ट्रीय हित की आड़ में छुपा लेना चाहते हैं।

अगर भारत के लिए कोपेनहेगन पर्यावरण नहीं बल्कि मात्र विकास का मसला था तो फिर हमने इस सम्मलेन में अपने वित्त, उद्योग या वाणिज्य मंत्री को क्यों नहीं भेजा ? जब हमार यहां विकास का पैमाना सड़क निर्माण ही है तो सड़क परिवतन मंत्री कमलनाथ क्या सबसे बेहतर विकल्प नहीं हो सकते थे? वैसे इस दुनिया को आधुनिक विकास की वर्तमान अवधारणा से बचाया भी नहीं जा सकता। इसी के साथ ही साथ हमें अपनी जीवनशैली में परिवर्तन लाना होगा तथा पहले विनाश के कगार पर पहुँचकर उसके बाद बचने की कोशिश जैसी प्रवृत्तियों पर भी काबू पाना होगा।मगर जयराम रमेश काफी पढ़े लिखे व्यक्ति हैं इसलिए संभवतः वे तथ्यों के बजाय शब्दों पर अधिक यकीन करते हैं। उन्होंने किस तरह इस समझौते को अंतिम रूप दिया उसकी बनागी भी देखिए, ष्अमेरिका इस प्रयास में था कि वह समझौते में, समीक्षा, पूर्ण निरीक्षण अथवा प्रमाणित किए जानाष जैसे शब्दों का प्रयोग करे। जबकि भारत और चीन चाहते थे कि केवल संवाद या वार्तालाप शब्द डाला जाए। परन्तु अमेरिका इसके बदले निर्धारण शब्द डालना चाहता था। भारत व अन्य बेसिक देशों ने इसको सिरे से नकार दिया। अत में अंतर्राष्ट्रीय परामर्श और विश्लेषण जैसे सूत्र पर सहमति बनी। साथ ही यह भी तय हुआ कि यह सब कुछ स्पष्ट तौर पर राष्ट्रीय सार्वभौतिकता के ढांचे में ही होगा।

तो साहब अब आप समझ ही गए होंगे कि भारतीय दल वहां पर्यावरण संबंधी चर्चा के लिए नहीं बल्कि भाषाशास् खासकर अंग्रेजी भाषा पर अपनी पकड़ को स्थापित करने गया था। जयराम रमेश का लचीलापन और डॉ. मनमोहन सिंह द्वारा अमेरिका के प्रत्येक राष्ट्रपति से अगाध मित्रता निभाने का कर्मकांड कोपनहेगन समझौते का मूलभूत आधार है। तभी तो इस राजनैतिक व कानूनी तौर पर अबाध्यकारी (?) समझौते पर व्याईट हाऊस के अधिकृत प्रवक्ता डविड एक्सलार्ड का कहना है कि ष्यह समझौता बाध्यकारी है तथा लक्ष्यों की पूर्ति न होनेपर

अमेरिका विरोध भी दर्ज करा सकता है।ष अब हम किसकी बात माने? जाहिर है हमें तो अपने नेताओं की बात ही माननी होगी क्योंकि वे वहां हमारे विकास की बात करने गए थे। तभी तो उन्होंने कोपनहेगन में विकास की आधुनिक अवधारणा पर बली चढ़े भोपाल के 6 लाख लोगों को गैस त्रासदी की 25वीं बरसी पर भी याद नहीं किया।

शायद अमेरिका को नाराज करना ठीक नहीं है क्योंकि यूनियन कार्बाइड अमेरिकी कपनी है और अमेरिका वैश्विक तापमान में वृद्धि रोकने के लिए विकासशील व कमजोर देशों को प्रतिवर्ष 100 अरब डॉलर उपलब्ध करवाने की बात कर रहा है। घोषणा के बाद हम सबको लगा था कि यह राशि अमेरिका व विकसित देश अपने राजकोष से देंगे परन्तु ऐसा बिल्कुल नहीं है। इस नए समझौते के अनुच्छेद 8 में लिखा है, ष्इस हेतु धन की उपलब्धता अनेक प्रकार के स्रोतों जैसे सार्वजनिक एवं निजी, द्विपीक्षीय एवं बहुपक्षिय, जिसमें वित्त के वैकल्पिक स्रोत भी सम्मिलित है, के माध्यम से की जाएगी। इस प्रकार इस मद के अंतर्गत प्राप्त होने वाला अधिकांश धन विकासशील एवं कमजोर देशों को मिलने वाली कार्बन क्रेडिट से प्राप्त होगा।

वैसे यह भी रहस्य का विषय है कि अमेरिका के राष्ट्रपति बराक ओबामा के दिमाग में यह 100 अबर डॉलर का आंकड़ा कहां से आया? क्योंकि सारी दुनिया यह जानती है कि तापमान को 2 डिग्री सेटीग्रेड से आगे न बढ़ने देने के लिए कम से कम 300 डॉलर प्रति वर्ष की आवश्यकता है। यहां यह उल्लेख करना भी आवश्यक होगा कि संयुक्त राष्ट्र संघ के अपने शोध के अनुसार वैश्विक तापमान में 3 डिग्री सेंटीग्रेड की वृद्धि संभावित है, वहीं कमजोर राष्ट्र चाहते हैं कि तापमान वृद्धि 1.5 सेंटीग्रेड से ज्यादा न हो। हां, बात 100 अरब डॉलर की थी। दरअसल अमेरिका सिर्फ अफगानिस्तान में अपनी फौजों को तैनात रखने पर प्रतिवर्ष 100 अरब डॉलर खर्च कर रहा है। ऐसे में ओबामा को लगा कि जहाँ एक देश पर कब्जे के लिए 100 अरब खर्च करना पड़ रहा हो वहां सारी दुनिया को अपने अधीन रखने के लिए 100 अरब डॉलर का क्या सोचना। वह भी तब जब आपको यह सब चंदा करके देना हो।

वैश्विक नेताओं ने एकदम ठीक कहा कि कोपनहेगन मुकाम नहीं है यह तो सहज शुरुआत है। अगर शुरुआत इतनी शानदार हो तो मंजिल की भव्यता का सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है। भारत के सुदरबन में भविष्य की अप्रतिम दुनिया का निर्माण शुरू भी हो गया है। यहां का सैकड़ों वर्ग किलोमीटर क इलाका डूब गया है। जहां पहले खाद्यान्न की खेती होती थी वहां अब झींगे पाले जा रहे हो। आम रहवासियों के हाथ–पैर के पोर क्षारीय पानी से गल रहे हैं परन्तु पर्यावरण मंत्री, जलवायु परिवर्तन सम्मेलन में जलवायु के अलावा अन्य सभी विषयों पर अपना पक्ष रखते हैं। अमेरिका और विकसित देशों ने अपने उत्सर्जन में कमी की गांरटी दिए बिना तथा क्योटो और बाली समझौतों को दरकिनार कर अधिकांश दुनिया को बर्बादी के कगार पर ढकेल दिया है। आस्ट्रेलिया के आस–पास के द्वीप राष्ट्र अपने अस्तित्व पर आसन्न संकट को पहचानते हुए आस्ट्रेलिया से उसके इलाके में अपने राष्ट्र को नई जगह बसाने के लिए जमीन की डील करने में लग गए है। बाग्लादेश, मालदीप जैसे अन्य कई देश भी अस्तित्व के लिए संघर्षरत हैं। ऐसे में भारत का यह कहना कि वह विश्व या मानवता के लिए नहीं अपने विकास (स्वार्थ) के लिए ही कार्य करेगा सुनकर लगता है कि हम अब अपनी उस शाश्वत सभ्यता और संस्कृति से विमुख हो रहे हैं जो बुद्ध, महावीर, कबीर, नानक और गांधी से होतु हुए आज तक प्रवाहमान है तथा वसुदैव कुटुम्बकम के सिद्धांत पर टिकी है।

भूल को कभी भी सुधारा जा सकता है। 2010 की शुरुआत में सारे देश मेक्सिको में पुनः मिलकर इस विषय पर आगे चर्चा करेंगे। वैसे इस विषय पर पूरी किताब लिखी जा

सकती है परंतु थोड़े को अधिक समझिए और अपने आप इस विषय पर चिंतन कर जगराम रमेश से अपनी बात कहिए परंतु लिखने से पहले अपनी जीवनशैली और प्राकृतिक संसाधनों की सीमित उपलब्धता पर भी गौर करना मत भूलिएगा। हो सकता है कि हम, आप सबके कहने से, वे इस बार पर्यावरण मंत्री के नजरिए से जलवायु परिवर्तन की समस्या को देखें।

## 1.12 संयुक्त राष्ट्र शैक्षणिक, वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक संगठन–

अन्तर्राष्ट्रीय जगत में सांस्कृतिक गतिविधियों की सर्वप्रमुख और प्रतिनिधि सस्था यूनेस्को की स्थापना 4 नवम्बर, 1946 को हुई। इसे संयुक्त राष्ट्र संघ का विशिष्ट अभिकरण स्वीकार किया गया। इसका मुख्यालय पेरिस (फ्रांस) में स्थित है। यूनेस्कों के कार्यालय की भाषा है–अंग्रेजी, फ्रेंच तथा रूसी।

यूनेस्कों का उद्देश्य है–विभिन्न राष्ट्रों के मध्य शान्ति एवं सुरक्षा के लिए योगदान करना। यूनेस्कों जिस सिद्धान्त के आधार पर कार्य करता है वह है–युद्ध की उपज मानव मस्तिष्क में प्रारम्भ होती है अतः मानव के मस्तिष्क में ही शान्ति की सुरक्षा के लिए व्यवस्था की जानी चाहिए।

युनेस्कों के कार्य उपर्युक्त आधार पर निम्नलिखित है–

1. निरक्षरता का उन्मूलन करना

2. विभिन्न राष्ट्रों को अपनी परियोजनाओं नीतियों को लागू करना। 3. विभिन्न कार्यों के लिए अनुसंधान प्रशिक्षण, शिक्षा को प्रोत्साहन देना तथा उनके आदान–प्रदान में मुख्य भूमिका निभाना। 4. कला तथा साहित्य सम्बन्धी ज्ञान का प्रसाद करने, मानविकी में शोध को प्रोत्साहन देने, सांस्कृतिक महत्व के अवशेषों तथा वस्तुओं के संरक्षण में हाथ बंटाना तथा संग्राहलयों और पुस्तकालयों के विकासार्थ सहायता प्रदान करना।

यूनेस्कों अपने कार्यों का सम्पादन तीन प्रमुख अंगों के माध्यम से करता है। जिसमें पहला–सामान्य सम्मेलन जो यूनेस्कों के सदस्यों से मिलकर बना प्रतिनिध्यात्मक अंग है। इसमें प्रत्येक सदस्य राष्ट्र 5 प्रतिनिधि भेज सकता है। इसका अधिवेशन प्रत्येक दो वर्ष में एक बार होता है। यह यूनेस्कों की नीतियों, बजट एवं कार्यक्रम तैयार करता है तथा महानिदेशक की नियुक्ति भी करता है। दूसरा अंग है–कार्यकारी मंडल को सामान्य सभा द्वारा लिए गए निर्णयों को कार्यान्वित करता है। तीसरा अंग है–सचिवालय जो आन्तिरिक प्रबन्धन का कार्य करता है। इसे विशेषज्ञों का आगार भी कहा जाता है। इसका अध्यक्ष महानिदेशक होता है। वर्तमान निदेशक जापान के कोइचुरा मातसुरा हैं। यूनेस्कों वर्तमान में शरणार्थी समस्या, प्राकृतिक आपदा, आतंकवाद आदि को अपने अध्ययन का विषय बनाते हुए विभिन्न सिफारिशे कर रहा है। वैश्विक विरासत (वर्ल्ड हेरिटेज) के सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय जागरुकता बनाने में उल्लेखनीय योगदान दिया है। एक सुनिश्चित अभियान के तहत यूनेस्को सदस्य राष्ट्र की सरकारों के साथ बहुत सारी एन.जी.ओ. को भी जोड़ते हुए वैश्विक स्तर पर आज प्रभावी भूमिका निभा रहा है। यूनेस्को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शांति पर्यावरण एवं विज्ञान के क्षेत्र में पुरस्कार भी बांटते हैं।

## 1.13 विश्व प्रकृति निधि (WWF)

अन्तर्राष्ट्रीय संस्था विश्व प्रकृति निधि पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में कार्य करने वाले सामाजिक कार्यों व व्यक्तियों को सहायता उपलब्ध कराती है। W-W-F- (World Wide Fund for Nature) यह विश्व की सर्वाधिक बड़ी स्वतंत्र संस्था है जो पूरे विश्व में फैली है, जिसको अरबों लोगों का समर्थन प्राप्त है। लगभग 100 देशों में 100 से अधिक संरक्षण की परियोजनायें इसके सहयोग से चल रही है। यह एक चौरिटेबल संस्था है जिसका लगभग 10:

कोष (फंड) तो निजी व्यवसायियों की सहायता से ही मिल जाता है। अपने संरक्षण के प्रमुख कार्यों में यह लाबिइंग, शोध व परामर्श का कार्य पूरे देश में करती है।

विश्व प्रकृति निधि के गठन की नीव जुलियन हक्सले व मैक्स निकोलसन ने 11 सितम्बर 1961 को स्विटजरलैण्ड के मोर्गस में रखी थी। ॅ..थ. का मुख्यालय स्विटजरलैन्ड के ग्लैन्ड शहर में है। विश्व प्रकृति निधि का क्षेत्र विश्व भर में है व साथ ही इसका विशेष ध्यान पर्यावरणवादियों पर है। इसके पास प्रचुर मात्रा में धन है, 2005 में इसका राजस्व 111,393,537 अमेरिकी डालर था। विश्व भर में इसके लगभग 5000 से अधिक वालियेन्टर्सकार्यरत हैं।

विश्व प्रकृति निधि के प्रथम अध्यक्ष नीदरलैन्ड के प्रिंस बर्नहार्ड थे। WWF का मिशन है "To halt and revers the destruction of our environment" अर्थात् पर्यावरण के विनाश को उत्क्रमित करना एवं जिस स्तर तक अतिक्रमण हो गया है उसे उसी स्तर तक रोकने का प्रयास करना। WWF एक गैर सरकारी संस्था है, जो पर्यावरण सरक्षण व उसके पुनरोत्पादन पर बल देती है। यह इसके संरक्षण के लिये 3 विशेष पहलूओं पर ध्यान केन्द्रित करती है।

1. जैव विविधता
2. जंगल व पारिस्थितकीय
3. समुद्र व तटवर्ती क्षेत्रों में ताजे पानी पर।

अपने विलेखों में संस्था के प्रमुख उद्देश्यों के रूप में इसने विश्व संरक्षण में फौना, फलोरा, जंगल लैण्ड स्केप, जल, मिट्टी और दूसरे प्राकृतिक संसाधनों, भूमिप्रबंध, शोधपरीक्षण एवं सहयोग व प्रयास से सक्षम लोगों व साधनों द्वारा कार्य की पूर्ति करना। W-W-F. के कार्यालय की प्रमुख गतिविधियाँ अपने शुरूआती स्तर पर Endangerd Species] जैव विविधता, संरक्षण, प्राकृतिक संसाधनों का सम्पोषित इस्तेमाल एवं अपशिष्ट पदार्थों की खपत व प्रदूषण की मात्रा में कमी लाने का प्रयास करना।

W-W-F- के साथ बहुत से पर्यावरण समूह प्रचारक व कम्पेनर जुड़े हैं। W-W-F- कोका कोला, नोकिया, कैनन और अन्य कम्पनियों संरक्षण कार्य में इसका साथ देती है। इस सस्था को 50000 डालर से अधिक की सहायता का दान करने वालों में प्रमुख व्यवसयी के रूप में Chevron and EÛÛon] Philip Morris] Mobil] Morgan Cuaranty trust और अन्य पर्यावरण संरक्षण समितियाँ प्रमुख थीं।

W-W-F- यानि वर्ल्ड वाइड फंड ने अपने कार्यों के विस्तार व प्रकृति पर विशेष बल दैने के कारण 1988 में इसका नाम परिवर्तित करके (World Wide Fund for Nature) कर लिया।

1970 के दशक में प्रिंस बर्नहार्ड व प्रिंस फिलिप ने मिलकर एक क्लब 1001 प्रकृति ट्रस्ट की स्थापना की जो संस्था के कोष व प्रशासनिक व्यवस्था के लिये बनाया गया। जिसमें 10,000 डालर का दान देने वालों को सदस्य के रूप में ww-f शामिल किया गया w-w-f कादिश्यरैसलिंग फेडरेशन से लम्बा विवाद चला नाम को लेकर जिसे 2002 में न्यायालय की मदद से सुलणा लिया गया रेसलिंग फेडरेशन द्वारा नाम WWE कर लेने के बाद विश्व रेसलिंग इन्टरटेन्मेन्ट।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि विकासशील व अल्प विकसित देशों को आर्थिक सहातया देने वाली प्रमुख संस्था के रूप में हमें विश्व बैंक व I-M-F जैसी संस्थायें हैं वैसे ही पर्यावरण

संरक्षण के लिये कार्य करने वाले देशों व संस्थाओं को एक मात्र धन उपलक 1 कराने वाली संस्था के रूप में विश्व प्रकृति निधि एकमात्र संस्था के रूप में जानी जाती है। और वर्तमान ग्लोबलवार्मिंग के दौर में पर्यावरण संरक्षण के लिये पर्यावरण संरक्षण संस्था औषधि के रूप में परिलक्षित होती है। पर्यावरण संरक्षण के लिये जब ऐसी आर्थिक सहायता करने वाली संस्थायें हैं तब हमें बढ़चढ़ कर संरक्षण के कार्य करने चाहिये और आवश्यकता पडने परw-w-f जैसी संस्था की मदद लेनी चाहिये।

**1.14 संयुक्त राष्ट्र संघ–**

वर्तमान में संयुक्त राष्ट्र संघ की भूमिका मात्र उपदेशक तक सीमित कर दी गई है। विकसित एवं समृद्ध देश मनमानी पर उतारू हैं। विगत दिनों वैश्विक आर्थिक सकट को लेकर संयुक्त राष्ट्र संघ ने एक पहल के अन्तर्गत सभी सदस्य राष्ट्रों का सम्मेलन आयोजित किया। सम्मेलन परिणाममूलक तो नहीं रहा परन्तु इससे इस बात की संभावना बढ़ी है कि यह विश्व संस्था एक बार पुनः निर्णय ले पाने में सक्षम होगी।

वैश्विक आर्थिक संकट पर संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा आयोजित सम्मेलन की समाप्ति इस सहमति के साथ हुई कि कई महत्वपूर्पू आर्थिक मसलों पर वास्तविक पहल की जाए। विकासशील देशों को इस घोषणा से काफी निराशा हुई है क्योंकि उनकी मदद के लिए कोई ठोस तात्कालिक प्रयास सामने नहीं आए। संतोषजनक यह है कि इन मसलों को अब संयुक्त राष्ट्र महासभा में उठाया जाएगा।

इस सम्मेलन में अनेक देशों के विदेश अथवा वित्त मंत्रियों, प्रधानमंत्रियों एवं राष्ट्रपतियों ने भागीदारी की थी। सम्मेलन की सबसे बड़ी उपलब्धि यह रही कि इसने एक बार पुनः संयुक्त राष्ट्र संघ को सभी देशों के मध्य वैश्विक आर्थिक मुद्दों पर विमर्श के केन्द्र के रूप में स्थापित कर दिया जिससे इसके एक बार पुनः महत्वपूर्ण फोरम में परिवर्तन की संभावनाएँ प्रबल हुई है बशर्ते महाशक्तियों इस नये कार्यसमूह के गठन की अनुमति दें। जैसे ही इस सम्मेलन की योजना बनी वैसे ही मुख्य देशों खासकर अमेरिका ने विमर्श के दायरे को सीमित करने का प्रयास प्रारम्भ कर दिया था। इतना ही नहीं समापन सत्र के दौरान भी अमेरिका अन्तिम दस्तावेज जिसे पूर्व में सभी देश स्वीकृत कर चुके थे, में परिवर्तन हेतु प्रयासरत था। अमेरिका का कहना था कि वह संयुक्त राष्ट्र संघ के दस्तावेज में ब्रेटनवुडसंस्थानों, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व बैंक को प्रभावित करने वाले किसी भी टिप्पणी से सहमत नहीं है जबकि दस्तावेज में देशों ने इन दोनों संस्थानों के सुधार के प्रति सहमति जताई थी।

हाल ही में लंदन में हुई जी–20 देशों की बैठक जिसमें मुख्यतः विकसित देश ही हैं. इन संगठनों के सम्बन्ध में ठोस कार्यवाही हेतु सहमत हुए थे। इसके अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष में 500 अरब डॉलर का योगदान और इसके अध्यक्षों का चुनाव बजाए राष्ट्रीयता के उनके गुणों के आधार पर करने की बात कही गई थी। वहीं संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में भागीदारी करने वालों का मत था कि जी–8 या जी–20 जैसे कम देशों को समूह इन संस्थाओं का भाग्यविधाता है तो इस बात की कोई संभावना नहीं है कि ये देश संयुक्त राष्ट्र संघ को इन संस्थानों की कार्यशैली में हस्तक्षेप करने देंगे।

कार्यसमूह द्वारा अपनी गतिविधि प्रारम्भ करने के बाद पहला मसला यह होगा कि वैश्विक आर्थिक मसलों में संयुक्त राष्ट्र संघ की भूमिका को मजबूती प्रदान की जाए। इस हेतु आवश्यक है कि यह समूह वैश्विक आर्थिक संकट के संदर्भ में व्यापक कार्यवाही विकासशील देशों को धन उपलब्ध कराकर की जा सकती है। वर्ष 2009 में ही उनके विदेशी विनिमय में एक खरब से तीन खरब अमेरिकी डॉलर की कमी की है। सम्मेलन में विकासशील देशों को समुचित तरलता उपलब्ध कराने पर भी सहमति नहीं बन पाई। कई देशों के सामने तो

आयातित सेवाओं और विदेशी ऋण के भुगतान की समस्या खड़ी हो गई है। दूसरी ओर विकसित देशों के पास अपने संसाधन हैं और उधार लेने की क्षमता भी है। जिसके माध्यम से उन्होंने अपनी बैंकों और कम्पनियों को कोष उपलब्ध करा के, उन्हें बचा लिया है परन्तु अधिकांश विकासशील देशों के पास ऐसे संसाधनों का अभाव है। सम्मेलन में माँग की गई कि विकासशील देशों हेतु पर्याप्त संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित की जाए। कार्यदल को इस सम्बन्ध में त्वरित कार्यवाही करना चाहिए।

जी–77 और चीन ने प्रस्ताव किया है कि अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष विकासशील देशों को 100 अरब डॉलर विशेष आहरण अधिकार के रूप में बतौर अनुदान जारी करे। इसके अतिरिक्त 800 अरब डॉलर मध्यम आय वाले देशों को आवंटित करे जो कि सकट समाप्त होने के बाद इस धन को वापस लौटा सकें परन्तु सम्मेलन विशेष आहरण अधिकार पर सहमति नहीं बना पाया जिसके कारण निर्धनतम विकासशील देशों को कोई राहत नहीं मिल पाई।

एक शर्मनाक तथ्य यह है कि जी–20 देशों ने 250 अरब डॉलर विशेष आहरण अधिकार के रूप में स्वीकृत तो किए हैं परन्तु उनका आवंटन कोटा पद्धति पर होगा और अधिकांश धन विकसित देशों के खाते में ही जाएगा जबकि विकासशील देशों के भविष्य की किसी ऋण समस्या को रोकना भी सम्मेलन का अन्य प्रमुख विषय रहा। जी–77 और चीन ने मुसीबत का सामना करने वाले देशों के लिए नए अन्तर्राष्ट्रीय दिवालिया बैंक और अपने ऋणों को पुनः निर्धारण का प्रस्ताव भी रखा। सम्मेलन ने इस प्रस्ताव को भी आधा अधूरा ही स्वीकार किया। सम्मेलन में वित्तीय नियमन की आवश्यकता पर जोर देते हुए रेटिंग संस्थानों और हेज फंड्स को भी नियंत्रित करने की बात कीर। स्वीकृत दस्तावेज में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक में सुधार की अनुशंसा की गई है जिससे कि विकासशील देशों को न्यायोचित और बराबरी का प्रतिनिधित्व मिल सके। उम्मीद है कि इन प्रस्तावों से संयुक्त राष्ट्रसंघ को भी मजबूती प्राप्त होगी।

## 1.15 विश्व खाद्य कार्यक्रम (WFP)–

जिस प्रकार से विश्व में भूख एवं गरीबी बढ़ी है उसी प्रकार से इनका संरक्षण व संवर्द्धन करने के लिये प्रयास भी होते रहे हैं कुछ सरकारी कुछ गैर सरकारी प्रयास। इसी में यूएन ओ. की सहयोगी संस्था के रूप में विश्व खाद्य संगठन WFP का गठन हुआ इसकी स्थापना सन् 1963 में की गयी थी। विश्व खाद्य कार्यक्रम (वर्ल्ड फूड प्रोग्राम) संयुक्त राष्ट्र की रोग में स्थित संस्था है जो पूरे विश्व में भूख व गरीबी से मुक्ति का काम देखती है। विश्व खाद्य कार्यक्रम के निदेशक रिक कोर्सिनों हैं। यह कुपोषण, प्राकृतिक आपदाओं में राहत के साथ ही साथ विकासशील व अल्पविकसित देश के लिये सहायता प्रदान करता है। इस कार्यक्रम के मुख्यालय लगभग 83 देशों में है विश्व में खाद्य सहायता उपलब्ध कराने का बहुपक्षीय संगठन है विश्व में 25ः खाद्य सहायता यही कार्यक्रम करता है। विश्व खाद्य कार्यक्रम विभिन् देशों मे 12 मानवीय संकट के दौरान लोगों के जीवन बचाने के लिये खाद्य सहायता दे रहा है।

काम के बदले अनाज, परियोजना के माध्यम से व्यक्तियों व समुदायों को आत्मनिर्भर बनाने में सहायता करता है। कुपोषित बच्चों को पोषक स्तर के खाद्यान्न उपलब्ध कराता है। 3.4 बच्चो व लड़कियों को स्कूल जाने के लिये प्रेरित करता है व भोजन उपलब्ध कराता है। साथ ही 1974 में 42 सदस्यीय विश्व खाद्य परिषद की स्थापना भी हुयी। विश्व में खाद्य की स्थिति को प्रभावित करने वाले नीतिगत मुद्दों की समीक्षा करना और उनसे जुड़ी समस्याओं के समाधान के लिए एकीकृत दृष्टिा अपनाना इस परिषद का मुख्य उद्देश्य है। यू.एन. में यह खाद्य समस्या से जुड़ा सबसे बड़ा संगठन है। यह वैश्विक स्तर पर लक्ष्य निधारित कर उन्हें प्राप्त

करने के उपाय बताने व सदस्य राष्ट्रों के लिए वित्तीय समर्थन भी जुटाता है। विश्व खाद्य कार्यक्रम विभिन्न बीमारियों व पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के लिए सहायता प्रदान करता है जैसे मरास्मस, क्वासीकोर, आइरन डिफिसिएन्सी, विटामिन ए डिफिसेन्सी, आयोडीन की कमी।

WFP गरीबी चक्र में फंसे हुए लोगों की सहायता करता है भोजन उपलब्ध करता है। भूख का प्रबन्ध करता है क्योंकि जो व्यक्ति सदा भूखा रहेग व हमेशा गरीब रहेगा 2006 में WFP के विकास कार्यक्रमों से 24.3 मिलियन लोगों को लाभ मिला था इन्होंने उन परिवारों व समुदायों पर पहल की जो स्वास्थ्य व उत्पादकता के शिकार थे। क्योंकि जब तक खाद्य सुरक्षा नहीं होगी तब तक विकास सहायता नहीं स्वीकारी जा सकती है। विश्व की 50: से अधिक गर्भवती औरतें विकासशील देश में आइरन की कमी से पीड़ित रहती हैं जिससे कई माँ बच्चों के जन्म के समय ही मर जाती हैं। बच्चे कम भार वाले व कमजोर पैदा होते हैं। स्तनपान कराने में दुविधा होती है। 7 में से 1 बच्चा भूख व 3 में से 1 कम वजन का होता है। प्राकृतिक आपदाओं से भी गरीबों की खाद्य सुरक्षा प्रभावित होती है. सोमालिया, कीनिया, इथयोपिया, भारत, जापान आदि में प्राकृतिक आपदा से खाद्यान्न सकट उत्पन्न हुआ है।

अनियमित वर्षा एवं ताप ने भी अन्य संकट व भूखमरी फैलायी है। जिसे रोकने के लिये 1975 में FAO के अन्तर्गत विश्व खाद्य सुरक्षा समिति का गठन हुआ था जो एकमात्र संगठन है जो विश्व की खाद्य सुरक्षा की स्थिति पर निगाह रखने के लिये निगरानी रखता है। एशिया, अफ्रीका, लैटिन अफ्रीका के करोड़ों लोग बेघर हैं व भूख की समस्या में ग्रसित सुडान में दारपुर, उड़ीसा में, बांग्लादेश में लोग इस समस्या से जूझ रहे हैं इन सबके लिये ँथ्च विशेष कार्यक्रम एवं योजनायें संचालित कर रहा है। आनुवांशिक रूप से भूखे लोगों के बच्चे मानसिक रूप से विकसित नहीं होते।

पोषण के अभाव में माँ को दूध की समस्या होती है जिसमें वो अपने बच्चों को स्तनपान नहीं करा पाती व बच्चे कुपोषित हो जाते। इन सबको रोकने के लिए WFP कार्यरत है। 14 अक्टूबर, 2008 को लोआ हंगर समिति मीट हुआ। वर्तमान में विश्व खाद्य कार्यक्रम का मुख्य जोर है–

1. शरणार्थियों व अन्य आपदाओं के शिकार लोगों की जिन्दगी बचाने का प्रयास करना।

2.पोषक तत्वों व जीवन स्तर को महत्व देकर व कठिनाई से जीवन यापन कर रहे लोगों की आर्थिक सहायता करना।

3.विश्व खाद्य कार्यक्रम की एक विशेष खूबी है कि यह अपने धन एकत्रित खाद्यान्न को राहत की जगह पर त्वरित रूप से सहायता पहुँचा कर प्रभावशाली कदम उठाता है।

4.WFP राहत एवं बचाव के कार्यों को कुशलतापूर्वक कर रहा है। WFP गरीबी में फंसे हुए लोगों के सस्टेनेबल भविष्य के निर्माण के लिए बच्चों को पढ़ाई के लिये खाद्य सुरक्षा उपलब्ध कराता है जिससे वो सकूल जा सके।

5.एड्स जैसी बीमारी से व एच आई–वी से पीडित लोग को खाद्य सुरक्षा इससे लडने में मदद देता है।

6. रक्षा के माध्यम से WFP भूखें के इन्फ्रास्ट्रक्चर व स्किल को बढाता है। जिससे लोग काम कर सके।

7. WFP का विश्वास है कि औरत ही भूख एवं गरीबी दूर करने के लिये सबसे अधिक तेजी से उपयुक्तता से काम करेगी इसलिये महिलाओं पर ध्यान देना चाहिए।

**सन्दर्भ प्रश्नावली–**

1 पर्यावरण संरक्षण हेतु अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासों की विवेचना करें।

2 पृथ्वी शिखर सम्मेलन में हुए रियो घोषणा पत्र के प्रमुख बिन्दुओं पर विचार करें।

3.निम्नलिखित संदर्भों की व्याख्या करें–

(A) एजेण्डा–21

(B) स्टॉकहोम सम्मेलन 1972

(C) माण्ट्रियल प्रोटोकॉल 1987

(D) क्योटो प्रोटोकॉल

4.कोपेनहेगेन सम्मेलन में 2009 में हुए जलवायु समझौते का प्रारूप क्या था? भारत पर इसके प्रभावों की विवेचना करें।

5. पर्यावरण संरक्षण पर काम कर रहे कुछ अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं का परिचय दें।

**सारांश–**

विश्व स्तर पर बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण को लेकर समय–समय पर चिंता व्यक्त की जाती रही है। और आम जनता का ध्यान इस दिशा में आकृष्ट करने के लिये सम्मेलनों संघियों इत्यादि को माध्यम बनाया जाता है। इस विषय की भविष्य के संकेतो को देखते हुये संयुक्त राष्ट्र महासंघ के मानव पर्यावरण समयोजन का आयोजन 5 जून 1911 से 16 जून 1972 कस्ठम स्वीडन में सम्पन्न हुआ। विश्व स्तर पर पर्यावरण में संरक्षण एवं सुधार इसका उद्देश्य या इसी तरह वैश्विक तापन, पर्यावरण प्रदूषण इत्यादि के सम्बन्ध सम्मेलनों का आयोजन किया गया तथा वैश्विक स्तर पर नीतियों का निर्माण किया जाता रहा है। इसी क्रम में समय–समय पर जैसे विएना सम्मेलन 1986 माण्डियक प्रोटोकाल (1987), कोपेनहेगल सम्मेलन, पृथ्वी शिखर सम्मेलनों का आयोजन वैश्विक स्तर पर पर्यावरण के संरक्षण एवं खुशहाल मानव जीवन के लिये होते रहे है।

# इकाई 2
# पर्यावरण सम्बन्धी वाह्य लागतें, नुकसान अमितव्ययिताएँ

## 2.1 प्रस्तावना (Introduction)

वाहयता की अवधारणा काके सबसे पहले 1890 में के दशक में अल्फ्रेड मार्शल द्वारा प्रतिपादित किया गया और 1920 केक दशक में अर्थशास्त्री आर्थर पिगू कके कार्यो में बड़े व्यापक स्तर पर ध्यान आकृष्ट किया। सामान्य तौर पर विकास प्रयासों के परिणामस्वरूप हुई राष्ट्रीय आय में वृद्धि को ही विकास के मापदण्ड के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।विश्व में लगभग सभी राष्ट्र एवं सभी अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ अपने विकास प्रयासों की जाच के लिए अपनी सुविधा हेतु आज भी राष्ट्रीय आय में वृद्धि की दर के मापदण्ड का ही उपयोग करते हैं। हम मापदण्ड की लोकप्रियता के बावजूद इसमें अनेक कमियों है. जैसे विकास के प्रयासों से उत्पन्न आय का वितरण कैसा है, उसके परिणामस्वरूप क्षेत्रीय और वैयक्तिक विषमाओं में वृद्धि तो नहीं हो रही है या हमारे जीवन के आधार प्राकृतिक संसाधनों का स्थाई विनाश तो नहीं हो पा रहा है?

आय में तेजी से वृद्धि के बावजूद अगर आय वितरण की क्षेत्रीय या वैयक्तिक विषमताए बढ़ती है ता आम आदमियों में असंतोष बढ़ेगा। भारत और चीन की विकास दरे विश्व में सर्वाधिक होने के बावजूद वहां विकास प्रक्रिया से असंतुष्ट लोगों की संख्या बढ़ती ही जा रही है। गांधीजी उन्हीं विकास प्रयासों को श्रेष्ठ घोषित करते थे जिनका सर्वप्रथम लाभ देश के सबसे गरीब व्यक्ति को सबसे पहले मिलता हो। विकास प्रयासों के मादण्डों में पारिस्थितिकी प्रभावों की अनदेखी भी भारी पड़ने लगी है।

विकास के मापदण्ड के रूप में राष्ट्रीय आया में वृद्धि की दर की इन्हीं अनुपुयुक्ताओं के कारण संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम या यू.एन.डी.पी. ने मानव विकास सूचकांकों का विकास किया और विकास के वैकल्पिक और बेहतर मापदण्ड होने के कारण इनका उपयोग बढ़ता जा रहा है, इनकी गणना में प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय के साथ–साथ शिक्षा एवं स्वास्थ्य की बेहतरी के प्रयासों को भी शामिल किया जाता है। इन दोनों मापदण्डों के आधार पर विश्व के राष्ट्रों का क्रम भी बदल जाता है। मानव विकास सूचकांकों के प्रति व्यक्ति आय के मापदण्ड की तुलना में अधिक व्यापक आधार वाले होने के बावजूद इनमें भी कुछ कमियों पाई जाती है। इन सूचकांकों के माध्यम से यह ज्ञात नहीं होता है कि इनका हमारे प्राकृतिक संसाधनो पर क्या प्रभाव हो रहा है। प्राकृतिक संसाधनों के टिकाऊ उपयोग का महत्वपूर्ण मुद्दा उपेक्षित रहता है।

अनुपयुक्त विकास मापदण्डों के परिणामों को देखते हुए हमारे पड़ोसी राष्ट्र भूटान ने विकास का लक्ष्य कुल राष्ट्रीय सुख को बनाया है। इसी तरह न्यू इकॉनोमिक फाउंडेशन ने श्हेपी प्लेनेट इन्डेक्सश का उपयोग किया है। इसकी मान्यता है कि जीवन की गुणवत्ता केवल हमारे द्वारा उपयोग की जाने वाली वस्तुओ और सेवाओं की मात्रा पर ही निर्भर नहीं करती है, बल्कि हर व्यक्ति के जीवन संतुष्टि क बारे में उसके अपने दृष्टिकोण पर भी निर्भर करती हैं।

इस मापदण्ड के आधार पर किए गए सर्वेक्षण में कोस्टारिका का क्रम विश्व के राष्ट्रों में सबसे ऊपर है और सर्वाधिक आय वाले अमेरिका आदि का स्थान अपेक्षाकृत नीचा है। इन सूचकांक में विकास प्रक्रिया के पारिस्थितिकी प्रभाव को शामिल किए जाने से टिकाऊ विकास के पहलू को भी अनदेखा नहीं किया गया है। फिर भी इस नाप का आधार भी केवल मौद्रिक होने से बेहतर चिन्हित किएजा सकने वाले सूचकांक की आवश्यकता है।

विकास के मापदण्डों पर उठाए गए अनेक प्रश्नों की पृष्ठभूमि में फ्रांस के राष्ट्रपति निकोलस सरकोजी ने गत दिनों उपयुक्त माददण्डों के निर्धारण हेतु नोबल पुरस्कार विजेता अमरीकी अर्थशास्शी जोसेफ स्टिग्लिज की अध्यक्षता में एक आयोग की स्थापना की थी जिसके परामर्शदाता नोबल पुरस्कार विजेता अनिवासी भारतीय प्रो. अमर्त्य सेन थे तथा जीन–पाल फिटोसी उसके संयोजक थे। विश्व के अन्य 20 प्रमुख अर्थशास्त्री भी इस आयोग के सदस्य थे। इस आयोग से अपेक्षा की गई थी कि वह आर्थिक विकास के वैकल्पिक एवं व्यावहारिक मापदण्ड सुझाए तथा वह भी देखें कि इन मापदण्डों के लिए और किन सांख्यिकी सूचनाओं की आवश्यकता होगी।

इसकी रिपोर्ट में कहा गया है कि आर्थिक विकास, मुद्रास्फीति एवं बेरोजगारी के वर्तमान आंकड़ों पर जनता कतई विश्वास नहीं करती है और सोचती है कि सरकार उन्हें बहलाने के लिए झूठ बोल है। अतः उत्पादन आधारित मापदण्डों के स्थान पर लोगों के कल्याण को विकास का मापदण्ड बनाया जाना चाहिए। वर्तमान पीढ़ी के अलावा भावी पीढ़ी के कल्याण को भी इस मापदण्ड में समाहित करना होगा। इसका अर्थ यह हुआ कि अब हमारे राष्ट्रीय उत्पादन को नापने के स्थान पर लोगों के कल्याण में प्रगति को आंकना होगा। हमें उत्पादन की अपेक्षा उपयोग पर ध्यान देना होगा। साथ ही उसमें गैर बाजार गतिविधियों को भी शामिल करना होगा। आज अनेक समाजों में गैर–बाजार गतिविधियों उनके उत्पादन और उपयोग का महत्वपूर्ण भाग होती है परन्तु इन गतिविधियों को चिन्हित करना और उ नका आर्थिक मूल्य मूल्य ज्ञात करना अत्यंत चुनौतीपूर्ण है और इस दिशा में प्रयासों का अत्यंत अभ्भाव है। अगर भारत और अन्य विकासशील राष्ट्रों की दृष्टि से देखें तो गैर–बाजार गतिविधियों के मूल्य को परिवार की आय में शामिल करने का अर्थ है उनकी आय में अप्रत्याशित वृद्धि बताई जाएगी। इसके कारण आज गरीबी की रेखा के नीचे आने वाले परिवार गरीबी की रेखा के ऊपर आ जाएंगे और देश में गरीबी का प्रतिशत अत्यंत कम माना जाने लगेगा जो भारत में किसी को भी स्वीकार नहीं होगा।

आयोग ने विकास मापदण्डों में टिकाऊपन और पर्यावरण प्रभावों को शामिल करने की केवल बात ही कहीं है। रिपोर्ट के अनुसार टिकाऊ विकास के ज्ञान के लिए स्पष्ट और निर्धारित मापदण्डों की आवश्यकता है, परन्तु उसने इन मापदण्डों की तलाश हेतु कोई प्रवास नहीं किए हैं। इनमे मापदण्ड ऐसे होने चाहिए कि प्राकृतिक सम्पदा के भण्डारों में परिवर्तन या कमी या वृद्धि को समुचित और स्पष्ट रूप से ज्ञात कर सकें। वर्तमान में पर्यावरणविदों के द्वारा बताई जा रही पर्यावरण में आ रही गिरावट पर कई अन्य अर्थशास्त्री प्रश्नचिन्ह भी लगा रहे हैं।

**पर्यावरण सम्बन्धी वाह्यय लागते**

यदि प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग एवं आवंटन के लिए प्रतिद्वद्विता है. वा संसाधनों के उपयोग को कम करना बहुत महंगा है तब बाजार आवंटन को अक्षम होने की संभावना होती है। आम सम्पत्ति के उपयोग को लेकर होने वाली चुनौतियों का काफी लम्बे समय से अध्ययन किया गया है। अर्थशास्त्री हार्डिन (1968) के द्वारा प्रतिपादित कॉमन्स की प्रासदी की अवधारणा (जतंहमकल व िबवउउवदे) ने प्राकृतिक संसाधनों के गैर–बहिष्कारसम्बन्धी चुनौतियों का सारगर्भित स्पष्टीकरण किया है। हार्दिन के अनुसार कामन्स पर्यावरण सम्पत्ति ही है जो आम सम्पत्ति संसाधन या सामान्य पूल संसाधन (Common&pool resources) को संदर्भित करता है। इन संसाधनों को सही ढंग से उपयोग कर हम भविष्य लाभ को सुनिश्चित कर सकते हैं। मूल समस्या यह है कि हम कॉमन्स के मूल्य को सही ढंग से नहीं समझ पाते हैं और इनके अत्यधिक एवं अनियोजित उपयोग से भविष्य में होने वाले सुखद परिणामों को

भी खपा देते हैं। पर्यावरणीय प्रतिबन्ध के अभाव में कॉमन्स का अत्यधिक दोहन होना स्वाभाविक है जो पर्यावरण क्षरण के लिए काफी हद तक जिम्मेदार है। सामाजिक एवं व्यक्तिगत आत्म–संचालन (Self regulation) के द्वारा कॉमन्स की त्रासदी के खतरे को कम किया जा सकता है।

पर्यावरण अर्थशास्त्र के केन्द्र में बाजार की विफलता की अवधारणा है (Market Failure)। बाजार विफलता का मतलब है बाजार द्वारा संसाधनों के कुशलतापूर्वक आवंटन में असफलता।

पर्यावरण अर्थशास्त्री हेनले, शोग्रेन और व्हाइट (2007) के अनुसार जब बाजार में दुर्लभ संसाधनों का आवंटन सामाजिक कल्याण उत्पन्न करने के लिए असफल हो जाता है तब बाजार विफलता उत्पन्न होती है। इससे समाज में आर्थिक अक्षमता (Economic inefficiency), संसाधनों का गलत आवंटन और पर्यावरण प्रदूषण फलीभूत होता है।

यदि किसी व्यक्ति या फर्म के कार्यकलापों द्वारा किसी व्यक्ति विशेष या पर्यावरण प्रभावित होता है तो इसे हमें EÛternality या बाह्य परिणाम कहते हैं। आर्थिक रूप से अक्षम बाजार में इन परिणामों का बाजार मूल्य में एकीकृत नहीं हो पाता है जिससे किसी फर्म द्वारा होने वाले प्रदूषण उत्सर्जन का बाजार मूल्य नहीं के बराबर हो जाता है। उदाहरण के लिए एक फर्म अपने कारोबार से होने वाले प्रदूषण उत्सर्जन की लागत को अपने उत्पादों में नहीं जोड़ता है, जिससे होने वाले बाह्य परिणाम दूसरों के खाते में चले जाते हैं।

इससे सामाजिक दृष्टि से वांछनीय स्तर से अधिक पर्यावरण प्रदूषण होता है। (Pollution in eÛcess of the 'socially efficient level may occur) सार्वजनिक प्राकृतिक संसाधन या पब्लिक गुड्स बाजार विफलता का एक प्रकार है जिसके प्रावधान एवं आवंटन हेतु निर्धारित बाजार मूल्य सामाजिक लाभों को अधिग्रहण नहीं करता है। उदाहरण के लिए जलवायु परिवर्तन के खतरों से सुरक्षा के लिए किए गये उपाय पब्लिक गुड्स की श्रेणी में आते हैं क्योंकि इनका प्रावधान गैर–प्रतिद्वंदी और गैर–अपवर्जित (non&rival & non&eÛcludable) है।गैर प्रतिद्वन्द्वी का यहाँ पर अर्थ है कि जलवायु परिवर्तन से बचने के लिए किसी एक मीडोज का संवृद्धि परिसीमन सिद्धाना (Limits to growth)

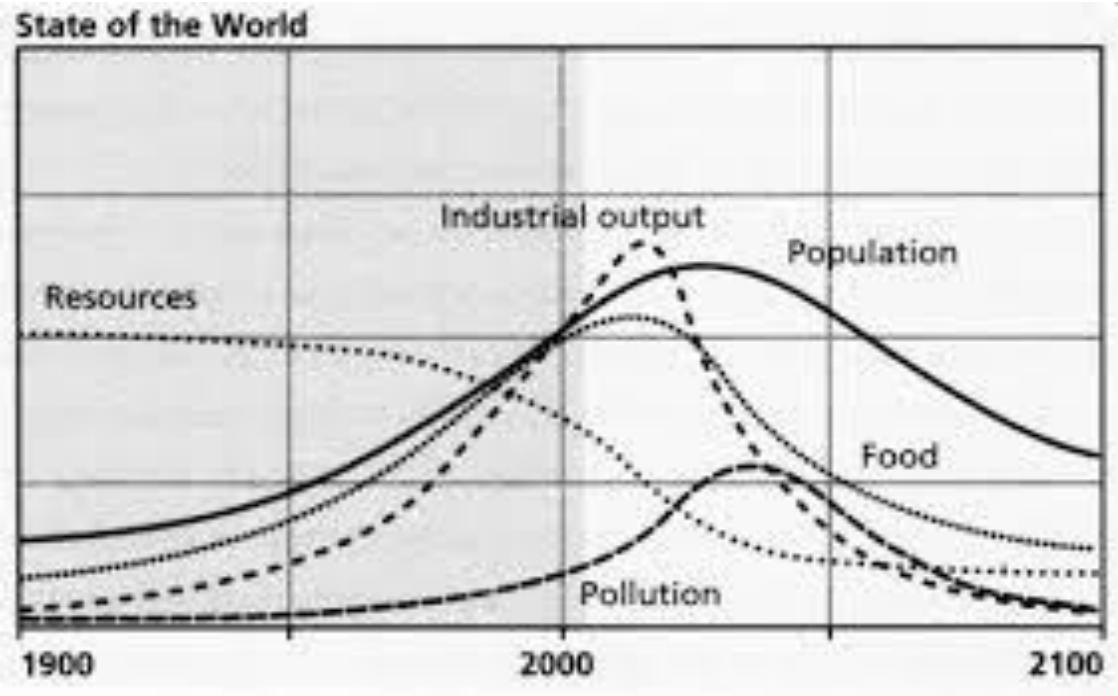


**समृद्धि परिसीमन एवं पर्यावरण वाह्यय लागतें–**

देश में किये गये उपाय दूसरे देश के लिए कम नहीं है और उतने ही महत्वपूर्ण हैं। इससे सबको सार्वजनिक लाभ प्राप्त होगा। लेकिन किसी देश के द्वारा कार्बन कमी में निवेश एवं जलवायु परिवर्तन से बचने के लिए किये गये उपाय, अन्य देशों के प्रयासों को बन्द कर सकते हैं. क्योंकि अन्य देश इसे मुफ्त सवारी (Free&ride) समझने की भूल कर सकते हैं। इसी तरह

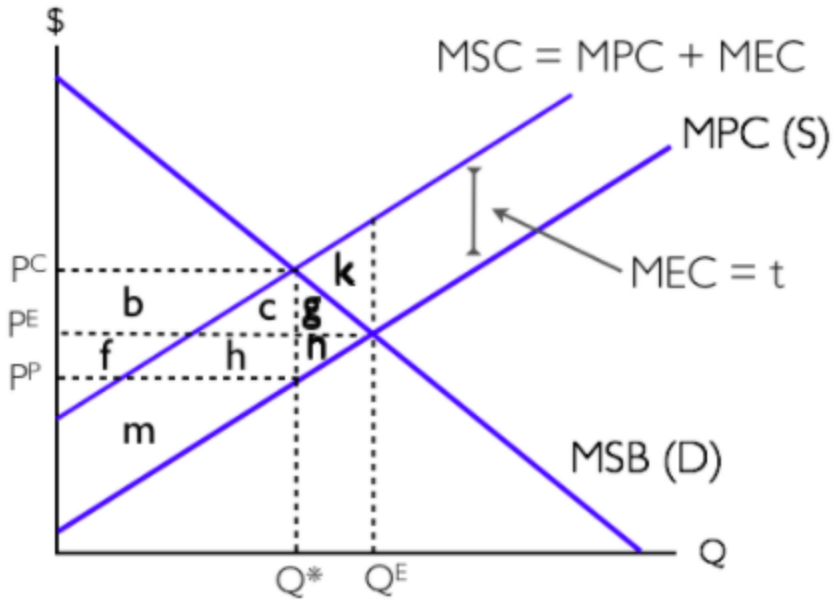


पीगूबियन कर की परिकल्पना

कई फर्म अपनी प्रदूषण प्रबन्धन क्षमताओं को वरीयता नहीं देते हैं क्योंकि उन्हें लगता है कि वे बिना किसी भुगतान के ही लाभ उठा सकते हैं। इसका दुष्परिणाम पर्यावरण पर होता है। ये

पर्यावरण अर्थशास्त्र के कुछ मूल विषय है जिनका समाज के प्रत्येक वर्ग से सीधा सम्बन्ध है। पर्यावरण अर्थशास्त्र का अध्ययन अति विशिष्ट भी हो सकता है जो पर्यावरण विज्ञान, पर्यावरण अभियांत्रिकी, पर्यावरण प्रबन्धन, पर्यावरण जैव प्रौद्योगिकी जैसे अत्यन्त तकनीकी विषयों पर केन्द्रित हो सकता है।

वायुमण्डल की कोई सीमारेखा नहीं है और किसी एक स्थान पर उत्पन्न होने वाले प्रदूषक तत्त्व आसानी से अन्य स्थानों तक पहुँच सकते हैं। किसी स्थान पर शहरों अथवा कारखानों के गन्दे पानी द्वारा दूषित की गई नदी के जल का प्रभाव इसके निचले भागों में उपस्थित जल जीवन को प्रभावित करता है। इसी प्रकार पहाड़ों पर स्थित बनों की क्षति केवल पहाड़ों को ही नहीं वरन् दूर–दूर तक स्थित मैदानीर भागों को भी समान रूप से प्रभावित करती है। ऐसा इसलिए होता है क्योकि पर्यावरण विभिन्न अवयवों तथा उनके कार्यकलापों से बना जटिल तंत्र है। इस प्रकार से प्राकृतिक सम्पदाओं को हम ग्लोबल कॉमन्स की श्रेणी में रखते हैं।

**सारांश–**

वाहयतायें आर्थिक गतिविधी में अनजाने परिणाम है। जो सीधे तौर पर इसमें शामिल लोगों के अलावा अन्य लोगों को प्रभावित करते है। वाहतायें भी बाजार की विफलता का एक रूप है। वे नकारात्मक या सकारात्मक हाहे सकते है। नकारात्मक वाहयता अवियोजित परिणाम उत्पन्न करती है। जो पर्यावरण को सीधे तौर पर हानि प्रदान करती है। नकारात्मक वाहयता का प्रोटोटाइपिक उदाहरण पर्यावरण प्रदूषण है। पीगू ने तर्क दिया कि नकारात्मक वाहयताओं पर सीमांत क्षति या सीमांत बाहरी लागत के बराबर कर (पीगू विमन कर कहा गया) का उपयोग उनकी घटनाओं को एक कुशल स्तर तक कम करने के लिये किया जा सकता है।

वाहयताऐं अक्सर तब होती है। जब किसी उत्पाद या सेवा के निजी मूल्य संतुलन का उत्पादन या उपयोग पूरे समाज के लिये उस उत्पाद या सेवा की वास्तविक लागत या लाभ को प्रतिविंक्ति नहीं कर सकता है। यह वाहयता प्रतिस्पर्धी संतुलन को परेयं इक्टतम की स्थिति का पालन नहीं करने का कारण बनता है। इस प्रकार चूंकि संसाधनों को बेहतर तरीके से आंवटित किया जा सकता है। इसलिये वाहयताऐं बाजार की विफलता का एक उदाहरण है।

**सन्दर्भ प्रश्नावली**

1. पर्यावरण सम्बन्धी वाह्य लागतों पर टिप्पणी लिखें।
2 पर्यावरण अर्थशास्त्र के केन्द्र में बाजार की विफलता की अवधारणा है। इसकी व्याख्या करें।
3 पीगूबियन कर की परिकल्पना पर्यावरण सम्बन्धी वाह्य लागतों को निहित करती है। अपने विचार प्रकट करें।
4 निम्नलिखित संदर्भों की व्याख्या करें–
(1) मुफ्त सवारी और वाह्य लागतें
(ii) मीडोज का संवृद्धि परिसीमन सिद्धान्त

**संदर्भ ग्रंथ–**

1. पर्यावरण प्रदूषण को जान सकेंगे।

2. प्रदूषण की समस्या को समझ सकेंगे।
3. प्रदूषण के प्रकार को जान सकेंगे।
4. प्रदूषण फैलाने वाले सामान्य प्रदूषकों को समझ सकेंगे।
5. विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों से सुरक्षा के उपाय का तुलनात्मक अध्ययन कर सकेंगे।

**शहरी अपशिष्टः–** नगर पालिका सम्पूर्ण प्रकार का शहरी करका, मानव–मल, मरे हुये जानवर के अवशिष्ट पदार्थो काके एक स्थान पर शहर के बाहर डालती रहती है।

**कृषि अपशिष्टः–** खेतो में अनावश्यक क्यों पौधे के अवाशिष्ट बढ़ती हुयी औद्योगिक प्रगति के सफाई के नये–नये पदार्थ बाजार में आ रहे है।

**उपयोगी पुस्तकेंः–**

1. मैनकीव निकोलस– अर्थशास्त्र के सिद्धांत– सांता के सेंमेज लर्निग।
2. वाहय कारक संतुलन– इन्वेस्तोपेडियो।
3. ग्रुवर जोनायन– पाब्लिक फासेंज एंड पाब्लिक फाकिजी।

# इकाई 3
# कोज का सिद्धान्त, होटलिंग माडल

**3.0 उद्देश्य**
**3.1 प्रस्तावना**
**3.2 कोज प्रमेय**
**3.3 अर्थशास्त्री रोनाल्डों कोज द्वारा कोज प्रमेय के अनुप्रयोग**
**3.4 कोज प्रमेय का पर्यावरण संरक्षण में उपयोग**
**3.5 सारांश**
**3.6 बोध प्रश्न**
**3.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें**

## 3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में हम रोनाल्डो कोज द्वारा दिए गए प्रमेय की जानकारी प्राप्त करेंगें
इस इकाई में हम कोज प्रमेय के अनुप्रयोगों के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे
इस इकाई में हम कोज प्रमेय का पर्यावरण संरक्षण में उपयोग के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे

## 3.1 प्रस्तावना–

अर्थशास्त्री रोनाल्ड कोज द्वारा विकसित कोज प्रमेय विधिक और आर्थिक सिद्धांत है। इस सिद्धांत यह बताता है कि संपत्ति अधिकार विवाद के पक्षकार संपत्ति अधिकारों के प्रारंभिक वितरण की परवाह किए बिना सही परिस्थितियों में आर्थिक रूप से इष्टतम समाधान के साथ निष्कर्ष निकालने में सक्षम होंगे। साथ ही साथ यह सिद्धांत व्यापार प्रतिस्पर्धियों के बीच संघर्ष को हल करने का एक संभावित उपयोगी तरीका बताता है या सीमित संसाधनों का उपयोग करने का आर्थिक तरीका बताता है। सिद्धांत को पूरी तरह से लागू किया जा सकता है यदि शून्य लेनदेन लागत के साथ कुशल प्रतिस्पर्धी बाजारों की शर्तें पूरी होती हों।

## 3.2 कोज प्रमेय (Coase Theorem)

कोज प्रमेय बाह्य परिणाम की उपस्थिति में आवंटन की आर्थिक क्षमता का वर्णन करता है। प्रमेय के अनुसार, यदि किसी व्यापार में लेनदेन लागत नहीं के बराबर है तो सम्पदा के प्रारम्भिक आवंटन की परवाह किए बिना आपस में समझौता या सौदेबाजी कर एक कुशल आर्थिक एवं सामाजिक परिणाम निकाला जा सकता है। कुशल सौदेबाजी में बाधा या सम्पदा अधिकारों को परिभाषित किए बिना, कोज का सिद्धान्त लागू नहीं होता है।

(ii) इसके अनुसार– बाजार में लेनदेन के लिए निजी सम्पत्ति के अधिकार का चित्रण जरूरी है। यदि निजी सम्पत्ति का अधिकार सही ढंग से परिभाषित है और लेनदेन लागत शून्य है तो दो फर्मों के बीच, विनिमय द्वारा संसाधनों का कुशल उपयोग एवं उसके उच्चतम महत्वपूर्ण उपयोग को बढ़ावा मिलेगा।

(iii) संसाधनों का आवंटन शून्य लेनदेन लागत और शून्य आय प्रभाव के तहत निजी सम्पत्ति के अधिकार का काम करने के लिए अपरिवर्तनीय है।

कोज प्रमेय कानून से जुड़े विवादों के समाधान में न्यायविदों और कानूनी विद्वानों द्वारा इस्तेमाल किया गया है। अनुबंध कानून में, कोज प्रमेय अक्सर एक पारम्परिक सौदेबाजी अनुबन्ध के लिए पार्टियों के सापेक्ष शक्ति का मूल्यांकन या बातचीत की स्वीकृति के लिए

किया जाता है। दूसरे शब्दों में आपसी समझौते से कानूनी ढाँचे की उपेक्षा करके भी, आर्थिक रूप से कुशल समाधान निकाला जा सकता है।

दो फर्मों के बीच दायित्वों का मूल्यांकन, इस फार्मूले के द्वारा किया जा सकता है– $B < PL$

जहाँ, $B$ = हर्जाना के खिलाफ पर्याप्त सुरक्षा का भार (आर्थिक या अन्यथा)

$P$ = हानि या क्षति की सम्भावना

$L$ = परिणामस्वरूप नुकसान की गम्भीरता

**3.3 अर्थशास्त्री रोनाल्डों कोज द्वारा कोज प्रमेय के अनुप्रयोग–**

कोज प्रमेय उन स्थितियों में लागू होता है जहाँ एक पक्ष की आर्थिक गतिविधियाँ दूसरे पक्ष पर लागत लगाती हैं। यह तब भी लागू होता है जब एक पक्ष दूसरे पक्ष की संपत्ति को नुकसान पहुँचाता है। आप निम्न उदाहरण पर विचार करके सिद्धांत की प्रयोग को बेहतर ढंग से समझ सकते हैं।

**उदाहरण–**

मान लीजिए एक आवासीय क्षेत्र में स्थित एक शराब विक्रेता के बारे में पड़ोसी घरों द्वारा अशान्ति फैलाने की शिकायत की जाती है। प्रमेय के अनुसार दो संभावित समाधान हो सकते हैं। 1. शराब विक्रेता प्रभावित पक्षों को वित्तीय मुआवजा दे सकता है ताकि वे शराब बिक्री जारी रखने की अनुमति दें।

यदि पड़ोसी शराब विक्रेता को बिक्री बंद करने के लिए भुगतान कर सकते हैं तो शराब विक्रेता बिक्री बंद करके अशान्ति फैलाने से बचने की कोशिश कर सकता है। इसे अशान्ति फैलाने से जुड़े राजस्व के नुकसान की भरपाई के लिए पड़ोसियों की ओर से व्यवसाय के लिए मुआवजा माना जा सकता है।

कोज प्रमेय को संपत्ति अधिकारों पर विवादों और निजी तौर पर बातचीत के जरिए समाधान के विधायी पूर्वग्रहण के विरुद्ध एक तर्क के रूप में देखा जाता है।

**3.4 कोज प्रमेय का पर्यावरण संरक्षण में उपयोग–**

राष्ट्रीय आय गणना की वर्तमान पद्धति में वर्ष भर में वस्तुओं और सेवाओं के शुद्ध उत्पादन को शामिल किया जाता है. परन्तु इस बात का कोई लेखा जोखा नहीं लिया जाता है कि इनके उत्पादन की प्रक्रिया में कितनी पर्यावरणीय क्षति हुई है। वर्तमान में हमारी राष्ट्रीय आय गणना की प्रणाली तो ऐसी है कि उत्पादन की प्रक्रिया में अगर सारे वन काट दिए जाए उपजाऊ मिट्टी को नष्ट कर भूमि को बंजर बना दिया जाए, नदियों, झीलों के पानी को प्रदूषित कर दिया जाए, वह पीने के काबिल भी न रहें, तटीय समुद्र की सभी मछलियाँ नष्ट कर दी जाएं, वायुमण्डल को प्रदूषित कर उसमें सांस लेना भी कठिन बना दिया जाए तो भी हमारी राष्ट्रीय आय के अनुमानों में इन प्रतिकूल प्रभावों का कोई विपरीत असर नहीं होगा तथा उसमें कोई कमी नहीं आएगी।

इन सब कमियों के फलस्वरूप हमारी राष्ट्रीय आय और उसकी वृद्धि दर राष्ट्रीय कल्याण को ठीक–ठीक प्रदर्शित नहीं करती है। राष्ट्रीय आय की अवधारणा में इन कमियों को देखते हुए अब हरित राष्ट्रीय आय की अवधारणा विकसित की गई है। हरित राष्ट्रीय आय की गणना में वर्ष में वस्तुओं एवं सेवाओं के शुद्ध उत्पादन के योग में से उत्पादन की प्रक्रिया में देश के पर्यावरण और पारिस्थितिकी को जो क्षति पहुँचती है. उसके मौद्रिक मूल्य को कम कर दिया जाता है।

ऊर्जा एवं संसाधन संस्थान द्वारा सीमित गणना के आधार पर तैयार एक रिपोर्ट हरित राष्ट्रीय आय वर्ष् 2047 प्रकाशित की है। इसमें बताया गया है कि वर्तमान में देश में अशुद्ध

पेयजल एवं प्रदूषित वायु के कारण प्रतिवर्ष 6 लाख लोग मृत्यु या रुग्णता के शिकार होते है, जिसकी कुल लागत राष्ट्रीय आय के 3.6 प्रतिशत के बराबर आती है। इसी संस्थान द्वारा सन 1997 के लिए अनुमान लगाया था कि वन क्षेत्र और वनों की सघनता में कमी के फलस्वरूप इमारती लकड़ी एवं अन्य उत्पादों में आई कमी, जल स्रोतों में आई गिरावट, कृषि उत्पादन में कमी, वायुमण्डल के प्रदूषण में वृद्धि आदि के रूप में होने वाली क्षति राष्ट्रीय आय के 10 प्रतिशत के बराबर थी।

संस्थान ने यह भी अनुमान लगाया था कि जलवायु परिवर्तन के कारण सन् 2010 तक भारत को होने वाली क्षति उसकी राष्ट्रीय आय के 9 से 13 प्रतिशत के बराबर रहेगी। इन सब क्षतियों को शामिल करने के बराबर रहेगी। इन सब क्षतियों को शामिल करने के लिए राष्ट्रीय आय की वर्तमान गणना प्रणाली में कोई व्यवस्था नहीं है। बल्कि कई बार तो इस क्षति के कुछ कारकों को राष्ट्रीय आय में धनात्मक योगदान के रूप में शामिल कर लिया जाता है।

उदाहरण के लिए वनों को नष्ट करने की प्रक्रिया में जो इमारती लकड़ी या अन्य प्रकार की लकड़ियों प्राप्त होती है, उसके मूल्य के बराबर की राशि उस वर्ष की राष्ट्रीय आय में शामिल कर ली जाती है। यह सब इसलिए होता है क्योंकि राष्ट्रीय आय की गणना में पर्यावरण को पहुँचने वाली क्षति का कोई लेखा जोखा नहीं रखा जाता है, बल्कि उस क्षति के प्रतिकल प्रभावों का सामना करने के लिए जो कदम उठाए जाते हैं उन्हें सकारात्मक योगदान के रूप में राष्ट्रीय आय में शामिल कर लिया जाता है। इसे इस उदाहरण से समझिए, मान लीजिए, किसी सीमेंट कारखाने से निकलने वाले धूल के कणों के कारण आसपास के गांवों के निवासी, श्वास संबंधी रोगों के शिकार होते हैं तो उनकी चिकित्सा हेतु उत्पादित दवाओं का मूल्य, डॉक्टर की फीस आदि के राष्ट्रीय आय में शामिल किए जाने से उसमें वृद्धि होगी। इससे स्पष्ट है कि हमारी राष्ट्रीय आय की गणना में पर्यावरण को पहुँच रही क्षति को शामिल नहीं किए जाने से वह गलत निष्कर्षों की और ले जाती है।

हमारे अर्थशास्त्री एवं सांख्यिकीविद राष्ट्रीय आय की गणना की इन कमियों से लंबे समय से परिचित रहे हैं। राष्ट्रीय आय की गणना में पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभावों को सर्वप्रथम 1930 की मंदी के पश्चात अमेरिकी राष्ट्रीय आय की गणना में शामिल किया गया था। हाल ही में आर्थिक निष्पादन एवं सामाजिक प्रगति रिपोर्ट जिसे प्रमुख अर्थशारिखायों जोसेफ स्टिग्लिट्स, अर्मत्य सेन, ज्यां यों फिटोसी के नाम पर स्टिग्लिट्ज–सेन–फिटोसी रिपोर्ट कहा जाता है. में राष्ट्रीय आय की गणना की वर्तमान विधि की कमियों की विस्तार से व्याख्या की गई है। इस रिपोर्ट में कहा गया है कि राष्ट्रीय आय के ऑकडों का उपयोग करने वाले हमारे नीति निर्धारक, व्यवसायी आदि उनकी इन कमियों से अवगत नहीं होते हैं। इसी वजह से हरित राष्ट्रीय आय की गणना आवश्यक हो गई है ताकि ये ऑकडे स्थिति की वास्तविकता को बेहतर ढंग से प्रदर्शित कर सकें।

हरित राष्ट्रीय आय की गणना में चार प्रकार के पर्यावरणीय प्रभावों को शामिल किया जाएगा। पर्यावरणीय एवं आर्थिक लेखा में उन सभी घटकों को शामिल किया जाएगा जिसकी अब तक उपेक्षा होती है।

हरित राष्ट्रीय आय के समंक या आंकड़े राष्ट्रीय आय के पूरक के रूप में प्रयुक्त किए जा सकेंगे। राष्ट्रीय आय के उत्पादन की प्रक्रिया में पर्यावरणय को आ रही क्षति का विवरण राज्यों से प्राप्त सूचनाओं पर आधारित होगा। यह अभी तक स्पष्ट नहीं है कि राज्यों से मंगाए गए विवरण में पर्यावरण की कौन–कौन सी क्षतियों शामिल की जाएंगी। केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन ने भारत में होने वाली पर्यावरणीय क्षति का अनुमान लगाना प्रारंभ कर दिया है। कुछ राज्यों में जैसे गोआ, कर्नाटक, तमिलनाडु और मेघालय ने कुछ मार्गदर्शी अध्ययन शुरू कर

दिए हैं। इन अध्ययनों में जनसेवकों, समाजकर्मियों व मीडिया से संबंधित लोगों को भी शामिल किया गया है।

### 3.5 सारांश–

कोज का यह प्रमेय और 1937 में उनके फर्म की प्रकृति पर छपे शोध–पत्र पर उन्हें 1991 में अर्थशास्त्र का नोबल पुरस्कार मिला। सरकारी विनिमयन के आधुनिक विश्लेषण के लिए कोज प्रमेय एक महत्वपूर्ण आधार है। 1960 के दशक के बाद से कोज प्रमेय और इसके विभिन्न व्याख्याओं, साक्ष्यों और आलोचनाओं पर काफी बड़ा साहित्य उभरकर आया है। इसका दूसरा और अधिक परिष्कृत मानक निष्कर्ष भी पर्यावरणीय अर्थशास्त्र में धर्चित है। जिसके अनुसार सरकार संस्थानों के निर्माण द्वारा, संसाधनों का आवंटन सही तरीके से कर सकती है, जिससे लेनदेन लागत को काफी कम किया जा सकता है।

### 3.6 बोध प्रश्न –

कोज की परिकल्पना को परिभाषित करें।

प्रदूषक द्वारा प्रदूषण क्षतिपूर्ति क्या कोज प्रमेय को कानून से जुड़े विवादों के समाधान हेतु प्रयोग कैसे किया जा सकता है। व्याख्या करें।

कोज प्रमेय  से आप क्या समझते हैं ।

कोज प्रमेय के अनुप्रयोगों को समझाइए।

कोज प्रमेय का पर्यावरण संरक्षण में  उपयोग की व्याख्या करें।

### 3.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें–

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र विविध आयाम अरुण कुमार सिंह
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र एम्,एल.झिंगन
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र वी.सी. सिन्हा
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र आर.एन भटाचार्या

# इकाई– 4
# भारत में पर्यावरण प्रबन्धन

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 पर्यावरण प्रबंधन
4.3 पर्यावरण प्रबंधन के महत्वपूर्ण बिंदु
4.4 पर्यावरण प्रबंधन के नैतिक पक्ष
4.5 पर्यावरण संरक्षण संबंध में उठाए गए कुछ महत्वपूर्ण कदम
4.6 वनों के विकास हेतु सुझाव
4.7 पर्यावरण प्रदूषण के प्रकार
4.8 मानव हेतु पारिस्थितिकी की आवश्यकता
4.9 राष्ट्रीय पर्यावरण नीति की आवश्यकता
4.10 पर्यावरण संरक्षण हेतु सुझाव
4.11 बोध प्रश्न
4.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

## 4.0 उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई में हम पर्यावरण प्रबंधन के बारे में जान सकेंगे
प्रस्तुत इकाई में पर्यावरण प्रबंधन के महत्वपूर्ण बिंदुओं पर चर्चा करेंगे
प्रस्तुत इकाई में भारत में पर्यावरण प्रबंधन के नैतिक पक्ष को हम जान सकेंगे
प्रस्तुत इकाई में भारत द्वारा पर्यावरण संरक्षण संबंध में उठाए गए कुछ महत्वपूर्ण कदमों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे
प्रस्तुत इकाई में वनों के विकास हेतु सुझावों की जानकारी प्राप्त करेंगे
प्रस्तुत इकाई में पर्यावरण प्रदूषण के प्रकार की जानकारी प्राप्त करेंगे
प्रस्तुत इकाई में मानव हेतु पारिस्थितिकी आवश्यकताओं की जानकारी प्राप्त करेंगे
प्रस्तुत इकाई में राष्ट्रीय पर्यावरण नीति की आवश्यकता की जानकारी प्राप्त करेंगे
प्रस्तुत इकाई में भारत में राष्ट्रीय पर्यावरण नीति एवं पर्यावरण संरक्षण हेतु सुझाव की जानकारी प्राप्त करेंगे

## 4.1 प्रस्तावना (Introduction)–

मानव एवं जीवों के चारों ओर विद्यमान आवरण जो प्रभावित करता है उसे पर्यावरण कहते हैं अतः वातावरण या पर्यावरण एक समष्टि अवधारणा है जिसकी रचना भौतिक जैविक तथा अजैविक तंत्रों के पारस्परिक क्रियाशीलता से उत्पन्न होती है तथा वर्तमान में विज्ञान और प्रौद्योगिकी तथा औद्योगिकरण के कारण मानव पर्यावरण विनाशक होता जा रहा है जिसका परिणाम पारिस्थितिक असंतुलन के रूप में उत्पन्न होता दिख रहा है जिससे पर्यावरण असंतुलन के कारण वर्तमान समय में पर्यावरण नियोजन तथा प्रबंधन अति आवश्यक होता जा रहा है पर्यावरण प्रबंधन के अंतर्गत पारिस्थितिक संतुलन, पर्यावरण स्थिरता एवं मानवीय क्रियाकलापों के बीच विशिष्ट समायोजन पर बल दिया जाता है प्राकृतिक संसाधनों अर्थात स्थान, स्थलरुद्ध जलीय भाग, जलवायु, मृदा, शैल, खनिज इत्यादि भौतिक तत्व मानव सहित संपूर्ण जैव जगत के विकास को निर्धारित करते हैं एवं पौधे, जंतु, सूक्ष्मजीव, मानव जैसे

जैविक तत्व मिलकर जैविक जगत की रचना करते हैं जिससे एक प्रकार का पर्यावरण अर्थात भौतिक एवं जैविक संकल्पना का निर्माण होता है जिसके अंतर्गत पृथ्वी के दोनों अर्थात जैविक एवं अजैविक घटकों को शामिल किया जाता है पर्यावरण के संघटको भौतिक, जैविक तथा ऊर्जा संघटक के रूप में भी समुचित उपयोग समृद्धि व उनका पुनर्चक्रण करना पर्यावरण नियोजन व प्रबंधन के लिए अति आवश्यक माना जाता है

**4.2 पर्यावरण प्रबंधन–**

मानव सभ्यता के प्रारंभ से वर्तमान तक मानव पर्यावरण के पारस्परिक संबंधों की प्रकृति व स्वरूप में निरंतर परिवर्तन हो रहे हैं जिससे कि वर्तमान समय में पर्यावरण नियोजन व प्रबंधन अति आवश्यक हो गया है क्योंकि विश्व स्तर पर समस्त जैव जगत के समक्ष पर्यावरण संकट का खतरा मडरा रहा है इस भीषण संकट को पर्यावरण नियोजन एवं प्रबंधन के द्वारा ही दूर किया जाता है तथा विकास को निरंतर बनाए रखने के लिए नवीकरणीय एवं अन्य अनवीकरणीय संसाधनों का उपयोग व अमूल्य संसाधनों के संरक्षण की आवश्यकता ने पर्यावरण प्रबंधन को अत्यंत आवश्यक एवं महत्वपूर्ण बना दिया है जिसके अंतर्गत पारिस्थितिक संतुलन पर्यावरण स्थिरता एवं मानवीय क्रियाकलापों के बीच विशिष्ट समायोजन पर बल दिया जाता है विशिष्ट समायोजन का अभिप्राय बिना पर्यावरण क्षति के मानवीय क्रियाओं द्वारा पर्यावरण से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लाभ को प्राप्त करते रहना जिससे पारिस्थितिक द्वारा मनुष्य की सामाजिक, आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति सरलता से हो तथा पर्यावरण संतुलन व उसकी गुणवत्ता निरंतर बनी रहे जिसके लिए पर्यावरण के जैविक, अजैविक संघटकों को सुरक्षित करना तथा विभिन्न प्रकार के प्रदूषण के उत्सर्जन पर नियंत्रण स्थापित करना पर्यावरणीय प्राकृतिक संसाधनों के अनियमित एवं विवेकपूर्ण दोहन को नियंत्रित करना, जैव विविधता चरण पर नियंत्रण के उपाय करना, पर्यावरणीय तत्वों की गुणवत्ता में वृद्धि करना, पर्यावरण जागरूकता व शिक्षा की संक्षिप्त व्यवस्था करना, मनुष्य में पर्यावरण संचेतना को बढ़ाना इत्यादि सुधारो की आवश्यकता है

प्राकृतिक संसाधनों की कमी हर स्तर पर निरापदता के स्थान पर असह्य प्रदूषण नगरीकरण की समस्या अपर्याप्त भोजन, अनेक प्रकार के असाध्य रोग और मशीनी दिनचर्या सभी ने मनुष्य को इस सीमा तक प्रभावित किया कि वह स्वयं पर्यावरण का दास बन गया। आज भाग्य भरोसे भविष्य की ओर भी विकृत स्थिति की सम्भावना को साथ ले यह वर्तमान व्यतीत कर रहा है। सुखमय जीवन अब उसकी एक स्वप्निल कामना ही है।तो यह स्पष्ट है कि जब हम पर्यावरण प्रबन्ध की बात करते हैं तो हमें उसे पारिस्थितिकी के परिप्रेक्ष्य में ही सोचना चाहिए। फाहीमुद्दीन अहमद ने अपने लेख Environment management में लिखा है–विश्व के विकास के लिए तकनीकी प्रगति एक राष्ट्रीय आवश्यकता है. अतः उसे रोका नहीं जाना चाहिए, आवश्यकता इस बात की है कि पर्यावरण का प्रबन्ध और उसकी योजनाएँ पारिस्थितिकी अवधारणाओं, तरीके और कार्यप्रणालियों की समझ पर आधारित हो।

इस प्रकार पर आगे चर्चा करने से पूर्व हमें यह बात स्पष्ट रूप से जाननी है कि आज मनुष्य को किन–किन स्थितियों में अपने आपको समायोजित करना पड़ रहा है।पृथ्वी और उसका सम्पूर्ण पर्यावरण उसके सामने है जिसे क्षणिक और अधिक लाभ अथवा स्वार्थ के लिए मनुष्य ने छेड़ा है।

2. मानवकृत पर्यावरण जिसे सुख–सुविधा की आपूर्ति और बढ़ती जनसख्या की वृद्धि ने जन्म दिया है।

3 इन दोनों के बीच अनचाही अनजानी अनेक समस्याएँ और विकृतियों, जो विकराल रूप धारण कर सामने खड़ी हैं।

बहुत थोड़ी सी सुख–सुविधाओं के नाम पर विरासत में मिल रहे प्राकृतिक पर्यावरण की बात तो दूर उल्टे हमें बढ़ती जनसंख्या के दुष्परिणाम, विकृत पर्यावरण, बढ़ता प्रदूषण और अनेक उत्पन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

पर्यावरण प्रबंधन की आवश्यक उपाय पर्यावरण प्रबंधन के लिए किए गए आवश्यक प्रयासों के परिणाम का निरीक्षण एवं कर्मियों में सुधार करना पर्यावरण के विभिन्न पक्षों का अध्ययन करना तथा पर्यावरण के संतुलन के लिए निरंतर अनुसंधान को बढ़ावा देना पारिस्थितिक संतुलन एवं पर्यावरण क्षरण को नियंत्रित करना अतः प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना पर्यावरणीय नियोजन की अनिवार्य शर्तों में से एक है जिसके अंतर्गत संसाधनों की गुणवत्ता में वृद्धि अन्य विकल्पों की तलाश सामान्य वितरण द्वारा अधिक विकास कार्यों को पूर्ण करना सम्मिलित किया जाता है वास्तव में विकास एवं संरक्षण दोनों एक दूसरे के पूरक के रूप में माने जाते हैं क्योंकि प्राकृतिक संसाधनों का समुचित उपयोग समृद्धि व उनका पुनर्चक्रण करना पर्यावरण नियोजन व प्रबंधन के लिए अति आवश्यक माना जाता है इस प्रक्रिया में पर्यावरण पर मानवीय आर्थिक क्रियाकलापों का दबाव कम रहता है तथा क्षेत्रीय स्तर पर पारिस्थितिक संतुलन बना रहता है जो कि वर्तमान में नितांत आवश्यक है जिससे कि प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग होने के साथ–साथ क्षेत्रीय आवश्यकताओं को पूर्ण करने के साथ–साथ मानव पर्यावरण के पारस्परिक अंतर संबंधों में सामंजस्य स्थापित करना संभव हो सकता है

### 4.3 पर्यावरण प्रबंधन के महत्वपूर्ण बिंदु–

पर्यावरण प्रबंधन के अंतर्गत कुछ विशेष बिंदुओं को ध्यान में रखा जाता है जो पारिस्थितिक तंत्र को नियंत्रित व संतुलित करते हैं जिनका प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से मानव की सामाजिक आर्थिक विकास की क्रियाओं पर पड़ता है सामान्य पर्यावरण प्रबंधन के कुछ बिंदु निम्नलिखित है

पर्यावरण संरक्षण दिशा तथा पर्यावरण चेतना
पर्यावरण शिक्षा, पर्यावरण प्रशिक्षण एवं पर्यावरण शोध
प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन
पर्यावरण प्रभावों का मूल्यांकन
पर्यावरणीय प्रदूषण का नियंत्रण तकनीकी परियोजनाओं एवं उत्पादन प्रबंधन का पर्यावरण पर प्रभाव
पर्यावरण संरक्षण के लिए पर्याप्त संस्थाओं एवं संसाधनों की उपलब्धता

### 4.4 भारत में पर्यावरण प्रबंधन के नैतिक पक्ष–

वस्तुतः मानव जीवन का विकास जन्म से लेकर मृत्यु तक पर्यावरण की सीमाओं में ही प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण संसाधनों का प्रयोग करके होता है जिससे कि मानव का यह नैतिक कर्तव्य बनता है की प्रकृति तथा प्राकृतिक संसाधनों सहित पर्यावरण की सुरक्षा करें तथा पर्यावरण के प्रति सकारात्मक भाव रखे जिससे कि पर्यावरण संरक्षण करने एवं पर्यावरण प्रदूषण को रोकने का नैतिक दायित्व का आभास मनुष्य को होता रहेगा।

जिसके लिए मनुष्यों को निम्नलिखित कार्य करने चाहिए जैसे की प्रकृति प्रदत्त अमूल्य संसाधनों का विवेक पूर्ण एवं युक्त संगत उपयोग करना चाहिए जिससे कि भविष्य में उनके उपयोग किया जा सके

बिजली अर्थात ऊर्जा की बचत करने का प्रयास जिससे कि बिजली उत्पादन से उत्पन्न होने वाले जल, वायु प्रदूषण में कमी लाई जा सके जिससे कि ऊर्जा संरक्षण के साथ–साथ पर्यावरण को को भी संरक्षित किया जा सकेद्य भूमि जल तथा वायु प्रदूषण में वृद्धि करने वाले प्लास्टिक से बनी वस्तुओं का उपयोग न्यूनतम हो तथा पेड़, पौधों की कटाई कम करना तथा

अधिक से अधिक खाली पड़ी भूमि पर वृक्षारोपण करना चाहिए जिससे कि जलवायु तथा मृदा क्षरण को नियंत्रित किया जा सके तथा प्राकृतिक संसाधनों का पुनःउपयोग या पुनर्चक्रण को बढ़ावा देनाद्य

कृषि क्षेत्र में रासायनिक कीटनाशकों एवं उर्वरकों के स्थान पर जैविक कीटनाशकों एवं उर्वरकों का प्रयोग करना तथा जनसंख्या में हो रही लगातार वृद्धि को नियंत्रित करना तथा जनसंख्या को पर्यावरण के प्रति जागरूक करना तथा पर्यावरण उपयोगिता को समझना जिससे कि लोगों के अंदर पर्यावरण के प्रति कृतज्ञता का भाव उत्पन्न हो सकेद्य

## 4.5 भारत द्वारा पर्यावरण संरक्षण के संबंध में उठाएंगे कुछ महत्वपूर्ण कदम

भारत सदैव पर्यावरण विकास के मुद्दों में गंभीर रहा है इन मुद्दों पर अधिकारिक के कदम उठाने के लिए वर्ष 1976 में संविधान में अनुच्छेद 48(**क**) को सम्मिलित किया गया जिसमें यह कहा गया था कि सरकार पर्यावरण को सुरक्षित रखने तथा उसमें सुधार करने के लिए वनों एवं वन्यजीवों को सुरक्षित रखने के लिए वचनबद्ध है जिसके लिए वनों तथा वन्य जीवों को संविधान में राज्य सूची से स्थानांतरण करके समवर्ती सूची में शामिल किया गया प्रारंभ में वर्ष 1980 में पर्यावरण विभाग का गठन किया गया था जिसे बाद में वर्ष 1985 में पर्यावरण एवं वन मंत्रालय का गठन किया गया पर्यावरण मंत्रालय के गठन के पश्चात पर्यावरण सुरक्षा अधिनियम वर्ष 1986 पारित किया गया जिसमें पर्यावरण मंत्रालय द्वारा जारी पर्यावरण की दशा पर रिपोर्ट में भारत के लिए पांच प्रमुख चुनौतियों को स्पष्ट किया गया।

- जलवायु परिवर्तन
- खाद्य सुरक्षा
- जल सुरक्षा
- ऊर्जा सुरक्षा

नगरीकरण प्रबंधन मंत्रालय ने पर्यावरण संबंधी सभी नियमों के क्रियान्वयन के लिए केंद्र स्तर पर केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, राज्य स्तर पर विभिन्न राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड तथा केंद्र शासित प्रदूषण नियंत्रण समितियां को अधिकृत नियमों के रूप में अधिकार प्रदान किया जिनका कार्य पर्यावरण की सुरक्षा करना तथा इसमें सुधार करना केवल सरकारी निकायों का दायित्व ही नहीं है यह गैर सरकारी निकायों, संगठनों और यहां तक की आम लोगों का भी दायित्व है।

## 4.6 वनों के विकास हेतु सुझाव–

आखिर वन कैसे सुरक्षित रहे? यह कठिन और सामयिक प्रश्न है।

वनों के महत्व, उनकी वर्तमान स्थिति तथा वन क्षेत्रों, की कमी से हो सकने वाले अनेक पर्यावरणीय दुष्परिणाम है। अतः इस आधार पर यह कहना अतिशयोक्ति नहीं कि वन हमारे पोषक हैं, जीवनदाता है। या अति संक्षिप्त में हम यह कहें कि वन हमारा जीवन हैं तो भी यह बहुत उचित व उपयुक्त कथन होगा।

सामाजिक वानिकी कार्यक्रम के अन्तर्गत वन लगाने की नई दिशा मिली। जनता की सक्रिय साझेदारी का उपयोग हुआ। वर्ष 1980–81 से प्रारम्भ हुए इस कार्यक्रम से लगभग 1.7 एम.एच. वन क्षेत्र प्रतिवर्ष बढ़े लेकिन लगातार लकड़ी के उपयोग ने इस योजना से देश को उतना लाभ नहीं दिया जितनी की आशा और अपेक्षा थी। वर्ष 1968–87 से एक वन आन्दोलन चला और प्रतिवर्ष 5 एम.एच. भूमि को वन क्षेत्र में शामिल करने का अभियान शुरू हुआ। राज्य सरकारों ने स्वयंसेवी संस्थाओं के सहयोग से वृक्षारोपण के लिए जन जागरण किया। उससे

कुछ सफलता भी मिली, पर पारम्परिक तरीके के इस देश में लकड़ी का विशेष और अधिक उपयोग (1) जलाऊ ईंधन तथा (2) शवदाह ने सब लक्ष्य अपूर्ण कर दिये।

1. राष्ट्रीय वन नीति परिप्रेक्ष्य में सामाजिक वानिकी जैसे कार्यक्रमों को पूर्ण निष्ठा से चलाया जाय जिससे वन क्षेत्र में वृद्धि हो।

2 जितने भी वृक्ष लगे हैं. उन्हें बचावें। काटने से रोकना बहुत आवश्यक है।

3 विविध ऐसे लकडी के उपयोग जहाँ वैकल्पिक व्यवस्था हो सकती है, तुरन्त रोके जायें। इमारती सामान, फर्नीचर आदि में प्लास्टिक का उपयोग किया जा सकता है।

4 एक बहुत बड़ा लकड़ी का भाग देश में जलाऊ लकड़ी के रूप में प्रयोग होता है। वैकल्पिक स्रोत के रूप में बायो गैस तथा सौर–कुकर को अपनाया जाय।

5. शव दाह में सुधारे गये उपकरणों का उपयोगि किया जाय। इसमें कम से कम 20 प्रतिशत लकड़ी कम व्यय होती है।

6. स्कूल, घर, पंचायत घर, चिकित्सालय, बस स्टैन्ड, एअरपोर्ट आदि अनेक स्थानों पर सघन वृक्षारोपण हो और उन पौधों की ठीक से देखाभाल हो जिससे वह पनप सकें।

7 स्कूलों में नर्सरीज बनाई जायें और फिर उन पौधों का उचित उपयोग कर अधिक से अधिक हरियाली के क्षेत्र विकसित किये जाये।

8. वृक्षों का महत्व विद्यार्थियों तथा जनसाधारण को समझाया जाय।

### 4.7 पर्यावरणीय प्रदूषण के प्रकार

पिछले कुछ वर्षों में देश में चारोंओर प्रगति हुई। नये–नये उद्योग खुले, आवागमन के साधन बढे, मनोरंजन के रूप बदले, जनसंख्या वृद्धि के फलस्वरूप अधिक अन्न उपजाने के प्रयास में उत्पादन बढ़ा और भी न जाने कितनी रहने सहने की सुविधाओं में वृद्धि हुई, लेकिन इन सबका एक अत्यन्त भयानक परिणाम प्रदूषण हुआ। वायु, जल, भूमि, भोजन सभी में प्रदूषण होने लगा। स्थिति दिन–प्रतिदिन इतनी बिगड़ने लगी कि स्वच्छता की बात अब आश्चर्य सी लगने लगी है। इस सन्दर्भ में कुछ उपाय और सुझाव यहाँ दिये जा रहे है–

| क्र. सं. | प्रदूषण के प्रकार | प्रदूषण के कारण | नियन्त्रण हेतु उपाय एवं सुझाव |
|---|---|---|---|
| 1. | वायु प्रदूषण | परम्परागत जलाऊ ईंधन | बायोगैस व सौर ऊर्जा को लोकप्रिय बनाया जाये। |
| 2. | | सीवरेज व घरेलू पानी तथा अपशिष्ट<br><br>औद्योगिक प्रदूषण<br><br>वाहन प्रदूषण | सीवरेज जल तथा सीवरेज हेतु उपचार उपकरण (Treatment Plant) लगाये जायें। इस पानी को पीने के पानी के स्रोतों से दूर रखें। गंदगी बस्ती से बहुत बाहर रहे। (ब) घरेलू जल को किचन गार्डन में प्रयोग करें। अपशिष्ट का उपयोग खाद बनाने में कर सकते हैं।<br>(अ) प्रदूषण नियन्त्रण उपकरण आवश्यक हों। (ब) विभिन्न प्रकार की फैक्ट्रियों अथवा उद्योगों से निकलने वाले उत्सर्जित पदार्थों के मानक भारत सरकार द्वारा प्रसारित है. उनका कठोरता से पालन किया जाये। |

| | | | |
|---|---|---|---|
| | | | (स) सुरक्षा व्यवस्था आश्वस्त की जाए, लोगों को शिक्षित किया जाए।<br>.(अ) इंजन की सही ट्यूनिंग हो।<br>(ब) प्रस्तावित भार से अधिक भार न लादा जाये।<br>(स) पेट्रोल व डीजल में मिलावट को रोका जाय। |
| 2. | जल प्रदूषण | . नगरीय गंदगी, औद्योगिक 1. अवशिष्ट, डिटरजेन्ट का उपयोग, पानी के साथ बहकर आने वाले कीट रसायन, शव–प्रवाह, उद्योगों का गर्म जल आदि। | पीने के पानी के स्रोतों की रक्षा व बचाव हेतु उपाय किये जायें, जल उपचार संयंत्रों का उपयोग किया जाये, स्वीकार्य मानक से अधिक तत्त्वों की मौजूदगी पर सरकार द्वारा उपचार व्यवस्था हेतु प्रयास हों, स्वयं पानी के स्रोतों को दूषित न करें। |
| 3. | भूमि प्रदूषण | कीटनाशी दवाइयों तथा 1 रासायनिक खादों का प्रयोग। | इनका आवश्यकतानुसार एवं नियंत्रित उपयोग ही किया जाये। |
| 4. | ध्वनि प्रदूषण | आवागमन के नवीनतम साधन, मनोरंजन के नये–नये 1. उपकरण, बढ़ती भीड़–भाड में तेजी से और जोर से बोलने की आदत। | (अ) धीमे बोलने की आदत डालें। स्कूल और घर में टीवी, रेडियो तथा अन्य मनोरंजन के साधनों को धीमी आवाज से बजावे। (ब) बहुत तीव्र ध्वनि से दूर रहने का प्रयास करें। |
| 5. | जनसख्या वृद्धि से प्रदूषण | शहरीकरण, अधिक जनसंख्या तथा उपभोग में लाने वाली 1 वस्तुओं का अभाव। स्वच्छता की आदतों का न होना। | कृत्रिम अभाव के दुष्परिणाम से बचें, अपनी आदतों में स्वच्छता लावे तथा स्वयं प्रदूषण न फैलायें और न कारण बनें। कोई अन्य भी गंदगी करता है तो उसे रोकें। परिवार कल्याण कार्यक्रम अपनायें। |

**पर्यावरणीय कानूनों का उपयोग**

प्रदूषण को रोकने हेतु अब अनेक कानून उपलब्ध है. उनका सामयिक एवं उचित उपयोग वांछनीय है।

**4.8 मानव हेतु पारिस्थितिकी की आवश्यकता–**

पर्यावरण तथा उसके विभिन घटकों और उससे सम्बन्धित अनेक प्रकरणों की पिछले 20 वर्षों में इतनी व्याख्या हुई है कि उसने मनुष्य को भयभीत कर दिया है और हर स्तर पर वह अपने जीने के लिए प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति तथा साथ ही समस्याओं के निदान हेतु चिन्तित हो उठा है। आपके अन्दर में डर और आशंका को निकालने हेतु कुछ बातों का उल्लेख करना बहुत आवश्यक है।

1.ऑक्सीजन की 30 प्रतिशत मात्रा ही पृथ्वी की वनस्पति से प्राप्त होती है, शेष 70 प्रतिशत का उत्पादन महासमुद्र और समुद्रों में उगी वनस्पति से होता है। अतः हमें ऑक्सीजन सप्लाई के भण्डार के रूप में समुद्र, वन तथा अन्य जमीनी वनस्पति को देखना होगा। अभी हम जो ऑक्सीजन का उपयोग कर रहे हैं, उसका जाने कितना गुना ऑक्सीजन को हमने छुआ ही नहीं है। अतः अनेक सदियों तक प्राण वायु की कमी की कोई समस्या नहीं है।

जल, चार्ल्स एच साउथविक के अनुसार, हमें वाष्पीकरण तथा निर्जलीकरण से 37,000 घन किमी प्रतिवर्ष प्राप्त हो रहा है। इसमें से वर्तमान में केवल 20,000 घन किमी पानी का उपयोग हम कर पा रहे हैं। निकट भविष्य में पानी की कोई कमी होगी ऐसी कोई सम्भावना नहीं है। इसके बाद भी हमारे पास न जाने कितना पीने योग्य पानी ध्रुवों पर बर्फ के रूप में तथा भूगर्भ जल के रूप में उपलब्ध है। वर्तमान में समस्या अभावग्रस्त स्थानों पर जल उपलब्धि कराने की व्यवस्था की ही है।

भोजन सामग्री, पूरे विश्व में जितने खाद्यान्न की उपज प्रतिवर्ष होती है यह (1 किग्रा प्रति व्यक्ति प्रतिदिन) यथेष्ट है। जनसंख्या वृद्धि के साथ अधिक अन्न उपजाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, दूध उत्पाद, फल व सब्जियों तथा माँसाहारी भोजन प्रचुर मात्रा में सदैव उपलब्ध रहेगा।

आवास भूमि की कोई कमी नहीं है। आज समस्या तो यह है कि कहीं आबादी बहुत अधिक है और कहीं निर्जन है। आवश्यकता पड़ने पर निर्जन स्थानों का उपयोग होगा। ऊर्जा के पारस्परिक स्रोतों में निरन्तर कमी आ रही है। तेल, कोयला, पैट्रोल लगभग समाप्त हो चले हैं। लकड़ी का उपयोग नियंत्रित करना पड़ेगा। अतः नये वैकल्पिक स्रोत खोजने होंगे। बायो गैस और ऊर्जा को घरेलू उपयोग तथा विभिन्न अन्य प्रकार के उत्पादित विद्युत को उद्योगों आदि में लेना अपेक्षित रहेगा। अणु शक्ति का उपयोग हेतु प्रयास जारी है।

6. प्रदूषण हेतु सभी सजग है, हर स्तर पर नियन्त्रण उपकरण लगेंगे, अतः यह कोई समस्या नहीं रहेगी। निश्चित ही कोई डरने की आवश्यकता नहीं है। भविष्य हेतु आपको साधन और सुविधाएँ उपलब्ध होगी। प्रत्येक मनुष्य से यही अपेक्षा है कि वह साधन और संसाधनों का उचित एवं बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग करें। भावी पीढी का सुख उनके कार्यकलापों पर निर्भर है।

### 4.9 राष्ट्रीय पर्यावरण नीति की आवश्यकता–

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मानव पर्यावरण पर आयोजित स्टॉकहोम–1972 अन्तर्राष्ट्रीय कानफ्रेन्स के निर्णयों के परिप्रेक्ष्य में सभी देशों को अपने–अपने स्तर पर राष्ट्रीय पर्यावरण नीति बनानी थी। इसी क्रम में भारत में कान्फ्रेन्स के तत्काल बाद नेशनल कमेटी ऑन एनवायरनमेन्टल प्लानिंग एण्ड कोर्डीनेशन का गठन केन्द्रीय सरकार द्वारा किया गया। इसकी अभिशंसा पर ही केन्द्र तथा राज्यों में प्रदूषण निवारण और नियन्त्रण मण्डल बने। 1980 में तिवारी कमेटी का गठन हुआ। जिसकी अभिशंसाओं पर स्वतंत्र रूप से केन्द्र तथा प्रदेशो में पर्यावरण विभागों की स्थापना हुई तथा पर्यावरण की गुणवत्ता तथा उसके संरक्षण हेतु कुछ मौलिक अभिशंसाएँ हुई लेकिन अन्तिम रूप से पर्यावरण नीति को अभी तक भी कोई निश्चित् रूप नहीं दिया जा सका।

पिछले वर्षों में राष्ट्रीय नीति निर्धारण समिति तथा पर्यावरण विशेषज्ञ ने राष्ट्रीय पर्यावरणीय नीति पर कुछ ड्राफ्ट्स तैयार किये हैं। ऐसा ही एक अधिकृत ड्राफ्ट सन् 1981 में पर्यावरण विभाग भारत सरकार के मार्फत डा.बी.पी. पाल द्वारा प्रस्तुत किया गया था जिससे उन्होंने उन निम्न बिन्दुओं को समेकित किया था जिन पर राष्ट्रीय पर्यावरण नीति में महती आवश्यकता है। जिसके महत्वपूर्ण बिन्दु निम्नवत् है।

1.समुद्री पर्यावरण तथा समुद्री प्रदूषण।

2. खेतों की ऊपरी सतह की उपजाऊ मिट्टी का बह जाना।
3.कृषि उत्पादन के परिप्रेक्ष्य में भूमि उपयोग समस्या।
4. वनों का निरन्तर विनाश।
5.विद्युत उत्पादन, सिंचाई, औद्योगीकरण, परिवहन आदि से सम्बन्धित विकासात्मक प्रयोजनाएँ जल विद्युत की सम्भावनाएँ।
6. जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण
7. वन्य जीव संरक्षण।
8. ग्रामीण तथा शहरी आवास समस्याएँ, आर्थिक विपन्नता के कारण कतिपय समस्याएँ।
9. कानून निर्माण तथा उनका क्रियान्वयन।
उपर्युक्त बिन्दुओं को ड्राफ्ट सम्मिलित करना आवश्यक है, लेकिन अभी तक भी कोई अधिकृत दस्तावेज तैयार नहीं हो सका। भारत सरकार द्वारा यदा–कदा आवश्यकतानुसार कुछ विशेष बिन्दुओं पर मार्गदर्शन दे दिया जाता है और उसी के आधार पर पर्यावरण की उस समस्या का समाधान समझ लिया जाता है। उदाहरण के तौर पर आपत्तिजनक वस्तुओं की सूची पर्यावरण विभाग (भारत सरकार) द्वारा प्रसारित की गई तथा उसके सन्दर्भ में निर्देश भी प्रसारित कर दिये गये।
पर्यावरण के क्षेत्र में प्रदूषण नियन्त्रण के सन्दर्भ में आज वस्तुस्थिति यह है कि पर्यावरण संरक्षण तथा पर्यावरण प्रदूषण के रोकने हेतु निम्नलिखित कानूनों का सहारा लिया जा रहा है
1 जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1974
2 वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981 तथा उसका शंसोधन अधिनियम,1987
3 वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972
4 वन (सरक्षण) अधिनियम, 1980
5 पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 आदि।
पर्यावरण विभाग भारत सरकार पर्यावरण क्षेत्र के लिए देश की शीर्षस्थ संस्था है, लेकिन विडम्बना यह है कि यह एक ऐसी प्रशासनिक इकाई के रूप में काम करती है जिसका कार्य परामर्शदात्री संस्था के रूप में ही है। न तो यह सीधे किसी दोषी व्यक्ति को दण्डित कर सकती है और न ही अपनी नीति को कानूनी रूप से लागू करा सकती है। इस संस्था की सफलता केवल प्रदूषण नियन्त्रण मण्डल के ऊपर अवलम्बित है जो भी दोषी को दोषी तो ठहरा सकती है, लेकिन दण्ड विधान इतने लचीले है कि दोषी व्यक्ति को कोई सजा मिल नहीं पाती। यदि किसी प्रकार से अधिक दिलचस्पी भी ली लाये तो इसमें इतना अधिक समय लग जाता है कि समस्या की उतनी औचित्यता ही नहीं रह पाती है जितनी कि अपेक्षित है।

### 4.10 पर्यावरण संरक्षण सुझाव प्रस्तुत है–

### (1) पर्यावरण प्रदूषण के सन्दर्भ में–

समय के साथ–साथ अनेक मुद्दे पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में जुड़े हैं, जैसे–1. ध्वनि प्रदूषण, 2. वाहन प्रदूषण, 3. कीटनाशी दवाइयों का उपयोग, 4. आपत्तिजनक वस्तुएँ, 5. ऊर्जा का दुरुपयोग, 6. घरेलू तथा औद्योगिक ठोस अपशिष्ट. 7. जल का दुरुपयोग, 8. वन्य जीवों का अवैध व्यापार, 9 क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स का उपयोग आदि। इनको भी पर्यावरण नीति में सम्मिलित करना चाहिए।

### (2) पर्यावरण नीति के सन्दर्भ में–

इस सन्दर्भ में कुछ बिन्दु आगे दिये जा रहे हैं– दस्तावेज तैयार नहीं हो सका। भारत सरकार द्वारा यदा–कदा आवश्यकतानुसार कुछ विशेष बिन्दुओं पर मार्गदर्शन दे दिया जाता है और उसी के आधार पर पर्यावरण की उस समस्या का समाधान समझ लिया जाता है।

उदाहरण के तौर पर आपत्तिजनक वस्तुओं की सूची पर्यावरण विभाग (भारत सरकार) द्वारा प्रसारित की गई तथा उसके सन्दर्भ में निर्देश भी प्रसारित कर दिये गये।
पर्यावरण के क्षेत्र में प्रदूषण नियन्त्रण के सन्दर्भ में आज वस्तुस्थिति यह है कि पर्यावरण संरक्षण तथा पर्यावरण प्रदूषण के रोकने हेतु निम्नलिखित कानूनों का सहारा लिया जा रहा है
1 जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1974
2 वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981 तथा उसका संशोधन अधिनियम,1987
3 वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972
4 वन (सरक्षण) अधिनियम, 1980
5 पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 आदि।
राष्ट्रीय वन्य जीव कार्य योजना, प्रदूषण अल्पीकरण एवं राष्ट्रीय संचय नीति पर नीतिगत अभिकथन, पर्यावरण अभिकथन आदि दस्तावेज जारी किये गये हैं। समयानुक्रम में विशेषतः कई परिवर्तन, आर्थिक, राजनीतिक और पर्यावरण क्षेत्र में हुये हैं। इन घटनाओं ने यह प्रदर्शित किया है कि विद्यमान वन नीति कई अपेक्षाओं को पूरा करने के लिये अपर्याप्त है अतएव 1988 में नई राष्ट्रीय वन नीत की घोषणा की गयी। पुनः 2006 में संशोधित राष्ट्रीय वन नीति की घोषणा हो चुकी है।

प्रदूषण से बचने के लिये न केवल सरकार को बल्कि समाज सेवी संस्थाओं तथा आम व्यक्तियों को भी प्रयास करने होगें। संरक्षण के प्रति जाग्रति उत्पन्न करनी होगी, प्रदूषण की रोकथाम के लिये हमें समाज के साथ जुड़ना होगा तथा पर्यावरण संरक्षण के लिए हमें चहुँमुखी प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। अब हम सबका प्रयास यह होना चाहिये कि पर्यावरण को स्वच्छ व प्रदूषण मुक्त बनाने की दिशा में कदम से कदम मिलाकर आगे बढ़ें। यदि जनसंख्या वृद्धि के प्रति लोगों को सचेत न किया गया तो हमारे प्रयास निष्फल हो जायेंगे। अतः वक्त रहते पर्यावरण से सम्बन्धित समस्याओं के प्रति लोगों को सचेत न किया तो हमारे प्रयास निष्फल हो जायेंगे। अतः वक्त रहते पर्यावरण से सम्बन्धित समस्याओं के प्रति लोगों में जागरूकता पैदा करनी होगी अन्यथा हमें अपना अस्तित्व ही खोना पड़ सकता है। इस दिशा में पर्यावरण संरक्षण व प्रबन्धन के द्वारा ही हम प्रदूषण मुक्त समाज की स्थापना कर सकेंगे।

## 4.11 बोध प्रश्न –

पर्यावरण प्रबंधन से आप क्या समझते हैं
पर्यावरण प्रबंधन हेतु महत्वपूर्ण बिंदुओं की समीक्षा कीजिए
पर्यावरण प्रबंधन के नैतिक पक्ष की विवेचना कीजिए
पर्यावरण संरक्षण संबंध में अपने सुझाव दीजिए
पर्यावरण प्रदूषण के प्रकारों का वर्णन कीजिए
मानव हेतु पारिस्थितिकी की आवश्यकताओं का उल्लेख कीजिए
राष्ट्रीय पर्यावरण नीति की आवश्यकता क्यों है कारण बताइए

## 4.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें–

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र विविध आयाम अरुण कुमार सिंह
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र एम्,एल.झिंगन
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र वी.सी. सिन्हा
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र आर.एन भटाचार्या

# इकाई–05

# भारत में पर्यावरण संरक्षण हेतु कानून, अध्यादेश एवं नियामक

## इकाई की रुपरेखा


5.0 उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 पर्यावरणीय उल्लंघन के सम्बन्ध में लागू विशिष्ट विधियाँ
5.3 जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम की मुख्य विशेषताएँ
5.4 जल प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण, पर्यवेक्षण एजेन्सियाँ
5.5 राज्य बोर्डों के कार्य और शक्तियाँ
5.6 वायु प्रदूषण निवारण प्रशासक
5.7 ध्वनि प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण
5.8 वन एवं वन्य जीव संरक्षण
5.9 राष्ट्रीय वन नीति, 1952
5.10 विनिर्दिष्ट पादपों का संरक्षण
5.11 पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धी सामान्य विधियाँ
5.12 पर्यावरण प्रदूषण का निवारण, नियन्त्रण एवं उपशमन
5.13 परिसंकटमय पदार्थों के सन्दर्भ में पूर्ण दायित्व अधिरोपित करने वाले अधिनियम
5.14 सारांश
5.15 बोध प्रश्न
5.16 उपयोगी पुस्तके


## 5.0 उद्देश्य

- प्रस्तुत इकाई में पर्यावरणीय उल्लंघन के सम्बन्ध में लागू विशिष्ट विधियाँ के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रस्तुत इकाई में जल प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण, पर्यवेक्षण एजेन्सियाँ से भी अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम से अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई वायु प्रदूषण निवारण प्रशासक के बारे में जानेंगे।
- प्रस्तुत इकाई में ध्वनि प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण से अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में पर्यावरण प्रदूषण का निवारण, नियन्त्रण एवं उपशमन से अवगत होंगे।

## 5.1 प्रस्तावना

दुनिया के सबसे अधिक आबादी वाले और तेजी से विकास करने वाले देशों में से एक भारत अपने विविध परिदृश्यों, बढ़ती औद्योगिक गतिविधियों और बढ़ते शहरीकरण के कारण गंभीर पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना कर रहा है। अपने प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा और सतत विकास सुनिश्चित करने की महत्वपूर्ण आवश्यकता को पहचानते हुए, भारत ने पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्य से एक मजबूत कानूनी ढांचा स्थापित किया है। पर्यावरण शासन के लिए देश का दृष्टिकोण बहुआयामी है, जिसमें पर्यावरण संरक्षण और प्रदूषण नियंत्रण के विभिन्न पहलुओं को संबोधित करने के लिए डिजाइन किए गए कानूनों, अध्यादेशों और विनियमों की एक विस्तृत श्रृंखला शामिल है। यह विधायी ढांचा न केवल औद्योगिक और विकासात्मक गतिविधियों के पर्यावरणीय प्रभावों के प्रबंधन के लिए बल्कि भारत की समृद्ध जैव विविधता को संरक्षित करने और अपने नागरिकों के स्वास्थ्य और कल्याण को सुनिश्चित करने के लिए भी आवश्यक है। इस ढांचे का केंद्र पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 है, जो भारत के पर्यावरण कानून की आधारशिला के रूप में कार्य करता है। यह अधिनियम वायु और जल गुणवत्ता, अपशिष्ट प्रबंधन, वन्यजीव संरक्षण और वन संरक्षण को कवर करने वाले विनियमों की एक श्रृंखला के लिए आधार प्रदान करता है। प्रत्येक विनियमन विशिष्ट पर्यावरणीय मुद्दों को संबोधित करता है, जैसे वायु और जल प्रदूषण को नियंत्रित करना, खतरनाक अपशिष्ट का प्रबंधन करना और वन्यजीवों और प्राकृतिक आवासों का संरक्षण करना। भारत के पर्यावरण कानून अंतरराष्ट्रीय पर्यावरण समझौतों और संधियों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता से भी प्रभावित हैं, जिन्हें राष्ट्रीय नीतियों और प्रथाओं में एकीकृत किया गया है। पर्यावरणीय चुनौतियों की गतिशील प्रकृति कानूनी ढांचे में निरंतर अद्यतन की आवश्यकता है, जो देश की उभरती प्राथमिकताओं और उभरती पर्यावरणीय चिंताओं के प्रति प्रतिक्रियाओं को दर्शाता है।

पर्यावरण प्रदूषण को रोकने हेतु अनेकों कानून उपलब्ध है. जिनका सामयिक एवं उचित उपयोग वांछनीय है। जिनमें जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1974 तथा उसका संशोधन अधिनियम, 1978 वायु प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981 तथा उसका संशोधन अधिनियम 1981 वन (संरक्षण) अधिनियम 1980 तथा पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम 1986 आदि। तथा विद्वान न्यायाधीश भारतीय संविधान के कुछ अनुच्छेद (21, 48 ए तथा 51 ए (जी) आदि का सहारा लेकर पर्यावरण को प्रदूषण से रोकने का प्रयास कर सकते हैं। पर्यावरण विभाग (भारत सरकार) पर्यावरण के क्षेत्र में देश की शीर्षस्थ संस्था है। जो प्रदूषण नियंत्रण बोर्डस के समन्वय से दोषी व्यक्तियों तथा संस्थान के मालिकों को प्रदूषण के लिए उत्तरदायी ठहरा कर सजा निर्धारित कर सकती है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के आह्वान पर सभी देशों को मानव पर्यावरण पर आयोजित 1972 में स्टॉकहोम में हुए अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में लिए निर्णय के अनुसार भारत ने नेशनल कमेटी ऑन एनवायरनमेण्टल प्लानिंग एण्ड कोर्डनिशन का गठन केन्द्रीय सरकार द्वारा किया गया है। जिसकी अनुशंसा पर प्रदूषण निवारण और नियंत्रण मण्डल बने जो पर्यावरण की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए पर्यावरण नीति बना कर जल, वायु, मृदा, औद्योगिक तथा कृषि उत्पादन के परिप्रेक्ष्य में होने वाले प्रदूषणों पर राष्ट्रीय नीति बनाकर कार्य कर रही है। फिर भी इस दिशा में गहन मथन एवं सकारात्मक प्रयास की आवश्यकता है।

## 5.2 पर्यावरणीय उल्लंघन के सम्बन्ध में लागू विशिष्ट विधियाँ

### 1. जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1974

भारत, जो कभी जल संसाधन के मामले में समृद्ध था, शहरीकरण, औद्योगीकरण और जनसंख्या वृद्धि के कारण बढ़ती मांग का सामना कर रहा है। अपशिष्ट जल प्रवाह के कारण पानी की गुणवत्ता खराब हो जाती है। 1960 में, केंद्र सरकार ने NET (प्रदूषण निवारण और नियंत्रण) विधेयक के माध्यम से जल प्रदूषण को संबोधित किया। यह विधेयक 1970 में राज्यसभा में पेश किया गया और 1972 में सदन में पारित हुआ। इसे 1974 में संसद में पेश किया गया और 23 मार्च, 1974 को राष्ट्रपति के हस्ताक्षर प्राप्त करने के बाद यह एक अधिनियम बन गया। इस विधेयक का उद्देश्य जल प्रदूषण को संबोधित करना और जल की गुणवत्ता में सुधार करना था।

**अधिनियम का उद्देश्य**

इस अधिनियम के मुख्य उद्देश्य हैं–

- जल प्रदूषण एवं नियन्त्रण और जल की स्वास्थ्यप्रदता बनाये रखने या उसे पूर्व स्थिति प्रदान करना,
- जल प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण हेतु केन्द्रीय और राज्य बोडों की स्थापना करना,
- जल प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण से सम्बन्धित विषयों हेतु बोर्डों की शक्तियाँ और कृत्य प्रदान करना
- अधिनियम के प्रावधानों के उल्लंघन के लिए दण्ड का उपबन्ध करना
- बोंर्ड़ो को प्रदूषण की मात्रा का आकलन करने, मानक निर्धारित करने और अपराध या भूल स्थापित करने हेतु सक्षम बनाने के लिए केन्द्रीय एवं राज्य जल परीक्षण प्रयोगशाओं की स्थापना करना।

अधिनियम का आवृत्त होना एवं क्षेत्र विस्तार यह अधिनियम मार्च 23, 1974 से प्रवृत्त हो गया। इसमें 1978 में कतिपय संशोधन किए गये। सन 1988 में इसे पुनरीक्षित किया गया और बोडों को अतिरिक्त शक्तियों प्रदान की गयीं। उत्तर प्रदेश में यह 3 फरवरी, 1975 को अधिसूचना के दिन से प्रवृत्त हो गया।

## 5.3 जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम की मुख्य विशेषताएँ

1. यह अधिनियम एक सामर्थ्यकारी विधि है जिसका उद्देश्य जल प्रदूषण का निवारण एवं नियन्त्रण करना है और साथ ही साथ जल की स्वास्थ्यप्रदता या गुणवत्ता को बनाये रखना अथवा पूर्वावस्था में लाना है।

2 यह अधिनियम भारतीय पर्यावरणीय विधि के क्षेत्र में प्रथम व्यापक प्रयास है जिसमें प्रदूषण की विस्तृत शब्दावली में परिभाषा की गयी है। प्रदूषण से जल के संदूषण अथवा जल के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों में हास है जो विभिन्न कारणों से उत्पन्न होकर लोक स्वास्थ्य अथवा सभी जीव–जन्तुओं के लिए हानिकारक है।

3. इसमें झरने, जल स्रोत (चाहे प्रवाहित हो अथवा कुछ समय के लिए सूख गये हो) अन्देर्शीय जल, भूमिगत जल, समुद्र या ज्वारीय जल सम्मिलित हैं।

4. अधिनियम में दिये गये उद्देश्यों को पूरा करने के लिए केन्द्रीय बोडों, राज्य बोडों और संयुक्त बोर्डों की स्थापना की गयी है।

5. केन्द्रीय बोर्ड केन्द्र शासित राज्य में राज्य बोर्डों की भांति कार्य करता है।

6. बोर्ड झरनों, कुओं, मल, व्यापार बहिःस्राव के जल के नमूनों की जाँच हेतु प्रयोगशाओं को स्थापित करने अथवा मान्यता देने के लिए अधिकृत हैं।

7. जल प्रदूषण एवं नियन्त्रण हेतु व्यापक योजना दी गई है जो अनुमति प्रणाली और सहमति प्रक्रिया पर आधरित है।

8. राज्य बोर्ड द्वारा निर्धारित मानक से ज्यादा विषैले अथवा प्रदूषक तत्वों को झरनों, कुओं, मल–नल आदि में छोड़ना निषिद्ध है और इसलिए अपराध है।
9. उद्योग लगाने के पूर्व राज्य बोर्ड की सहमति आवश्यक है जो उचित जांच–पड़ताल एवं सन्तुष्टि पर दी जायेंगी। यह सशर्त हो सकती है और उतनी ही अवधि तक वैध होगी जब तक के लिए दी गयी हैं।
10. जानबूझकर अथवा इच्छापूर्वक सहमति पाने के लिए मिथ्या बयान, 3 माह के कारावास अथवा 10 हजार के अर्थदण्ड अथवा दोनों से दण्डनीय बनाया गया है।
11. सन् 1988 में किये गये संशोधन द्वारा केन्द्र और राज्य बोडौं की शक्तियों में वृद्धि की गयी है और नागरिक मुकदमा का उपलबन्ध किया गया है। इससे अधिनियम की प्रवर्तनीयता ज्यादा प्रभावकारी बन गयी है।

## 5.4 जल प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण, पर्यवेक्षण एजेन्सियाँ

जल प्रदूषण निवारण और नियन्त्रण हेतु परामर्श देने तथा पर्यवेक्षण हेतु विभिन्न बोडौं की स्थापना का प्रावधान है।

### क. केन्द्रीय बोर्ड

केंद्र सरकार द्वारा राज्य राजपत्र अधिसूचना के माध्यम से नियुक्त केंद्रीय बोर्ड का नाम 1988 में केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड रखा गया। इससे पहले, यह जल प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड था। बोर्ड वायु प्रदूषण नियंत्रण, पर्यावरण संरक्षण और जल प्रदूषण रोकथाम पर ध्यान केंद्रित करता है, केंद्रीय बोर्ड केंद्र सरकार द्वारा राज्यों के विभिन्न क्षेत्रों में नदियों और कुओं की सफाई को बढ़ावा देने के लिए नियुक्त एक निकाय है। इसके पांच प्रकार के सदस्य हैंरू केंद्र सरकार के प्रतिनिधि, राज्य बोर्डों के प्रतिनिधि, गैर–सरकारी सदस्य और कंपनियों और निगमों के प्रतिनिधि। अध्यक्ष को पूर्णकालिक नियुक्त किया जाता है और केंद्र सरकार द्वारा नामित किया जाता है। केंद्रीय बोर्ड का मुख्य कार्य राज्यों के विभिन्न क्षेत्रों में नदियों और कुओं की सफाई को बढ़ावा देना है। यह जल प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण मामलों पर केंद्र सरकार को सलाह दे सकता है, राज्य बोर्ड की गतिविधियों का समन्वय कर सकता है, तकनीकी सहायता और मार्गदर्शन प्रदान कर सकता है, जल प्रदूषण की समस्याओं से संबंधित जांच और अनुसंधान कर सकता है और उन्हें लागू कर सकता है, जल प्रदूषण की रोकथाम के कार्यक्रमों में लगे व्यक्तियों के लिए प्रशिक्षण की योजना बना सकता है और उनका आयोजन कर सकता है, और जनसंपर्क के माध्यम से व्यापक कार्यक्रम तैयार कर सकता है। केंद्रीय बोर्ड धारा 18 की उपधारा (2) के तहत किए गए आदेश में निर्दिष्ट राज्य बोर्ड के कार्य भी कर सकता है। यह जल प्रदूषण से संबंधित तकनीकी और सांख्यिकीय डेटा एकत्र, संकलित और प्रकाशित कर सकता है और इसके प्रभावी रोकथाम और नियंत्रण के लिए तैयार किए गए उपायों को प्रकाशित कर सकता है, सीवेज और व्यापार अपशिष्टों के उपचार और निपटान से संबंधित मैनुअल, कोड या मार्गदर्शिका तैयार कर सकता है, संबंधित राज्य सरकारों से धाराओं या कुओं के लिए मानक निर्धारित, संशोधित या रद्द कर सकता है, जल प्रदूषण की रोकथाम, नियंत्रण या कमी के लिए एक राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम की योजना बना सकता है और उसे क्रियान्वित कर सकता है और अन्य निर्धारित कार्य कर सकता है। बोर्ड इस धारा के तहत अपने कार्यों को कुशलतापूर्वक निष्पादित करने के लिए एक या अधिक प्रयोगशालाओं की स्थापना या मान्यता दे सकता है, जिसमें किसी भी धारा या कुएं से पानी के नमूनों या सीवेज या व्यापार अपशिष्ट के नमूनों का विश्लेषण शामिल है।

**ख. राज्य बोर्डों का गठन–**

राज्य बोर्ड का गठन राज्य सरकार द्वारा राजपत्र में अधिसूचना के माध्यम से किया जाता है। 1988 में, पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 के अनुरूप राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड का नाम बदल दिया गया। बोर्ड का गठन निम्नलिखित तरीके से किया जाता है:

राज्य सरकार बोर्ड के अध्यक्ष की नियुक्ति करती है, जो पूर्णकालिक या अंशकालिक हो सकता है। बोर्ड सरकार का प्रतिनिधित्व करने के लिए अधिकतम पाँच प्रतिनिधियों को नामित करता है, पाँच स्थानीय अधिकारियों से, तीन गैर–आधिकारिक सदस्यों से, और दो राज्य सरकार के स्वामित्व, नियंत्रण और प्रबंधन वाली कंपनियों या निगमों से। बोर्ड कृषि, मत्स्य पालन, उद्योग, व्यापार या अन्य हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए तीन सदस्यों को भी नामित करता है। बोर्ड के एक सदस्य सचिव को राज्य सरकार द्वारा नियुक्त किया जाता है, जिसके पास वैज्ञानिक, इंजीनियरिंग या प्रबंधकीय क्षेत्रों में योग्यता हो, और प्रदूषण नियंत्रण मामलों में ज्ञान और अनुभव हो। बोर्ड की संरचना राज्य सरकार की राय से निर्धारित होती है।

**5.5 राज्य बोर्डों के कार्य और शक्तियाँ–**

राज्य बोर्ड राज्य में नदियों और कुओं में जल प्रदूषण को रोकने, नियंत्रित करने या कम करने के लिए एक व्यापक कार्यक्रम की योजना बनाने और उसे क्रियान्वित करने के लिए जिम्मेदार है। यह जल प्रदूषण के मामलों पर राज्य सरकार को सलाह देता है और जल प्रदूषण से संबंधित जानकारी एकत्र करता है और उसका प्रसार करता है। बोर्ड जल प्रदूषण की समस्याओं पर जांच और शोध को भी बढ़ावा देता है और इन कार्यक्रमों में शामिल लोगों के लिए प्रशिक्षण आयोजित करने के लिए केंद्रीय बोर्ड के साथ काम करता है। राज्य बोर्ड उपचार, शुद्धिकरण, कार्यों और निपटान विधियों के लिए सीवेज या व्यापार अपशिष्टों, कार्यों और संयंत्रों का निरीक्षण करता है। वे सहमति आवश्यकताओं से संबंधित योजनाओं, विनिर्देशों और डेटा की भी समीक्षा करते हैं। बोर्ड विभिन्न क्षेत्रों की मिट्टी, जलवायु और जल निकायों, विशेष रूप से नदियों और कुओं में जल प्रवाह की प्रचलित प्रकृति को ध्यान में रखते हुए सीवेज और व्यापार अपशिष्टों के उपचार के किफायती और विश्वसनीय तरीके तैयार करता है। वे कृषि में सीवेज और उपयुक्त अपशिष्टों का उपयोग करने के तरीके विकसित करते हैं और भूमि पर कुशल निपटान विधियाँ विकसित करते हैं जो वर्ष के अधिकांश समय में खराब धारा प्रवाह के कारण न्यूनतम कमजोर पड़ने तक नहीं पहुँच पाती हैं। बोर्ड अच्छे मौसम के दौरान किसी नदी में न्यूनतम तनुकरण की आवश्यकता का भी अध्ययन करता है और नदियों या कुओं में अपशिष्टों के निर्वहन की रोकथाम, नियंत्रण या कमी के लिए आदेश बनाता है, संशोधित करता है या वापस लेता है। यह मल या अपशिष्टों के निपटान के लिए मानक स्थापित करता है और मासिक और अन्य अपशिष्टों के लिए मानक निर्धारित करता है, संशोधित करता है या लागू करता है। राज्य बोर्ड नदियों या नालों के प्रदूषण का कारण बनने वाले उद्योगों के स्थानांतरण पर राज्य सरकार को सलाह देता है और केंद्रीय बोर्ड या राज्य सरकार द्वारा निर्धारित अन्य कार्य करता है। बोर्ड जल नमूनों के कुशल पालन के लिए प्रयोगशालाओं की स्थापना या मान्यता भी दे सकता है।

**ग संयुक्त बोर्ड (धारा–15)**

जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम 1974 के अध्याय 3 की धारा 13. 14 एवं 15 में संयुक्त बोर्ड सम्बन्धी प्रावधान दिए गए हैं। संयुक्त बोर्ड राज्यों अथवा केन्द्र एवं राज्यों के बीच

करार के आधार पर गठित होता है। गठित करने के आधार पर इन्हें दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है–

1. राज्यों का संयुक्त बोर्ड
2. केन्द्र–राज्य संयुक्त बोर्ड

जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1974 के सहायक नियम अधिनियम की धारा 63 में प्रदत्त नियम बनाने की शक्ति का प्रयोग कर केन्द्रीय सरकार ने अधिनियम के सहायक के रूप में दो नियमों को पारित किया है–

1. जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) नियमावली, 1975–यह 27 फरवरी 1975 से प्रवृत्त है।
2. जल प्रदूषण (कार्य सम्पादन प्रक्रिया) नियमावली, 1975– यह 10 जनवरी 1975 से प्रवृत्त है।

2. वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981

वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए भारत में 29 मार्च 1981 को वायु (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1981 पारित किया गया था। इस अधिनियम का उद्देश्य वायु प्रदूषण को रोकना, नियंत्रित करना और कम करना, इसके कार्यान्वयन के लिए केंद्रीय और राज्य बोर्डों की स्थापना करना, इन बोर्डों को सशक्त बनाना और उनके कार्यों का निर्धारण करना है। इसे 29 मार्च 1981 को राष्ट्रपति की स्वीकृति मिली और यह 16 मई 1981 से लागू है। यह अधिनियम पूरे भारत में प्रभावी है और इससे संबंधित मामलों को संबोधित करता है।

**संशोधन अधिनियम–**

वायु (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1987 को 1987 के अधिनियम संख्या 47 द्वारा संशोधित किया गया था। संशोधन राज्य सरकारों को क्षेत्रों को वायु प्रदूषण नियंत्रण क्षेत्र घोषित करने की शक्ति प्रदान करता है, जिससे प्रदूषकों को उत्सर्जन जारी करने से रोका जा सके। इन क्षेत्रों में औद्योगिक संचालकों को राज्य बोर्ड से अनुमति आदेश प्राप्त करना होगा। मजिस्ट्रेट के पास प्रदूषकों को उत्सर्जन जारी करने से रोकने की शक्ति है, जबकि केंद्रीय और राज्य बोर्ड उद्योगों को निर्देश जारी कर सकते हैं। गैर–अनुपालन से उद्योग बंद हो सकते हैं या पानी की आपूर्ति में कटौती हो सकती है। गैर–अनुपालन को प्रदूषकों के लिए महंगा बनाने के लिए दंड बढ़ाए गए हैं। नागरिक प्रवर्तन के लिए बोर्ड पर मुकदमा कर सकते हैं और अपने मामले का समर्थन करने के लिए उत्सर्जन डेटा मांग सकते हैं।

## 5.6 वायु प्रदूषण निवारण प्रशासक

वायु अधिनियम, 1991, जल प्रदूषण अधिनियम के तहत गठित केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को वायु प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण का कार्य सौंपता है। जिन राज्यों में जल (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1974 (1974 का 6) लागू है, उस राज्य के लिए राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को धारा 5 के तहत वायु प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण के लिए राज्य बोर्ड माना जाता है। राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड इस अधिनियम के तहत वायु प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण के लिए राज्य बोर्ड की शक्तियों और कार्यों का प्रयोग करता है। किसी भी केंद्र शासित प्रदेश में कोई राज्य बोर्ड गठित नहीं है, और केंद्रीय बोर्ड की शक्तियों और कार्यों का प्रयोग और निष्पादन इस अधिनियम के तहत उसके द्वारा किया जाता है। केंद्रीय बोर्ड किसी भी केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में इस धारा के तहत अपनी शक्तियों को किसी निर्दिष्ट व्यक्ति को सौंप सकता है। सभी शक्तियों और कार्यों का प्रभाव निम्नलिखित में से कोई भी कार्य करने का होता है। वायु (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) नियम, 1982, 18 नवंबर, 1982 से लागू एक अधीनस्थ कानून है।

## 5.7 ध्वनि प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण–

भारत में ध्वनि प्रदूषण को वायु प्रदूषण में ही सम्मिलित माना गया है। वायु प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) आधिनियम 1981 में सन् 1987 में सन् 1997 में संशोधन किया गया है। ध्वनि प्रदूषण का वायु प्रदूषण का घटक मानकर वायु प्रदूषण की परिभाषा में इसे जोड़ा गया है।

**1. ध्वनि प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण सम्बन्धी उपबन्ध**

**क.राज्य स्तरीय उपबन्ध**

राज्य सरकारों ने ध्वनि प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए कई उपाय लागू किए हैं, जैसे उत्तर प्रदेश नगरपालिका अधिनियम, 1916, जो लाउडस्पीकरों को नियंत्रित करने की अनुमति देता है। उत्तर प्रदेश मोटर वाहन नियम, 1940 के अनुसार मोटर वाहनों को शोर उत्पादन को कम करने के लिए डिजाइन और रखरखाव किया जाना चाहिए। मध्य प्रदेश संगीत और शोर नियंत्रण अधिनियम, 1951, आधी रात या सुबह 4 बजे निजी और सार्वजनिक स्थानों पर तेज आवाज में संगीत बजाने पर प्रतिबंध लगाता है। बॉम्बे पुलिस अधिनियम, 1951, और अजमेर ध्वनि और एम्पलीफायर नियंत्रण अधिनियम 1953 और बिहार लाउडस्पीकरों के उपयोग और बजाने पर नियंत्रण अधिनियम, 1955 का उद्देश्य भी लाउडस्पीकरों के माध्यम से ध्वनि प्रदूषण को रोकना है। पंजाब उपकरण (शोर नियंत्रण) अधिनियम, 1956, सामुदायिक स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए लाउडस्पीकरों और अन्य उपकरणों के उपयोग को नियंत्रित करता है, रात 10 बजे से सुबह 6 बजे के बीच उनके उपयोग पर प्रतिबंध लगाता है।

**ख. राष्ट्रीय विधियों के अन्तर्गत ध्वनि प्रदूषण का नियन्त्रण–**

भारत में ध्वनि प्रदूषण को विभिन्न राष्ट्रीय कानूनों और विनियमों के माध्यम से प्रबंधित किया जाता है। भारतीय दंड संहिता (IPC), 1860, धारा 268 और 290 पर ध्यान केंद्रित करते हुए, ध्वनि प्रदूषण के कारण सार्वजनिक शांति भंग के लिए दंड प्रदान करती है। राष्ट्रीय प्रदूषण नियंत्रण अधिनियम, 1974 (जल अधिनियम) मुख्य रूप से जल प्रदूषण पर केंद्रित है, लेकिन यह जल संसाधनों की गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले ध्वनि प्रदूषण पर भी लागू हो सकता है। वायु (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1981 का उद्देश्य वायु प्रदूषण को नियंत्रित करना है, लेकिन इसमें ध्वनि प्रदूषण से संबंधित प्रावधान भी शामिल हैं। ध्वनि प्रदूषण (विनियमन और नियंत्रण) नियम, 2000, ध्वनि प्रदूषण के स्तर के लिए मानक सीमाएँ निर्धारित करते हैं और विभिन्न क्षेत्रों में ध्वनि प्रदूषण की निगरानी के लिए नियम स्थापित करते हैं। मुख्य प्रावधानों में आवासीय, वाणिज्यिक, औद्योगिक और संवेदनशील क्षेत्रों में शोर सीमाएँ, ध्वनि प्रदूषण के स्रोत और शिकायतों को दर्ज करने और हल करने के लिए स्थानीय प्राधिकरण की जिम्मेदारी शामिल है। स्थानीय प्राधिकरण और बोर्ड ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण के लिए स्थानीय नियम और आदेश जारी करते हैं, जो अक्सर समारोहों, लाउडस्पीकरों और निर्माण कार्यों से संबंधित होते हैं। समय की पाबंदियाँ लगाई जाती हैं, खासकर रात में या पूजा के दौरान। स्वास्थ्य और स्वच्छता सेवाएँ ध्वनि प्रदूषण के कारण होने वाले स्वास्थ्य प्रभावों, जैसे कान की बीमारियों और मानसिक स्वास्थ्य प्रभावों को रोकने में महत्वपूर्ण हैं। इन कानूनों और विनियमों के माध्यम से एक समन्वित और व्यापक दृष्टिकोण अपनाया गया है, जिसमें कानूनी प्रावधान, स्थानीय प्राधिकरण की जिम्मेदारियाँ और स्वास्थ्य प्रबंधन शामिल हैं।
ध्वनि प्रदूषण (विनियमन और नियन्त्रण) नियमावली, 2000 के सुसंगत प्रावधन में निम्नलिखित है–

नियम ३– यह विभिन्न क्षेत्रों हेतु ध्वनि के लिए वायु गुणवत्ता मानक निर्धारित है।
नियमावली के साथ संलग्न अनुसूची निम्नवत् है
ध्वनि के सम्बन्ध में व्यापक वायु गुणवत्ता मानक

| क्षेत्र संकेतांक क्षेत्र प्रखण्ड की श्रेणी | 1.डेसीबल (A) Leq में सीमा दिवस काल | रात्रिकाल |
|---|---|---|
| औद्योगिक क्षेत्र | 75 | 70 |
| वाणिज्यिक क्षेत्र | 65 | 55 |
| आवासीय क्षेत्र | 55 | 45 |
| शान्ति क्षेत्र | 50 | 40 |

दिन और रात के समय की परिभाषा के साथ–साथ शांति क्षेत्र की परिभाषा भी दी गई है, जिसे अस्पतालों, शैक्षणिक संस्थानों और अदालतों से 100 मीटर की दूरी और मिश्रित श्रेणी के क्षेत्रों के रूप में परिभाषित किया गया है, जिन्हें सक्षम प्राधिकारी द्वारा वर्गीकृत किया जा सकता है।

नियम 5– लाडस्पीकरों और लोक सम्बोधन प्रणाली के प्रयोग पर निर्बन्धन

लाउडस्पीकर या सार्वजनिक संबोधन प्रणालियों का उपयोग प्राधिकरण से लिखित अनुमति लेकर ही किया जाना चाहिए तथा इनका उपयोग रात्रि 10 बजे से सुबह 6 बजे के बीच, सभागारों, सम्मेलन कक्षों, सामुदायिक हॉलों और बैंक्वेट हॉलों को छोड़कर, नहीं किया जाना चाहिए।

नियम 7– प्राधिकारी को परिवाद दायर करना–

ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण टोर्ट कानून का एक हिस्सा है और इसे कुछ मामलों में लागू किया जा सकता है, जैसे कि जब कोई व्यक्ति किसी क्षेत्र या ब्लॉक के लिए निर्धारित परिवेशी ध्वनि मानक से अधिक लाउडस्पीकर के स्तर के बारे में शिकायत करता है। राज्य विधानसभाओं ने लाइसेंसिंग नीतियों के माध्यम से लाउडस्पीकरों के उपयोग को नियंत्रित करने के लिए नियम और विनियम बनाए हैं। वायु (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1981 के तहत प्रस्तावित औद्योगिक संयंत्र को पंजीकृत करने से पहले राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की सहमति की आवश्यकता होती है। ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण को सिविल कानून में भी लागू किया जा सकता है, जैसे कि जब ध्वनि प्रदूषण के कारण सिविल टोर्ट होता है या जब प्रदूषण सार्वजनिक उपद्रव का कारण बनता है।

## 5.8 वन एवं वन्य जीव संरक्षण–

### भारत में वन संरक्षण

भारत प्राचीन काल से ही वनों का संरक्षण करता रहा है, जिसके लिए वन अधिनियम, 1865 जैसे उपाय अपनाए गए हैं, जिसमें राज्य की संप्रभुता की घोषणा की गई है, तथा वन नीति, 1894, जिसमें लोगों के कल्याण, जलवायु संरक्षण तथा उनकी आवश्यकताओं को पूरा करने को प्राथमिकता दी गई है। वन अधिनियम, 1927 ने वन संरक्षण का पहला व्यापक प्रयास चिह्नित किया।

### क. भारतीय वन अधिनियम, 1927

भारतीय वन अधिनियम, 1927, राज्यों को सार्वजनिक और निजी वनों पर अधिकार क्षेत्र प्रदान करता है, जिसका उद्देश्य उन्हें संरक्षित और सुरक्षित करना है। यह राज्यों को वन भूमि या बंजर भूमि को आरक्षित वन घोषित करने की अनुमति देता है, जिससे उन्हें सभी उद्देश्यों पर नियंत्रण मिलता है। वनों को चार प्रकारों में वर्गीकृत किया गया हैरू आरक्षित वन, ग्रामीण वन, संरक्षित वन और गैर–सरकारी निजी वन, जो उनकी सुरक्षा और सुरक्षा सुनिश्चित करते हैं।

**ख. वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980–**

मानव पर्यावरण सम्मेलन 1972 को संबोधित करने के लिए भारत में राष्ट्रीय वन नीति और राष्ट्रीय पर्यावरण नीति को अपनाया गया था। संविधान के 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा वनों को राज्य सूची से समवर्ती सूची में स्थानांतरित किया गया था। 1980 में वन (संरक्षण) अधिनियम पारित किया गया था, जिसे राज्य सरकार की शक्तियों और आदिवासी समुदाय के अधिकारों को विनियमित करने के लिए 1988 में संशोधित किया गया था। अधिनियम में रेखांकित किया गया है कि राज्य सरकार या अन्य प्राधिकारी केंद्र सरकार की पूर्व अनुमति के बिना आदेश पारित नहीं कर सकते हैं, जैसे आरक्षित वनों को संरक्षित करना या गैर–वन उद्देश्यों के लिए वन भूमि की अनुमति देना। हालांकि, अधिनियम के तहत जारी दिशानिर्देशों का ठीक से पालन नहीं किया जा रहा था, जिसके कारण 1988 में संशोधन किया गया। संशोधित प्रावधानों के अनुसार केंद्र सरकार को आरक्षित वनों को आरक्षित करने और निजी संस्थाओं या संगठनों को वन भूमि को पट्टे पर देने की अनुमति देना आवश्यक है।

**ग. राष्ट्रीय वन नीति–**

स्वातन्त्रयोत्तर काल में वन नीति के दो आयाम अपेक्षित हैं– प्रथम, पर्यावरणीय एवं द्वितीय वन प्रान्त में रहने वाले लोगों के जीवनोपयोगी अधिकारों का संरक्षण। सन् 1950 में वन महोत्सव मनाकर वनों को मानव कल्याण में भूमिका के प्रति जागृति उत्पन्न करने का प्रयास किया गया।

## 5.9 राष्ट्रीय वन नीति, 1952

भारत की राष्ट्रीय वन नीति 1952 में उचित वन प्रबंधन सुनिश्चित करने और देश को अधिकतम लाभ प्रदान करने के लिए शुरू की गई थी। इस नीति का उद्देश्य कुल भौगोलिक क्षेत्र के 30% हिस्से को वनों से आच्छादित करना, वनों का वर्गीकरण करना, राष्ट्रीय हितों की रक्षा करना और अनियंत्रित कृषि विस्तार को नियंत्रित करना था। अपर्याप्त वन प्रबंधन और सामाजिक संघर्ष के कारण 1988 में एक नई नीति लागू की गई। इस नीति का उद्देश्य पर्यावरणीय स्थिरता बनाए रखना, प्राकृतिक विरासत को संरक्षित करना, भूमि कटाव और जलभराव को रोकना, वन क्षेत्र को बढ़ाना, ग्रामीण और आदिवासी आबादी की जरूरतों को पूरा करना, वन उत्पादकता को बढ़ाना और वन उत्पादों के कुशल उपयोग को बढ़ावा देना था। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए महिलाओं की भागीदारी के साथ एक जन आंदोलन भी शुरू किया गया था।

घ. वन्य जीवन संरक्षण

वन्य जीव संरक्षण के अन्तर्गत तीन प्रमुख केन्द्रीय अधिनियम हैं–

**1. वन्य पक्षी एवं पशु (संरक्षण) अधिनियम, 1912–**

इस अधिनियम का उद्देश्य लाइसेंस के माध्यम से शिकार को विनियमित करके तथा बंद शिकार के मौसम को निर्दिष्ट करके कुछ जंगली पक्षियों और जानवरों की रक्षा और संरक्षण करना है। इसका दायरा सीमित है और यह मुख्य रूप से शिकार से संबंधित है, न कि जंगली जानवरों या वन्यजीव उत्पादों के व्यापार से। यह अधिनियम पहली बार जंगली अवस्था में पक्षियों और जानवरों पर लागू होता है, जिससे उनकी सुरक्षा और संरक्षण सुनिश्चित होता है। अनुसूची में निम्न वर्णन हैं–

1. सारस (इनेजंतक)य कलहंस या बतख (duck] floricam), वन मुर्गी (junglefowl). तीतर (partidge), छोटी मुर्गी (pea fowl), तीतर पक्षी (pegion), लवा, बटेर (quail) Sand& grouse (painted snipet) (spur fowl) (wood cock) (herons) (egrets) (rollers-kingfishers)

2. मृग, गधे, जंगली सांड़, भैसे, हिरण, बारहसिंघा, बकरे, खरगोश, गैण्डा और भेडें। इसके पश्चात् राज्य सरकार अनुसूची में वर्णित वन्य पक्षियों एवं पशुओं के अतिरिक्त अन्य किसी किस्म के वन्य पक्षियों एवं पशुओं पर इसे लागू कर सकती है। ऐसा करने के लिए आवश्यक होग कि राज्य सरकारी गजट में इस आशय की अधिसूचना जारी करे। यह भी शर्त होगी कि राज्य सरकार के विचार में ऐसे अन्य वन्य पक्षियों एवं पशुओं का संरक्षण एवं अनुरक्षण वांछनीय हो।

अपराध का संज्ञान– अधिनियम के अनुसार, न्यायालयों को अपने विरुद्ध अपराधों की सुनवाई के लिए कम से कम एक प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट या द्वितीय श्रेणी मजिस्ट्रेट की आवश्यकता होती है। धारा 4 में दो प्रकार की सजाएँ निर्धारित की गई हैं: पहला अपराध और उसके बाद के अपराध। पहले अपराध करने वालों को 50 रुपये का जुर्माना लगाया जा सकता है, जबकि बाद के अपराधों के लिए दोषी पाए जाने वालों को एक महीने की कैद या 100 रुपये का जुर्माना या दोनों का सामना करना पड़ सकता है। बार–बार दोषी पाए जाने पर कारावास या दोनों हो सकते हैं। दंड अपराध की गंभीरता पर आधारित होते हैं।

**2. पशुओं के प्रति क्रूरता निवारण अधिनियम, 1960**

1962 में स्थापित भारतीय पशु कल्याण बोर्ड का उद्देश्य पशु कल्याण को बढ़ावा देना और पशुओं को अनावश्यक दर्द या पीड़ा से बचाना है। इसके 28 सदस्यीय बोर्ड में संसद, मानवतावादी, सरकारी प्रतिनिधि और पशु क्रूरता निवारण समितियों सहित विभिन्न क्षेत्रों के सदस्य शामिल हैं। बोर्ड पशु क्रूरता निवारण अधिनियम, 1960 को लागू करता है, सरकारी संशोधनों पर सलाह देता है, पशु क्रूरता निवारण समितियों (सीपीए) और पशु कल्याण संगठनों को मान्यता देता है, और पशु आश्रयों, पशु चिकित्सा देखभाल और प्रजनन नियंत्रण कार्यक्रमों जैसी विशिष्ट योजनाओं के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करता है। यह लोगों को जानवरों के उचित उपचार के बारे में शिक्षित करता है और अनावश्यक पीड़ा के खिलाफ जनमत को प्रोत्साहित करता है। बोर्ड के काम का मार्गदर्शन श्रीमती रुक्मिणी देवी अरुंडेल ने किया, जिन्होंने 1986 में अपनी मृत्यु तक 20 वर्षों तक इसके काम का नेतृत्व किया।

**पशुओं के सम्बन्ध में रक्षा ध्यान का कर्त्तव्य**

पशु कल्याण अधिनियम की धारा 3 में पशुओं को रखने वाले व्यक्तियों के कर्तव्यों का वर्णन किया गया है, जिसमें कहा गया है कि उन्हें पशुओं की भलाई सुनिश्चित करनी चाहिए और अनावश्यक दर्द या पीड़ा को रोकना चाहिए। सुप्रीम कोर्ट ने बीमारी के कारण पशुओं की मृत्यु को रोकने के लिए प्लास्टिक की थैलियों के उचित निपटान का निर्देश दिया है। पशु क्रूरता निवारण अधिनियम की धारा 11 में इस पर विस्तृत जानकारी दी गई है। यदि किसी पशु मालिक को धारा 11 के तहत अपराध का दोषी ठहराया जाता है, तो न्यायालय पशु को नष्ट करने का निर्देश दे सकता है, तथा यह कार्य किसी योग्य व्यक्ति को सौंप सकता है। व्यक्ति को पशु को नष्ट करना चाहिए या अनावश्यक पीड़ा के बिना उसे नष्ट करवाना चाहिए। पशु परीक्षण अवैध नहीं है, लेकिन यह मनमाना नहीं होना चाहिए। धारा 22 प्रदर्शन करने वाले पशुओं के प्रदर्शन और प्रशिक्षण को प्रतिबंधित करती है, जिसमें कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति पशु क्रूरता निवारण अधिनियम, 1960 के भाग V के तहत पंजीकृत होने तक किसी भी पशु का प्रदर्शन या प्रशिक्षण नहीं कर सकता है, या राजपत्र में केंद्र सरकार द्वारा निर्दिष्ट किसी भी पशु का प्रदर्शन नहीं कर सकता है।

**3. वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 एवं वन्य जीव (संरक्षण) संशोधन अधिनियम, 2002**

वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 और इसका संशोधन अधिनियम, 2002 भारत में वन्यजीव संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण कानून हैं। इस अधिनियम का उद्देश्य जंगली जानवरों और उनके

आवासों की रक्षा करना, अवैध शिकार, व्यापार और शिकार को नियंत्रित करना है। यह प्रजातियों को तीन श्रेणियों में विभाजित करता है, जिसमें अनुसूची I की प्रजातियों को सबसे अधिक सुरक्षा प्राप्त है। यह अधिनियम राष्ट्रीय उद्यानों और वन्यजीव अभयारण्यों की स्थापना करता है, अवैध शिकार और व्यापार के लिए दंड निर्धारित करता है, और वन्यजीव संरक्षण के लिए विभिन्न प्राधिकरणों की नियुक्ति करता है। 2002 के संशोधनों ने कानून को और अधिक प्रभावी बना दिया और नए खतरों का सामना करने के लिए अद्यतन किया। प्रमुख संशोधनों में नई प्रजातियाँ, अवैध शिकार और व्यापार के लिए दंड में वृद्धि और सजा प्रक्रियाओं को मजबूत करना शामिल था। अधिनियम ने वन्यजीवों की सुरक्षा के लिए CITES जैसे अंतर्राष्ट्रीय समझौतों और प्रोटोकॉल को मान्यता दी। आवश्यक प्रावधानों में अवैध गतिविधियों को नियंत्रित करने के लिए निगरानी और समीक्षा उपाय और वन्यजीव संरक्षण में स्थानीय समुदायों को शामिल करने के लिए प्रोत्साहन शामिल हैं। दोनों अधिनियमों का उद्देश्य पर्यावरण संतुलन बनाए रखने और मानवीय गतिविधियों से बचने के लिए वन्यजीव संरक्षण सुनिश्चित करना है।

## 5.10 विनिर्दिष्ट पादपों का संरक्षण

विनिर्दिष्ट पादपों के चुनने, उखाड़ने इत्यादि का निषेध (धारा 17–ए)– कोई भी व्यक्ति–

1. किसी विनिर्दिष्ट क्षेत्र और किसी वन्य भूमि से किसी विनिर्दिष्ट पौधे को जानबूझकर नहीं चुनेगा, नहीं उखाड़ेगा, विनष्ट नहीं करेगा, क्षति नहीं पहुँचायेगा, कब्जा नहीं लेगा और संग्रह नहीं करेगा।

2. किसी निविर्दिष्ट जीवित अथवा मृत पौधे अथवा उसके भाग अथवा उससे व्युत्पन्न वस्तु या कब्जा, विक्रय, विक्रय हेतु प्रस्ताव अथवा दान द्वारा अथवा अन्य तरीके से स्थानान्तरण अथवा परिवहन नहीं करेगा।

### संरक्षित क्षेत्र

राज्य सरकार किसी क्षेत्र को आरक्षित वनों या प्रादेशिक जल क्षेत्रों को छोड़कर अधिसूचना द्वारा अभयारण्य घोषित कर सकती है। यह घोषणा वन्यजीवों और उनके पर्यावरण के संरक्षण, प्रसार और विकास के लिए की जाती है, और इसमें क्षेत्र का स्थान और सीमा निर्दिष्ट करनी चाहिए, यह सुनिश्चित करते हुए कि यह पर्याप्त पारिस्थितिक, वनस्पति, जीव, स्थलीय, प्राकृतिक या प्राणिविज्ञान महत्व का है।

### राष्ट्रीय उद्यान–

राज्य सरकार किसी क्षेत्र को, चाहे वह अभयारण्य के अंतर्गत हो या न हो, राष्ट्रीय उद्यान घोषित कर सकती है, यदि उसे अपने पारिस्थितिकी, वनस्पति, जीव या जैविक महत्व के कारण वन्यजीव या पर्यावरण के संरक्षण, प्रसार या विकास के लिए आवश्यक समझा जाए।

### 5. राष्ट्रीय चीता संरक्षण प्राधिकरण

देश में लुप्तप्राय चीतों के संरक्षण के लिए 1973 में चीता योजना शुरू की गई थी। यह 9 टाइगर रिजर्व से बढ़कर 28 हो गई है। कानूनी ताकत सुनिश्चित करने के लिए, वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 को 2006 में संशोधित किया गया था। यह अध्याय राष्ट्रीय चीता संरक्षण प्राधिकरण, परिचालन स्थिति, बाघ संरक्षण फाउंडेशन और टाइगर रिजर्व को परिभाषित करता है। वन्यजीव (संरक्षण) संशोधन अधिनियम, 2006 संरक्षण प्रयासों को और मजबूत करता है।

## 5.11 पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धी सामान्य विधियाँ–

### 1. पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986

पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986, स्टॉकहोम में 1972 में मानव पर्यावरण पर विश्व सम्मेलन से प्रेरित था, जिसमें पर्यावरण संरक्षण के लिए वैश्विक चिंता पर प्रकाश डाला गया था। भारत

में अधिनियमित यह अधिनियम, मानव पर्यावरण को बेहतर बनाने और उसकी रक्षा करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों और राष्ट्रीय प्रतिबद्धता का परिणाम है, जिसका मानव कल्याण और आर्थिक विकास पर प्रभाव पड़ता है। भारत के प्रधानमंत्री के नेतृत्व में भारतीय प्रतिनिधिमंडल ने इस सम्मेलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

**अधिनियम के उद्देश्य**

1 पर्यावरण का संरक्षण एवं सुधार करना,

2. मानवीय पर्यावरण पर स्टाकहोम सम्मेलन में लिए गये निर्णयों को कार्यान्वित करना,

3. मानव प्राणियों, जीवों, पादपों एवं सम्पत्तियों को परिसंकट से बचाना,

4 पर्यावरण संरक्षण हेतु सामान्य एवं व्यापक विधि अधिनियमित करनाः

5. विद्यमान विधियों के अधीन विभिन्न अभिकरणों के कार्यकलापों के बीच समन्वय करना तथा पर्यावरण संरक्षण हेतु प्राधिकारियों का सृजन करना,

6 मानवीय पर्यावरण सुरक्षा एवं स्वास्थ्य को खतरा उत्पन्न करने वालों के लिए निरोधात्मक दण्ड की व्यवस्था करना।

**पर्यावरण–** पर्यावरण के अन्तर्गत जल, हवा और भूमि तथा मानव प्राणी, अन्य जीवित प्राणी, पौधे, सूक्ष्म जीवाणु तथा सम्पत्ति और उनके बीच विद्यमान अन्तर्सम्बन्ध सम्मिलित हैं।

**पर्यावरण प्रदूषक–** पर्यावरणीय प्रदूषक से ऐसा ठोस, द्रव, गैसीय पदार्थ अभिप्रेत है जो ऐसी सान्द्रता में विद्यमान है, जो पर्यावरण के लिए क्षतिकर हो सकता है या क्षतिकर होना सम्भाव्य है।

**पर्यावरणीय प्रदूषण–** पर्यावरण प्रदूषण का तात्पर्य पर्यावरण में किसी पर्यावरणीय प्रदूषक की उपस्थिति से है। पर्यावरण प्रदूषण का क्षेत्र विस्तार पर्यावरण एवं पर्यावरणीय प्रदूषण के सन्दर्भ में निर्धारित होगा।

परिसंकटमय पदार्थ परिसंकटमय पदार्थ से ऐसा पदार्थ या निर्मित अभिप्रेत है जो अपने रासायनिक या भौतिक रासायनिक गुणों के या हथालने के कारण मानवों या अन्य जीवित प्राणियों, पादपों, सूक्ष्म जीवों, सम्पत्ति या पर्यावरण हो अपहानि कारित करते हैं।

**5.12 पर्यावरण प्रदूषण का निवारण, नियन्त्रण एवं उपशमन–**

पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम, नियंत्रण और कमी प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करने और लोगों के स्वास्थ्य और जीवन की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण अभ्यास हैं। इन उपायों में तीन पहलू शामिल हैंरू रोकथाम, नियंत्रण और शमन। रोकथाम में प्रदूषण नियंत्रण नीतियों और कानूनों को लागू करना, स्वच्छ प्रौद्योगिकी को अपनाना, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग करना, सामाजिक जागरूकता बढ़ाना और सतत विकास और पर्यावरण संरक्षण के लिए पर्यावरण योजनाओं को तैयार करना और लागू करना शामिल है। नियंत्रण में प्रदूषण नियंत्रण उपकरण, विनियमों और मानवीय गतिविधियों की निगरानी के माध्यम से प्रदूषण के प्रभाव को कम करना शामिल है। शमन का उद्देश्य पर्यावरण प्रभाव आकलन (ईआईए) और स्वास्थ्य प्रभाव आकलन (एचआईए) के माध्यम से प्रदूषण के प्रभावों का अध्ययन करके प्रदूषण के प्रभावों को कम करना और समस्याओं को हल करना है। वृक्षारोपण पेड़ लगाकर और हरित आवरण स्थापित करके वायु की गुणवत्ता और कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषण में सुधार करता है। स्वास्थ्य देखभाल प्रदूषण के स्वास्थ्य प्रभावों को दूर करने के लिए चिकित्सा सेवाओं और स्वास्थ्य कार्यक्रमों का विकास करती है। पुनर्चक्रण और पुनरू उपयोग अपशिष्ट प्रबंधन उपायों को बढ़ावा देता है, और सामुदायिक पहल स्थानीय समुदायों को प्रदूषण के प्रभावों को कम करने और संबोधित करने में शामिल करती है। पर्यावरण प्रदूषण को रोकने, नियंत्रित करने और कम करने के लिए एक एकीकृत दृष्टिकोण अपनाने से इसके प्रभावों को कम किया

जा सकता है और प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण सुनिश्चित किया जा सकता है। इन उपायों के क्रियान्वयन से न केवल पर्यावरणीय स्वास्थ्य में सुधार होगा, बल्कि मानव स्वास्थ्य और जीवन की गुणवत्ता पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

## 5.13 परिसंकटमय पदार्थों के सन्दर्भ में पूर्ण दायित्व अधिरोपित करने वाले अधिनियम

### 1. लोक दायित्व बीमा अधिनियम, 1999–

सार्वजनिक दायित्व बीमा अधिनियम, 1991, दोष के सिद्धांत को संवैधानिक दर्जा प्रदान करने का पहला विधायी प्रयास है, जो खतरनाक पदार्थ से संबंधित दुर्घटनाओं में तत्काल राहत प्रदान करता है।

### 2. राष्ट्रीय पर्यावरण अधिकरण अधिनियम, 1995– अधिनियम के उद्देश्य

राष्ट्रीय पर्यावरण अपील प्राधिकरण अधिनियम, 1995 एक कानूनी ढांचा है जिसका उद्देश्य भारत में पर्यावरण मामलों की त्वरित और निष्पक्ष सुनवाई और निपटान प्रदान करना है। यह अधिनियम राष्ट्रीय पर्यावरण अपील प्राधिकरण (NEAA) के गठन और उसके कार्यों को नियंत्रित करता है। अधिनियम के मुख्य उद्देश्यों में पर्यावरण विवादों का निवारण, आवेदन और अपील प्रदान करना, स्वतंत्र और निष्पक्ष सुनवाई सुनिश्चित करना, पर्यावरण मानकों के प्रवर्तन को बढ़ावा देना और सार्वजनिक और गैर–सरकारी संगठनों (NGO) को पर्यावरण मामलों में भाग लेने की अनुमति देना शामिल है। यह अधिनियम राष्ट्रीय पर्यावरण न्यायाधिकरण की संरचना, कार्यप्रणाली और शक्तियों को भी स्पष्ट करता है, जिसमें अध्यक्ष और अन्य सदस्यों की नियुक्ति, उनके कार्य और उनकी शक्तियों को निर्दिष्ट किया गया है। यह स्थायी पर्यावरण प्रबंधन को बढ़ावा देता है और पर्यावरण संरक्षण के उपायों को लागू करता है, जिससे पर्यावरण नीतियों और योजनाओं का प्रभावी कार्यान्वयन संभव हो पाता है। न्यायाधिकरण के निर्णयों और कार्यों में पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित की जाती है, जिससे निपटान प्रक्रिया में स्पष्टता को बढ़ावा मिलता है और जनता का विश्वास बढ़ता है। अधिनियम का मुख्य उद्देश्य पर्यावरणीय मुद्दों की प्रभावी निगरानी और समाधान सुनिश्चित करना है, जो पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

## 5.14 सारांश

भारत के पर्यावरण संरक्षण ढांचे का उद्देश्य आर्थिक विकास को प्राकृतिक संसाधनों और पारिस्थितिकी अखंडता के संरक्षण के साथ संतुलित करना है। इस ढांचे में वायु और जल प्रदूषण, अपशिष्ट प्रबंधन, वन्यजीव संरक्षण और वन संरक्षण जैसे मुद्दों को संबोधित करने के लिए कानून, अध्यादेश और विनियम शामिल हैं। पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986, इस ढांचे की आधारशिला है, और वायु और जल अधिनियम जैसे अन्य विशेष अधिनियमों का उद्देश्य औद्योगिक और शहरी गतिविधियों के प्रतिकूल प्रभावों को कम करना है। वन्यजीव संरक्षण अधिनियम, 1972 और वन संरक्षण अधिनियम, 1980 भी भारत की समृद्ध जैव विविधता और वनाच्छादित परिदृश्यों की रक्षा करते हैं। हालाँकि, इन कानूनों की प्रभावशीलता कठोर कार्यान्वयन और प्रवर्तन पर निर्भर करती है, जिसमें अपर्याप्त बुनियादी ढाँचा, नियामक अंतराल और राज्यों में अलग–अलग अनुपालन स्तर जैसी चुनौतियाँ हैं, जो निरंतर सुधारों और मजबूत निगरानी तंत्रों की आवश्यकता है। पर्यावरण वकालत को आगे बढ़ाने और कानूनों को सार्थक कार्रवाई में बदलने के लिए सार्वजनिक भागीदारी और जागरूकता महत्वपूर्ण है। चूंकि भारत जलवायु परिवर्तन और संसाधनों की कमी जैसे उभरते पर्यावरणीय मुद्दों का सामना कर रहा है, इसलिए कानूनी ढांचे को इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए अनुकूल होना चाहिए।

## 5.15 बोध प्रश्न

- जल प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण से आप क्या समझते हैं ?
- पर्यावरणीय उल्लंघन के सम्बन्ध में लागू विशिष्ट विधिया से आप क्या समझते हैं ?
- जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम से आप क्या समझते हैं ?
- वायु प्रदूषण निवारण प्रशासक की विवेचना कीजिए।
- पर्यावरण प्रदूषण का निवारण, नियन्त्रण एवं उपशमन की विवेचना कीजिए।

## 5.16 उपयोगी पुस्तकें


- Gupta, S., 1996. 'Environmental Policy and Federalism in India', National Institute of Public Finance and Policy, New Delhi.
- Mehta, S., S. Mundle and U.Sankar, 1993/1997. Controlling Pollution: Incentives and Regulation, Sage, New Delhi.
- Sangal, P.A., 1996. 'Law as a Tool for Environmental Management in India', in R.B.Singh and S.Misra (eds.) Environmental Law in India Issues and Responses, Concept Publishing House, New Delhi.
- Sankar, U., and O.P. Mathur, 1998. Economic Instruments for Environment Sustainability, National Institute of Public Finance and Policy, New Delhi and Madras School of Economics, Chennai.
- Sawhney, A., 1997. Administration of Environmental Regulations and Tax Incentives, National Institute of Public Finance and Policy, New Delhi.
- Abambagade Abera Mitiku, A Review on Water Pollution: Causes, Effects and Treatment methods, Int. J. Pharm. Sci. Rev. Res., 60(2), January - February 2020; Article No. 16, Pages: 94-101
- Ghawi HA, Using natural coagulant to remove turbidity and heavy metal from surface water treatment plant in Iraq. Int. J. Eng. Technol. Sci. Innov., 2 (1), 2017, 551-563
- Chonde S, Raut P, Treatment of dairy wastewater by Moringa oleifera seeds. World J. Pharm. Res., 6 (8), 2017, 1484-1493.
- Gandhi, Dharmendra K. and Raghatate, Atul and Pande, S. V., Noise Pollution, Awareness, Prevention and Control (April 19, 2019). Available at SSRN: https://ssrn.com/abstract=3374908 or http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.3374908
- Narendra singh and S,C.Davar. (2004)Noise pollution sources, Effects and controll– JHum.,Ecol,16(3);181-187.
- Savale P. A.(2014) - Noise Level Measurement:Journal of Environmental Research And Development Vol. 8 No. 4, April-June 2014

# इकाई– 06
# सम्पोषणीय विकास के गैर आर्थिक पहलू, आध्यात्मिक आयाम एवं भावी रणनीतियाँ

## इकाई की रुपरेखा


6.0 उद्देश्य
6.1 प्रस्तावना
6.2 पर्यावरण की बहुआयामी अवधारणा
6.3 पर्यावरण का आध्यात्मिक आयाम
6.4 सतत विकास
6.5 सम्पोषणीय विकास के गैर–आर्थिक पहलू
6.6 सम्पोषणीय विकास के गैर–आर्थिक पहलू पर्यावरण शरणार्थी
6.7 विश्व वन्यजीव कोष
6.8 सतत विकास के आध्यात्मिक आयाम
6.9 सम्पोषणीय विकास हेतु भावी रणनीतियाँ
6.10 सारांश
6.11 बोध प्रश्न
6.12 उपयोगी पुस्तकें


## 6.0 उद्देश्य

- प्रस्तुत इकाई में पर्यावरण की बहुआयामी अवधारणा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रस्तुत इकाई में पर्यावरण का आध्यात्मिक आयाम से भी अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में सम्पोषणीय विकास के गैर–आर्थिक पहलू से अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में सम्पोषणीय विकास के गैर–आर्थिक पहलू पर्यावरण शरणार्थी के बारे में जानेंगे।
- प्रस्तुत इकाई में विश्व वन्यजीव कोष से अवगत होंगे।
- प्रस्तुत इकाई में सम्पोषणीय विकास हेतु भावी रणनीतियाँ से अवगत होंगे।

### 6.1 प्रस्तावना

सतत विकास, जो परंपरागत रूप से आर्थिक विकास, पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक समानता पर केंद्रित है, को आध्यात्मिक और सांस्कृतिक आयामों जैसे गैर–आर्थिक पहलुओं पर भी विचार करना चाहिए। सतत विकास रणनीतियों में आध्यात्मिक मूल्यों को एकीकृत करने से उद्देश्य और जिम्मेदारी की भावना को बढ़ावा मिल सकता है, जिससे समुदायों को स्थिरता के लिए अधिक समग्र और लचीले दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। स्वदेशी ज्ञान प्रणाली और आध्यात्मिक अभ्यास अक्सर प्रकृति के साथ सामंजस्य पर जोर देते

हैं, जो टिकाऊ भूमि उपयोग और संरक्षण प्रयासों का मार्गदर्शन कर सकते हैं। जीवन के प्रति सम्मान, कृतज्ञता और श्रद्धा जैसे मूल्यों को शामिल करने के लिए वर्तमान विकास रणनीतियों पर पुनर्विचार करना आवश्यक है। भविष्य की रणनीतियों में बहु–हितधारक जुड़ाव शामिल होना चाहिए, जिसमें नीति–निर्माण और अभ्यास में विविध विश्वदृष्टि और स्थानीय परंपराओं को शामिल किया जाना चाहिए। यह दृष्टिकोण स्थिरता के नैतिक और सांस्कृतिक पहलुओं को संबोधित करता है और वैश्विक चुनौतियों का सामना करने के लिए अधिक समावेशी और अनुकूली रूपरेखा तैयार करता है। आध्यात्मिक आयामों को अपनाकर, हम भौतिक प्रगति और गहरे मानवीय मूल्यों के बीच की खाई को पाटते हुए आगे बढ़ने का अधिक सार्थक मार्ग बना सकते हैं।

मनुष्य ने अपनी सुविधा के लिए जल, जंगल, जमीन, आकाश, पाताल पर हर तरफ मनमाने प्रयोग किए और प्रकृति के द्वारा उपलब्ध साधनों का हद से अधिक दुरुपयोग किया। अपने स्वार्थ के लिए मनुष्य प्राकृतिक वातावरण को लगातार नुकसान पहुंचाता चला जा रहा है। वैज्ञानिकों द्वारा बार–बार चेतावनी दिए जाने के बावजूद प्रकृति से अधिकतम पदार्थ प्राप्त कर लेने की इच्छा खत्म नहीं हो रही। प्रकृति का दोहन खूब हो रहा है। पर्यावरण संकट से उत्पन्न प्राकृतिक आपदाओं के कारण होने वाली जन–धन आदि की हानि भी विकास की अंधाधुध रफ्तार को नहीं रोक पाई है। उपजाऊ जमीन, घने जंगल, अनेक प्रकार के जल स्रोत सहित अन्य प्रकृतिक संसाधन विकास की बली चढ़ चुके है फिर भी मानव जीवन के लिए खतरा साबित हो चुके विकास की सीमा रेखा को बहस से सर्वसम्मति तक की प्रक्रिया तय नहीं हो पाई है।

विकास की कोई सीमा रेखा तय न होने का नतीजा यह है कि आज अधिकांश जल स्रोत प्रदूषित होकर समाप्ति की ओर जा रहे हैं। जल संकट साल दर साल गहराता जा रहा है। हरी–भरी जमीन जलविहीन होकर रेगिस्तान में बदलने की स्थिति में है। हवा में बढ़ता जहरीला धुआ बढ़ते–बढ़ते ओजोन परत को भी नुकसान पहुंचाने की स्थिति निर्मित कर चुका है। धरती का तापमान लगातार बढ़ता जा रहा है जिसके चलते प्रकृति में अनेक नुकसानदेह परिवर्तन हो रहे हैं। ऐसे हालात में यह जरूरी हो गया है कि विकास प्रक्रिया को इस प्रकार सीमित व व्यवस्थित बनाया जाए कि विकास और पर्यावरण के बीच संतुलन कायम रह सके। विकास की प्रक्रिया को इस प्रकार निर्धारित किया जाए कि उससे प्राकृतिक संसाधनों पर विपरीत प्रभाव न हो। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि विकास की कोई गतिविध शुरू करने के पूर्व ही उससे होने वाली पर्यावरणीय क्षति. प्रकृतिक नुकसान का सही–सही आकलन किया जाए।

## 6.2 पर्यावरण की बहुआयामी अवधारणा

पर्यावरण का भौतिक आयाम अक्सर लोगों के लिए पहला विचार होता है, क्योंकि इसमें आस–पास का वातावरण और अजैविक तथा जैविक घटकों के बीच की अंतःक्रिया शामिल होती है। यह अंतःक्रिया पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखती है। हालाँकि, पर्यावरण एक बहुआयामी अवधारणा है, जिसमें आध्यात्मिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक आयाम शामिल हैं। मनुष्य पाषाण युग से ही प्रकृति का अध्ययन कर रहे हैं, जिसमें धर्म ने पहली पारिस्थितिक जाँच में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सामाजिक आयाम भी स्पष्ट है, क्योंकि पर्यावरण और समाज अत्यधिक अंतःक्रियात्मक हैं। मानव समाज पारिस्थितिक रूप से अंतर्निहित हैं, और पर्यावरण अक्सर सामाजिक रूप से अंतर्निहित होते हैं। पारिस्थितिकीविदों का तर्क है कि आर्थिक विकास केवल पर्यावरण की कीमत पर और इसे नुकसान पहुँचाकर ही संभव है, लेकिन ऐसा हमेशा नहीं हो सकता है। सांस्कृतिक आयाम भी एक वास्तविकता है,

जैसा कि मानवविज्ञानी हर्सकोविट्स का तर्क है कि संस्कृति भौतिक पर्यावरण का मानव निर्मित हिस्सा है। लोग और संस्कृतियाँ भौतिक पर्यावरण को प्रभावित करती हैं और इसके विपरीत। निष्कर्ष रूप में, पर्यावरण के भौतिक और सांस्कृतिक आयाम आपस में जुड़े हुए हैं और भौतिक पर्यावरण मानव समाज का एक महत्वपूर्ण पहलू है।

## 6.3 पर्यावरण का आध्यात्मिक आयाम

पारिस्थितिकी और आध्यात्मिकता आपस में जुड़े हुए हैं, आध्यात्मिक पारिस्थितिकी पारिस्थितिकी संकटों को कम करने और उनका समाधान करने में सहायक है। पर्यावरण पर आध्यात्मिक दृष्टिकोण से सतत विकास संभव है, और पर्यावरणीय संकट बढ़ रहे हैं। ईसाई धर्म सृष्टि और सृष्टिकर्ता के बीच संबंधों पर जोर देता है, सृष्टिकर्ता के हाथों की रचना के रूप में प्रकृति के प्रति श्रद्धा और प्रेम को रेखांकित करता है। पारिस्थितिक धर्मशास्त्र और पर्यावरणीय नैतिकता ईसाई शिक्षाओं में घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं, जो नैतिक व्यवहार का आग्रह करते हैं। पोप फ्रांसिस के लौदातो सी विश्वपत्र में पर्यावरण के आध्यात्मिक आयाम पर प्रकाश डाला गया है, जो प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन और जैव विविधता हानि जैसे पर्यावरणीय संकटों पर ध्यान केंद्रित करता है। विश्वपत्र में प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन सहित विभिन्न पर्यावरणीय संकटों पर चर्चा की गई है, और पर्यावरण की रक्षा के लिए एक नए संवाद का आग्रह किया गया है। पवित्र बाइबिल में कहा गया है कि ईश्वर ब्रह्मांड का निर्माता है, और सभी धर्म पर्यावरण के आध्यात्मिक आयाम को दर्शाते हैं, जिससे इसकी रक्षा करना गहरी भावना और नैतिक जिम्मेदारी का विषय बन जाता है।

## 6.4 सतत विकास

सतत विकास एक अवधारणा है जिसका उद्देश्य भविष्य के विकल्पों को संरक्षित करना है, जबकि यह सुनिश्चित करना है कि विकास में कमी न आए। इसके लिए सभी मानवीय गतिविधियों को सतत विकास सिद्धांतों के साथ संरेखित करने की आवश्यकता होती है, जिसमें राष्ट्रों के बीच सहयोग और शिक्षा, व्यवहार और जीवन शैली के मानकों को संशोधित करना शामिल है। भविष्य की पीढ़ियों पर ध्यान केंद्रित किया जाता है, क्योंकि पृथ्वी पर संसाधन किसी के अपने उपयोग के लिए नहीं बल्कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए हैं। अनियोजित विकास पर्यावरणीय गिरावट का मुख्य कारण है। ब्रुंडलैंड आयोग सतत विकास को भविष्य की पीढ़ियों की अपनी जरूरतों को पूरा करने की क्षमता से समझौता किए बिना वर्तमान जरूरतों को पूरा करने के रूप में परिभाषित करता है। सतत विकास को समझाने के लिए एक बहु–विषयक दृष्टिकोण की आवश्यकता है। स्थिरता के तीन आयाम हैं। अर्थव्यवस्था, पर्यावरण और समाज, इन आयामों के बीच बातचीत महत्वपूर्ण है। यह अवधारणा भविष्य की पीढ़ियों के लिए जीवन की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए पारिस्थितिक बाधाओं और दीर्घकालिक संसाधन उपयोग के अनुरूप सामाजिक–आर्थिक विकास पर आधारित है। सतत विकास के लिए सामाजिक, आर्थिक और पारिस्थितिक पहलुओं का संतुलित विकास आवश्यक है।

## 6.5 सम्पोषणीय विकास के गैर–आर्थिक पहलू

आर्थिक विकास और पर्यावरण के बीच संतुलन आज हम सबके लिए चुनौती है। पश्चिम के मॉडल पर विकास हमारे देश की पर्यावरणीय परिस्थितियों के लिए उपयुक्त नहीं है, क्योंकि बड़े बांध, परमाणु ऊर्जा, विशेष आर्थिक क्षेत्र (एसईजेड) और अनियोजित शहरीकरण ने पर्यावरण पर दबाव डाला है। पिछले 45 वर्षों में विकास की चाहत ने प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन किया है। प्रकृति हमें वह सब कुछ प्रदान करती है जिसकी हमें सामान्य रूप से आवश्यकता होती है, लेकिन आज हमें गंगा, यमुना, गोमती, नर्मदा और अन्य प्रमुख नदियों

का अशुद्ध और प्रदूषित जल पीना पड़ता है। इसमें सीवेज नालों और टेनरियों का प्रदूषित जल भी मिलाया जाता है, जिससे उनकी गुणवत्ता और शुद्धता प्रभावित होती है। प्रदूषण नियंत्रण के दशकों के प्रयासों और नदियों के पारिस्थितिकी तंत्र की बहाली के बावजूद, अमेरिका और पश्चिमी यूरोप की अधिकांश नदी प्रणालियाँ सबसे बड़े खतरे में हैं।

दुनिया एक वैश्वीकृत गाँव बन गई है, लेकिन मानवीय मूल्य, संवेदनशीलता, सामाजिक सरोकार और पर्यावरण के प्रति व्यवहार बदल गए हैं। पर्यावरण क्षरण के कारण पैदा हुई कई सामाजिक और आर्थिक समस्याएँ वास्तव में हमारे वस्तुनिष्ठ उपभोक्तावादी दृष्टिकोण के कारण हैं। सतत एवं सतत विकास प्राकृतिक एवं पर्यावरण की दृष्टि से संरक्षित सिद्धांतों पर आधारित होना चाहिए। संरक्षण एवं विकास एक दूसरे के पूरक होने चाहिए, जिसमें प्राकृतिक एवं भौतिक संसाधनों पर जनसंख्या का नियंत्रित दबाव हो तथा उपभोग एवं उत्पादन के बीच संतुलन हो। विश्व पर्यावरण एवं विकास आयोग (WCED) ने सबसे पहले 1987 में सतत विकास को परिभाषित किया था, जिसे ब्रुन्डलैंड रिपोर्ट के नाम से जाना जाता है। नव–शास्त्रीय विकास सिद्धांत बताता है कि आर्थिक विकास की कल्पना केवल प्राकृतिक संसाधनों की सीमा को ध्यान में रखकर ही की जा सकती है, जो समय के साथ घटते बिना उपभोग के बराबर है। संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने 2011 में दावोस में आयोजित विश्व आर्थिक मंच में कहा था कि दुनिया का मौजूदा आर्थिक मॉडल पर्यावरणीय आत्महत्या है। 1991 में आर्थिक उदारीकरण का नारा दिया गया था, और हमारे देश की अर्थव्यवस्था औद्योगिकीकरण पर केंद्रित थी। हालांकि, गरीबी और भुखमरी घटने के बजाय बढ़ती गई। योजना आयोग द्वारा ही गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों की संख्या 1990 के दशक के 26% से बढ़कर 372% हो गई है। उच्च वर्ग की आय लगातार बढ़ रही है, लेकिन हर साल लाखों लोग गरीबी रेखा से नीचे जा रहे हैं, जिससे अमीर और गरीब के बीच की खाई बढ़ती जा रही है।

## 6.6 सम्पोषणीय विकास के गैर–आर्थिक पहलू पर्यावरण शरणार्थी

जलवायु परिवर्तन से ष्पर्यावरण शरणार्थी नई वैश्विक समस्या के रूप में दिखाई दे रहा है इसमें वर्तमान बसाहटों पर अत्यधिक भार पड़ने की आशंका है। इसी के साथ बढ़ता समुद्री जलस्तर लाखों किलोमीटर की भूमि को अपने में निगल रहा है या इसे खेती के आयोग्य बना रहा है।

बांग्लादेश के दक्षिणी तट पर स्थित कुतुबदिया नामक द्वीप अपने आकार में आज, एक शताब्दी पूर्व का मात्र 20% रह गया है। इसका कारण है शक्तिशाली व ज्वार की लहरों, एवं समुद्री तूफानों के कारण होने वाला कटाव । समुद्र इस द्वीप में 15 कि.मी. तक घुस आया है। संयुक्त राष्ट्र की एक बेबसाइट रिपोर्ट में कहा गया है कि नदी डेल्टा वाले शहरों जैसे भारत में कोलकाता, म्यांमार की यंगून और वियतनाम के हाई पोंग जैसे शहर बढ़ते वैश्विक तापमान के कारण अत्यधिक बाढ़ का सामना कर रहे हैं। आने वाले वर्षों में समुद्र तटीय शहरों का भी यही हाल होने वाला है।

वल्ड विजन रिपोर्ट के अनुसार अन्य शहरी क्षेत्रों को बढ़ते वैश्विक तापमान से सीध ॥ खतरा नहीं है परन्तु उपरोक्त प्रभावित शहरों से आने वाले पर्यावरणीय शरणार्थी इन शहरों के सम्मुख जबरदस्त चुनौती पैदा कर सकते हैं। अभी हमें जो दिखाई दे रहा है वह तो भविष्य की मात्र एक झलक ही है। विश्व में जलवायु परिवर्तन का सर्वाधिक प्रभाव एशिया एवं प्रशांत क्षेत्रों में हैं क्योंकि इन क्षेत्रों की विशाल समुद्री सीमा है जिसके पास बड़ी मात्रा में भूमि आच्छादित है। यह भी विश्वास जताया जा रहा है कि इन इलाकों ने जो सामाजिक आर्थिक उन्नति की है आगामी दो–तीन दशकों में बढ़ता जलस्तर उसे निगल जाएगा।

एशिया विकास बैंक की हाल ही में प्रकाशित एक रिपोर्ट में कहा गया है कि दक्षिण पूर्व एशिया की अर्थ व्यवस्था के सकल घरेलू उत्पाद से बढ़ते वैश्विक तापमान के कारण सन् 2100 तक 6.7 प्रतिशत की कमी आ सकती है। यह वैश्विक औसत से दुगनी है। जलवायु परिवर्तन का प्रभाव, क्षेत्र और देशों में अलग–अलग पडेगा। जलवायु परिवर्तन पर अंतर राजकीय पैनल का कहना है कि जलवायु परिवर्तन का बांग्लादेश पर अत्यंत विपरीत प्रभाव होगा। इसके परिणामस्वरूप यहां आने वाले तूफानों की आवृत्ति और तीव्रता दोनों में ही वृद्धि होगी। साथ ही गंगा ब्रह्मपुत्र, मेघना बेसिन में बाढ़ का प्रयोग भी बढ़ेगा।

हिमालय, मध्य एवं पश्चिम एशिया एवं दक्षिण भारत में वर्षा के व्यवहार में परिवर्तन आएगा जिससे कृषि उत्पादन एवं खाद्य सुरक्षा को खतरा पैदा हो सकता है इसके परिणामस्वरूप लाखों लोग भूख की चपेट में आ जाएंगे और बड़ी संख्या में लोग जलवायु शरणार्थी बन जाएंगे। इसके परिणामस्वरूप प्रशांत दक्षिण पूर्व एशिया और हिंद महासागर के निचले द्वीपों का अस्तित्व भी खतरे में पड जाएगा। इसी के साथ ही साथ इस क्षेत्र में पानी की कमी बढ़ती जाएगी। वैसे यह क्षेत्र अभी भी लगातार सूखे की चपेट में रह रहा है।

पिछले दशकों में जलवायु परिवर्तन के कारण प्रचण्ड तूफानों, सूखा, गर्म हवाओं, भूस्खलन और अन्य प्राकृतिक विपदाओं में वृद्धि में बांग्लादेश, भारत. फिलिपीन्स और वियतनाम जैसे देश अव्वल रहे हैं और यहां पर इस अवधि में इन हादसों के कारण होने वाला नुकसान 20 खरब डॉलर से अधिक है। भविष्य में बढ़ते तापमान के कारण समुद्र का स्तर बढेगा. समुद्र अधिक गरम होगा और समुद्र की क्षारीयता में वृद्धि होगी। इससे तटीय क्षेत्रों में कटाव होगा और समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र को नुकसान पहुंचेगा। यही पारिस्थितिकी तंत्र प्रशांत एवं एशिया के देशों में लोगों की जीविका और पोषण तत्वों का मुख्य स्रोत है।

## 6.7 विश्व वन्यजीव कोष

अध्ययन के अनुसार इस सदी के अंत तक प्रशांत महासागर से कोरल विलुप्त हो जाएंगे जिससे 10 करोड़ से अधिक लोगों की जीविका और खाद्य आपूर्ति संकट में पड़ जाएगी। कोरल पर्यटकों को भी आकृष्ट करते हैं उनके न होने से पर्यटक से होने वाली आय पर भी विपरीत प्रभाव पड़ेगा। जलवायु परिवर्तन कृषि को भी प्रभावित करेगी। एशियाई विकास बैंक के अनुसार पानी की कमी के कारण थाईलैंड एवं वियतनाम में चावल का उत्पादन घटकर आधा रह जाएगा। वहीं दक्षिण एशिया में वर्ष 2050 तक कृषि उत्पादन में 50 प्रतिशत तक की कमी आ सकती है।

बांग्लादेश के दक्षिण जिले समुद्री जल से कुछ ही सेंटीमीटर ऊपर रह गए हैं जिसके फलस्वरूप बड़ी मात्रा में जमीन क्षारीय होकर बर्बाद हो रही है। यही स्थिति बंगाल की खाड़ी में भी हो रही है। हिमालय के घटते ग्लेशियरों के कारण अकाल से प्रभावित क्षेत्रों की स्थिति और बदतर हो सकती है क्योंकि जलवायु परिवर्तन से पूरा फसल चक्र ही गड़बड़ा गया है।

जलवायु परिवर्तन मनुष्यों के स्वास्थ्य पर भी विपरीत प्रभाव डालेगा। परिणामस्वरूप लाखों लोगों का जीवन खतरे में पड सकता है। एशिया और प्रशांत क्षेत्रों में बाढ़ एवं सूखे जैसी प्राकृतिक आपदाओं में वृद्धि होने से वायुजनित एवं गर्मी से संबंधित बीमारियों में भी वृद्धि होगी। जलवायु परिवत्रन के फलस्वरूप पानी और खाद्य पदार्थों की कमी भी स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगी।

वास्तविकता यह है कि वर्ष 2004 से 2006 के मध्य आई प्राकृतिक विपदाओं में से 70 प्रतिशत एशिया, प्रशांत, अफ्रीका और मध्य पूर्व में आई थी इससे इस इलाके की संवेदनशीलता का भी पता चलता है। जलवायु परिवर्तन का सबसे गहरा प्रभाव महिलाओं पर पड़ता है परंतु परिस्थितियों के अनुरूप स्वयं को ढालने में भी उन्हें महारत हासिल है। उदाहरण के लिए

दक्षिण भारत की एक संस्था डेक्कन डेवलपमेंट सोसायटी दलित महिलाओं के बीच कार्य कर उन्हें जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप फसलों पर पड़ने वाले प्रभावों से बचने की तकनीकि सिखा रही है। इसके अंतर्गत उन्होंने एसी फसलें लगाई हैं जिनमें अतिरिक्त पानी, रासायनिक खाद अथवा कीटनाशकों की आवश्यकता नहीं पड़ती। इस पद्धति से इन महिलाओं ने 19 तरह के देशज बीजों पर आधारित फसल खराब और क्षारीय भूमि पर काट ली है परन्तु इन परिस्थितियों से निपटने के लिए विकासशील देशों को अमीर देशों से अत्यधिक वित्तीय सहायता की आवश्यकता है जिससे कि वे देश विकासशील देश नई तकनीकों को अपना सके और अपना पारम्परिक विकास जारी रख सके। जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र संघ का सम्मेलन इस वर्ष दिसम्बर में होने वाला है। इस दौरान अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को इस समस्या की गंभीरता को समझ कर वैश्विक सहयोग से इस समस्या का हल ढूंढने का प्रयास करना चाहिए।

## 6.8 सतत विकास के आध्यात्मिक आयाम

विकास केवल आर्थिक वृद्धि के बारे में नहीं है, बल्कि इसमें सामाजिक और सांस्कृतिक आयाम भी शामिल हैं। एक विकसित समाज के पास एक प्रभावी कानूनी प्रणाली होनी चाहिए, जिसे अक्सर अर्थशास्त्री पूंजीगत संपत्ति के रूप में अनदेखा कर देते हैं। प्रत्येक समाज को अपनी संस्कृति, मूल्यों और लक्ष्यों को दर्शाते हुए अपने स्वयं के शब्दों में विकास को परिभाषित करना चाहिए। स्थायित्व एक गतिशील प्रक्रिया है जिसके लिए समाज और प्रकृति के बीच वर्तमान संतुलन के साथ–साथ उस संतुलन को बनाए रखने की भविष्य की क्षमता पर विचार करने की आवश्यकता होती है। स्थिरता को परिभाषित करने की तुलना में अस्थायित्व को मापना आसान है। आज अधिकांश विकास अस्थायित्वपूर्ण है क्योंकि आर्थिक प्रणालियाँ केवल भौतिक आवश्यकताओं पर ध्यान केंद्रित करती हैं और उनमें नैतिक आयाम का अभाव होता है। इससे सामाजिक और पर्यावरणीय समस्याएँ, वित्तीय और संसाधन ऋण, प्रदूषण ऋण और मानवीय और सामाजिक ऋण उत्पन्न हुए हैं। स्थायित्व की अवधारणा पीढ़ियों के भीतर और उनके बीच न्याय और एकजुटता की नैतिक स्थिति को व्यक्त करती है, जो भविष्य की पीढ़ियों के लिए बोझ या संभावनाओं को कम करने वाले कार्यों की निंदा करती है। इसके लिए दीर्घकालिक दृष्टिकोण और संपूर्ण मानव और प्राकृतिक प्रणाली के एकीकृत परिप्रेक्ष्य की आवश्यकता होती है। स्थिरता के लिए संयम की भी आवश्यकता होती है, क्योंकि प्राकृतिक प्रणालियों में आधुनिक समाज के प्रभावों को अवशोषित करने की सीमित क्षमता होती है। विकास को स्थिरता प्राप्त करने के लिए, समाज के सभी स्तरों पर उचित मूल्यों को शामिल किया जाना चाहिए। व्यक्तियों को अपने जीवन का मार्गदर्शन करने के लिए मूल्यों को अपनाना चाहिए, जिसमें चरित्र परिष्कार के लिए व्यक्तिगत लक्ष्य और सभ्यता की उन्नति में योगदान देने वाले सामाजिक उद्देश्य में विश्वास शामिल है। पारंपरिक अर्थशास्त्र की नींव में स्वार्थ के अदृश्य हाथ के बजाय समूह मोक्ष की आवश्यकता आवश्यक है। सतत विकास प्राप्त करने के लिए कई धनी समाजों को व्यापक भलाई और भावी पीढ़ियों के लिए अपने कुछ तात्कालिक लाभों का त्याग करना होगा। यह प्रतिबद्धता आध्यात्मिक उद्देश्य, विश्वास और मूल्यों की भावना से आ सकती है, जो समाज में आवश्यक परिवर्तनों के प्रति प्रतिबद्धता के लिए वास्तविक आधार प्रदान करती है। परिवार नई पीढ़ियों की शिक्षा, उनके चरित्र और बुनियादी सामाजिक और आध्यात्मिक मूल्यों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। स्थिरता के लिए संस्कृति, नैतिकता और नैतिकता का पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरण आवश्यक है। एक स्थायी समुदाय को एकजुटता, गरिमा और आत्म–सम्मान की विशेषता होनी चाहिए, जो भावी पीढ़ियों की जरूरतों का सम्मान करता हो। बाजार अर्थशास्त्र के वर्तमान "डार्विनियन" मूल्य

योग्यतम की आर्थिक दक्षता पर जोर देते हैं, जो आधुनिक समाज में नैतिक रूप से अस्वीकार्य है। सतत विकास सुनिश्चित करने के लिए, सफल विकास के मापदंड को समुदाय में मानवीय क्षमता के अधिकतम उपयोग के रूप में पुनर्परिभाषित करना आवश्यक है। सामाजिक संस्थाओं को शिक्षा और प्रशिक्षण प्रदान करना चाहिए, यह सुनिश्चित करते हुए कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने और समाज के लाभ के लिए अपने कौशल का उपयोग करने का अवसर मिले। स्थानीय निर्णय वैश्विक परिप्रेक्ष्य में लिए जाने चाहिए, प्रत्येक सांस्कृतिक या जातीय समूह के लिए स्थिरता मूल्यों की आवश्यकता है, जो उनके मतभेदों के लिए प्रशंसा को बढ़ावा देते हैं और बड़े समग्र में योगदान करते हैं। मूल्यों को समाज के कॉर्पोरेट आयाम में शामिल करने की आवश्यकता है, क्योंकि आज व्यवसायों के लिए कानूनी ढांचे में केवल शेयरधारकों के लिए अर्जित लाभ की आवश्यकता होती है। राज्य या राष्ट्रीय आयाम को भी नए मूल्यों की आवश्यकता है, जिसमें राजनीतिक इच्छाशक्ति और नेतृत्व मूल्यों से आते हैं। राज्यों को केवल सत्ता का उपयोग करने के बजाय आम भलाई के लिए काम करना चाहिए और एक–दूसरे का सम्मान करना चाहिए। इन मूल्यों को व्यक्त करने वाला अंतर्राष्ट्रीय सहयोग तेजी से वैश्विक होते समाज में सतत विकास के लिए आवश्यक है। आध्यात्मिक मूल्य न केवल व्यक्तियों के लिए बल्कि मानव संगठन के उच्च स्तरों के लिए भी प्रासंगिक हैं, क्योंकि समुदाय या समाज का एक सामूहिक आध्यात्मिक आयाम होता है। यह एकता मानवता की एक विशेष विशिष्ट विशेषता है जो एक सतत विश्व समाज की ओर इसके भविष्य के विकास में तेजी से स्पष्ट होगी।

## 6.9 सम्पोषणीय विकास हेतु भावी रणनीतियाँ

भारत एक विकासशील देश है जो तेजी से विकसित होने की ओर अग्रसर है। विकास की बुनियाद आज भी कृषि पर आधारित है। भारत की लगभग 70% आबादी आज भी गाँवो में रहती है। जिनका मुख्य व्यवसाय परम्परागत कृषि ही है। विगत दशकों में भारत ने कृषि के क्षेत्र में बहुत हद तक आत्मनिर्भरता पा ली है और आज आयात–निर्यात में भी अपनी अहम भूमिका निभा रहा है, कृषि के क्षेत्र में अपनी अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता हेतु आज भारत में रासायनिक खादों, बीजों एवं जैव उर्वरकों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। पर्यावरणविद् डॉ पचौरी के अनुसार भारत को ऐसा विकास करना है जिसमें प्रकृति को भी बचाया जाए एवं विकास भी किया जाय। आज वैश्विक ऊष्मीकरण एवं जलवायु परिवर्तन से फसलचक्र प्रभावित हो रहे हैं जो खेती को सीधे तौर पर प्रभावित कर रहे हैं। नदी, नाले, तालाब, कुएँ एवं प्राकृतिक जल स्रोतों की गुणवत्ता में काफी कमी आई है जिससे सिंचाई के साधनों में भी कमी आ रही है। भूमिगत जल स्तर भी लगातार नीचे जा रहे है। बढ़ती आबादी न केवल प्राकृतिक संसाधनो पर अनावश्यक बोझ बन रही है बल्कि हम सबके द्वारा छोड़ी जा रही कार्बन डाईआक्साइड भी वातावरण को स्थायी नुकसान पहुँचा रही है। आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था के दुष्परिणाम अब सर चढ़कर बोलने लगे हैं और विकास ने पर्यावरण को अपूरणीय क्षति पहुँचाई है।

आज भारत में अर्थशास्त्र के क्षेत्र में वर्तमान व्यवस्था को बुनियादी तौर पर परिवर्तन की दिशा में मोड़ना होगा। उसमें पर्यावरण प्रबन्धन एवं संरक्षण को जोड़ना अनिवार्य है–

इसके तीन प्रमुख मुद्दे हैं–

(1) पर्यावरण संतुलन बनाए रखने की नीति का पालन

(2) प्राकृतिक सम्पदाओं का सही मूल्यांकन कर नैतिकता एवं सामाजिक समता के आधार पर विकास की व्यवस्था एवं

(3) प्रकृतिपरक एवं पर्यावरण समर्थ योजनाओं का निष्पादन जो संवृद्धि परिसीमन (Limits to growth) पर आधारित हो।

आज आवश्यकता इस बात की है कि पर्यावरण और विकास में संतुलन बनाए रखा जाए। इसके लिए विकास प्रक्रिया को सीमित एवं व्यवस्थित बनाये रखना होगा। विकास की प्रक्रिया को इस प्रकार निर्धारित किया जाए कि उससे प्राकृतिक संसाधनों पर विपरीत प्रभाव न हो। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि विकास की कोई गतिविधि शुरू करने से पूर्व ही उससे होने वाली पर्यावरणीय क्षति एवं प्राकृतिक नुकसान का सही–सही आकलन किया जाए। जहाँ विकास किया जा रहा है वहाँ का प्राकृतिक पर्यावरण कैसे सुनिश्चित किया जाए इस बारे में गम्भीरता से विचार करना होगा। भारत में यदि विकास के साथ–साथ पर्यावरण की भी गम्भीरता से चिन्ता की जाए तो बिगड़ती प्राकृतिक स्थिति पर कुछ रोक लगाना सम्भव है। दिल्ली स्थित पर्यावरण एवं विज्ञान केन्द्र संगठन की प्रमुख सुनीता नारायण का कहना है कि हमें अब अपनी मूर्खता से बाहर निकलना चाहिए और निश्चित करना चाहिए कि तीव्र विकास जरूरी है या पर्यावरणीय सुरक्षा।

धरती की आबोहवा में हुए हरण और पर्यावरण की सेहत में हुई गिरावट ने प्रकृति से मिलने वाली जन सेवाओं में भी खासी कमी पैदा की है जिन्हें दुर्भाग्य से हम अपनी आर्थिक प्रबन्ध योजना में माले मुफ्त मानते हैं। वैसे आर्थिक विकास की चक्की भी अब उस स्थिति में पहुँच गई है जहाँ उसे धरती के प्राकृतिक संसाधनों को नुकसान पहुंचाने का खामियाजा भुगतना पड़ रहा है। इंसानी गलतियों से जंगलों की हरी छतरी में हुए छेद बंजर हुई उपजाऊ भूमि सांस के साथ जा रही हवा में घुले जहर और विषात हुए नदियों के पानी ने भावी पीढ़ियों की जरूरत पूरी करने की प्राकृतिक क्षमताओं को काफी नुकसान पहुँचाया है। ऐसे में समाज के एक खास तबके की गलतियों का खामियाजा न केवल मौजूदा पीडी भुगत रही है बल्कि आने वाली पीढ़ी भी उठाएँगी। लिहाजा स्पष्ट हो रहा है कि सरकारी नीति के लिए प्राकृतिक घाटा देश के राष्ट्रीय घाटे से कहीं ज्यादा महत्व रखता है।

जैव–विविधता, मृदा का पुनर्पोषण सिकुड़ते जल संसाधनों का संरक्षण दूषित पर्यावरण को साफ–सुथरा रखने जैसी निर्वहनीय नीतियों को अपनाकर विकास एवं आर्थिक वृद्धि के पथ को प्रशस्त कर एक बेहतर जीवन जिया जा सकता है।

## 6.10 सारांश

सतत विकास में गैर–आर्थिक, आध्यात्मिक आयामों का एकीकरण पारंपरिक दृष्टिकोणों से एक महत्वपूर्ण बदलाव है जो मुख्य रूप से आर्थिक और पर्यावरणीय मीट्रिक पर ध्यान केंद्रित करते हैं। परस्पर जुड़ाव, प्रबंधन और जीवन के प्रति आंतरिक सम्मान जैसे आध्यात्मिक मूल्यों को शामिल करके, सतत विकास रणनीतियों को अधिक समग्र आधार मिल सकता है। ये आध्यात्मिक दृष्टिकोण नैतिक मार्गदर्शन, लचीलापन बढ़ाने, सामुदायिक जुड़ाव बढ़ाने और स्थिरता के प्रति प्रतिबद्धता को गहरा करने में व्यावहारिक अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं। आध्यात्मिक मूल्य स्थिरता प्रयासों को उद्देश्य और दिशा प्रदान करते हैं, व्यक्तियों और समुदायों को अधिक समग्र और एकीकृत प्रथाओं को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। भविष्य की रणनीतियों को इस बहुआयामी दृष्टिकोण को अपनाना चाहिए, नीति–निर्माण और अभ्यास में विविध सांस्कृतिक और आध्यात्मिक दृष्टिकोणों को शामिल करना चाहिए। यह समावेशिता सुनिश्चित करती है कि स्थिरता के प्रयास तत्काल चुनौतियों का समाधान करने में प्रभावी हों और विभिन्न समुदायों के मूल्यों के साथ सार्थक और प्रतिध्वनित हों। आध्यात्मिक आयामों को सतत विकास में शामिल करने से दुनिया और एक–दूसरे के साथ गहरा संबंध बनता है, जिससे ऐसे समाधानों का मार्ग प्रशस्त होता है जो न केवल प्रभावी होते हैं बल्कि नैतिक और सांस्कृतिक रूप से भी आधारित होते हैं। यह दृष्टिकोण अधिक समग्र और सामंजस्यपूर्ण

भविष्य का वादा करता है, जहां आर्थिक, पर्यावरणीय और आध्यात्मिक कल्याण के संतुलित अंतर्संबंध के माध्यम से स्थिरता प्राप्त की जाती है।

## 6.11 बोध प्रश्न

- पर्यावरण की बहुआयामी अवधारणा से आप क्या समझते हैं ?
- विश्व वन्यजीव कोष से आप क्या समझते हैं ?
- पर्यावरण का आध्यात्मिक आयाम से आप क्या समझते हैं ?
- सम्पोषणीय विकास के गैर–आर्थिक पहलू की विवेचना कीजिए।
- सम्पोषणीय विकास हेतु भावी रणनीतियाँ की विवेचना कीजिए।
- सम्पोषणीय विकास के गैर आर्थिक पहलुओं पर अपनी राय दें।

## 6.12 उपयोगी पुस्तकें


- **Berkes, F., & Folke, C.** (1998). *Linking Social and Ecological Systems: Management Practices and Social Mechanisms for Building Resilience. Cambridge University Press.*
- **Hambers, R., & Conway, G. R. (1991).** *Sustainable Rural Livelihoods: Practical Concepts for the 21st Century. IDS Discussion Paper 296. Institute of Development Studies.*
- **Hawken, P. (1993).** *The Ecology of Commerce: A Declaration of Sustainability. HarperBusiness.*
- **Naess, A.** (1989). *Ecology, Community, and Lifestyle: Outline of an Ecosophy. Cambridge University Press.*
- **Swimme, B., & Tucker, M. (2011).** *The Universe Story: From the Primordial Flaring Forth to the Ecozoic Era – A Celebration of the Unfolding of the Cosmos. Orbis Books.*
- *Baker, S. and Morrison, R., 2008. Environmental Spirituality: Grounding our response to climate change. European Journal of Science and Theology, 4(2), pp.35-50.*
- *Tomislav, K. (2018). The Concept of Sustainable Development: From its Beginning to the Contemporary Issues. Zagreb International Review of Economics & Business, 21(1), 47-74*
- *Siebert, H. and Siebert, H., 1981. Economics of the Environment (pp. 16-17). Massachusetts: Lexington Books*
- *Hutchins Paul, B. D. (2008). A history of the concept of sustainable development: literature review. The Annals of the University of Oradea, 17(2), 581.*